UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178901

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 83/K45C/v.2/VI Accession No. H.1824

Author

Title चतुर्भाणी संपादि

This Book should be returned on or before the date last marked below.



I 83
K45c
V.6

सुवर्ण-रेखा

श्री दुर्गाप्रसाद खत्री लिखित अद्भुत वैज्ञानिक उपन्यास। नदियाँ जिस तरह नमक ले जा कर समुद्र में इकट्ठा कर रही हैं उसी तरह पृथ्वी पर का सब सोना भी बह बह कर समुद्र में इकट्ठा होता जा रहा है। बहुतों ने इस सोने को निकालने की कोशिश की और कितनों ही ने निकाला भी, पर इसमें खर्च बहुत पड़ता था। भाग्यवश एक वैज्ञानिक को बहुत सहज ही में यह सोना निकालने की तर्कीब मालूम हो गई और उसने हजारों मन सोना निकाल डाला। पर घपला तब पड़ा जब वह सोना यूरोप और अमेरिका के बाजारों में बिकने पहुँचा। उस समय वहाँ बड़ी उथल पुथल मची, बड़े बड़े लखपती एक दिन में कंगाल होने लगे, सब व्यापार चौपट हो गया, बड़े बड़े कारखाने बन्द होने लगे। दुनिया भर की सरकारें इस बात का पता लगाने के फेर में पड़ गईं कि कौन आदमी इतना सोना बेच रहा है? और उसके पास इतना सोना आया भी तो कहाँ से? बड़े बड़े जासूस छूटे और गहरी चालाकियाँ होने लगीं जिनके जाल में वह बेचारा वैज्ञानिक बुरी तरह फँस गया पर अन्त में किसी तरह अपने को बचाया। बड़ा ही रोचक उपन्यास है। मूल्य २)

मिलने का पता:—

लहरी बुक डिपो,

काशी।

❀ श्री ❀

चन्द्रकान्ता संतति

उपन्यास

(छठवाँ खंड)

(भाग २१ से २४ तक)

लेखक

बाबू देवकीनन्दन खत्री



लहरी बुक डिपो

पुस्तक प्रकाशक तथा विक्रेता

काशी

* श्रीः *

चन्द्रकान्ता सन्तति

इक्कीसवां हिस्सा

—०—

पहिला बयान

भूतनाथ अपना हाल कहते कहते कुछ देर के लिये रुक गया और इसके बाद एक लम्बी साँस लेकर पुनः अपना हाल यों कहने लगाः—

मैं अपने को कैदियों की तरह और अपने सामने अपनी स्त्री को सरदारी के ढंग पर बैठे हुए देख कर एक दफे तो घबड़ा गया और सोचने लगा कि यह क्या मामला है ! मेरी स्त्री मुझे अपने सामने ऐसी अवस्था में देखे और सिवाय मुस्कुराने के कुछ न बोले !! अगर वह चहती तो मुझे अपने पास गद्दी पर बैठा लेती क्योंकि इस कमरे में जितने दिखाई दे रहे हैं उन सभों की वह सर्दार मालूम पड़ती है !' इत्यादि बातों को सोचते सोचते मुझे क्रोध चढ़ आया और मैंने अपनी लाल लाल आंखों से उसकी तरफ देख कर कहा, "क्या तू वही रामदेई मेरी स्त्री है जिसके लिये मैंने तरह तरह के कष्ट उठाये और जो इस समय मुझे कैदियों की अवस्था में अपने सामने देख रही है ?"

इसके जवाब में मेरी स्त्री ने कहा, "जी हां मैं वही रामदेई हूँ जिसके लड़के को तुम किसी जमाने में अपना होनहार लड़का समझ कर चाहते और प्यार

करते थे मगर आज उसे दुश्मनों की निगाह से देख रहे हो। मैं [illegible] जो तुम्हारे असली भेदों को न जान कर और तुम्हें नेक ईमादार [illegible] ऐयार समझ कर तुम्हारे फन्दे में फंस गई थी मगर आज तुम्हारे [illegible] पता लग जाने के कारण डरती हुई तुमसे अलग हुआ चाहती हूँ। मैं वह देई हूँ जिसे तुमने नकाबपोशों के मकान में देखा था और मैं वही रामद जिसने उस दिन तुम्हें जंगल में धोखा देकर बेरङ्ग वापस होने पर मजबूर था, मगर मैं वह रामदेई नहीं हूँ जिसे तुम 'लामाघाटी' में छोड़ आये

मुझे उस औरत की बातों ने ताज्जुब में डाल दिया और मैं हैरानी के उसका मुंह देखने लगा। अनूठी बात तो यह थी कि वह अपनी बातों में मु से तो रामदेई अथवा मेरी स्त्री बनती चली आई मगर आखिर में बोल बैठ कि 'मगर मैं वह रामदेई नहीं हूँ जिसे तुम लामाघाटी में छोड़ आये हो।' आ खिर बहुत सोच विचार कर मैंने पुनः उससे कहा, "अगर तू वह रामदेई न है जिसे मैं लामाघाटी में छोड़ आया था तो तू मेरी स्त्री भी नहीं है।"

स्त्री०। तो यह कौन कहता है कि मैं तुम्हारी स्त्री हूँ।

मै०। अभी इसके पहिले तूने क्या कहा था?

स्त्री०। (हँस कर) मालूम होता है कि तुम अपने होश में नहीं हो।

इतना सुनते ही मुझे क्रोध चढ़ आया और मैं अपनी हथकड़ी बेड़ी तोड़ने का उद्योग करने लगा। यह हाल देख कर उस औरत को भी क्रोध चढ़ आया और उसने अपनी एक सखी वा लौंडी की तरफ देख कर कुछ इशारा किया। वह लौंडी इशारा पाते ही उठी और उसी जगह आले पर से एक बोतल उठा लाई जिसमें किसी प्रकार का अर्क था। उस अर्क से चुल्लू भर उसने दो तीन छींट मेरे मुंह पर दिये जिसके सबब से मैं बेहोश हो गया और मुझे तनोबदन की सुध न रही। मैं यह नहीं बता सकता कि इसके बाद कै घण्टे तक मैं उसके कब्जे में रहा जब होश में आया तो अपने को जंगल में एक पेड़ के नीचे पाया। घण्टों तक ताज्जुब के साथ चारों तरफ देखता रहा, इसके बाद एक चश्मे के किनारे जा कर हाथ मुंह धोने के बाद इस तरफ रवाना हुआ। यही सबब थ कि मुझे हाजिर होने में देर हो गई।

भूतनाथ की बातें सुन कर सभों को ताज्जुब हुआ मगर वे दोनों नकाब

पोश एक दम खिलखिला कर हँस पड़े और उनमें से एक ने भूतनाथ की तरफ देख कर कहा :—

नकाब० । भूतनाथ निःसन्देह तुम धोखे में पड़ गये । उस औरत ने जो कुछ तुमसे कहा उसमें शायद ही दो तीन बातें सच हों ।

भूत० । (ताज्जुब से) सो क्या ? उसने कौन सी बात सच कही और कौन सी झूठ ?

नकाब० । सो मैं नहीं कह सकता मगर आशा है कि शीघ्र ही तुम्हें सच झूठ का पता लग जायगा ।

भूतनाथ ने बहुत कुछ चाहा मगर नकाबपोश ने उसके मतलब की कोई बात न कही । थोड़ी देर तक इधर उधर की बातें करके नकाबपोश विदा हुए और जाती समय एक सवाल के जवाब में कह गये कि 'आप लोग दो दिन और सब्र करें, इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के सामने ही सब भेदों का खुलना अच्छा होगा क्योंकि उन्हें इन बातों के जानने का बड़ा ही शौक है ।'

दूसरा बयान

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी है । महाराज सुरेन्द्रसिंह अपने कमरे में पलंग पर लेटे हुए जीतसिंह से धीरे धीरे कुछ बातें कर रहे हैं जो चारपाई के नीचे उनके पास ही बैठे हैं। केवल जीतसिंह ही नहीं बल्कि उनके पास वे दोनो नकाबपोश भी बैठे हुए हैं जो दर्बार में आकर लोगों को ताज्जुब में डाला करते हैं और जिनका नाम रामसिंह और लक्ष्मणसिंह है । हम नहीं कह सकते कि ये लोग कब से इस कमरे में बैठे हुए हैं या इसके पहिले इन लोगों में क्या क्या बातें हो चुकी हैं, मगर इस समय ये लोग कई ऐसे मामलों पर बात चीत कर रहे हैं जिनका होना बहुत जरूरी समझा जाता है ।

बात करते करते एक दफे कुछ रुक कर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जीतसिंह से कहा, "इस राय में गोपालसिंह का भी शरीक होना उचित जान पड़ता है, किसी को भेज कर उन्हें बुलाना चाहिये ।"

"जो आज्ञा" कह कर जीतसिंह उठे और कमरे के बाहर जा कर राजा

गोपालसिंह को बुलाने के लिए एक चोबदार को हुक्म देने बाद पुनः अपने ठिकाने पर बैठ कर बातचीत करने लगे।

जीतसिंह०। इसमें तो कोई शक नहीं कि भूतनाथ आदमी चालाक और पूरे दर्जे का ऐयार है मगर उसके दुश्मन लोग उस पर बेतरह टूट पड़े हैं और चाहते हैं कि जिस तरह बने उसे बर्बाद कर दें और इसीलिए उसके पुराने ऐबों को उधेड़ कर उसे तरह तरह की तकलीफें दे रहे हैं!

सुरेन्द्र०। ठीक है, मगर हमारे साथ भूतनाथ ने सिवाय एक दफे चोरी करने के और कौन सी बुराई की है जिसके लिए हम उसे सजा दें या बुरा कहें।

जीतसिंह०। कुछ भी नहीं, और वह चोरी भी उसने किसी बुरी नीयत से नहीं की थी, इस विषय में नानक ने जो कुछ कहा था महाराज सुन ही चुके हैं।

सुरेन्द्र०। हाँ मुझे याद है और उसने हम लोगों पर अहसान भी बहुत किये हैं बल्कि यों कहना चाहिये कि उसी की बदौलत कमलिनी किशोरी लक्ष्मीदेवी और इन्दिरा वगैरह की जानें बचीं और गोपालसिंह को भी उसकी मदद से बहुत फायदा पहुँचा है इन्हीं सब बातों को सोच के तो देवीसिंह ने उसे अपना दोस्त बना लिया था, मगर साथ ही इसके इस बात को भी समझ रखना चाहिये कि जब तक भूतनाथ का मामला तै न हो जायगा तब तक लोग उसके ऐबों को खोद खोद कर निकाला ही करेंगे और तरह की बातें गढ़ते रहेंगे।

एक नकाबपोश०। सो तो ठीक है। सच पूछिये तो भूतनाथ का मुकदमा ही कैसा और मामला ही क्या? मुकदमा तो असल में नकली बलभद्रसिंह का है जिसने इतना बड़ा कसूर करने पर भी भूतनाथ पर इल्जाम लगाया है। उस पीतल वाली सन्दूकड़ी से तो हम लोगों को कोई मतलब ही नहीं, हां बाकी रह गया चीठियों वाला मुट्ठा जिसके पढ़ने से भूतनाथ लक्ष्मीदेवी का कसूरवार मालूम होता है सो उसका जवाब भूतनाथ काफी तौर पर दे देगा और साबित कर देगा कि वह चीठियाँ उसके हाथ की लिखी हुई होने पर भी वह कसूरवार नहीं है और वास्तव में वह बलभद्रसिंह का दोस्त है दुश्मन नहीं।

सुरेन्द्र०। (लम्बी सांस लेकर) ओफ ओह! इस थोड़े जमाने में कैसे कैसे उलट फेर हो गए। बेचारे गोपालसिंह के साथ कैसी कैसी धोखेबाजियाँ की गईं! इन बातों पर जब हमारा ध्यान जाता है तो मारे क्रोध के बुरा हाल

हो जाता है !!

जीत० । ठीक है, मगर खैर अब इन बातों पर क्रोध करने की जगह नहीं रही क्योंकि जो कुछ होना था हो गया । ईश्वर की कृपा से गोपालसिंह भी मौत की तकलीफ उठा कर बच गये और अब हर तरह प्रसन्न हैं, इसके अतिरिक्त उनके दुश्मन लोग भी गिरफ्तार हो कर अपने पञ्जे में आये हुए हैं ।

सुरेन्द्र० । बेशक ऐसा ही है मगर हमें कोई ऐसी सजा नहीं सूझती जो उनके दुश्मनों को देकर कलेजा ठण्ढा किया जाय और समझा जाय कि अब गोपालसिंह के साथ बुराई करने का बदला ले लिया गया ।

महाराज सुरेन्द्रसिंह इतना कह ही रहे थे कि राजा गोपालसिंह कमरे के अन्दर आते हुए दिखाई पड़े क्योंकि उनका डेरा इस कमरे से बहुत दूर न था ।

राजा गोपालसिंह सलाम करके पलंग के पास बैठ गये और इसके बाद दोनों नकाबपोशों से भी साहब सलामत करके मुस्कुराते हुए बोले, "आप लोग कब से बैठे हैं ?"

एक नकाबपोश० । हम लोगों को आए बहुत देर हो गई ।

सुरेन्द्र० । ये बेचारे कई घण्टे से बैठे हुए हमारी तबीयत बहला रहे हैं और कई जरूरी बातों पर विचार करने के लिये आये हैं ।

गोपाल० । वे कौन सी बातें हैं ?

सुरेन्द्र० । यही लड़कों की शादी, भूतनाथ का फैसला, कैदियों का मुकद्दमा, कमलिनी और लाड़िली के साथ उचित बर्ताव इत्यादि विषयों पर बातचीत हो रही है और सोच रहे हैं कि किस तरह क्या किया जाय तथा पहिले क्या काम हो ?

गोपाल० । इस समय मैं भी इसी उलझन में पड़ा हुआ था । मैं सोया नहीं था बल्कि जागता हुआ इन्हीं बातों को सोच रहा था कि आपका सन्देशा पहुँचा और तुरत उठ कर इस तरफ चला आया । (नकाबपोशों की तरफ बताकर) आप लोग तो अब हमारे घर के व्यक्ति हो रहे हैं अस्तु ऐसे विचारों में आप लोगों को शरीक होना ही चाहिये ।

सुरेन्द्र० । जीतसिंह कहते हैं कि कैदियों का मुकद्दमा होने और उनको सजा देने के पहिले ही दोनों लड़कों की शादी हो जानी चाहिए जिसमें कैदी

लोग भी इस उत्सव को देख कर अपना जी जला लें और समझ लें कि उनकी बेईमानी हरमजदगी और दुश्मनी का नतीजा क्या निकला ! साथ ही इसके एक बात का फायदा और भी होगा, अर्थात् कैदियों के पक्षपाती लोग भी, जो ताज्जुब नहीं कि इस समय भी कहीं इधर उधर छिपे मन के लड्डू बना रहे हों, समझ जायँगे कि अब उन्हें दुश्मनी करने की कोई जरूरत नहीं रही और न ऐसा करने से कोई फायदा ही है।

गोपाल०। ठीक है, जब तक दोनो कुमारों की शादी न हो जायगी तब तक तरह तरह के खुटके बने ही रहेंगे। शादी हो जाने के बाद मेहमानों के सामने ही कैदियों को जहन्नुम में पहुँचा कर दुनिया को दिखा दिया जाय कि बुरे कर्मों का नतीजा यह होता है।

सुरेन्द्र०। खैर तो आपकी भी यही राय होती है ?

गोपाल०। बेशक !!

सुरेन्द्र०। (जीतसिंह की तरफ देख कर) तो अब हमें और किसी से राय मिलाने की जरूरत नहीं रही, आप हर तरह का बन्दोबस्त शुरू कर दें और जहाँ जहाँ न्यौता भेजना हो भेजवा दें।

जीत०। जो आज्ञा। अच्छा अब भूतनाथ के विषय में भी कुछ तै हो जाना चाहिये।

गोपाल०। हम लोगों में से कौन सा आदमी ऐसा है जो भूतनाथ के अहसान के बोझ से दबा हुआ न हो ? बाकी रही यह बात कि जैपाल ने भूतनाथ के हाथ की चीठियाँ कमलिनी और लक्ष्मीदेवी को दिखा कर भूतनाथ को दोषी ठहराया है, सो वास्तव में भूतनाथ दोषी नहीं है और इस बात का सबूत भी वह दे देगा।

सुरेन्द्र०। हाँ तुमको तो इन सब बातों का सच्चा सच्चा हाल जरूर ही मालूम होगा क्योंकि तुम्हीं ने कृष्णाजिन्न बन कर उसकी सहायता की थी, अगर वास्तव में वह दोषी होता तो तुम ऐसा क्यों करते ?

गोपाल०। बेशक यही बात है, इन्दिरा का किस्सा आपको मालूम ही है क्योंकि मैंने आपको लिख ही भेजा था और आशा है कि आपको याद होगा।

सुरेन्द्र०। हां मुझे बखूबी याद है, बेशक उस जमाने में भूतनाथ ने तुम लोगों

की बड़ी सहायता की थी बल्कि इसी सबब से उससे और दारोगा से दुश्मनी हो गई थी अस्तु कब हो सकता है कि भूतनाथ लक्ष्मीदेवी के साथ दगा करता, जो कि दारोगा से दोस्ती और बलभद्रसिंह से दुश्मनी किये बिना हो ही नहीं सकती थी! लेकिन आखिर यह बात क्या है? वे चीठियां भूतनाथ की लिखी हैं या नहीं? फिर, इस जगह एक बात का और भी खयाल हो रहा है। वह यह है कि उस मुट्ठे में दोनों तरफ की चीठियां मिली हुई हैं, अर्थात् जो रघुबरसिंह ने भेजीं वे भी हैं और जो रघुबर के नाम की आई थीं वे भी हैं।

गोपाल०। जी हां यह बात भी बहुत से शकों को दूर करती है। असल यह है कि वे सब चीठिया भूतनाथ के हाथ की नकल की हुई हैं। वह रघुबरसिंह जो दारोगा का दोस्त और जमानिया में रहता था उसी की यह सब कार्रवाई है और यह सब विष उसी के बोये हैं। वह भी बहुत जगह इशारे के तौर पर अपना नाम 'भूत' लिखा करता था। आपने इन्दिरा के हाल में पढ़ा होगा कि भूतनाथ बेनीसिंह बन कर बहुत दिनों तक रघुबरसिंह के यहां रह चुका है और उन दिनों यही भूतनाथ हेलासिंह के यहा रघुबरसिंह का खत ले कर आया जाया करता था.....

सुरेन्द्र०। ठीक है ठीक है, मुझे याद है।

गोपाल०। बस वे सब चीठिया उन्हीं चीठियों की नकल हैं। भूतनाथ ने मौके पर दुश्मनों को कायल करने के लिये उन चीठियों की नकल करली थी, और कुछ उसके घर से भी चुराई थीं। बस भूतनाथ की गलती या बेईमानी जो कुछ समझिये यही है कि उस समय शायद कुछ नगदी फायदे के लिये उसने इस मामले को दबा रक्खा और उसी वक्त मुझ पर प्रगट न कर दिया। रिश्वत लेकर दारोगा को छोड़ देना और कमलदान के भेद को छिपा रखना भी भूतनाथ के ऊपर धब्बा लगाता है। अगर ऐसा न होता तो मुझे यह बुरा दिन देखना नसीब न होता और इन्हीं भूलों पर भूतनाथ पछताता और अफसोस करता है, मगर अखिर में भूतनाथ ने इन बातों का बदला भी ऐसा अदा किया कि ये सब कसूर माफ कर देने के लायक हो गये।

सुरेन्द्र०। उस समय उस कालमदान में क्या चीज थी?

गोपाल०। उस कलमदान को दारोगा की उस गुप्त सभा का दफ्तर सम-

भिये। सभासदों के नाम और सभा के मुख्य मुख्य भेद उसी में बन्द रहते थे, इसके अतिरिक्त दामोदरसिंह ने जो वसीयतनामा इन्दिरा के नाम लिखा था वह भी उसी में बन्द था।

सुरेन्द्र०। ठीक है ठीक है, इन्दिरा के कि से में यह बात भी तुमने लिखी थी हमें अब याद आया। इसमें अब कोई शक नहीं कि उन दिनों लालच में पड़ कर भूतनाथ ने बहुत बुरा किया और उस सबब से तुम लोगों को तकलीफ उठानी पड़ी।

एक नकाबपोश०। शायद भूतनाथ को इस बात की खबर न थी कि इस लालच का नतीजा कहा तक बुरा निकलेगा।

सुरेन्द्र०। जो हो मगर उस समय की बातों पर ध्यान देने से यही कहना पड़ता है कि उन दिनों भूतनाथ एक हाथ से भलाई कर रहा था और दूसरे हाथ से बुराई।

गोपाल०। ठीक है, बेशक ऐसी ही बात थी।

सुरेन्द्र०। (जीतसिंह की तरफ देख के) भूतनाथ और इन्द्रदेव को भी इसी समय यहाँ बुला कर इस मामले को तै ही कर देना चाहिये।

"जो आज्ञा" कह कर जीतसिंह उठे और कमरे के बाहर जा कर चोबदार को हुक्म देने बाद लौट आये, इसके बाद कुछ देर तक सन्नाटा रहा और फिर गोपालसिंह ने कहा :—

गोपाल०। अपने खयाल में तो भूतनाथ ने कोई बुराई नहीं की थी क्योंकि बीस हजार अशर्फी दारोगा से वसूल करके * उसे छोड़ देने पर भी उसने एक एकरारनामा लिखा लिया था कि 'वह (दारोगा) ऐसे काम में शरीक न होगा और न खुद ऐसा कोई काम करेगा जिसमें इन्द्रदेव, सर्यू, इन्दिरा और मुझे (गोपालसिंह को) किसी तरह का नुकसान पहुँचे।' मगर दारोगा फिर भी बेईमानी कर ही गया और भूतनाथ एकरारनामे के भरोसे बैठा रह गया। इससे खयाल होता है कि शायद भूतानाथ को भी इन मामलों की खबर न हो अर्थात् मुन्दर का हाल मालूम न हुआ हो और लक्ष्मीदेवी के बारे में धोखा खा गया हो तो भी ताज्जुब नहीं।

* इन्दिरा का किस्सा, सन्तति पन्द्रहवाँ हिस्सा पहिला बयान।

सुरेन्द्र०। हो सकता है (कुछ देर तक चुप रहने के बाद) मगर यह तो बताओ कि इन सब मामलों की खबर तुम्हें कब और क्योंकर लगी ?

गोपाल०। इन सब बातों का पता मुझे भूतनाथ के भाई 'शेरसिंह' की जुबानी लगा जो भूतनाथ को भाई की तरह प्यार तो करता है मगर उसकी इन सब लालच की कार्रवाइयों के बुरे नतीजे से उसे पूरा कसूरवार समझ कर उससे डरता और नफरत करता है। जिन दिनों रोहतासगढ़ का राजा दिग्विजयसिंह किशोरी को अपने किले में ले गया था और इस सबब से शेरसिंह ने अपनी नौकरी छोड़ दी थी उन दिनों भूतनाथ छिपा छिपा फिरता था, मगर जब शेरसिंह ने उस तिलिस्मी तहखाने में जाकर डेरा डाला † और छिपे छिपे कमला और कामिनी की मदद करने लगा उन दिनों उस तिलिस्मी तहखाने में जाकर भूतनाथ ने शेरसिंह से एक तौर पर (बहुत दिनों तक गायब रहने के बाद) नई मुलाकात की, मगर धर्मात्मा शेरसिंह को यह बात बहुत बुरी मालूम हुई.....

गोपालसिंह इतना कह ही रहे थे कि भूतनाथ और इन्द्रदेव कमरे के अन्दर आ पहुँचे और सलाम करके आज्ञानुसार जीतसिंह के पास बैठ गये।

जीत०। (भूतनाथ और इन्द्रदेव से) आप लोग बहुत जल्द आ गये !

इन्द्रदेव०। हम दोनों इसी जगह बरामदे के नीचे बाग में टहल रहे थे इसलिए चोबदार नीचे उतरने के साथ ही हम लोगों से जा मिला।

जीत०। खैर, (गोपालसिंह से) हां तब ?

गोपाल०। अपनी नेकनामी में धब्बा लगने और बदनाम होने के डर से भूतनाथ की सूरत देखना भी शेरसिंह पसन्द नहीं करता था बल्कि उसका तो यही बयान है कि 'मुझे भूतनाथ से मिलने की आशा ही न थी और मैं समझे हुए था कि अपने दोषों से लज्जित होकर भूतनाथ ने जान दे दी।' मगर जिस दिन उसने उस तहखाने में भूतनाथ की सूरत देखी कांप उठा और उसने भूतनाथ को बहुत लानत मलामत करने के बाद कहा कि 'अब तुम हम लोगों को अपना मुंह मत दिखाओ और हमारी जान और आबरू पर दया करके किसी दूसरे देश में चले जाओ।' मगर भूतनाथ ने इस बात को मंजूर न किया और

† सन्तति तीसरा हिस्सा तेरहवां बयान।

यह कह कर अपने भाई से बिदा हुआ कि 'चुपचाप बैठे देखते रहो कि मैं किस तरह अपने पुराने परिचितों में प्रगट हो कर खास राजा बीरेन्द्रसिंह का ऐयार बनता हूँ।' बस इसके बाद भूतनाथ कमलिनी से जा मिला और जी जान से उसकी मदद करने लगा। मगर शेरसिंह को यह बात भी पसन्द न आई। यद्यपि कुछ दिनों तक शेरसिंह ने कमलिनी तथा हम लोगों का साथ दिया, मगर डरते डरते। आखिर एक दिन शेरसिंह ने एकान्त में मुझसे मुलाकात की और अपने दिल का हाल तथा मेरे विषय में जो कुछ जानता था कहने बाद बोला, "यह सब हाल कुछ मुझे अपने भाई भूतनाथ की जुबानी मालूम हुआ और कुछ रोहतासगढ़ को इस्तीफा देने के बाद तहकीकात करने से मालूम हुआ, मगर इस बात की खबर हम दोनों भाइयों में से किसी को भी न थी कि आपको मायारानी ने कैद कर रक्खा है। खैर अब ईश्वर की कृपा से आप छूट गए हैं इस लिये आपके सम्बन्ध में जो कुछ मुझे मालूम है आपसे कह दिया जिसमें आप दुश्मनों से अच्छी तरह बदला ले सकें। अब से मैं अपना मुंह किसी को दिखाना नहीं चाहता क्योंकि मेरा भाई भूतनाथ जिसे मैं मरा हुआ समझता था प्रगट हो गया और न मालूम क्या क्या किया चाहता है। कहीं ऐसा न हो कि गेहूँ के साथ घुन भी पिस जाय, अस्तु अब मैं जहां भागते बनेगा भाग जाऊंगा। हां अगर भूतनाथ जोकि बड़ा जिद्दी और उत्साही है किसी तरह नेकनामी के साथ राजा बीरेन्द्रसिंह का ऐयार बन गया तो पुनः प्रगट होऊंगा।" इतना कह कर शेरसिंह न मालूम कहां चला गया, मैंने बहुत कुछ समझाया मगर उसने एक न मानी। (कुछ रुक कर) यही सबब है कि मुझे इन सब बातों से आगाही हो गई और मैं भूतनाथ के भी बहुत से भेदों को जान गया।

जीत०। ठीक है (भूतनाथ की तरफ देख के) भूतनाथ! इस समय तुम्हारा ही मामला पेश है, इस जगह जितने आदमी हैं सभी कोई तुमसे हमदर्दी करते हैं, महाराज भी तुमसे बहुत प्रसन्न हैं, ताज्जुब नहीं कि वह दिन आज ही हो कि तुम्हारे कसूर माफ किये जायँ और तुम महाराज के ऐयार बन जाओ, मगर तुम्हें अपना हाल या जो कुछ तुमसे पूछा जाय उसका जवाब सच सच कहना और देना चाहिये। इस समय तुम्हारा ही किस्सा हो रहा है।

भूतनाथ०। (खड़ा हो कर सलाम करने बाद) आज्ञा के विरुद्ध कदापि

न करूंगा और कोई बात छिपा न रक्खूंगा।

जीत०। तुम्हें यह तो मालूम ही होगा कि सर्यू और इन्दिरा भी यहां आ गई हैं जो जमानियां के तिलिस्म में फँसी हुई थीं और जिन्होंने अपना अनूठा किस्सा बड़े दर्द के साथ बयान किया था।

भूतनाथ०। (हाथ जोड़ के) जी हां, मुझ कम्बख्त की बदौलत उन्हें उस कैद की तकलीफ भोगनी पड़ी। उन दिनों बदकिस्मती ने मुझे हद्द से ज्यादे लालची बना दिया था, अगर मैं लालच में पड़ कर दारोगा को छोड़ न देता तो यह बात न होती। आपने सुना ही होगा कि उन दिनों हथेली पर जान ले कर मैंने कैसे कैसे काम किये थे, मगर दौलत की लालच ने मेरे सब कामों पर मिट्टी डाल दी। अफसोस मुझे इस बात की कुछ भी खबर न हुई कि दारोगा ने अपनी प्रतिज्ञा के विरुद्ध काम किया, अगर खबर लग जाती तो उससे समझ लेता।

जीत०। अच्छा यह बताओ कि तुम्हारा भाई शेरसिंह कहाँ है?

भूत०। मेरे यहाँ होने के सबब से न मालूम वह कहाँ जाकर छिपा बैठा है। उसे विश्वास है कि 'भूतनाथ जिसने बड़े बड़े कसूर किये हैं कभी निर्दोष छूट नहीं सकता बल्कि ताज्जुब नहीं कि उसके सबब से मुझ पर भी किसी तरह का इलजाम लगे!' हाँ अगर वह मुझे बेकसूर छूटा हुआ देखेगा या सुनेगा तो तुरत प्रगट हो जायगा।

जीत०। वह चीठियों वाला मुट्ठा तुम्हारे ही हाथ का लिखा हुआ है या नहीं।

भूत०। जी वे सब चीठियाँ हैं तो मेरे ही हाथ की लिखी हुई मगर वे असल नहीं बल्कि असली चीठियों की नकल हैं जो कि मैंने जैपाल (रघुबरसिंह) के यहाँ से चोरी की थीं। असल में इन चीठियों का लिखने वाला वहीं जैपाल है।

जीत०। खैर तो जब तुमने जैपाल के यहाँ से असली चीठियों की नकल की थी तो तुम्हें उसी समय मालूम हुआ होगा कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह पर क्या आफत आने वाली है?

भूत०। क्यों न मालूम होता! परन्तु रुपये की लालच में पड़ कर अर्थात् कुछ लेकर मैंने जैपाल को छोड़ दिया! मगर बलभद्रसिंह से मैंने इस होनहार के बारे में इशारा जरूर कर दिया था, हाँ जयपाल का नाम नहीं बताया था

क्योंकि उससे रुपये वसूल कर चुका था। हाँ और यह कहना तो भूल ही गया कि रुपये वसूल करने के साथ ही साथ मैंने जैपाल से इस बात की कसम खिला ली थी कि अब वह लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह के साथ किसी तरह की बुराई न करेगा।" मगर अफसोस उसने (जैपाल ने) मेरे साथ दगा करके मुझे धोखे में डाल दिया और उस काम को कर गुजरा जो किया चाहता था। इसी तरह मुझे बलभद्रसिंह के बारे में भी धोखा हुआ। दुश्मनों ने उन्हें कैद कर लिया और मुझे हर तरह से विश्वास दिला दिया कि बलभद्रसिंह मर गये। लक्ष्मीदेवी के बारे में जो कुछ चालाकी दारोगा ने की उसका मुझे कुछ भी पता न लगा और न मैं कई वर्षों तक लक्ष्मीदेवी की सूरत ही देख सका कि पहचान लेता। बहुत दिनों के बाद जब मैंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा भी तो मुझे किसी तरह का शक न हुआ क्योंकि लड़कपन की सूरत में और अधेड़पन की सूरत में बहुत बड़ा फर्क पड़ सकता है। इसके अतिरिक्त जिन दिनों मैंने नकली लक्ष्मीदेवी को देखा था उस समय उसकी दोनों बहिनें अर्थात् श्यामा (कमलिनी) और लाडली भी उसके साथ रहती थीं, जब कि वे ही दोनों उसकी बहिन होकर धोखे में पड़ गईं तो मेरी कौन गिनती है।

बहुत दिनों के बाद जब यह कागज का मुट्ठा मेरे यहाँ से चोरी हो गया तब मैं घबड़ाया और डरा कि समय पर यह चोरी गया हुआ मुट्ठा मुझी को मुजरिम बना देगा। आखिर ऐसा ही हुआ दुष्टों ने वही कागज का मुट्ठा कैद-खाने में बलभद्रसिंह को दिखा कर मेरी तरफ से उनका दिल फेर दिया और तमाम दोष मेरे ही सर पर थोपा। इसके बाद और भी कई वर्ष बीत जाने पर जब राजा गोपालसिंह के मरने की खबर उड़ी और किसी को किसी तरह का शक न रहा तब धीरे धीरे मुझे दारोगा और रघुबर की शैतानी का कुछ पता लगा मगर फिर मैंने जान बूझ कर तरह दे दिया और सोचा कि अब इन बातों को खोदने से फायदा ही क्या? जब कि खुद राजा गोपालसिंह ही इस दुनिया से उठ गये तो मैं किसके लिये इन बखेड़ों को उठाऊँ (हाथ जोड़ कर) बेशक यही मेरा कसूर है और इसी लिये मेरा भाई भी रंज है। हाँ इधर जब कि मैंने देखा कि अब श्रीमान् राजा बीरेन्द्रसिंहजी का दौरदौरा है और कमलिनी भी उस घर निकल खड़ी हुई तब मैंने भी फिर सर उठाया और अबकी

दफे नेकनामी के साथ नाम पैदा करने का इरादा कर लिया। इस बीच में मुझ पर बड़ी बड़ी आफतें आईं, मेरे मालिक रणधीरसिंह भी मुझसे बिगड़ गये और मैं अपना मुँह लेकर दुनिया से किनारे हो बैठा तथा अपने को मरा हुआ मशहूर कर दिया, इत्यादि कहां तक बयान करूँ, बात तो यह है कि मैं सर से पैर तक अपने को कसूरवार समझ कर भी महाराज की शरण में आया।

जीत०। तुम्हारी पिछली कार्रवाइयों का बहुत सा हाल महाराज को मालूम हो चुका है, उस जमाने में इन्दिरा को बचाने के लिये जो कार्रवाइयाँ तुमने की थीं उससे महाराज प्रसन्न हैं, खास करके इस लिये कि तुम्हारे हर एक काम में दबंगता का हिस्सा ज्यादे था और तुम सच्चे दिल से इन्द्रदेव के साथ दोस्ती का हक अदा कर रहे थे, मगर इस जगह हमें एक बात का बड़ा ताज्जुब है।

भूत०। वह क्या?

जीत०। इन्दिरा के बारे में जो जो काम तुमने किये थे वे इन्द्रदेव से तो तुमने जरूर कहे होंगे?

भूत०। बेशक जोकुछ मैं करताथा वह इन्द्रदेव से पूरा पूरा कह देताथा।

जीत०। तो फिर इन्द्रदेव ने दारोगा को क्यों छोड़ दिया, सजा देना तो दूर रहे इन्होंने गुरुभाई का नाता तक नहीं तोड़ा!

भूत०। (एक लम्बी साँस लेकर और उँगली से इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके) इनके ऐसा भी बहादुर और मुरौवत का आदमी मैंने दुनिया में नहीं देखा। इनके साथ जो कुछ सलूक मैंने किया था उसका बदला एक ही काम में इन्होंने ऐसा अदा किया कि जो इनके सिवाय कोई दूसरा कर ही नहीं सकता था और जिससे मैं जन्म भर इनके सामने सर उठाने लायक न रहा, अर्थात् जब मैंने रिश्वत लेकर दारोगा को छोड़ देने और कलमदान दे देने का हाल इनसे कहा तो सुनते ही इनकी आँखों में आँसू भर आये और एक लम्बी सांस लेकर इन्होंने मुझसे कहा, "भूतनाथ! तुमने यह काम बहुत ही बुरा किया! किसी न किसी दिन इसका नतीजा बहुत ही बुरा निकलेगा! खैर, अब जो कुछ होना था हो गया, तुम मेरे दोस्त हो अस्तु जो कुछ तुम कर आये उसे मैं भी मंजूर करता हूँ और दारोगा को एक दम भूल जाता हूँ। अब मेरी लड़की और स्त्री पर भी चाहे कैसी ही आफत क्यों न आए और मुझे भी

चाहे कितना ही कष्ट क्यों न भोगना पड़े मगर आज से मैं दारोगा का नाम भी न लूँगा और न अपनी स्त्री के विषय में ही किसी से कुछ जिक्र करूँगा, जो कुछ तुम्हें करना हो करो और उस कम्बख्त दारोगा से भी भले ही कह दो कि 'इन बातों की खबर इन्द्रदेव को नहीं दी गई।' मैं भी अपने को ऐसा ही बनाऊँगा कि दारोगा को किसी तरह का खुटका न होगा और वह मुझे निरा उल्लू ही समझता रहेगा।" इन्द्रदेव की यह बात मेरे कलेजे में तीर की तरह लगी और मैं यह कह कर उठ खड़ा हुआ कि 'दोस्त मुझे माफ करो! बेशक मुझसे बड़ी भूल हुई, अब मैं दारोगा को कभी न छोड़ूँगा और जो कुछ उससे लिया है उसे वापस कर दूँगा!' इतना कहते ही इन्द्रदेव ने मेरी कलाई पकड़ ली और जोर के साथ मुझे बैठा कर कहा, "भूतनाथ! मैंने यह बात तुमसे ताने के ढंग पर नहीं कही थी कि सुनने के साथ ही तुम उठ खड़े हुए! नहीं नहीं, ऐसा कभी न होने पावेगा! हमने और तुमने जो कुछ किया सो किया और जो कहा सो कहा, अब उसके बिपरीत हम दोनों में से कोई भी न कर सकेगा!"

सुरेन्द्र०। शाबाश!!

इतना कह कर सुरेन्द्रसिंह ने मुहब्बत की निगाह से इन्द्रदेव की तरफ देखा और भूतनाथ ने फिर इस तरह कहना शुरू किया :—

भूत०। मैंने बहुत कुछ कहा मगर इन्द्रदेव ने एक न मानी और बहुत बड़ी कसम देकर मेरा मुँह बन्द कर दिया' मगर इस बात का नतीजा यह निकला कि उसी दिन से हम दोनों दोस्त दुनिया से उदासीन हो गये, मेरी उदासीनता में तो कुछ कसर भी रह गई मगर इन्द्रदेव की उदासीनता में किसी तरह की कसर न रही। यही सबब था कि इन्द्रदेव के हाथ से दारोगा बच गया और दारोगा इन्द्रदेव की तरफ से (मेरे कहे मुताबिक) बेफिक्र रहा।

सुरेन्द्र०। बेशक इन्द्रदेव ने यह बड़े हौसले और सब्र का काम किया।

गोपाल०। दोस्ती का हक अदा करना इसे कहते हैं, जितने एहसान भूतनाथ ने इन पर किये थे सभों का बदला एक ही बात से चुका दिया।

भूत०। (गोपालसिंह की तरफ देख के) कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह से इन्दिरा ने अपना हाल किस तरह बयान किया था सो मुझे मालूम

न हुआ। अगर यह मालूम हो जाता तो अच्छा होता कि इन्दिरा ने जो कुछ बयान किया था वह ठीक है अथवा उसने जो कुछ सुना था वह सच था?

गोपाल०। जहां तक मेरा खयाल है मैं कह सकता हूँ कि इन्दिरा ने अपने विषय में कोई बात ज्यादे नहीं कही, बल्कि ताज्जुब नहीं कि वह कई बातें मालूम न होने के कारण छोड़ गई हो। मैंने उसका पूरा पूरा किस्सा महाराज को लिख भेजा था (जीतसिंह की तरफ देख कर) अगर मेरी वह चीठी यहां मौजूद हो तो भूतनाथ को दे दीजिए उसमें से इन्दिरा का किस्सा पढ़ कर ये अपना शक मिटा लें।

"हां वह चीठी मौजूद है" इतना कह कर जीतसिंह उठे और आलमारी से वह किताबनुमा चीठी निकाल कर और इन्दिरा का किस्सा बता कर भूतनाथ को दे दी। भूतनाथ उसे तेजी के साथ पढ़ गया और अन्त में बोला, "हां ठीक है, करीब करीब सभी बातें उसे मालूम हो गई थीं! और आज मुझे भी एक बात नई मालूम हुई, अर्थात् आखिरी मर्तबे जब मैं इन्दिरा को दारोगा के कब्जे से निकाल कर ले गया था और अपने एक अड्डे पर हिफाजत के साथ रख गया था तो वहां से यकायक उसका गायब हो जाना मुझे बड़ा ही दुःखदाई हुआ। मैं ताज्जुब करता था कि इन्दिरा कहां और क्यों चली गई। जब मैंने अपने आदमियों से पूछा तो उन्होंने कहा कि 'हम लोगों को कुछ भी नहीं मालूम कि वह कब निकल कर भाग गई क्योंकि हमलोग कैदियों की तरह उस पर निगाह नहीं रखते थे बल्कि घर का आदमी समझ कर कुछ बेफिक्र थे।' परन्तु मुझे अपने आदमियों की बात पसन्द न आई और मैंने उन लोगों को सख्त सजा दी। आज मालूम हुआ कि वह काटे तो मायाप्रसाद के बोये हुए थे। मैं उसे अपना दोस्त समझता था मगर अफसोस! उसने मेरे साथ बड़ी दगा की!!"

गोपाल०। इन्दिरा की जुबानी यह किस्सा सुन कर मुझे भी निश्चय हो गया कि मायाप्रसाद दारोगा का हिती है अस्तु मैंने उसे तिलिस्म में कैद कर दिया है। अच्छा यह तो बताओ कि उस समय जब तुम आखिरी मर्तबे इन्दिरा को दारोगा के यहाँ से निकाल कर अपने अड्डे पर रख आये और लौट कर पुनः जमानिया गये तो फिर क्या हुआ? दारोगा से कैसी निपटी और सर्यू का

पता क्यों न लगा सके ?

भूत० । इन्दिरा को उस ठिकाने रख कर जब मैं लौटा तो पुनः जमानिया गया परन्तु अपनी हिफाजत के लिए पांच आदमियों को अपने साथ लेता गया और उन्हें (अपने आदमियों को) क्या क्या करना चाहिये, इस बात को अच्छी तरह समझा दिया क्योंकि वे पांचों आदमी मेरे शागिर्द थे और कुछ ऐयारी भी जानते थे । मुझे सर्यू के लिए दारोगा से फिर मुलाकात करने की जरूरत थी मगर उसके घर में जा कर मुलाकात करने का इरादा न था क्योंकि मैं खूब समझता था कि यह 'दूध का जला छांछ फूंक फूंक के पीता होगा' और मेरे लिए अपने घर में कुछ न कुछ बन्दोबस्त जरूर कर रक्खे होगा, अगर अबकी दिलेरी के साथ उसके घर में जाऊँगा, तो बेशक फँस जाऊँगा इसलिए बाहर ही उससे मुलाकात करने का बन्दोबस्त करने लगा । खैर इस फेर में दस बारह दिन बीत गये और इस बीच में उससे मुलाकात करने का कोई अच्छा मौका न मिला, पता लगाने से मालूम हुआ कि वह बीमार है और घर से बाहर नहीं निकलता । यह बात मुझे मायाप्रसाद ने कही थी मगर मैंने मायाप्रसाद से इन्दिरा के बारे में कुछ भी नहीं कहा और न राजा साहब (गोपालसिंह की तरफ इशारा करके) ही से कुछ कहा क्योंकि दारोगा को बेदाग छोड़ देने के लिए मेरे दोस्त इन्द्रदेव ने पहिले ही से तै कर दिया था, अगर राजा साहब से मैं कुछ कहता तो दारोगा जरूर सजा पा जाता । लेकिन मैं यह नहीं कह सकता कि मायाप्रसाद और दारोगा को इस बात का पता क्योंकर लग गया कि इन्दिरा फलानी जगह है खैर मुख्तसर यह है कि एक दिन स्वयम् मायाप्रसाद ने मुझसे कहा कि 'गदाधरसिंह ! मै तुम्हें इसकी इत्तला देता हूँ कि दर्यू निःसन्देह दारोगा की कैद में है मगर बीमार है अगर तुम किसी तरह दारोगा के मकान में चले जाओ तो उसे जरूर अपनी आंखो से देख सकोगे, मेरी इस बात में तुम किसी तरह शक न करो मै बहुत पक्की बात तुमसे कह रहा हूँ ।' मायाप्रसाद की बात सुन कर मुझे एक दफे जोश चढ़ आया और मै दारोगा के मकान में जाने के लिये तैयार हो गया । मैं क्या जानता था कि मायाप्रसाद दारोगा से मिला हुआ है । खैर मैं अपनी हिफाजत के लिए कई तरह का बन्दोबस्त करके आधी रात के समय कमन्द के जरिये दारोगा के लम्बे चौड़े और शैतान की

आंत की सूरत वाले मकान में घुस गया और चोरों की तरह टोह लगाता हुआ उस कमरे में जा पहुँचा जिसमें दारोगा एक गद्दी के ऊपर उदास बैठा हुआ कुछ सोच रहा था। उस समय उसके बदन पर कई जगह पट्टी बंधी हुई थी जिससे वह चुटीला मालूम पड़ता था और उसके सर का भी यही हाल था। दारोगा मुझे देखते ही चौंक उठा और आंखें चार होने के साथ ही मैंने उससे कहा, "दारोगा साहब! मैं आपके मकान में कैद होने के लिये नहीं आया हूँ बल्कि सर्यू को देखने के लिये आया हूँ, जिसके इस मकान में होने का पता मुझे लग चुका है। आप इस समय मुझसे किसी तरह की बुराई करने की उम्मीद न रखिये क्योंकि मैं अगर आधे घण्टे के अन्दर इस मकान के बाहर हो कर अपने साथियों के पास न चला जाऊँगा तो उन्हें विश्वास हो जायगा कि गदाधरसिंह फँस गया और तब वे लोग आपको हर तरह से बर्बाद कर डालेंगे जिसका कि मैं पूरा पूरा बन्दोबस्त कर आया हूँ।"

इतना सुनते ही दारोगा खड़ा हो गया और उसने हँस कर जवाब दिया, "मेरे लिये आपको इस कड़े प्रबन्ध की कोई आवश्यकता न थी और न मुझमें इतनी सामर्थ्य है कि आप ऐसे ऐयार का मुकाबला करूं, मैं तो खुद आपकी तलाश में था कि किसी तरह आपको पाऊं और कसूर माफ कराऊं। मुझे विश्वास है कि जब आप एक बहुत ही बड़ा कसूर माफ कर चुके हैं तो इसको भी जरूर माफ कर देंगे। आइये बैठिये, गुस्से को दूर कीजिये, मैं फिर भी आपके लिये हर तरह से हाजिर हूँ।

मैं०। (बैठ कर और दारोगा को भी बैठा कर) कसूर माफ कर देने के लिए तो कोई हर्ज नहीं है मगर आइन्दे के लिए कसूर न करने का वादा करके भी मेरे साथ दगा की इसका मुझे बड़ा रञ्ज है।

दारोग०। (हाथ जोड़ कर) खैर जो हो गया सो हो गया अब अगर फिर कोई कसूर मुझसे हो तो जो चाहे सजा दीजियेगा मैं ओफ भी न करूँगा।

मैं०। खैर एक दफे और सही, मगर इस कसूर के लिये आपको कुछ जुर्माना जरूर देना पड़ेगा।

दारोगा०। यद्यपि आप मुझे पहिले ही कङ्गाल कर चुके हैं मगर फिर भी मैं आपकी आज्ञा पालन करने के लिए हाजिर हूँ।

मैं० । दो हजार अशर्फी ।

दारोगा० । (आलमारी में से एक थैली निकाल कर और मेरे सामने रख कर) बस इस एक हजार अशर्फी को कबूल कीजिये और.....

मैं० । (मुस्कुरा कर) मैं कबूल करता हूँ और अपनी तरफ से यह थैली आपको देकर इसके बदले में सर्यू को मांगता हूँ जो कि आपके घर में है ।

दारोगा० । बेशक सर्यू मेरे घर में है और मैं उसे आपके हवाले करूँगा मगर इस थैली को आप कबूल कर लीजिये नहीं तो मैं समझूँगा कि आपने मेरा कसूर माफ नहीं किया ।

मैं० । नहीं नहीं मैं कसम खा कर कहता हूँ कि मैंने तुम्हारा कसूर माफ कर दिया और खुशी से यह थैली तुम्हें वापस करता हूँ, अब मुझे सिवाय सर्यू के और कुछ नहीं चाहिये ।

हम दोनों में देर तक इस तरह की बातें हुईं और इसके बाद मेरी आखिरी बात सुन कर दारोगा उठ खड़ा हुआ और मेरा हाथ पकड़ कर दूसरे कमरे की तरफ यह कहता हुआ ले चला कि 'आओ मैं तुमको सर्यू के पास ले चलूं मगर अफसोस की बात है कि इस समय वह हद दर्जे की बीमार हो रही है ।' खैर वह मुझे घुमता हुआ दूसरे कमरे में ले गया और वहां मैंने एक पलंग पर सर्यू को बीमार पड़े देखा । एक मामूली चिराग उसके थोड़ी ही दूर पर जल रहा था । (लम्बी सांस लेकर) अफसोस ! मैंने देखा कि बीमारी ने उसे आखिरी मंजिल के करीब पहुँचा दिया है और वह इतनी कमजोर हो रही है कि बात करना भी उसके लिये कठिन हो रहा है । मुझे देखते ही उसकी आंखें डबडबा आईं और मुझे भी रुलाई आने लगी । मैं उसके पास बैठ गया और अफसोस के साथ उसका मुंह देखने लगा । उस समय दो लौंडियां उसकी खिदमत के लिये हाजिर थीं जिनमें से एक ने आगे बढ़ कर रूमाल से उसके आंसू पोंछे और पीछे हट गईं । मैंने अफसोस के साथ पूछा कि "सर्यू ! यह तेरा क्या हाल है ?"

इसके जवाब में सर्यू ने बहुत बारीक आवाज में रुक रुक कर कहा, "भैया ! (क्योंकि वह प्रायः मुझे भैया कह के पुकारा करती थी) मेरी बुरी अवस्था हो रही है अब मेरे बचने की आशा न करनी चाहिये । यद्यपि दारोगा ने मुझे कैद

किया था मगर इनका एहसान मानती हूँ कि इन्होंने मुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं दी बल्कि इस बीमारी में मेरी बड़ी हिफाजत की, दवा इत्यादि का भी पूरा प्रबन्ध रक्खा, मगर यह न बताया कि मुझे कैद क्यों किया था। खैर जो हो, इस समय तो मैं आखिरी दम का इन्तजार कर रही हूँ और सब तरफ से मोह माया को छोड़ ईश्वर से लौ लगाने का उद्योग कर ही रही हूँ। मैं समझ गई हूँ कि तुम मुझे लेने के लिए आये हो मगर दया कर के मुझे इसी जगह रहने दो और इधर उधर कहीं मत ले जाओ क्योंकि इस समय मैं किसी अपने को देख कर माया मोह में आत्मा को फँसाया नहीं चाहती और न गङ्गाजी का सम्बन्ध छोड़ कर यहां से किसी और जगह मरना ही पसन्द करती हूँ, यहाँ यों भी अगर गंगाजी में फेंक दी जाऊँगी तो मेरी गति हो जायगी, बस यही आखिरी प्रार्थना है। एक बात और भी है मेरे लिये दारोगा साहब को किसी तरह की तकलीफ न देना और ऐसा करना जिसमें इनकी जरा भी बेइज्जती न हो। यही मेरी वसीयत है और यही मेरी आरजू है। अब श्रीगंगाजी को छुड़ा कर मुझे नर्क में मत डालो।" इतना कह सर्यू कुछ देर के लिए चुप हो गई और मुझे उसकी अवस्था पर रुलाई आने लगी। मैं और भी कुछ देर तक उसके पास बैठा रहा और उससे धीरे धीरे बातें भी होती रहीं मगर जो कुछ उसने कहा उसका तत्व यही था कि यहां से मत हटाओ और दारोगा को कुछ तकलीफ मत दो। उस समय मेरे दिल में यही बात आई कि इन्द्रदेव को इस बात की इत्तला दे देनी चाहिये वह जैसी आज्ञा देंगे किया जायगा। मगर अपना यह विचार मैंने दारोगा से नहीं कहा क्योंकि इसे मैं इन्द्रदेव की तरफ से बेफिक्र कर चुका था और कह चुका था कि सर्यू और इन्दिरा के साथ जो कुछ बर्ताव तुमने किया है उसकी इत्तला मैं इन्द्रदेव को न दूँगा, दूसरे को कसूरवार ठहरा कर तुम्हारा नाम बचा जाऊँगा। अस्तु मैं सर्यू से दूसरे दिन मिलने का वादा करके वहां से उठा और अपने डेरे पर चला आया। यद्यपि रात बहुत कम बाकी रह गई थी परन्तु मैंने उसी समय अपने एक आदमी को पत्र देकर इन्द्रदेव के पास रवाना कर दिया और ताकीद कर दी कि एक घोड़ा किराए का लेकर दौड़ादौड़ चला जाय और जहाँ तक जल्द हो सके पत्र का जवाब लेकर लौट आवे। दूसरे दिन आधी रात जाते जाते तक वह आदमी लौट आया

और उसने इन्द्रदेव का पत्र मेरे हाथ में दिया। लिफाफा खोल कर मैंने पढ़ा, उसमें यह लिखा हुआ था :—

"तुम्हारा पत्र पढ़ने से कलेजा हिल गया। सच तो यह है कि दुनिया में मुझ सा बदनसीब भी कोई न होगा। खैर, परमेश्वर की मरजी ही ऐसी है तो मैं क्या कर सकता हूँ। हां दारोगा के बारे में मैंने जो प्रतिज्ञा तुमसे की है उसे झूठा न होने दूँगा। मैं अपने कलेजे पर पत्थर रख कर सब कुछ सहूँगा मगर वहां जाकर बेचारी सर्यू को अपना मुंह न दिखाऊंगा और न दारोगा से मिल कर उसके दिल में किसी तरह का शक आने दूँगा। हां अगर सर्यू की जान बचती नजर आवे या इस बीमारी से वह बच जाय तो उसे जिस तरह मुनासिब समझना मेरे पास पहुँचा देना और अगर वह मर जाय तो मेरी जगह तुम बैठे ही हो, उसकी अन्त्येष्टि क्रिया अपनी हिम्मत के मुताबिक कर के मेरे पास आना। मेरी तबीयत अब दुनिया से हट गई, बस इससे ज्यादे मैं और कुछ नहीं कहा चाहता, हां यदि कुछ कहना होगा तो तुमसे मुलाकात होने पर कहूँगा। आगे जो ईश्वर की मर्जी।

तुम्हारा वही—इन्द्रदेव।"

इस चीठी को पढ़ कर मैं बहुत देर तक रोता और अफसोस करता रहा, इसके बाद उठ कर दारोगा के मकान की तरफ रवाना हुआ मगर आज भी अपने बचाव का पूरा पूरा इन्तजाम करता गया। मुलाकात होने पर दारोगा ने कल से ज्यादे खातिरदारी के साथ मुझे बैठाया और देर तक बातचीत करता रहा मगर जब मैं सर्यू के पास गया तो उसकी हालत कल से आज बहुत ज्यादे खराब देखने में आई अर्थात् आज उसमें बोलने की भी ताकत न थी। मुख्तसर यह कि तीसरे दिन बेहोश और चौथे दिन आधी रात के समय मैंने सर्यू को मुर्दा पाया। उस समय मेरी क्या हालत थी सो मैं बयान नहीं कर सकता था। अस्तु उस समय जो कुछ करना उचित था और कर सकता था उसे सवेरा होने के पहिले ही कर के छुट्टी किया अर्थात् अपने खयाल से सर्यू के शरीर की दाह क्रिया इत्यादि करके पञ्चतत्व में मिला दिया और इस बात की इत्तला इन्द्रदेव को दे दी। इसके बाद इन्दिरा के लिए अपने अड्डे पर गया और वहाँ उसे न पाकर बड़ा ही ताज्जुब हुआ। पूछने पर मेरे आदमियों ने

जवाब दिया कि 'हमलोगों को कुछ भी खबर नहीं कि वह कब और कहाँ भाग गई। इस जवाब से मुझे सन्तोष न हुआ। मैंने अपने आदमियों को सख्त सजा दी और बराबर इन्दिरा का पता लगाता रहा। अब सर्यू के मिल जाने से मालूम हुआ कि उस दिन मेरी कम्बख्त आँखों ने मेरे साथ दगा की और दारोगा के मकान में मैं बीमार सर्यू को पहिचान न सका। मेरी आंखों के सामने सर्यू मर चुकी थी मैंने खुद अपने हाथ से इन्द्रदेव को यह समाचार लिखा था इसलिये इन्हें किसी तरह का शक न हुआ और सर्यू तथा इन्दिरा के गम में ये दीवाने से हो गये, हर तरह के चैन और आराम को इन्होंने इस्तीफा दे दिया और उदासीन हो एक प्रकार से साधू ही बन बैठे। मुझसे भी मुहब्बत कम कर दी और शहर का रहना छोड़ अपने तिलिस्म के अन्दर चले गये और उसी में रहने लगे मगर न मालूम क्या सोच कर इन्होंने मुझे वहां का रास्ता न बताया। मुझ पर भी इस मामले का बहुत बड़ा असर पड़ा क्योंकि ये सब बातें मेरी ही नालायकी के सबब से हुई थीं, अतएव मैंने उदासीन हो रणधीरसिंह जी की नौकरी छोड़ दी और अपने बाल-बच्चों तथा स्त्री को भी उन्हीं के यहां छोड़ बिना किसी को कुछ कहे जंगल और पहाड़ का रास्ता लिया। उधर एक और स्त्री से मैंने शादी कर ली थी जिससे नानक पैदा हुआ है, उधर भी कई ऐसे मामले हो गये कि जिनसे मैं बहुत ही उदास और परेशान हो रहा था, उसका हाल नानक की जुबानी तेजसिंह जी को मालूम हो चुका है बल्कि आपलोगों ने भी तो सुना ही होगा। अस्तु हर तरह से मैं अपने को नालायक समझ कर निकल भागा और फिर मुद्दत तक किसी को अपना मुँह न दिखाया। इधर जब जमाने ने पलटा खाया तब से कमलिनी जी से जा मिला। उन दिनों मेरे दिल में विश्वास हो गया था कि इन्द्रदेव मुझसे रञ्ज हैं अस्तु मैंने भी इनसे मिलना जुलना छोड़ दिया बल्कि यों कहना चाहिये कि हमारी इनकी पुरानी दोस्ती का उन दिनों अन्त हो गया था।

इन्द्रदेव०। बेशक यही बात थी! स्त्री के मरने की खबर सुनकर मुझे बड़ा ही रंज हुआ। मुझे कुछ तो भूतनाथ की जुबानी और कुछ तहकीकात करने पर मालूम हो ही चुका था कि मेरी लड़की और स्त्री इसी की बदौलत जहन्नुम में मिल गईं, अस्तु मैंने भूतनाथ की दोस्ती को तिलाञ्जली दे दी और मिलना

जुलना बिल्कुल बन्द कर दिया मगर इससे कहा कुछ भी नहीं, क्योंकि मैं अपनी जुबान से दारोगा को माफ कर चुका था, इसके अतिरिक्त इसने मुझ पर कुछ एहसान तो जरूर ही किये थे उसका भी खयाल था। अस्तु मैंने इसे कुछ कहा तो नहीं मगर इसकी तरफ से दिल हटा लिया और फिर अपना कोई भेद भी इसे नहीं बताया। कभी कभी इससे मुझसे इधर-उधर मुलाकात हो जाती थी क्योंकि इसे मैंने अपने मकान का तिलिस्मी रास्ता दिखाया नहीं था। अगर यह कभी मेरे मकान पर आया भी तो अपनी आँखों पर पट्टी बाँध कर। यही सबब था कि इसे लक्ष्मीदेवी का हाल मालूम न हुआ। लक्ष्मीदेवी के बारे में भी मैं इसे कसूरवार समझाता था और मुझे यह भी विश्वास था कि यह अपना बहुत सा भेद मुझसे छिपाता है और वास्तव में छिपाता था भी।

भूत०। (इन्द्रदेव से) नहीं सो बात तो नहीं है मेरे कृपालु मित्र!

इन्द्र०। अगर यह बात नहीं है तो वह कलमदान जिसे तुम आखिरी मर्तबे इन्दिरा के साथ दारोगा के यहाँ से उठा लाये थे और मुझे दे गये थे मेरे यहां से गायब क्यों हो गया!

भूत०। (मुस्कुरा कर) आपके किस मकान में से वह कलमदान गायब हो गया था?

इन्द्र०। काशीजी वाले मकान में से। उसी दिन तुम मुझसे मिलने के लिए यहाँ आये थे और उसी दिन वह कलमदान गायब हो गया।

भूत०। हाँ तो उस कलमदान को चुराने वाला मैं नहीं हूँ बल्कि मेरा लड़का नानक है, मैं तो यों भी अगर जरूरत पड़ती तो तुमसे कलमदान माँग सकता था। दारोगा की आज्ञानुसार लाडिली ने रामभोली बन कर नानक को धोखा दिया और आपके यहाँ से कलमदान चुरवा मँगवाया †।

गोपाल०। हां ठीक है, इस बात को तो मैं भी सकारूँगा क्योंकि मुझे इसका असल हाल मालूम है, बेशक इसी ढंग से यह कलमदान वहाँ पहुँचा था और अन्त में बड़ी मुश्किल से उस समय मेरे हाथ लगा जब मैं कृष्णाजिन्न बन कर रोहतासगढ़ पहुँचा था। नानक को विश्वास है कि लाडिली ने रामभोली बन कर उसे धोखा दिया था मगर वास्तव में ऐसा नहीं हुआ। वह

† देखिये सन्तति हिस्सा चौथा, बयान छठाँ।

दूसरी ही ऐयारा थी जो रामभोली बनी थी, लाडिली ने केवल एक ही दिन या दो दिन रामभोली का रूप धरा था।

जीत०। (राजा गोपालसिंह से) वह कलमदान आपको कहां से मिल गया ? दारोगा ने तो उसे बड़ी हिफाजत के साथ रक्खा होगा।

गोपाल०। बेशक ऐसा ही है मगर भूतनाथ की बदौलत वह मुझे सहज ही में मिल गया। ऐसी ऐसी चीजों को दारोगा बहुत ही गुप्त रीति से अपने अजायबघर में रखता था जिसकी ताली मायारानी से लेकर भूतनाथ ने मुझे दी थी। उस अजायबघर का भेद मेरे पिता और उस दारोगा के सिवाय कोई नहीं जानता था। मेरे पिता ही ने दारोगा को वहां का मालिक बना दिया था, जब भूतनाथ ने उसकी ताली मुझे ला दी वहा का हाल मालूम हुआ।

जीत०। (भूतनाथ से) खैर यह बताओ मनोरमा और नागर से तुमसे क्या सम्बन्ध था ?

यह सवाल सुन कर भूतनाथ सन्न हो गया और सिर झुका कर कुछ सोचने लगा। उस समय गोपालसिंह ने उसकी मदद की और जीतसिंह की तरफ देख कर कहा, "इस सवाल को छोड़ दीजिये क्योंकि वह जमाना भूतनाथ का बहुत ही बुरा तथा ऐयाशी का था। इसके अतिरिक्त जिस तरह राजा बीरेन्द्रसिंहजी ने रोहतासगढ़ के तहखाने में भूतनाथ का कसूर माफ किया था उसी तरह कमलिनी ने भी इसका वह कसूर कसम खा कर माफ कर दिया और साथ ही इसके उन ऐबों को छिपाने का भी बन्दोबस्त कर दिया है।" इसके जवाब में जीतसिंह ने कहा, "खैर जाने दो देखा जायगा।"

गोपाल०। जब से भूतनाथ ने कमलिनी का साथ किया है तब से इसने (भूतनाथ ने) जो जो काम किये हैं उन पर ध्यान देने से आश्चर्य होता है। वास्तव में इसने वह काम किये हैं जिनकी ऐसे समय सख्त जरूरत थी मगर इसका लड़का नानक तो बिल्कुल बोदा और खुदगरज निकला न तो कमलिनी के साथ मिल कर उसने कोई तारीफ का काम किया और न अपने बाप ही को किसी तरह की मदद पहुँचाई।

भूत०। बेशक ऐसा ही है, मैंने कई दफा समझाया मगर...

सुरेन्द्र०। (गोपाल से) अजायबघर में क्या बात है जिससे ऐसा अनूठा

नाम उसका रक्खा गया ? अब तो तुम्हें उसका पूरा पूरा हाल मालूम ही हो गया होगा।

गोपाल०। जी हां एक किताब है जिसे 'ताली' के नाम से सम्बोधन करते हैं, उसके पढ़ने से वहां का कुल हाल मालूम होता है। वह बड़े हिफाजत और तमाशे की जगह थी और कुछ है भी क्योंकि अब उसका काफी हिस्सा माया-रानी की बदौलत बर्बाद हो गया है।

जीत०। उस किताब (ताली) की बदौलत मायारानी को भी वहाँ का हाल मालूम हुआ होगा ?

गोपाल०। कुछ कुछ, क्योंकि उस किताब की भाषा वह अच्छी तरह समझ नहीं सकती थी। इसके अतिरिक्त उस अजायबघर का जमानिया के तिलिस्म से भी सम्बन्ध है इसलिये कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को वहां का हाल मुझसे भी ज्यादे मालूम हुआ होगा।

जीत०। ठीक है, (सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख के) आज यद्यपि बहुत सी नई बातें मालूम हुई हैं परन्तु फिर भी जब तक दोनों कुमार यहां न आ जायँगे तब तक बहुत सी बातों का पता न लगेगा।

सुरेन्द्र०। सो तो हई है परन्तु इस समय हम केवल भूतनाथ के मामले को तय किया चाहते हैं। जहां तक मालूम हुआ है भूतनाथ ने हम लोगों के साथ सिवाय भलाई के बुराई कुछ भी नहीं की। अगर भूतनाथ ने बुराई की है तो इन्द्रदेव के साथ या कुछ गोपालसिंह के साथ, सो भी उस जमाने में जब इनसे और हमसे कुछ सम्बन्ध नहीं था। आज ईश्वर की कृपा से ये लोग हमारे हैं बल्कि हमारे अंग हैं इससे कहा भी जा सकता है कि भूतनाथ हमारा ही कसूर-वार है मगर फिर भी हम इसके कसूरों की माफी का अख्तियार इन्हीं दोनों अर्थात् गोपालसिंह और इन्द्रदेव को देते हैं। ये दोनों अगर भूतनाथ का कसूर माफ कर दें तो हम इस बात का खुशी से मजूर कर लेंगे! हां लोग कह सकते हैं कि इस माफी देने में बलभद्रसिंह को भी शरीक करना चाहिये था मगर हम इस बात को जरूरी नहीं समझते क्योंकि इस समय बलभद्रसिंह को कैद से छुड़ा कर भूतनाथ ने उन पर बल्कि सच तो यों है कि हम लोगों पर भी जहुत बड़ा अहसान किया है, इस लिये अगर बलभद्रसिंह को इससे कुछ रंज हो तो भी

माफी देने में वह कुछ उज्र नहीं कर सकते।

गोपाल०। इसी तरह हम दोनों को भी माफी देने में किसी तरह का उज्र न होना चाहिये। इस समय भूतनाथ ने मेरी बहुत बड़ी मदद की है और मेरे साथ मिल कर ऐसे ऐसे अनूठे काम किए हैं कि जिनकी तारीफ सहज में नहीं हो सकती, इस हमदर्दी और मदद के सामने उन कसूरों की कुछ भी हकीकत नहीं है, अस्तु मैं इससे बहुत प्रसन्न हूँ और सच्चे दिल से माफी देता हूँ।

इन्द्रदेव०। माफी देनी ही चाहिए और जब आप माफी दे चुके तो मैं भी दे चुका। ईश्वर भूतनाथ पर कृपा करे जिससे अपनी नेकनामी बढ़ाने का शौक इसके दिल में दिन दिन तरक्की करता रहे। बात तो यह है कि कमलिनी की बदौलत इस समय हम लोगों को यह शुभ दिन देखने में आया है और जब कमलिनी ही ने इससे प्रसन्न हो इसके कसूर माफ कर दिये तो हम लोगों को बाल बराबर भी उज्र नहीं हो सकता।

जीत०। बेशक, बेशक!

सुरेन्द्र०। इसमे कुछ भी शक नहीं! (भूतनाथ की तरफ देख के) अच्छा भूतनाथ! तुम्हारा सब कसूर माफ किया जाता है और इन दिनों हम लोगों के साथ तुमने जो जो नेकियां की हैं उनके बदले में हम तुम पर भरोसा करके तुम्हें अपना ऐयार बनाते हैं।

इतना कह सुरेन्द्रसिंह उठ बैठे और अपने सिरहाने के नीचे से अपना खास बेशकीमती खञ्जर निकाल कर भूतनाथ की तरफ बढ़ाया। भूतनाथ खड़ा हो गया और झुक कर सलाम करने बाद खञ्जर ले लिया और इसके बाद जीतसिंह गोपालसिंह और इन्द्रदेव को भी सलाम किया। जीतसिंह ने अपना खास ऐयारी का बटुआ भूतनाथ को दिया। गोपालसिंह ने तिलिस्मी तमंचा जिससे आखिरी वक्त में मायारानी ने काम लिया था और जो इस समय गोपालसिंह के पास था गोली बनाने की तर्कीब सहित भूतनाथ को दिया, और इन्द्रदेव ने यह कह कर भूतनाथ को गले से लगा लिया कि, "मुझ फकीर के पास इससे बढ़ कर और कोई चीज नहीं है कि मैं फिर तुम्हें अपना भाई बना कर ईश्वर से प्रार्थना करूँ कि अब इस नाते में किसी तरह का फर्क न पड़ने पावे।"

इसके बाद दोनों आदमी अपनी अपनी जगह पर बैठ गये और भूतनाथ ने हाथ जोड़ कर महाराज सुरेन्द्रसिंह से कहा कि "आज मैं समझता हूँ कि मुझ सा खुशनसीब इस दुनिया में दूसरा कोई भी नहीं। बदनसीबी के चक्कर में पड़ कर मैं वर्षों परेशान रहा, तरह तरह की तकलीफें उठाईं, पहाड़ पहाड़ और जंगल जंगल मारा मारा फिरा, साथ ही इसके पैदा भी बहुत किया और बिगाड़ा भी बहुत, परन्तु सच्चा सुख नाममात्र के लिये एक दिन भी न मिला और न किसी को मुंह दिखाने की अभिलाषा ही रह गई। अन्त में न मालूम किस जन्म का पुण्य सहायक हुआ जिसने मेरे रास्ते को बदल दिया और जिसकी बदौलत आज मैं इस दर्जे को पहुँचा। अब मुझे किसी बात की परवाह नहीं रही। आज तक जो मुझसे दुश्मनी रखते थे कल से वे मेरी खुशामद करेंगे, क्योंकि दुनिया का कायदा ही ऐसा है। महाराज इस बात का भी निश्चय रक्खें कि उस पीतल की सन्दूकड़ी से महाराज वा महाराज के पक्षपातियों को कुछ भी सम्बन्ध नहीं है जो नकली बलभद्रसिंह की गठड़ी में से निकली है और जिसके ध्यान ही से मेरे रोंगटे खड़े होते हैं। मैं उस भेद को भी महाराज से छिपाना नहीं चाहता, हां यह इच्छा जरूर है कि सर्व साधारण में वह भेद फैलने न पावे। मैंने उसका कुल हाल देवीसिंह जी से कह दिया है। आशा है कि वे महाराज से जरूर अर्ज करेंगे।

जीत०। खैर उसके लिये तुम चिन्ता न करो, जैसा होगा देखा जायगा। अब अपने डेरे पर जाकर आराम करो, महाराज भी आज रात भर जागते ही रहे हैं।

गोपाल०। जी हां, अब तो नाम मात्र को रात बच गई होगी।

इतना कह कर राजा गोपालसिंह उठ खड़े हुए और सभों को साथ लिये हुए कमरे के बाहर चले गए।

तीसरा बयान

इस समय रात बहुत कम बाकी थी और सुबह की सुफेदी आसमान पर फैला ही चाहती थी। और लोग तो अपने अपने ठिकाने चले गए, और दोनों नकाबपोशों ने भी अपने घर का रास्ता लिया मगर भूतनाथ सीधे देवीसिंह के

डेरे पर चला गया। दरवाजे ही पर पहरे वाले की जबानी मालूम हुआ कि वे सोए हैं परन्तु देवीसिंह को न मालूम किस तरह भूतनाथ के आने की आहट मिल गई। (शायद जागते हों) अस्तु तुरत बाहर निकल आए और भूतनाथ का हाथ पकड़ के कमरे के अन्दर ले गए। इस समय वहां केवल एक शमादान की मद्धिम रोशनी हो रही थी, दोनों आदमी फर्श पर बैठ गए और यों बातचीत होने लगी :—

देवी०। कहो इस समय तुम्हारा आना कैसे हुआ? क्या कोई नई बात हुई?

भूत०। बेशक नई बात हुई है और वह बात इतनी खुशी की हुई है जिसके योग्य मैं न था।

देवी०। (ताज्जुब से) वह क्या?

भूत०। आज महाराज ने मुझे अपना ऐयार बना लिया और इस इज्जत के लिये मुझे यह खञ्जर दिया है।

इतना कह कर भूतनाथ ने महाराज का दिया हुआ खञ्जर और जीतसिंह तथा गोपालसिंह का दिया हुआ बटुआ और तमंचा देवीसिंह को दिखाया और कहा, "इसी बात की मुबारकबादी देने के लिये मैं आया हूँ कि तुम्हारा एक नालायक दोस्त इस दरजे को पहुँच गया।"

देवी०। (प्रसन्न हो कर और भूतनाथ को गले से लगा कर) बेशक यह बड़ी खुशी की बात है, ऐसी अवस्था में तुम्हें अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह को भी सलाम करने के लिये जाना चाहिये।

भूत०। जरूर जाऊँगा।

देवी०। यह कार्रवाई कब हुई?

भूत०। अभी थोड़ी ही देर हुई। मैं इस समय महाराज के पास ही से आ रहा हूँ।

इतना कह कर भूतनाथ ने आज रात का बिल्कुल हाल देवीसिंह से बयान किया। इसके बाद भूतनाथ और देवीसिंह में देर तक बातचीत होती रही और जब दिन अच्छी तरह निकल आया तब दोनों ऐयार वहाँ से उठे और स्नान सन्ध्या की फिक्र में लगे।

जरूरी कामों से निश्चिन्ती पा और स्नान पूजा से निवृत हो कर भूतनाथ

अपने पुराने मालिक रणधीरसिंह के पास चला गया। बेशक भूतनाथ के दिल में इस बात का खुटका लगा हुआ था कि उसका पुराना मालिक उसे देख कर प्रसन्न न होगा बल्कि सामना होने पर भी कुछ देर तक उसके दिल में इस बात का गुमान बना रहा, मगर जिस समय भूतनाथ ने अपना खुलासा हाल बयान किया उस समय रणधीरसिंह को बहुत मेहरबान और प्रसन्न पाया। रणधीरसिंह ने उसे खिलअत और इनाम भी दिया और बहुत देर तक उससे तरह तरह की बातें करते रहे।

चौथा बयान

यह बात तो तै पा ही चुकी कि सब कामों के पहिले कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी हो जानी चाहिये अस्तु इसी खयाल से जीतसिंह शादी के इन्तजाम में जी जान से कोशिश कर रहे हैं और इस बात की खबर पाकर सभी प्रसन्न हो रहे हैं कि आज दोनों कुमार यहाँ आ जायेंगे और शीघ्र ही उनकी शादी भी हो जायगी महाराज की आज्ञानुसार जीतसिंह मुलाकात करने के लिये रणधीरसिंह के पास गए और हर तरह की जरूरी बातचीत करने के बाद इस बात का फैसला कर आये कि 'किशोरी के साथ ही साथ कामिनी का भी कन्यादान रणधीरसिंह ही करेंगे।' साथ ही इसके रणधीरसिंह की यह बात भी जीतसिंह ने मंजूर कर ली कि 'इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के आने के पहले किशोरी और कामिनी उनके (रणधीरसिंह के) खेमे में पहुँचा दी जायँगी।' आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् किशोरी और कामिनी बड़ी हिफाजत के साथ रणधीरसिंह के खेमे में पहुँचा दी गईं और बहुत से फौजी सिपाहियों के साथ पन्नालाल रामनारायण चुन्नीलाल और पण्डित बद्रीनाथ ऐयार खास उनकी हिफाजत के लिये छोड़ दिये गए।

आज कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के आने की उम्मीद में ख़ुशी खुशी तरह तरह के चर्चे कर रहे हैं। आज ही के दिन आने के दोनों कुमारों ने चीठी लिखी थी इस लिए आज उनके दादा दादी और दोस्तों और मुहब्बतियों को उम्मीद हो रही है कि उनकी तरसती हुई ठंडी होंगी और जुदाई के सदमों से सुर्झाया हुआ दिल हरा होगा। उके

और खैरख्वाह लोग जरूरी कामों को भी छोड़ छोड़ कर तिलिस्मी इमारत में इकट्ठे हो रहे हैं। इसी तरह हर एक अदना और आला दोनों कुमारों के आने की उम्मीद में खुश हो रहा है। गरीबों और मोहताजों की खुशी का तो कोई ठिकाना ही नहीं उन्हें इस बात का पूरा विश्वास हो रहा है कि अब हमारा दरिद्र दूर हो जायगा।

दो पहर दिन ढलने के बाद दोनों नकाबपोश भी आकर हाजिर हो गये हैं, केवल वे ही नहीं बल्कि उनके साथ और भी कई नकाबपोश हैं जिनके बारे में लोग तरह तरह के चर्चे कर रहे हैं और साथ ही यह भी कह रहे हैं कि "जिस समय ये नकाबपोश लोग अपने चेहरे से नकाब हटावेंगे उस समय जरूर कोई न कोई अनूठी घटना देखने सुनने में आवेगी"।

नकाबपोशों की जुबानी यह तो मालूम हो ही चुका था कि दोनों कुमार उसी तिलिस्मी पत्थर वाले चबूतरे के अन्दर से प्रगट होंगे जिस पर पत्थर का आदमी सोया हुआ है इस लिए इस समय महाराज राजा साहब ऐयार और अहल्कार लोग उसी दालान में इकट्ठे हो रहे हैं और वह दालान भी सज सजा कर उन लोगों के बैठने लायक बना दिया गया है।

तीन पहर दिन बीत जाने पर उस तिलिस्मी चबूतरे के अन्दर से कुछ विचित्र ही ढङ्ग के बाजे की आवाज आने लगी जो कि भारी मगर सुरीली थी और जिसके सबब से लोगों का ध्यान उसी तरफ जा खिंचा। महाराज सुरेन्द्रसिंह बीरेन्द्रसिंह जीतसिंह तेजसिंह गोपालसिंह तथा दोनों नकाबपोश उठ कर उस चबूतरे के पास चले गये। ये लोग बड़े गौर से उस चबूतरे की अवस्था पर ध्यान दिये रहे क्योंकि इस बात का पूरा पूरा गुमान था कि पहिले की तरह आज भी उस चबूतरे का अगला हिस्सा किवाड़ के पल्ले की तरह खुल कर जमीन के साथ लग जायगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् जिस तरह बलभद्रसिंह के आने और जाने के वक्त उस चबूतरे का अगला हिस्सा खुल गया था उसी तरह इस समय भी वह किवाड़ के पल्ले की तरह धीरे धीरे खुल कर जमीन के साथ लग गया और उसके अन्दर से कुँअर इन्द्रजीतसिंह तथा आनन्दसिंह बाहर निकल कर महाराज सुरेन्द्रसिंह के पैरों पर गिर पड़े। उन्होंने पड़े प्रेम से उठा कर छाती से लगा लिया। इसके बाद दोनों कुमारों ने अपने पिता का

चरण छूआ और फिर जीतसिंह और तेजसिंह को प्रणाम करने बाद राजा गोपालसिंह से मिले। इसके बाद बारी बारी से नकाबपोशों तथा ऐयार दोस्तों से भी मुलाकात की।

बन्दोबस्त पहिले से हो चुका था और इशारा भी बँधा हुआ था अतएव जिस समय कुमार महाराज के चरणों पर गिरे हैं उसी समय फाटक पर से बाजे की आवाज आने लगी जिससे बाहर वालों को भी मालूम हो गया कि कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह आ गये।

इस समय की खुशी का हाल लिखना हमारी ताकत से बाहर है, हां इसका अन्दाजा पाठकगण स्वयम् कर सकते हैं कि जब दोनों कुमार मिलने के लिए महल के अन्दर गये तो औरतों के खुशी का दरिया कितने जोश के साथ उमड़ा होगा।

महल के अन्दर दोनों कुमारों का इन्तजार बनिस्बत बाहर के ज्यादा होगा यह सोच कर महाराज ने दोनों कुमारों को ज्यादे देर तक बाहर रोकना मुनासिब न समझ कर शीघ्र ही महल में जाने की आज्ञा दी और दोनों कुमार भी खुशी खुशी महल के अन्दर जाकर सभों से मिले। उनकी मां और दादी की बढ़ती हुई खुशी का तो आज अन्दाजा करना बहुत ही कठिन है जिन्होंने लड़कों की जुदाई तथा रञ्ज और नाउम्मीदी के साथ ही साथ तरह तरह की खबरों से पहुँची हुई चोटों को अपने नाजुक कलेजों पर सम्हाल कर और देवता की मन्नतें मान मान कर आज का दिन देखने के लिए नन्हीं सी जान को बचा रक्खा था। अगर उन्हें समय और नीति पर विशेष ध्यान न रहता तो आज घण्टों तक अपने बच्चों को कलेजे से अलग करके बातचीत करने और महल के बाहर जाने का मौका न देतीं।

दोनों कुमार खुशी खुशी सभों से मिले। एक एक करके सभों से कुशल मङ्गल पूछा, कमलिनी और लाडिली से भी चार आंखें हुईं मगर किशोरी और कामिनी की सूरत दिखाई न पड़ी जिनके बारे में सुन चुके थे कि महल के अन्दर पहुँच चुकी हैं। इस सबब से उनके दिल को जो कुछ तकलीफ थी उसका अन्दाजा औरों को तो नहीं मगर कुछ कुछ कमलिनी और लाडिली को मिल गया और उन्होंने बात ही बात में इस भेद को खुलवा कर कुमारों की

तसल्ली करवा दी।

थोड़ी देर तक दोनों भाई महल के अन्दर रहे और इस बीच में बाहर से कई दफे तलबी का सन्देशा पहुँचा अस्तु पुनः मिलने का वादा करके वहां से उठ कर वे बाहर की तरफ रवाना हुये और उस आलीशान कमरे में पहुँचे जिसमें कई खास खास आदमियों और आपुस वालों के साथ महाराज सुरेन्द्रसिंह और बीरेन्द्रसिंह उनका इन्तजार कर रहे थे इस समय इस कमरे में यद्यपि राजा गोपालसिंह, नकाबपोश लोग, जीतसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ और ऐयार लोग भी मौजूद थे मगर कोई आदमी ऐसा न था जिसके सामने भेद की बातें करने में किसी तरह का संकोच हो। दोनों कुमार इशारा पाकर अपने दादा साहब के बगल में बैठ गये और धीरे धीरे बातचीत होने लगी।

सुरेन्द्र०। (दोनों कुमारों की तरफ देख के) भैरोसिंह और तारासिंह तुम्हारे पास गये हुये थे, उन दोनों को कहाँ छोड़ा ?

इन्द्रजीत०। (मुस्कुराते हुए) जी वे दोनों तो हम लोगों के आने पहिले ही से हुजूर में हाजिर हैं !!

सुरेन्द्र०। (ताज्जुब से चारो तरफ देख के) कहां ?

महाराज के साथ ही साथ और लोगों ने भी ताज्जुब के साथ एक दूसरे पर निगाह डाली।

इन्द्रजीत०। (दोनों सर्दार नकाबपोशों की तरफ बता कर जिनके साथ और भी कई नकाबपोश थे) रामसिंह और लक्ष्मणसिंह का काम आज वे ही दोनों पूरा कर रहे हैं।

इतना सुनते ही दोनों नकाबपोशों ने अपने अपने चेहरे पर से नकाब हटा दी और उनके बदले में भैरोसिंह तथा तारासिंह दिखाई देने लगे। इस जादू के से मामले को देख कर सभों की विचित्र अवस्था हो गई और सब ताज्जुब में आकर एक दूसरे का मुँह देखने लगे। भूतनाथ और देवीसिंह की तो और ही अवस्था हो रही थी। बड़े जोरों के साथ उनका कलेजा उछलने लगा और ये कुल बातें उन्हें याद आ गईं जो नकाबपोशों के मकान में जा कर देखी सुनी थीं अस्तु वे दोनों ही ताज्जुब के साथ गौर करने लगे।

सुरेन्द्र०। (दोनों कुमारों से) जब भैरो और तारासिंह तुम्हारे पास नहीं

गये थे और यहाँ मौजूद थे तब भी तो रामसिंह और लक्ष्मणसिंह कई दफे यहाँ आये थे, उस समय इस विचित्र पर्दे (नकाब) के अन्दर कौन छिपा हुआ था ?

इन्द्रजीत०। (और सब नकाबपोशों की तरफ बता कर) कई दफे इन लोगों में से बारी बारी से समयानुसार और कई दफे स्वयं हम दोनों भाई इसी पोशाक और नकाब को पहिर कर हाजिर हुए थे।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह की इस बात ने लोगों को और भी ताज्जुब में डाल दिया और सब कोई हैरानी के साथ उनकी तरफ देखने लगे। भूतनाथ और देवीसिंह की तो बात ही निराली थी, इन दोनों को विश्वास हो गया कि नकाबपोशों की टोह में जिस मकान के अन्दर हम लोग गये थे उसके मालिक ये ही दोनों हैं, इन्हीं दोनों की मर्जी से हम लोग गिरफ्तार हुए थे और इन्हीं दोनों के सामने पेश किये गये थे। देवीसिंह यद्यपि अपने दिल को बार बार समझा बुझा कर सम्हालते थे मगर इस बात का खयाल हो ही जाता था कि अपने ही लोगों ने मेरी बेइज्जती की और मेरे ही लड़के ने इस काम में शरीक होकर मेरे साथ दगा की। मगर देखना चाहिये इन सब बातों का भेद सबब और नतीजा क्या खुलता है।

भूतनाथ इस सोच में घड़ी घड़ी सर झुका लेता था कि मेरे पुराने ऐब जिन्हें बड़ी कोशिश से छिपा रहा था अब छिपे न रहे क्योंकि इन नकाबपोशों को मेरा रत्ती रत्ती हाल मालूम है और दोनों कुमार इन सभों के मालिक और अफसर हैं, अस्तु इनसे कोई बात छिपी न रह गई होगी। इसके अतिरिक्त मैं अपनी आँखों से देख चुका हूँ कि मुझसे बदला लेने की नीयत रखने वाला मेरा दुश्मन उस विचित्र तस्वीर को लिए हुए इनके सामने हाजिर हुआ था और मेरा लड़का हरनामसिंह भी वहां मौजूद था। यद्यपि अब इस बात की आशा नहीं हो सकती कि ये दोनों कुमार मुझे जलील और बेआबरू करेंगे मगर फिर भी शरमिन्दगी मेरा पल्ला नहीं छोड़ती। इत्तफाक की बात है कि जिस तरह मेरी स्त्री और लड़के ने इस मामले में शरीक होकर मुझे छकाया है उसी तरह देवीसिंह की स्त्री और लड़के ने उसके दिल में भी चुटकी ली है।

देवीसिंह और भूतनाथ की तरह हमारे और ऐयारों के दिल में भी करीब करीब इसी ढङ्ग की बातें पैदा हो रही थीं और इन सब भेदों को जानने के लिये

वे बनिस्बत पहले के अब और भी ज्यादे बेचैन हो रहे थे। यही हाल हमारे महाराज और गोपालसिंह वगैरह का भी था।

कुछ देर तक ताज्जुब के साथ सन्नाटा रहा और इसके बाद पुनः महाराज ने दोनों कुमारों की तरफ देख कर कहा :—

सुरेन्द्र०। ताज्जुब की बात है कि तुम दोनों भाई यहां आकर भी अपने को छिपाये रहे !!

इन्द्रजीत०। (हाथ जोड़ कर) मैं यहां हाजिर होकर पहिले ही अर्ज कर चुका था कि 'हम लोगों का भेद जानने के लिए उद्योग न किया जाय, हम लोग मौका पाकर स्वयं अपने को प्रगट कर देंगे।' इसके अतिरिक्त तिलिस्मी नियम के अनुसार तब तक हम दोनों भाई प्रगट नहीं हो सकते थे जब तक अपना काम पूरा करके इसी तिलिस्मी चबूतरे की राह से तिलिस्म के बाहर न निकल आते। साथ ही इसके हम लोगों की यही भी इच्छा थी कि जब तक निश्चिन्त हो कर खुले तौर पर यहां न आ जायँ तब तक कैदियों का मुकद्दमा फैसल न होने पावे क्योंकि इस तिलिस्म के अन्दर जाने बाद हम लोगों को बहुत से नये नये भेद मालूम हुए हैं जो (नकाबपोशों की तरफ इशारा करके) इन लोगों से सम्बन्ध रखते हैं और जिनका आपसे अर्ज करना बहुत जरूरी था।

सुरेन्द्र०। (मुस्कुराते हुए और नकाबपोशों की तरफ देख के) अब तो इन लोगों को भी अपने चेहरों से नकाब उतार देना चाहिये, हम समझते हैं इस समय इन लोगों का चेहरा साफ होगा।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह का इशारा पाकर उन नकाबपोशों ने भी अपने अपने चेहरे से नकाब हटा दी और खड़े होकर अदब के साथ महाराज को सलाम किया। ये नकाबपोश गिनती में पांच थे और इन्हीं पांचों में इस समय वे दोनों सूरतें भी दिखाई पड़ीं जो यहां दर्बार में पहिले दिखाई पड़ चुकी थीं या जिन्हें देख कर दारोगा और बेगम के छक्के छूट गये थे।

अब सभों का ध्यान उन पांचों नकाबपोशों की तरफ खिंच गया जिनका असल हाल जानने के लिए लोग पहिले ही से बेचैन हो रहे थे क्योंकि इन्होंने कैदियों के मामले में कुछ विचित्र ढङ्ग की कैफियत और उलझन पैदा करदी थी। यद्यपि कह सकते हैं कि यहां पर इन पांचों को पहिचानने वाला कोई न

था मगर भूतनाथ और राजा गोपालसिंह बड़े गौर से उनकी तरफ देख कर अपने हाफजे (स्मरण शक्ति) पर जोर दे रहे थे और उम्मीद करते थे कि इन्हें हम पहिचान लेंगे।

सुरेन्द्र०। (गोपालसिंह की तरफ देख के) केवल हमी लोग नहीं बल्कि हजारों आदमी इनका हाल जानने के लिए बेताब हो रहे हैं अस्तु ऐसा करना चाहिये कि सभों को एक साथ ही इनका हाल मालूम हो जाय।

गोपाल०। मेरी भी यही राय है।

एक नकाबपोश०। कैदियों के सामने ही हम लोगों का किस्सा सुना जाय तो ठीक है क्योंकि ऐसा होने ही से महाराज का विचार पूरा होगा। इसके अतिरिक्त हम लोगों के किस्से में वही कैदी हामी भरेंगे और कई अधूरी बातों को पूरा करके महाराज का शक दूर करेंगे जिन्हें हम लोग नहीं जानते और जिनके सुनने के लिए महाराज उत्सुक होंगे।

इन्द्र०। (सुरेन्द्रसिंह से) बेशक ऐसा ही है यद्यपि हम दोनों भाई इन लोगों का किस्सा सुन चुके हैं मगर कई भेदों का पता नहीं लगा जिनके जाने बिना जी बेचैन हो रहा है और उनका मालूम होना कैदियों की इच्छा पर निर्भर है।

सुरेन्द्रसिंह०। (कुछ सोच कर) खैर ऐसा ही किया जायगा।

इसके बाद उन लोगों में दूसरे तरह की बातचीत होने लगी जिसके लिखने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। अस्तु इसके घन्टे भर बाद दर्बार बर-खास्त हुआ और सब कोई अपने अपने स्थान पर चले गये।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह का दिल किशोरी को देखने के लिए बेताब हो रहा था। उन्हें विश्वास था कि यहाँ पहुँच कर उससे अच्छी तरह मुलाकात होगी और बहुत दिनों का अरमान भरा दिल उसकी सोहबत से तस्कीन पाकर पुनः उनके कब्जे में आ जायगा मगर ऐसा नहीं हुआ अर्थात् कुमार के आने के पहिले ही वह अपने नाना के डेरे में भेज दी गई और उनका अरमान भरा दिल उसी तरह तड़पता रह गया। यद्यपि उन्हें इस बात का भी विश्वास था कि अब उनकी शादी किशोरी के साथ बहुत जल्द होने वाली है मगर फिर भी उनका मनचला दिल जिसे उनके कब्जे से बाहर भये मुद्दत हो चुकी थी इन चापलू-

सियों को कब मानता था ! इसी तरह कमलिनी से भी मिठी मिठी बातें करने के लिए वे कम बेताब न थे मगर बड़ों का लेहाज उन्हें इस बात की इजाजत नहीं देता था कि उससे एकान्त में मुलाकात करें। यद्यपि वह ऐसा करते तो कोई हर्ज की बात न थी मगर इसलिये कि उसके साथ भी शादी होने की उन्हें उम्मीद थी शर्म और लेहाज के फेर में पड़े हुये थे। परन्तु कमलिनी को इस बात का सोच विचार कुछ भी न था। हम इसका सबब कुछ भी बयान नहीं कह सकते हां इतना कहेंगे कि जिस कमरे में कुँअर इन्द्रजीतसिंह का डेरा था उसी के पीछे वाले कमरे में कमलिनी का डेरा था और उस कमरे से कुँअर इन्द्रजीतसिंह के कमरे में आने जाने के लिए एक छोटा सा दरवाजा भी था जो इस समय भीतर की तरफ से अर्थात् कमलिनी की तरफ से बन्द था और कुमार को इस बात की कुछ भी खबर न थी।

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी थी। कुँअर इन्द्रजीतसिंह अपने पलंग पर लेटे हुए किशोरी और कमलिनी के विषय में तरह तरह की बात सोच रहे थे। उनके पास कोई दूसरा आदमी न था और एक तरह पर सन्नाटा छाया हुआ था। यकायक पीछे वाले कमरे का (जिसमें कमलिनी का डेरा था) दरवाजा खुला और अन्दर से एक लौंडी आती हुई दिखाई पड़ी।

कुमार ने चौंक कर उसकी तरफ देखा और उसने हाथ जोड़ कर अर्ज किया, "कमलिनीजी आपसे मिला चाहती हैं, आज्ञा हो तो स्वयम् यहां आवें या आप ही वहां तक चले चलें।"

कुमार०। वे कहाँ हैं ?

लौंडी०। (पिछले कमरे की तरफ बता कर) इसी कमरे में तो उनका डेरा है।

कुमार०। (ताज्जुब से) इसी कमरे में ! मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी। अच्छा मैं स्वयं चलता हूँ, तू इस कमरे का दरवाजा बन्द कर दे।

आज्ञा पाते ही लौंडी ने कुमार के कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया जिसमें बाहर से कोई यकायक आ न जाय। इसके बाद इशारा पाकर लौंडी कमलिनी के कमरे की तरफ रवाना हुई और कुमार उसके पीछे पीछे चले। चौखट के अन्दर पैर रखते ही कुमार की निगाह कमलिनी पर पड़ी और वे भौंचक्के से

हो कर उसकी सूरत देखने लगे।

इस समय कमलिनी की सुन्दरता बनिस्बत पहिले के बहुत ही बढ़ी चढ़ी देखने में आई। पहिले जिन दिनों कुमार ने कमलिनी की सूरत देखी थी उन दिनों वह बिल्कुल उदासीन और मामूली ढंग पर रहा करती थी। तरह तरह की फिक्र और तरद्दुदों ने बदन के साथ ही साथ उसके चेहरे की रौनक में भी फर्क डाल दिया था। मायारानी के झगड़े की बदौलत उसकी जान जोखम में पड़ी हुई थी और इसी कारण से उसके दिमाग को एक पल के लिये भी छुट्टी नहीं मिलती थी। इन्हीं सब कारणों से उसके शरीर और चेहरे की रौनक में भी बहुत बड़ा फर्क पड़ गया था तिस पर भी वह कुमार की सच्ची निगाह में एक ही दिखाई देती थी। फिर आज उसकी खुशी और खूबसूरती का क्या कहना है जब कि वह ईश्वर की कृपा से अपने तमाम दुश्मनों पर फतह पा चुकी है, तरद्दुदों के बोझ से हलकी हो चुकी है और मनमानी उम्मीदों के साथ अपने को बनाने संवारने का भी मुनासिब मौका उसे मिल गया है। यही सबब है कि इस समय वह रानियों की सी पोशाक और सजावट में दिखाई देती है।

कमलिनी की इस समय की खूबसूरती ने कुमार पर बहुत बड़ा असर किया और बनिस्बत पहिले के इस समय बहुत ज्यादे कुमार के दिल पर अपना अधिकार जमा लिया। कुमार को देखते ही कमलिनी ने हाथ जोड़ कर प्रणाम किया और कुमार ने आगे बढ़ कर बड़े प्रेम से उसका हाथ पकड़ कर पूछा, "कहो अच्छी तो हो?"

"अब भी अच्छी न होऊँगी!" इतना कह कर मुस्कुराती हुई कमलिनी ने कुमार को ले जा कर एक ऊँची गद्दी पर बैठाया और आप भी उनके पास बैठ कर यों बातचीत करने लगी :—

कमलिनी०। कहिये तिलिस्म के अन्दर आपको किसी तरह की तकलीफ तो नहीं हुई!

इन्द्र०। ईश्वर की कृपा से हमलोग कुशल पूर्वक यहां तक चले आये और अब तुम्हें धन्यवाद देते हैं क्योंकि यह सब बातें तुम्हारी ही बदौलत नसीब हुई हैं। अगर तुम मदद न करतीं तो न मालूम क्या दशा हम लोगों की हुई होती। हमारे साथ तुमने जो कुछ उपकार किया है उसका बदला चुकाना मेरी

सामर्थ्य के बाहर हैं, सिवाय इसके मैं क्या कह सकता हूँ कि (अपनी छाती पर हाथ रख के) यह जान और यह शरीर तुम्हारा है।

कम०। (मुस्कुरा कर) अब कृपा कर इन सब बातों को तो रहने दीजिये क्योंकि इस समय मैंने इस लिये आपको तकलीफ नहीं दी है कि अपनी बड़ाई सुनूं या आप पर अपना अधिकार जमाऊँ।

इन्द्र०। अधिकार तो तुमने उसी दिन मुझ पर जमा लिया जिस दिन ऐयार के हाथ से मेरी जान बचाई और मुझसे तलवार की लड़ाई लड़ कर यह भी दिखा दिया कि मैं तुमसे ताकत में कम नहीं हूँ।

कमलिनी०। (हँस कर) क्या खूब !! मैं और आपका मुकाबला करूँ ! आपने मुझे भी क्या कोई पहलवान समझ लिया है !!

इन्द्र०। आखिर बात क्या थी जो उस दिन मैं तुमसे हार गया था !!

कम०। आपको उस बेहोशी की दवा ने कमजोर और खराब कर दिया था जो एक अनाड़ी ऐयार की बनाई हुई थी। उस समय केवल आपको चैतन्य करने के लिये मैं लड़ पड़ी थी नहीं तो कहां मैं और कहां आप !!

इन्द्र०। खैर ऐसा ही होगा मगर इसमें तो कोई शक नहीं कि तुमने मेरी जान बचाई, केवल उसी दफे नहीं बल्कि उसके बाद भी कई दफे।

कम०। भया भया, अब इन सब बातों को जाने दीजिये, मैं ऐसी बातें नहीं सुना चाहती। हां यह बताइये कि तिलिस्म के अन्दर आपने क्या क्या देखा और क्या क्या किया ?

इन्द्र०। मैं सब हाल तुमसे कहूँगा बल्कि उन नकाबपोशों की कैफियत भी तुमसे बयान करूँगा जो मुझे तिलिस्म के अन्दर मिले हैं और जिनका हाल अभी तक मैंने किसी से बयान नहीं किया मगर तुम यह सब हाल अपनी जुबान से किसी से न कहना।

कम०। बहुत खूब।

इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना कुल हाल कमलिनी से बयान किया और कमलिनी ने भी अपना पिछला किस्सा और उसी के साथ साथ भूतनाथ नानक तथा तारा वगैरह का हाल भी बयान किया जो कुमार को मालूम न था, इसके बाद पुनः उन दोनों में यों बात चीत होने लगी :—

इन्द्र० । आज बहुत सी ऐसी बातें तुम्हारी जुबानी मालूम हुईं हैं जिनके विषय में मैं कुछ भी नहीं जानता था ।

कम० । इसी तरह आपकी जुबानी उन नकाबपोशों का हाल सुन कर मेरी अजीब हालत हो रही है, क्या करूं आपने मना कर दिया है कि इस बात का जिक्र न करना नहीं तो मैं अपने सुयोग्य पति से उनके विषय में बहुत कुछ बातें करती ।

इन्द्र० । (चौंक कर) क्या तुम्हारी शादी हो गई ?

कम० । (कुमार के चेहरे का रंग उड़ा हुआ देख मुस्कुरा कर) मैं आपसे उस तालाब वाले मकान में अर्ज कर चुकी थी कि मेरी शादी बहुत जल्द होने वाली है ।

इन्द्र० । (लम्बी सांस ले कर) हाँ मुझे याद है मगर यह उम्मीद न थी कि तुम्हारी शादी इतनी जल्दी हो जायगी ।

कम० । तो क्या आप मुझे हमेशः कुँआरी ही देखना पसन्द करते थे ?

इन्द्र० । नहीं ऐसा तो नहीं है, मगर.....

कम० । मगर क्या ? कहिये कहिये, रुके क्यों ?

इन्द्र० । यही कि मुझसे पूछ तो लिया होता ।

कम० । क्या खूब ! आपने क्या मुझसे पूछ कर इन्द्रानी के साथ शादी की थी जो मैं भी आपसे पूछ लेती ?

इतना कह कर कमलिनी हंस पड़ी और कुमार ने शर्मा कर सिर झुका लिया । मगर इस समय कुमार के चेहरे से मालूम होता था कि उन्हें हद दर्जे का रंज है और कलेजे में बेहिसाब तकलीफ हो रही है ।

कुमार० । (कमलिनि के पास से कुछ घिसक कर) मुझे विश्वास था कि जन्म भर तुमसे हँसने बोलने का मौका मिलेगा ।

कमलिनी० । मेरे दिल में भी यही बात बैठी हुई थी और यही तै कर के मैंने शादी भी की है कि आपसे कभी अलग होने की नौबत न आवे । मगर आप हट क्यों गये ? आइये आइये जिस तरह बैठे थे बैठिये ।

कुमार० । नहीं नहीं, पराई स्त्री के साथ एकान्त में बैठना ही धर्म्म के बिरुद्ध है न कि साथ सट कर । मगर आश्चर्य है कि तुम्हें इस बात का कुछ

भी खयाल नहीं है ! मुझे विश्वास था कि तुमसे कोई काम धर्म्म के विरुद्ध न हो सकेगा ।

कमलिनी० । मुझमें आपने कौन सी बात धर्म्म विरुद्ध पाई ?

कुमार० । यही कि तुम इस तरह एकान्त में बैठ कर मुझसे बातें कर रही हो, इससे भी बढ़ कर वह बात जो अभी तुमने अपनी जुबान से कबूल की है कि 'तुमसे कभी अलग न होऊंगी ।' क्या यह धर्म्म विरुद्ध नहीं है ? क्या तुम्हारा पति इस बात को जान कर भी तुम्हें पतिव्रता कहेगा ?

कमलिनी० । कहेगा और जरूर कहेगा, अगर न कहे तो इसमें उसकी भूल है । उसे निश्चय है और आप सच समझिये कि कमलिनी प्राण दे देना स्वीकार करेगी परन्तु धर्म्मविरुद्ध पथ पर चलना कदापि नहीं । आपको मेरी नियत पर ध्यान देना चाहिये दिल्लगी के कामों पर नहीं, क्योंकि मैं ऐयार हूँ । यदि मेरा पति इस समय यहां आ जाय तो आप को मालूम हो जाय कि मुझ पर वह जरा भी शक नहीं करता और मेरा इस तरह बैठना उसे कुछ भी नहीं गड़ाता ।

कुमार० । (कुछ सोच कर) ताज्जुब है !!

कमलिनी० । अभी क्या, आगे आपको और भी ताज्जुब होगा ।

इतना कह कर कमलिनी ने कुमार की कलाई पकड़ ली और अपनी तरफ खैंच के कहा, "पहिले आप अपनी जगह पर आ कर बैठ जाइये तो मुझसे बात कीजिये ।"

कुमार० । नहीं, कमलिनी ! तुम्हे ऐसा उचित नहीं है । दुनिया में धर्म्म से बढ़ कर और कोई वस्तु नहीं है अतएव तुम्हें भी धर्म्म पर ध्यान रखना चाहिये, अब तुम स्वतन्त्र नहीं हो पराये की स्त्री हो ।

कमलिनी० । यह सच है परन्तु मैं आपसे पूछती हूँ कि यदि मेरी शादी आपके साथ होती तो क्या मैं आनन्दसिंह से हंसने बोलने या दिल्लगी करने लायक न रहती ?

कुमार० । बेशक उस हालत में तुम आनन्दसिंह से हंस बोल और दिल्लगी भी कर सकती थीं क्योंकि यह बात हम लोगों के यहां लौकिक व्यवहार के ढंग पर प्रचलित है ।

कमलिनी० । बस तो मैं आपसे भी उसी तरह हंस बोल सकती हूँ और

ऐसा करने के लिये मेरे पति ने मुझे आज्ञा भी दे दी है, मैं उनका पत्र आपको दिखा सकती हूँ इसलिये कि मेरा आपका नाता ही ऐसा है, एक नहीं बल्कि तीन तीन नाते हैं।

इन्द्रजीत०। सो कैसे ?

कमलिनी०। सुनिये मैं कहती हूँ। एक तो किशोरी को अपनी बहिन समझती हूँ अतएव आप मेरे बहनोई हुए, कहिये हाँ !

कुमार०। यह कोई बात नहीं है, क्योंकि अभी किशोरी की शादी मेरे साथ नहीं हुई है।

कमलिनी०। खैर इसे जाने दीजिये मैं दूसरा और तीसरा नाता बताती हूँ। जिसके साथ मेरी शादी हुई है वह राजा गोपालसिंह के भाई हैं, इसके अतिरिक्त लक्ष्मीदेवी की मैं छोटी बहिन हुँ, अतएव आपकी साली भी हुई।

कुमार०। (कुछ सोच कर) हां इस बात से तो मैं कायल हुआ मगर तुम्हारी नीयत में किसी तरह का फर्क न आना चाहिये।

कमलिनी०। इससे आप बेफिक्र रहिये, मैं अपना धर्म किसी तरह नहीं बिगाड़ सकती और न दुनिया में कोई ऐसा पैदा हुआ है जो मेरी नीयत बिगाड़ सके। आइये अब अपने ठिकाने पर बैठ जाइये।

लाचार कुंअर इन्द्रजीतसिंह अपने ठिकाने पर जा बैठे और पुनः बात चीत करने लगे मगर उदास बहुत थे और यह बात उनके चेहरे से जाहिर होती थी।

यकायक कमलिनी ने मसखरेपन के साथ हंस दिया जिससे कुमार का खयाल हो गया कि इसने जो कुछ कहा सब झूठ और केवल दिल्लगी के लिये था। मगर साथ ही इसके उनके दिल का खुटका साफ नहीं हुआ।

कमलिनी०। अच्छा आप यह बताइये कि तिलिस्म की कैफियत देखने के लिए राजा साहब तिलिस्म के अन्दर जायेंगे या नहीं ?

कुमार०। जरूर जायेंगे।

कमलिनी०। कब ?

कुमार०। सो ठीक मैं नहीं कह सकता शायद कल या परसों ही जांय। कहते थे कि 'तिलिस्म के अन्दर चल कर देखने का इरादा है।' इसके जवाब में भाई गोपालसिंह ने कहा कि 'जरूर और जल्द चल कर देखना चाहिये।'

कमलिनी०। तो क्या हम लोगों को साथ न ले जायेंगे ?

कुमार०। सो मैं कैसे कहूँ ? तुम गोपालसिंह से कहो तो वह इसका बन्दोबस्त जरूर कर देंगे, मुझे तो कुछ कहते शर्म मालूम होगी।

कम०। सो तो ठीक है, अच्छा मैं कल उनसे कहूँगी।

कुमार०। मगर तुम लोगों के साथ किशोरी भी अगर तिलिस्म के अन्दर जाकर वहां की कैफियत न देखेगी तो मुझे इस बात का रञ्ज जरूर होगा।

कमलिनी०। बात तो वाजिब है, मगर वह इस मकान में तभी आवेंगी जब उनकी शादी आपके साथ हो जायगी और इसीलिए वह अपने नानाके डेरे में भेज दी गई हैं। खैर तो आप इस मामले को तब तक के लिए टाल दीजिए जब तक आपकी शादी न हो जाय।

कुमार०। मैं भी यही उचित समझता हूँ अगर महाराज मान जांय तो।

कम०। या आप हम लोगों को फिर दूसरी दफे ले जाइयेगा।

कुमार०। हां यह भी हो सकता है अब की दफे का वहां जाना महाराज की इच्छा पर छोड़ देना चाहिये, वे जिसे चाहें ले जायँ।

कम०। बेशक ऐसा ही ठीक होगा। अब तिलिस्म के अन्दर जाने में आपत्ती ही काहे की है, जब और जै दफे आप चाहेंगे हम लोगों को ले जायँगे।

कुमार०। नहीं सो बात ठीक नहीं है, बहुत सी जगहें ऐसी हैं जहां सैकड़ों दफे जाने में भी कोई हर्ज नहीं है मगर बहुत सी जगहें तिलिस्म टूट जाने पर भी नाजुक हालत में बनी हुई हैं और जहां बार बार जाना बहुत कठिन है तथापि मैं तुम लोगों को वहां की सैर जरूर कराऊँगा।

कमलिनी०। मैं समझती हूँ कि मेरे उस तालाब वाले तिलिस्मी मकान के नीचे भी कोई तिलिस्म जरूर है। उस खून से लिखी हुई तिलिस्मी किताब का मजमून पूरी तरह से मेरी समझ में नहीं आता था तथापि इस ढग की बातों पर कुछ कुछ शक जरूर होता था।

कुमार०। तुम्हारा ख्याल बहुत ठीक है, हम दोनों भाइयों को उस खून से लिखी तिलिस्मी किताब के पढ़ने से बहुत ज्यादे हाल मालूम हुआ है, इसके अतिरिक्त मुझे तुम्हारा वह स्थान पसन्द भी ज्यादे है और पहिले भी मैं (जब तुम्हारे पास वहां था) यह विचार कर चुका था कि 'सब कामों से निश्चिन्त हो

कर कुछ दिनों के लिए जरूर यहां डेरा जमाऊँगा' परन्तु अब मेरा वह विचार कुछ काम नहीं दे सकता।

कमलिनी०। सो क्यों ?

कुमार०। इसीलिए कि अगर तुम्हारी बातें ठीक हैं तो अब वह स्थान तुम्हारे पति के अधिकार में होगा।

कम०। (मुस्कुरा कर) तो क्या हर्ज है, मैं उनसे आप को दिला दूँगी।

कुमार०। मैं किसी से भीख मांगना पसन्द नहीं करता और न उनसे लड़ कर वह स्थान छीन लेना ही मुझे मंजूर होगा। कमलिनि ! सच तो यों है कि तुमने मुझे धोखा दिया और बहुत बड़ा धोखा दिया ! मुझे तुमसे यह उम्मीद न थी। (कुछ सोच कर) एक दफे तुम मुझसे फिर कह दो कि सचमुच तुम्हारी शादी हो गई !

इसके जवाब में कमलिनी खिलखिला कर हंस पड़ी और बोली, "हां हो गई।"

कुमार०। मेरे सर पर हाथ रख कर कसम खाओ।

कम०। (कुमार के पैरों पर हाथ रख के) आपसे मैं कसम खा कर कहती हूँ कि मेरी शादी हो गई।

हम लिख नहीं सकते कि इस समय कुमार के दिल की कैसी बुरी हालत थी। रञ्ज और अफसोस से उनका दिल बैठा जाता था और कमलिनि हंस हंस कर चुटकियां लेती थी। बड़ी मुश्किल से कुमार थोड़ी देर तक और उसके पास बैठे और फिर उठ कर लम्बी सांस लेते हुए अपने कमरे में चले गये। रात भर उन्हे नींद न आई।

पाँचवाँ बयान

महाराज की आज्ञानुसार कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के विवाह की तैयारी बड़े धूमधाम से होरही है यहां से चुनार तक की सड़कें दोनो तरफ जाफरी वाली टट्टियों से सजाई गई हैं जिन पर रोशनी की जायगी और जिनके बीच में थोड़ी थोड़ी दूर पर बड़े बड़े फाटक बने हुए हैं और उन पर नौबत-खाने का इन्तजाम किया गया है। टट्टियों के दोनों तरफ बाजार बसाया जायगा जिसकी तैयारी कारिन्दे लोग बड़ी खूबी और मुस्तैदी के साथ कर रहे हैं। इसी

तरह और भी तरह तरह के तमाशों का इन्तजाम बीच बीच में हो रहा है जिसके सबब से बहुत ज्यादे भीड़भाड़ होने की उम्मीद है और अभी से तमाशबीनों का जमावड़ा हो रहा है। रोशनी के साथ साथ आतशबाजी के इन्तजाम में भी बड़ी सरगर्मी दिखाई जा रही है और कोशिश हो रही है कि उम्दी से उम्दी तथा अनूठी आतशबाजी का तमाशा लोगों को दिखाया जाय। इसी तरह और भी कई तरह के खेल तमाशे और नाच इत्यादि का बन्दोबस्त हो रहा है मगर इस समय हमें इन सब बातों से कोई मतलब नहीं है क्योंकि हम अपने पाठकों को उस तिलिस्मी मकान की तरफ ले चलना चाहते हैं जहां भूतनाथ और देवीसिंह ने नकाबपोशों के फेर में पड़ कर शर्मिन्दगी उठाई थी और जहां इस समय दोनों कुमार अपने दादा पिता तथा और सब आपुस वालों को तिलिस्मी तमाशा दिखाने के लिये ले जा रहे हैं।

सुबह का सोहावना समय है और ठण्ढी हवा चल रही है जंगली फूलों की खुशबू से मस्त भई हुई सुन्दर सुन्दर रंगबिरंगी खूबसूरत चिड़ियायें हमारे सर्वगुणसम्पन्न मुसाफिरों को मुबारकबादी दे रही हैं जो धीरे धीरे तिलिस्म की सैर करने की नीयत से मीठी मीठी बातें करते हुए जा रहे हैं।

घोड़े पर सवार महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा बीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह तथा पैदल तेजसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ पण्डित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल वगैरह अपने ऐयार लोग जा रहे थे। तिलिस्म के अन्दर मिले हुए कैदी अर्थात् नकाबपोश लोग तथा भैरोसिंह और तारासिंह इस समय साथ न थे। इस समय देवीसिंह से भी ज्यादे भूतनाथ का कलेजा उछल रहा था और वह अपनी स्त्री का असली भेद जानने के लिये बेताब हो रहा था। जब से उसे इस बात का पता लगा कि वे दोनों सर्दार नकाबपोश यही दोनों कुमार हैं तथा उस विचित्र मकान के मालिक भी यही हैं तब से उसके दिल का खुटका कुछ कम तो हो गया था मगर खुलासा हाल जानने और पूछने का मौका न मिलने के सबब उसकी बेचैनी दूर नहीं हुई थी। वह यह भी जानना चाहता था कि अब उसकी स्त्री तथा लड़का हरनामसिंह कहा और किस फिक्र में हैं। इस समय जब कि वह फिर उसी ठिकाने जा रहा था जहाँ अपनी स्त्री की बदौलत गिरफ्तार हो कर अपने लड़के का विचित्र हाल

देखा था तब उसका दिल और भी बेचैन हो रहा था मगर साथ ही इसके उसे इस बात की भी उम्मीद हो रही थी कि अब उसे उसकी स्त्री का हाल मालूम हो जायगा या कुछ पूछने का मौका ही मिलेगा।

ये लोग धीरे धीरे बातचीत करते हुए उसी खोह या सुरंग की तरफ जा रहे थे। पहर भर दिन से ज्यादे न चढ़ा होगा जब ये लोग उस ठिकाने पहुँच गये। महाराज सुरेन्द्रसिंह और बीरेन्द्रसिंह वगैरह घोड़े पर से नीचे उतर पड़े, साईसों ने घोड़ा थाम लिया और इसके बाद उन सभों ने सुरंग के अन्दर पैर रक्खा। इस सुरंग वाले रास्ते का कुछ खुलासा हाल हम इस सन्तति के उन्नीसवें हिस्से में लिख आये हैं जब भूतनाथ यहाँ आया था, अस्तु अब पुनः दोहराने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती, हां इतना लिख देना जरूरी जान पड़ता है कि दोनों कुमारों ने सभों को यह बात समझा दी कि यह रास्ता बन्द क्यों कर हो सकता है। बन्द होने का स्थान वही चबूतरा था जो सुरंग के बीच में पड़ता था।

जिस समय ये लोग सुरंग तै करके मैदान में पहुँचे, सामने वही छोटा बंगला दिखाई दिया जिसका हाल हम पहिले लिख चुके हैं। इस समय उस बङ्गले के आगे वाले दालान में दो औरतें नकाबपोश, हाथ में तीर कमान लिये, टहलती हुई पहरा दे रही थीं जिन्हें देखते ही खास करके भूतनाथ और देवीसिंह को बड़ा ही ताज्जुब हुआ और उनके दिल में तरह तरह की बातें पैदा होने लगीं। भूतनाथ का इशारा पाकर देवीसिंह ने कुंअर इन्द्रजीतसिंह से पूछा, "ये दोनों नकाबपोश औरतें कौन हैं जो पहरा दे रही हैं?" इसके जवाब में कुमार तो चुप रह गये मगर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने कहा, "इसके जानने की तुम लोगों को क्या जल्दी पड़ी हुई है? जो कोई हों सब मालूम ही हो जायगा!!"

इस जवाब ने देवीसिंह और भूतनाथ को देर तक के लिये चुप करा दिया और विश्वास दिला दिया कि महाराज को इनका हाल जरूर मालूम है।

अब उन औरतों ने इन सभों को पहिचाना और अपनी तरफ आते देखा तो बङ्गले के अन्दर घुस कर गायब हो गईं और तब तक ये लोग भी उस दालान में जा पहुँचे। इस समय भी वह बङ्गला उसी हालत में था जैसा कि

भूतनाथ और देवीसिंह ने देखा था।

हम पहिले लिख चुके हैं और अब भी लिखते हैं कि यह बंगला जैसा बाहर से साधारण मालूम होता था वैसा अन्दर से न था और यह बात दालान में पहुँचने के साथ ही सभों को मालूम हो गई। दलान की दीवारों में नेहायत खूबसूरत और आला दर्जे की कारीगरी का नमूना दिखाने वाली तस्वीरों को देख कर सब कोई दंग हो गये और मुसौवर के हाथों की तारीफ करने लगे थे तस्वीरें एक निहायत आलीशान इमारत की थीं और इनके ऊपर बड़े बड़े हरफों में यह लिखा हुआ था :—

"यह तिलिस्म चुनारगढ़ के पास ही एक निहायत खूबसूरत जगल में कायम किया गया है जिसे महाराज सुरेन्द्रसिंह के लड़के बीरेन्द्रसिंह तोड़ेंगे।"

इस तस्वीर को देखते ही सभों को विश्वास हो गया कि वह तिलिस्मी खंडहर जिसमें तिलिस्मी बगुला था और जिस पर इस समय निहायत आलीशान इमारत बनी हुई है पहिले इसी सूरत शक्ल में था, जिसे जमाने के हेर फेर ने अच्छी तरह बर्बाद करके उजाड़ और भयानक बना दिया था। इमारत की उस बड़ी और पूरी तस्वीर के नीचे उसके भीतर वाले छोटे छोटे टुकड़े भी बना कर दिखलाये गये थे और उस बगुले की तस्वीर भी बनी हुई थी जिसे राजा बीरेन्द्रसिंह ने बखूबी पहिचान लिया और कहा, "बेशक अपने जमाने में यह बहुत अच्छी इमारत थी।"

सुरेन्द्र०। यद्यपि आजकल जो इमारत उस तिलिस्मी खंडहर पर बनी है और जिसके बनवाने में जीतसिंह ने अपनी तबियतदारी और कारीगरी का अच्छा नमूना दिखाया है, बुरी नहीं है मगर हमें इस पहिली इमारत का ढंग कुछ अनूठा और सुन्दर मालूम पड़ता है।

जीत०। बेशक ऐसा ही है। यदि इस तस्वीर को मैं पहिले देखे हुए होता तो जरूर इसी ढग की इमारत बनवाता।

बीरेन्द्र०। और ऐसा होने से वह तिलिस्म एक दफे नया मालूम पड़ता।

इन्द्र०। यह चुनारगढ़ वाला तिलिस्म साधारण नहीं बल्कि बहुत बड़ा है। चुनारगढ़ बिजयगढ़ और जमानिया तक इसकी शाखा फैली हुई है। इस बंगले को इस बहुत बड़े और फैले हुए तिलिस्म का 'केन्द्र' समझना चाहिये, बल्कि

ऐसा भी कह सकते हैं कि यह बंगला तिलिस्म का नमूना है।

थोड़ी देर तक दलान में खड़े खड़े इसी किस्म की बातें होती रहीं और इसके बाद सभों को साथ लिये हुए दोनों कुमार बंगले के अन्दर रवाना हुए।

सदर दरवाजे का पर्दा उठा कर अन्दर जाते ही ये लोग एक गोल कमरे में पहुँचे जो भूतनाथ और देवीसिंह का देखा हुआ था। इस गोल और गुम्बददार खूबसूरत कमरे की दीवारों पर जंगल पहाड़ और रोहतासगढ़ की तस्वीरें बनी हुई थीं। घड़ी घड़ी तारीफ न करके एक ही दफे लिख देना ठीक होगा कि इस बंगले में जितनी तस्वीरें देखने में आईं सभी आला दर्जे की कारीगरी का नमूना थीं और यही मालूम होता था कि आज ही बन कर तैयार हुई हैं। इस रोहतासगढ़ की तस्वीर को देख कर सब कोई बड़े प्रसन्न हुए और राजा बीरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह की तरफ देख कर कहा, "यह रोहतासगढ़ किले और पहाड़ी की बहुत ठीक और साफ तस्वीर बनी हुई है।"

तेज०। जंगल भी उसी ढङ्ग का बना हुआ है, कहीं कहीं से फर्क मालूम पड़ता है नहीं तो बाज बाज जगहें तो ऐसी बनी हुई हैं जैसी मैंने अपनी आंखों से देखी हैं। (उँगली का इशारा करके) देखिए यह वही कब्रिस्तान है जिस राह से हमलोग रोहतासगढ़ के तहखाने में घुसे थे। यहां यह देखिये बारीक हरफों में लिखा हुआ भी है कि 'तहखाने में जाने का बाहरी फाटक।'

इन्द्र०। इस तस्वीर को अगर आप गौर से देखेंगे तो वहां का बहुत ज्यादे हाल मालूम होगा। जिस जमाने में यह इमारत तैयार हुई थी उस जमाने में वहां की और उसके चारों तरफ की जैसी अवस्था थी वैसी ही इस तस्वीर में दिखाई गई है, आज चाहे कुछ फर्क पड़ गया हो।

तेज०। बेशक ऐसा ही है।

इन्द्र०। इसके अतिरिक्त एक और ताज्जुब की बात अर्ज करूँगा।

बीरेन्द्र०। वह क्या?

इन्द्र०। इसी दीवार में से वहां (रोहतासगढ़) जाने का रास्ता भी है।

सुरेन्द्र०। वाह वाह! क्या तुम इस रास्ते को खोल भी सकते हो?

इन्द्र०। जी हां, हम लोग इसमें बहुत दूर तक जा कर घूम आये हैं।

सुरेन्द्र०। यह भेद तुम्हें क्योंकर मालूम हुआ?

इन्द्र०। उसी 'रिक्तगन्थ' की बदौलत हम दोनों भाइयों को इन सब जगहों का हाल और भेद पूरा पूरा मालूम हो चुका है। यदि आज्ञा हो तो दर्वाजा खोल कर मैं आपको रोहतासगढ़ के तहखाने में ले जा सकता हूँ। वहां के तहखाने में भी एक छोटा सा तिलिस्म है जो इसी बड़े तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और हम लोग उसे खोल या तोड़ भी सकते हैं परन्तु अभी तक ऐसा करने का इरादा नहीं किया।

सुरेन्द्र०। उस रोहतासगढ़ वाले तिलिस्म के अन्दर क्या चीज है?

इन्द्र०। उसमें केवल अनूठे अद्भुत और आश्चर्य गुण वाले हर्बे रक्खे हुए हैं, उन्हीं हरबों पर वह तिलिस्म बँधा है। जैसा तिलिस्मी खञ्जर हम लोगों के पास है या जैसे तिलिस्मी जिरःबख्तर और हरबों की बदौलत राजा गोपालसिंह ने कृष्णाजिन्न का रूप धरा था वैसे हरबों और असबाबों का तो वहाँ ढेर लगा हुआ है। हां खजाना वहां कुछ भी नहीं है।

सुरेन्द्र०। ऐसे अनूठे हर्बे खजाने से क्या कम हैं?

जीत०। बेशक! (इन्द्रजीतसिंह इसे) जिस हिस्से को तुम दोनों भाइयों ने तोड़ा है उसमें भी तो ऐसे अनूठे हरबे होंगे?

इन्द्र०। जी हां मगर बहुत कम हैं।

बीरेन्द्र०। अच्छा यदि इश्वर की कृपा हुई तो फिर किसी मौके पर इस रास्ते से रोहतासगढ़ जाने का इरादा करेंगे (मकान की सजावट और परदों की तरफ देख के) क्या यह सब सामान कन्दील पर्दे और बिछावन वगैरह तुम लोग तिलिस्म के अन्दर से लाये थे।

इन्द्र०। जी नहीं जब हम लोग यहां आये तो इस बँगले को इसी तरह सजा सजाया पाया और तीन चार आदमियों को भी देखा जो इस बंगले की हिफाजत और मेरे आने का इन्तजार कर रहे थे?

सुरेन्द्र०। (ताज्जुब से) वे लोग कौन थे और अब कहां हैं?

इन्द्र०। दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि वे लोग इन्द्रदेव के मुलाजिम थे जो इस समय अपने मालिक के पास चले गये हैं। इस तिलिस्म का दारोगा असल में इन्द्रदेव है, पहिले भी इसी के बुजुर्ग लोग दारोगा होते आये हैं।

सुरेन्द्र०। यह तुमने बड़ी खुशी की बात सुनाई, मगर अफसोस यह है कि

इन्द्रदेव ने हमें इन बातों की कुछ भी खबर न की !!

आनन्द०। अगर इन्द्रदेव ने इन बातों को आपसे छिपाया तो यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है, तिलिस्मी कायदे के मुताबिक ऐसा होना ही चाहिये था।

सुरेन्द्र०। ठीक है, मालूम होता है कि यह सब सामान तुम्हारी खातिर-दारी के लिए इन्द्रदेव की आज्ञानुसार किया गया था।

आनन्द०। जी हां, उनके आदमियों की जुबानी मैंने भी यही सुना है।

इसके बाद बड़ी देर तक ये लोग इन तस्वीरों को देखते और ताज्जुब भरी बातें करते रहे और फिर आगे की तरफ बढ़े। जब पहिले भूतनाथ और देवी-सिंह यहा आये थे तब हम लिख चुके हैं कि इस कमरे में सदर दर्वाजे के अति-रिक्त और भी तीन दर्वाजे थे— इत्यादि। अस्तु उन दोनों ऐयारों की तरह इस समय भी सभों को साथ लिए हुए दोनों कुमार दाहिने तरफ वाले दर्वाजे के अन्दर गए और घूमते हुए उसी बहुत बड़े और आलीशान कमरे में पहुँचे जिसमें पहिले भूतनाथ और देवीसिंह ने पहुँच कर आश्चर्य भरा तमाशा देखा था।

इस आलीशान कमरे की तस्वीरें खूबी और खूबसूरती में सब तस्वीरों से बढ़ी चढ़ी थीं तथा दीवारों पर जंगल मैदान पहाड़ खोह दर्रे झरने शिकारगाह तथा शहरपनाह किले मोर्चे और लड़ाई इत्यादि की तस्वीरें बनी हुई थीं जिसे सब कोई बड़े गौर और ताज्जुब के साथ देखने लगे।

सुरेन्द्र०। (एक किले की तरफ इशारा करके) यह तो चुनारगढ़ की तस्वीर है।

इन्द्रजीत०। जी हां (उँगली का इशारा करके) और यह जमानिया के किले तथा खास बाग की तस्वीर है। इसी दीवार में से वहां जाने का भी रास्ता है। महाराज सूर्यकान्त के जमाने में उनके शिकारगाह और जंगल की यही सूरत थी।

बीरेन्द्र०। और यह लड़ाई की तस्वीर कैसी है ? इसका क्या मतलब है ?

इन्द्रजीत०। इन तस्वीरों में बड़ी कारीगरी खर्च की गई है महाराज सूर्य-कान्त ने अपनी फौज को जिस तरह की कवायद और व्यूह रचना इत्यादि का ढंग सिखाया था वे सब बातें इन तस्वीरों में भरी हुई हैं। तर्कीब करने से ये सब तस्वीरें चलती फिरती और काम करती नजर आवेंगी और साथ ही इसके

फौजी बाजा भी बजता हुआ सुनाई देगा अर्थात् इन तस्वीरों में जितने बाजे वाले हैं वे सब भी अपना अपना काम करते हुए मालूम पड़ेंगे। परन्तु इस तमाशे का आनन्द रात को मालूम पड़ेगा दिन को नहीं। इन्हीं तस्वीरों के कारण इस कमरे का नाम 'व्यूह मण्डल, रक्खा गया है, वह देखिये ऊपर की तरफ बड़े बड़े हरफों में लिखा हुआ है।

सुरेन्द्र०। यह बहुत अच्छी कारीगरी है! इस तमाशे को हम जरूर देखेंगे बल्कि और भी कई आदमियों को दिखावेंगे।

इन्द्र०। बहुत अच्छा, रात हो जाने पर मैं इसका बन्दोबस्त करूँगा तब तक आप और चीजों को देखें।

ये लोग जिस दर्वाजे से इस कमरे में आये थे उसके अतिरिक्त एक दर्वाजा और भी था जिस राह से सभों को लिये हुए दोनों कुमार दूसरे कमरे में पहुँचे। इस कमरे की दीवार बिल्कुल साफ थी अर्थात् उन पर किसी तरह की तस्वीर बनी हुई न थी। कमरे के बीचोबीच में दो चबूतरे संगमर्मर के बने हुए थे जिनमें एक तो खाली था और दूसरे चबूतरे के ऊपर सुफेद पत्थर की एक खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इस जगह पर ठहर कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपने दादा और पिता की तरफ देखा और कहा, "नकाबपोशों की जुबानी हम लोगों का तिलिस्मी हाल जो कुछ आपने सुना है वह तो याद ही होगा, अस्तु हम लोग पहिली दफे तिलिस्म से बाहर निकल कर जिस सुहावनी घाटी में पहुँचे थे वह यही स्थान है * इसी चबूतरे के अन्दर से हम लोग बाहर हुये थे। उस रिक्तगन्थ की बदौलत हम दोनों भाई यहां तक तो पहुँच गये मगर इससे आगे उस किताब से कोई ऐसा काम नहीं चलता था जिससे हम लोग उस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोल सकें! हां इतना जरूर है कि उस 'रिक्तगन्थ' की बदौलत इस चबूतरे में से (जिस पर पुतली बैठी हुई थी उसकी तरफ इशारा कर के) एक दूसरी किताब हाथ लगी जिसकी बदौलत हम लोगों ने उस चबूतरे वाले तिलिस्म को खोला और उसी राह से आपकी सेवा में जा पहुँचे।

"आप सुन चुके हैं कि जब हम दोनों भाई राजा गोपालसिंहजी को मायारानी की कैद से छुड़ा कर जमानिया के खास बाग वाले देवमन्दिर में गये थे

* देखिये हिस्सा बासवाँ, बयान नोवाँ।

तब वहां पहले आनन्दसिंह तिलिस्म के फन्दे में फँस गये, थे उन्हें छुड़ाने के लिये जब मैं भी उसी गड्ढे या कूएँ में कूद पड़ा तो चलता चलता एक दूसरे बाग में पहुँचा जिसके बीचोंबीच में एक मन्दिर था † उस मन्दिर वाले तिलिस्म को जब मैंने तोड़ा तो वहां एक पुतली के अन्दर से कोई कोई चमकती हुई चीज मुझे मिली थी।"

बीरेन्द्र०। हां हमें याद है, एक मूरत को तुमने उखाड़ कर किसी कोठड़ी के अन्दर फेंक दिया था और वह फूट कर चूने की कली की तरह हो गई थी। उसी के पेट में से.....

इन्द्र०। जी हां।

सुरेन्द्र०। तो वह चमकती हुई चीज क्या थी और अब वह कहां है?

इन्द्र०। वह हीरे की बनी हुई एक चाभी थी जो अभी तक मेरे पास मौजूद है (जेब में से निकाल कर और महाराज को दिखा कर) देखिये यही ताली इस पुतली के पेट में लगती है।

सभों ने उस चाभी को गौर से देखा और इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने सभों के देखते देखते उस चबूतरे पर बैठी हुई पुतली की नाभी में वह ताली लगाई जिससे उसका पेट छोटी आलमारी के पल्ले की तरह खुल गया।

इन्द्र०। बस इसी में से वह किताब मेरे हाथ लगी जिसकी बदौलत चबूतरे वाला तिलिस्म मैंने खोला।

सुरेन्द्र०। अब वह किताब कहां है?

इन्द्र०। आनन्दसिंह के पास मौजूद है।

इतना कह कर इन्द्रजीतसिंह ने आनन्दसिंह की तरफ देखा और उन्होंने एक छोटी सी किताब जिसके अक्षर बहुत बारीक थे महाराज के हाथ में दे दी। यह किताब भोजपत्र की थी जिसे महाराज ने बड़े गौर से देखा और दो तीन जगहों से कुछ पढ़ कर आनन्दसिंह के हाथ में देते हुए कहा, "इसे निश्चिन्ती में एक दफे पढ़ेंगे।"

इन्द्र०। यही पुतली वाला चबूतरा उस तिलिस्म में घुसने का दर्वाजा है।

इतना कह कर इन्द्रजीतसिंह ने उस पुतली के पेट में (जो खुल गया था)

† दसवां हिस्सा, पहिला बयान।

हाथ डाल के कोई पेंच घुमाया जिससे चबूतरे के दाहिने तरफ वाली दीवार किवाड़ के पल्ले की तरह धीरे धीरे खुल कर जमीन के साथ सट गई और नीचे उतरने के लिये सीढ़ियां दिखाई देने लगीं। इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खंजर हाथ में लिया और उसका कब्जा दबा कर रोशनी करते हुए चबूतरे के अन्दर घुसे तथा सभों को अपने पीछे आने के लिये कहा। सभों के पीछे पीछे आनन्दसिंह तिलिस्मी खंजर की रोशनी करते हुए चबूतरे के अन्दर घुसे। लगभग पन्द्रह बीस चक्करदार सीढ़ियों से नीचे उतरने बाद ये लोग एक बहुत बड़े कमरे में पहुंचे जिसमें सोने चांदी के सैकड़ों बड़े बड़े हण्डे अशर्फियों और जवाहिरात से भरे हुए पड़े थे जिसे सभों ने बड़े गौर और ताज्जुब के साथ देखा और महाराज ने कहा, "इस खजाने का अन्दाजा करना भी मुश्किल ही है।"

इन्द्र०। जो कुछ खजाना इस तिलिस्म के अन्दर मैंने देखा और पाया है उसका यह पासँगा भी नहीं है, उसे बहुत जल्द ऐयार लोग आपके पास पहुँचा-वेंगे। उन्हीं के साथ साथ कई चीजें दिल्लगी की भी हैं जिसमें एक चीज वह भी है जिसकी बदौलत हम लोग एक दफे हँसते हँसते दीवार के अन्दर कूद पड़े थे और मायारानी के हाथ में गिरफ्तार हो गये थे।

जीत०। (ताज्जुब से) हां! अगर वह चीज शीघ्र बाहर निकलवा ली जाय तो (सुरेन्द्रसिंह से) कुमार की शादी में सर्वसाधारण को उसका तमाशा दिखाया जाय।

सुरेन्द्र०। बहुत अच्छी बात है, ऐसा ही होगा।

इन्द्र०। इस तिलिस्म में घुसने के पहिले ही मैंने सभों का साथ छोड़ दिया अर्थात् नकाबपोशों को (कैदियों को) बाहर ही छोड़ कर केवल हम दोनों भाई इसके अन्दर घुसे और काम करते हुए धीरे धीरे आपकी सेवा में जा पहुँचे।

सुरेन्द्र०। उसी तरह हम लोग भी सब तमाशा देखते हुए उसी चबूतरे की राह बाहर निकलेंगे।

जीतसिंह०। क्या उन चलती फिरती तस्वीरों का तमाशा न देखियेगा?

सुरेन्द्र०। हां ठीक है, उस तमाशे को तो जरूर देखेंगे।

इन्द्र०। तो अब यहां से लौट चलना चाहिये क्योंकि इस कमरे के आगे बढ़ कर फिर आज ही लौट आना कठिन है, इसके अतिरिक्त अब दिन भी थोड़ा

रह गया है, सन्ध्या बन्दन और भोजन इत्यादि के लिये भी समय चाहिये और फिर उन तस्वीरों का तमाशा भी कम से कम चार पांच घण्टे में पूरा होगा।

सुरेन्द्र०। क्या हर्ज है लौट चलो।

महाराज की अज्ञानुसार सब कोई वहां से लौटे और घूमते हुए बंगले के बाहर निकल आये, देखा तो वास्तव में दिन बहुत कम रह गया था।

छठवाँ बयान

रात आधे घंटे से कुछ ज्यादे जा चुकी थी जब सब कोई अपने जरूरी कामों से निश्चन्त हो बगले के अन्दर घुसे और घूमते फिरते उसी चलती फिरती तस्वीर वाले कमरे में पहुँचे। इस समय बँगले के अन्दर हर एक कमरे में रोशनी बखूबी हो रही थी जिसके विषय में भूतनाथ और देवीसिंह ने ताज्जुब के साथ ख्याल किया कि यह काम बेशक उन्हीं लोगों का होगा जिन्हें यहां पहुँचने के साथ ही हमलोगों ने पहरा देते देखा था या जो हमलोगों को देखते ही बंगले के अन्दर घुस कर गायब हो गए थे। ताज्जुब है कि महाराज को तथा और लोगों का भी उनके विषय में कुछ खयाल नहीं है और न कोई पूछता ही है कि वे कौन थे और कहा गये मगर हमारा दिल उनका हाल जाने बिना बेचैन हो रहा है।'

चलती फिरती तस्वीरों वाले कमरे में फर्श बिछा हुआ था और गद्दी लगी हुई थी जिस पर सब कोई कायदे से अपने अपने ठिकाने पर बैठ गये और इसके बाद इन्द्रजीतसिंह की आज्ञानुसार रोशनी गुल कर दी गई। बिल्कुल कमरे में अन्धकार छा गया, यह नहीं मालूम होता था कि कौन क्या कर रहा है खास करके इन्द्रजीतसिंह की तरफ लोगों का ध्यान था जो इस तमाशे का दिखाने वाले थे मगर कोई कह नहीं सकता था कि वह क्या कर रहे हैं।

थोड़ी ही देर बाद चारो तरफ की दीवारें चमकने लगीं और उनपर की कुल तस्वीरें बहुत साफ और बनिस्बत पहिले के अच्छी तरह पर दिखाई देने लगीं। पहिले तो वे तस्वीरें केवल चित्रकारी ही मालूम पड़ती थीं परन्तु अब सचमुच की बातें दिखाई देने लगीं। मालूम होता था कि जैसे हम बहुत दूर से सच्चे किले पहाड़ जंगल मैदान आदमी जानवर और फौज इत्यादि को

देख रहे हैं। सब कोई ताज्जुब के साथ इस कैफियत को देख रहे थे कि यकायक बाजे की आवाज कान में आई। उस समय सभों का ध्यान जमानिया के किले की तस्वीर पर जा पड़ा जिधर से बाजे की आवाज आती थी। देखा कि—

एक बहुत बड़े मैदान में बेहिसाब फौज खड़ी है जिसके आमने सामने दो हिस्से हैं मानो दो फौजें लड़ने के लिये तैयार खड़ी हैं। पैदल और सवार दोनों तरह की फौज है तथा तोप इत्यादि और भी जो कुछ सामान फौज में होना चाहिये सब मौजूद है। इन दोनों फौजों में एक की पोशाक सुर्ख और दूसरे की आस्मानी थी। बाजे की आवाज केवल सुर्ख वर्दी वाली फौज में से आ रही थी बल्कि बाजे वाले अपना काम करते हुए साफ दिखाई दे रहे थे यकायक (सुर्ख वर्दी वाली) फौज हिलती हुई खिाई पड़ी, गौर करने पर मालूम हुआ कि सिपाहियों का मुँह घूम गया है और वह दाहिने एक पहाड़ी की तरफ तेजी के साथ बाजे की गत पर पैर रखते हुए जा रहे हैं। जैसे जैसे फौज दूर होती जाती वैसी ही वैसे बाजे की आवाज भी दूर होती जाती है। देखते ही देखते वह फौज मानों कोसों दूर निकल गई और एक पहाड़ी के पीछे की तरफ जाकर आखों की ओट में हो गई। अब यह मैदान ज्यादे खुलासा दिखाई देने लगा। जितनी जगह दोनों फौजों से भरी थी वह एक फौज के हिस्से में रह गई। अब दूसरी अर्थात् आस्मानी वर्दी वाली फौज में से बाजे की आवाज आने लगी और सवार तथा पैदल भी चलते हुए दिखाई देने लगे। एक सवार हाथ में झण्डा लिये तेजी के साथ घोड़ा दौड़ा कर मैदान में आ खड़ा हुआ और झंडे के इशारे से फौज को कवायद कराने लगा। यह कवायद घण्टे भर तक होती रही और इस बीच में आले दर्जे की होशियारी, चालाकी मुस्तैदी सफाई और बहादुरी दिखाई दी जिससे सब कोई बहुत ही खुश हुए और महाराज बोले, "बेशक फौज को ऐसा ही तय्यार करना चाहिए।"

कवायद खतम करने के बाद बाजा बन्द हुआ और वह फौज एक तरफ को रवाना हुई मगर थोड़ी ही दूर गई होगी कि उस लाल वर्दी वाली फौज ने यकायक पहाड़ी के पीछे से निकल कर इस फौज पर धावा मारा और इस कैफियत को देख कर आस्मानी वर्दी वाली फौज के अफसर होशियार हो गए, झण्डे का इशारा पाते ही बाजा पुनः बजने लगा और फौजी सिपाही लड़ने के लिये

तैयार हो गये। इसी बीच में वह फौज भी आ पहुँची और दोनों में घमासान लड़ाई होने लगी।

इस कैफियत को देख कर महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह वगैरह तथा ऐयार लोग हैरान हो गए और हद से ज्यादे ताज्जुब करने लगे। लड़ाई के फन की ऐसी कोई बात नहीं बच गई थी जो इसमें न दिखाई पड़ी हो। कई तरह की धुसबन्दी और किलेबन्दी के साथ ही साथ घुड़सवारों की कारीगरी ने भी सभों को सकते में डाल दिया और सभों के मुंह से बार बार 'वाह वाह' की आवाज निकलती रही। यह तमाशा कई घण्टे में खतम हुआ और इसके बाद एक दम से अन्धकार हो गया उस समय इन्द्रजीतसिंह ने तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी की और तब देवीसिंह ने इशारा पाकर कमरे में रोशनी कर दी जो पहिले बुझा दी गई थी।

इस समय रात थोड़ी सी बच गई थी जो सभों ने सो कर बिता दी मगर स्वप्न में भी इसी तरह के खेल तमाशे देखते रहे। जब सभों की आँखें खुलीं तो दिन घण्टे भर से कुछ ज्यादे चढ़ चुका था। घबड़ा कर सब कोई उठ खड़े हुए और कमरे के बाहर निकल कर जरूरी कामों से छुट्टी पाने का बन्दोबस्त करने लगे। इस समय जिन चीजों की सभों को जरूरत पड़ी वे सब चीजें वहां मौजूद पाई गईं मगर उन दोनों स्त्रियों पर किसी निगाह न पड़ी जिन्हें यहां आने के साथ ही सभों ने देखा था।

सातवां बयान

जरूरी कामों से छुट्टी पा कर ऐयारों ने रसोई बनाई क्योंकि इस बङ्गले में खाने पीने की सभी चीजें मौजूद थीं और सभों ने खुशी खुशी भोजन किया। इसके बाद सब कोई उसी कमरे में आ कर बैठे जिसमें रात को चलती फिरती तस्वीरों का तमाशा देखा था। इस समय भी सभों की निगाहें ताज्जुब के साथ उन तस्वीरों पर पड़ रही थीं।

सुरेन्द्र०। मैं बहुत गौर कर चुका मगर अभी तक समझ में न आया कि इन तस्वीरों में किस तरह की कारीगरी खर्च की गई है जो ऐसा तमाशा दिखाती हैं। अगर मैं अपनी आखों से इस तमाशे को देखे हुए न होता और कोई

गैर आदमी मेरे सामने ऐसे तमाशे का जिक्र करता तो मैं उसे पागल समझता मगर अब स्वयं देख लेने पर भी विश्वास नहीं होता कि दीवार पर लिखी हुई तस्वीरें इस तरह काम करें।

जीत०। बेशक ऐसी ही बात है! इतना देख कर भी किसी के सामने यह कहने का हौसला न होगा कि मैंने ऐसा तमाशा देखा था और सुनने वाला भी कभी विश्वास न करेगा।

ज्योतिषी०। आखिर तिलिस्म ही है, इसमें सभी बातें आश्चर्य की दिखाई देती हैं।

जीत०। चाहे तिलिस्म हो मगर इसके बनाने वाले तो आदमी ही थे, जो बात मनुष्य के किये नहीं हो सकती वह तिलिस्म में भी नहीं दिखाई दे सकती।

गोपाल०। आपका कहना बहुत ठीक है। तिलिस्म की बातें चाहे कैसी ही ताज्जुब पैदा करने वाली क्यों न हों मगर गौर करने से उनकी कारीगरी का पता लग ही जायगा। यह आपने बहुत ठीक कहा कि—आखिर तिलिस्म के बनाने वाले मनुष्य ही तो थे।

बीरेन्द्र०। जब तक समझ में न आवे तब तक उसे चाहे कोई जादू कहे या करामात कहे मगर हम लोग सिवाय कारीगरी के और कुछ भी नहीं कह सकते और पता लगाने तथा भेद मालूम हो जाने पर यह बात सिद्ध हो ही जाती है। इन चित्रों की कारीगरी पर भी अगर गौर किया जायगा तो कुछ न कुछ पता लग ही जायगा। ताज्जुब नहीं कि इन्द्रजीत को इसका भेद मालूम हो।

सुरेन्द्र०। बेशक इन्द्रजीत को इसका भेद मालूम होगा! (इन्द्रजीतसिंह की तरफ देख कर) तुमने किस तरकीब से इन तस्वीरों का चलाया था?

इन्द्र०। (मुसकुराते हुए) मैं आपसे अर्ज करूँगा और यह भी बताऊँगा कि इसमें भेद क्या है। मालूम हो जाने पर आप इसे एक साधारण बात समझेंगे। पहिली दफे जब मैंने इस तमाशे को देखा था तो मुझे भी बड़ा ही ताज्जुब हुआ था मगर तिलिस्मी किताब की मदद से जब मैं इस दीवार के अन्दर पहुँचा तो सब भेद खुल गया।

सुरेन्द्र०। (खुश हो कर) तब तो हम लोग बेफायदे परेशान हो रहे हैं और इतना सोच विचार कर रहे हैं। तुम अब तक चुप क्यों थे?

गोपाल० । ऐयारों की तबीयत देखते थे ।

सुरेन्द्र० । खैर बताओ तो सही कि इसमें क्या कारीगरी है ?

इतना सुनते ही इन्द्रजीतसिंह उठ कर उस दीवार के पास चले गये और सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख कर बोले, "आप जरा तकलीफ कीजिये तो मैं इस भेद को समझा दूँ !!"

महाराज सुरेन्द्रसिंह उठ कर कुमार के पास चले गये और उनके पीछे पीछे और लोग भी वहां जा कर खड़े हो गए । इन्द्रजीतसिंह ने दीवार पर हाथ फेर कर सुरेन्द्रसिंह से कहा "देखिये असल में इस दीवार पर किसी तरह की चित्रकारी या तस्वीर नहीं है दीवार साफ है और वास्तव में शीशे की है तस्वीर जो दिखाई देती है वह इसके अन्दर और दीवार से अलग है ।"

कुमार की बात सुनकर सभों ने ताज्जुब के साथ दीवार पर हाथ फेरा और जीतसिंह ने खुश हो कर कहा, "ठीक है, ठीक है, अब हम इस कारीगरी को समझ गए ! ये तस्वीरें अलग अलग किसी धातु के टुकड़ों पर बनी हुई हैं और ताज्जुब नहीं कि तार या कमानी पर जड़ी हों, किसी तरह की शक्ति पाकर उस तार या कमानी को हरकत होती है, और उस समय ये तस्वीरें चलती हुई दिखाई देती हैं ।"

इन्द्र० । बेशक यही बात है, देखिये अब मैं इन्हें फिर चला कर आपको दिखाता हूँ और इसके बाद दीवार के अन्दर ले चल कर सब भ्रम दूर कर दूँगा ।

इस दीवार में जिस जगह जमानिया के किले की तस्वीर बनी थी उसी जगह किले की बुर्ज के ठिकाने पर कई सूराख भी दिखाये गये थे जिनमें से एक छेद (सूराख) वास्तव में सच्चा था और वह केवल इतना ही लम्बा चौड़ा था कि मामूली खञ्जर का कुछ हिस्सा उसके अन्दर जा सकता था । इन्द्रजीतसिंह ने कमर से तिलिस्मी खञ्जर निकाल कर उसके अन्दर डाल दिया और महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा जीतसिंह की तरफ देख कर कहा, "इस दीवार के अन्दर जो पुर्जे बने हैं वे बिजली का असर पहुँचाने ही से चलने फिरने या हिलने लगते हैं । इस तिलिस्मी खञ्जर में आप जानते ही हैं कि पूरे दर्जे की बिजली भरी हुई है, अस्तु उन पुर्जों के साथ इसका संयोग होने ही से काम हो जाता है ।"

इतना कह कर इन्द्रजीतसिंह चुपचाप खड़े हो गये और सभों ने बड़े गौर

से उन तस्वीरों देखना शुरू किया बल्कि महाराज सुरेन्द्रसिंह बीरेन्द्रसिंह जीतसिंह तेजसिंह और राजा गोपालसिंह ने तो कई तस्वीरों के ऊपर हाथ भी रख दिया। इतने ही में दीवार चमकने लगी और इसके बाद तस्वीरों ने वही रंगत पैदा की जो हम ऊपर के बयान में लिख आये हैं। महाराज और राजा गोपालसिंह वगैरह ने जो अपना हाथ तस्वीरों पर रख दिया था वह ज्यों का त्यों बना रहा, और तस्वीरें उनके हाथों के नीचे से निकल कर इधर से उधर आने जाने लगीं जिसका असर उनके हाथों पर कुछ भी नहीं होता था, इस सबब से सभों को निश्चय हो गया कि उन तस्वीरों को इस दीवार से कोई सम्बन्ध नहीं। इस बीच में कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने अपना तिलिस्मी खञ्जर दीवार के अन्दर से खींच लिया। उसी समय दीवार का चमकना बन्द हो गया और तस्वीरें जहां की तहां खड़ी हो गईं, अर्थात् जो जितनी चल चुकी थीं उतनी ही चल कर रुक गईं। दीवार पर गौर करने से मालूम होता था कि तस्वीरें पहिले ढंग की नहीं बल्कि दूसरे ही ढंग की बनी हुई हैं।

जीत०। यह बड़े मजे की बात है, लोगों को तस्वीरों के बिषय में धोखा देने और ताज्जुब में डालने के लिये इससे बढ़ कर कोई खेल हो ही नहीं सकता।

तेज०। जी हां, एक दिन में पचासों तरह की तस्वीरें इस दीवार पर लोगों को दिखा सकते हैं, पता लगना तो दूर रहे गुमान भी नहीं हो सकता कि यह क्या मामला है और ऐसी अनूठी तस्वीरें नित्य क्यों बन जाती हैं।

सुरेन्द्र०। बेशक यह खेल मुझे बहुत अच्छा मालूम हुआ अस्तु अब इन तस्वीरों को ठीक अपने ठिकाने से पहुँचा कर छोड़ देना चाहिए।

"बहुत अच्छा" कह कर इन्द्रजीतसिंह आगे बढ़ गये और पुनः तिलिस्मी खञ्जर उसी सूराख में डाल दिया जिससे उसी तरह दीवार चमकने और तस्वीरें चलने लगीं। ताज्जुब के साथ लोग उसका तमाशा देखते रहे। कई घण्टे के बाद जब तस्वीरों की लीला समाप्त हुई और एक विचित्र ढंग के खटके की आवाज आई तब इन्द्रजीतसिंह ने दीवार के अन्दर से तिलिस्मी खञ्जर निकाल लिया और दीवार का चमकना भी बन्द हो गया।

इस तमाशे से छुट्टी पाकर महाराज सुरेन्द्रसिंह ने इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कहा, "अब हम लोगों को इस दीवार के अन्दर ले चलो।"

इन्द्र० । जो आज्ञा, पहिले बाहर से जांच कर आप अन्दाज कर लें कि यह दीवार कितनी मोटी है ।

सुरेन्द्र० । इसका अन्दाज हमें मिल चुका है, दूसरे कमरे में जाने के लिए इसी दीवार में जो दर्वाजा है उसकी मुटाई से पता लग जाता है जिस पर हमने गौर किया है ।

इन्द्र० । अच्छा तो अब एक दफे आप पुनः उसी दूसरे कमरे में चलें क्योंकि इस दीवार के अन्दर जाने का रास्ता उधर ही से है ।

इन्द्रजीतसिंह की बात सुन कर महाराज सुरेन्द्रसिंह तथा और सब कोई उठ खड़े हुए और कुमार के साथ साथ पुनः उसी कमरे में गए जिसमें दो चबूतरे बने हुए थे ।

इस कमरे में तस्वीर वाले कमरे की तरफ जो दीवार थी उसमें एक आलमारी का निशान दिखाई देता था और उसके बीचोबीच में लोहे की एक खूंटी गड़ी हुई थी जिसे इन्द्रजीतसिंह ने उमेठना शुरू किया । तीस पैंतीस दफे उमेठ कर अलग हो गए और दूर खड़े हो कर उस निशान की तरफ देखने लगे । थोड़ी देर बाद वह आलमारी हिलती हुई मालूम पड़ी और फिर यकायक उसके दोनों पल्ले दर्वाजे की तरफ खुल गए । साथ ही उसके अन्दर से दो औरतें निकलती हुई दिखाई पड़ी जिनमें एक तो भूतनाथ की स्त्री थी और दूसरी देवीसिंह की स्त्री चम्पा ।

दोनों औरतों पर निगाह पड़ते ही भूतनाथ और देवीसिंह चमक उठे और उनके ताज्जुब का कोई हद्द न रहा, साथ ही इसके दोनों ऐयारों को क्रोध भी चढ़ आया और लाल लाल आंखें करके उन औरतों की तरफ देखने लगे । उन्हीं के साथ ही साथ और लोगों ने भी ताज्जुब के साथ उन औरतों को देखा ।

इस समय उन दोनो औरतों का चेहरा नकाब से खाली था मगर भूतनाथ और देवीसिंह के चेहरे पर निगाह पड़ते ही उन दोनों ने आंचल से अपना चेहरा छिपा लिया और पलट कर पुनः उसी आलमारी के अन्दर जा लोगों की निगाह से गायब हो गईं । उनकी इस करतूत ने भूतनाथ और देवीसिंह के क्रोध को और भी बढ़ा दिया ।

आठवाँ बयान

अब हम पीछे की तरफ लौटते हैं और पुनः उस दिन का हाल लिखते हैं जिस दिन महाराज सुरेंद्रसिंह और बीरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी तमाशा देखने के लिये रवाना हुए हैं। हम ऊपर के बयान में लिख आये हैं कि 'उस समय महाराज और कुमार लोगों के साथ भैरोसिंह और तारासिंह न थे' अर्थात् वे दोनों घर ही पर रह गए थे, अस्तु इस समय उन्हीं दोनों का हाल लिखना बहुत जरूरी हो गया है।

महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह के चले जाने बाद भैरोसिंह अपनी मा से मिलने के लिये तारासिंह को साथ लिये हुए महल में गये। उस समय चपला अपनी प्यारी सखी चम्पा के कमरे में बैठी हुई धीरे धीरे कुछ बातें कर रही थी जो भैरोसिंह और तारासिंह को आते देख चुप हो गई और इन दोनों की तरफ देख कर बोली, "क्या महाराज तिलिस्मी तमाशा देखने के लिये गये।?"

भैरो०। हां अभी थोड़ी ही देर हुई है कि वे लोग उसी पहाड़ी की तरफ रवाना हो गये।

चपला०। (चम्पा से) लो अब तुम्हें भी तैयार हो जाना पड़ेगा।

चम्पा०। जरूर! मगर तुम भी क्यों नहीं चली चलतीं?

चपला०। जी तो मेरा भी ऐसा ही चाहता है मगर मामा साहब की आज्ञा हो तब तो।

चम्पा०। जहां तक मैं खयाल करती हूँ वे कभी इन्कार न करेंगे। बहिन! जब से मुझे यह मालूम हुआ है कि इन्द्रदेव तुम्हारे मामा होते हैं तब से मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ।

चपला०। मगर मेरी खुशी का तुम अन्दाजा नहीं कर सकतीं, खैर इस समय असल काम की तरफ ध्यान देना चाहिये (भैरोसिंह और तारासिंह की तरफ देख कर) कहो तुम लोग इस समय यहां कैसे आये?

तारा०। (चपला के हाथ में एक पुर्जा देकर) जो कुछ है इसी से मालूम हो जायगा।

चपला ने तारासिंह के हाथ से पुर्जा लेकर पढ़ा और फिर चम्पा के हाथ में देकर कहा, "अच्छा जाओ कह दो कि हम लोगों के लिए किसी तरह का तरद्दुद न करें, मैं अभी जाकर कमलिनी और लक्ष्मीदेवी से मुलाकात करके सब बातें तै कर लेती हूँ।"

"बहुत अच्छा" कह कर भैरोसिंह और तारासिंह वहां से रवाना हुए और इन्द्रदेव के डेरे की तरफ गये।

जिस समय महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह तिलिस्मी कैफियत देखने के लिए रवाना हुए हैं उसके दो या तीन घड़ी बाद घोड़े पर सवार इन्द्रदेव भी अपने चेहरे पर नकाब डाले हुये उसी पहाड़ी की तरफ रवाना हुए मगर ये अकेले न थे बल्कि और भी तीन नकाबपोश इनके साथ थे। जब ये चारो आदमी उस पहाड़ी के पास पहुँचे तो कुछ देर के लिये रुके और आपुस में यों बातचीत करने लगे—

इन्द्रदेव०। ताज्जुब है कि अभी तक हमारे आदमी लोग यहां नहीं पहुँचे !!

दूसरा०। और जब तक वे लोग न आवेंगे तब तक यहां अटकना पड़ेगा।

इन्द्रदेव०। बेशक।

तीसरा०। व्यर्थ यहां अटके रहना तो अच्छा न होगा।

इन्द्रदेव०। तब क्या किया जायगा ?

तीसरा०। आप लोग जल्दी से वहां पहुच कर अपना काम कीजिए और मुझे अकेले इसी जगह छोड़ दीजिये, मैं आपके आदमियों का इन्तजार करूँगा और जब वे लोग आ जायंगे तो सब चीजें लिए आपके पास पहुँच जाऊँगा।

इन्द्रदेव०। अच्छी बात है मगर उन सब चीजों को क्या तुम अकेले उठा लोगे ?

तीसरा०। उन सब चीजों की क्या हकीकत है कहिये तो आपके आदमियों को भी उन चीजों के साथ पीठ पर लाद कर लेता आऊँ।

इन्द्रदेव०। शाबाश ! अच्छा रास्ता तो न भूलोगे ?

तीसरा०। कदापि नहीं, अगर मेरी आँखों पर पट्टी बांध कर भी आप वहां तक ले गये होते तब भी मैं रास्ता न भूलता और टटोलता हुआ वहां तक पहुँच ही जाता।

इन्द्रदेव० । (हँस कर) बेशक तुम्हारी चालाकी के आगे यह कोई कठिन काम नहीं है, अच्छा हमलोग जाते हैं, तुम सब चीजें लेकर हमारे आदमियों को फौरन वापस कर देना ।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने उस तीसरे नकाबपोश को उसी जगह छोड़ा और दो नकाबपोशों को साथ लिए हुए आगे की तरफ बढ़े ।

जिस सुरंग की राह से राजा बीरेन्द्रसिंह वगैरह उस तिलिस्मी बंगले में गये थे उससे लगभग आध कोस उत्तर की तरफ हट कर और भी एक छोटा सा सुरंग का मुहाना था जिसका बाहरी हिस्सा जङ्गली लताओं और बेलों से बहुत ही छिपा हुआ था । इन्द्रदेव दोनों नकाबपोशों को साथ लिये तथा पेड़ों की आड़ देकर चलते हुए उसी दूसरे सुरंग के मुहाने पर पहुँचे और जंगली लताओं को हटा कर बड़ी होशियारी से इस सुरंग के अन्दर घुस गये ।

नौवाँ बयान

देविसिंह को चम्पा की सचाई पर भरोसा था और वह उसे बहुत ही नेक तथा पतिव्रता भी समझते थे, तिस पर चम्पा ने देवीसिंह के चरणों की कसम खा कर विश्वास दिला दिया था कि वह नकाबपोशों के घर में नहीं गई और कोई सबब न था कि देवीसिंह चम्पा की बात को झूठ समझते । इस जगह यद्यपि देवीसिंह पुनः चम्पा को देख कर क्रोध में आ गए मगर तुरत ही ऊपर लिखी बातें विचार कर ठण्ढे हो गये और सोचने लगे —

"क्या मुझे पहिचानने में धोखा हुआ ? नहीं नहीं, मेरी आँखें ऐसी गन्दी नहीं हैं । तो क्या यह वास्तव में चम्पा नहीं थी जिसे अभी मैंने देखा या पहिले भी देखा था ? यह भी नहीं हो सकता ! चम्पा ऐसी नेक औरत कसम खा कर मुझसे झूठ नहीं बोल सकती । हां उसने क्या कसम खाई थी ? यही कि 'मैं आपके चरणों की कसम खा कर कहती हूँ कि मुझे कुछ भी याद नहीं कि आप कब की बात कह रहे हैं ।' ये ही उसके शब्द हैं, मगर यह कसम तो ठीक नहीं, यहां आने के बारे में उसने कसम नहीं खाई बल्कि अपनी याद के बारे में कसम खाई है जिसे ठीक नहीं भी कह सकते । तो क्या उसने वास्तव में मुझे भूलभूलैये में डाल रक्खा है ? खैर यदि ऐसा हो भी तो मुझे रञ्ज न होना चाहिये

क्योंकि वह नेक है। यदि ऐसा किया भी होगा तो किसी अच्छे ही मतलब से किया होगा या कुमारों की आज्ञा से।"

ऐसी बातों को सोच कर देवीसिंह ने अपने क्रोध को ठण्ढा किया मगर भूतनाथ की बेचैनी दूर नहीं हुई।

वे दोनों औरतें जब आलमारी के अन्दर घुस कर गायब हो गईं तब हमारे दोनों कुमार तथा महाराज सुरेन्द्रसिंह और बीरेन्द्रसिंह ने भी उसके अन्दर पैर रक्खा। दर्वाजे के साथ दाहिनी तरफ एक तहखाने के अन्दर जाने का रास्ता था जिसके बारे में दरियाफ्त करने पर इन्द्रजीतसिंह ने बयान किया कि 'जमानिया जाने का रास्ता है, तहखाने में उतर जाने के बाद एक सुरंग मिलेगी जो बराबर जमानिया तक चली गई है।' इन्द्रजीतसिंह की बात सुन कर देवीसिंह और भूतनाथ को विश्वास हो गया कि दोनों औरतें इसी तहखाने में उतर गईं हैं जिसमें उन्हें भागने के लिये काफी जगह मिल सकती है। भूतनाथ ने देवीसिंह की तरफ देख कर इशारे से कहा कि 'इस तहखाने में चलना चाहिये' मगर जवाब में देवीसिंह ने इशारे ही से इन्कार कर के अपनी लापरवाही जाहिर कर दी।

उस दीवार के अन्दर इतनी जगह न थी कि सब कोई एक साथ ही जा कर वहाँ की कैफियत देख सकते, अतएव दो तीन दफे कर के सब कोई उसके अन्दर गये और उन कल पुरजों को देख कर बहुत प्रसन्न हुए जिनके सहारे वे तस्वीरें चलती फिरती और काम करती थीं। जब सब कोई उस कैफियत को देख चुके तब उस दीवार का दर्वाजा बन्द कर दिया गया।

इस काम से छुट्टी पाकर सब कोई इन्द्रजीतसिंह की इच्छानुसार उसी चबूतरे के पास आये जिस पर सुफेद पत्थर की खूबसूरत पुतली बैठी हुई थी। इन्द्रजीतसिंह ने सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख कर कहा, "यदि आज्ञा हो तो मैं इस दर्वाजे को खोलूँ और आपको तिलिस्म के अन्दर ले चलूँ?"

सुरेन्द्र०। हम भी यही चाहते हैं कि अब तिलिस्म के अन्दर चल कर वहां की कैफियत देखें, मगर यह तो बताओ कि इस चबूतरे के अन्दर जाने बाद हम यह तिलिस्म देखते हुए चुनारगढ़ वाले तिलिस्म की तरफ रवाना होंगे तो वहां पहुंचने में कितनी देर लगेगी?

इन्द्र०। कम से कम बारह घण्टे। तमाशा देखने के सबब से यदि इससे

ज्यादे देर हो जाय तो भी कोई ताज्जुब नहीं।

सुरेन्द्र०। रात हो जाने के सबब किसी तरह का हर्ज तो न होगा?

इन्द्र०। कुछ भी नहीं, रात भर बराबर तमाशा देखते हुए हम लोग चले जा सकते हैं।

सुरेन्द्र०। खैर तो कोई हर्ज नहीं।

इन्द्रजीतसिंह ने पुतली वाले चबूतरे का दर्वाजा उसी ढङ्ग से खोला जैसे पहिले खोल चुके थे और सभों को साथ लिए हुए नीचे वाले तहखाने में पहुँचे जिसमें बड़े बड़े हण्डे अशर्फियों और जवाहिरात से भरे हुए पड़े थे।

इस कमरे में दो दरवाजे भी थे जिसमें से एक तो खुला हुआ था और दूसरा बन्द। खुले हुए दरवाजे के बारे में दरियाफ्त करने पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने बयान किया, "यह रास्ता जमानिया को गया है और हम दोनों भाई तिलिस्म तोड़ते हुए इसी राह से आये हैं। यहां से बहुत दूर पर एक स्थान है जिसका नाम तिलिस्मी किताब में 'ब्रह्ममण्डल' लिखा हुआ है, वहां से भी मुझे एक छोटी सी किताब मिली थी जिसमें इस विचित्र बंगले का पूरा हाल लिखा हुआ था और यह भी लिखा हुआ था कि तिलिस्म (चुनारगढ़ वाला) तोड़ने वाले के लिए क्या क्या जरूरी है। उस किताब को चुनारगढ़ तिलिस्म की चाभी कहें तो अनुचित न होगा। वह किताब इस समय मौजूद नहीं है क्योंकि पढ़ने के बाद वह तिलिस्म तोड़ने के काम में खर्च कर दी गई। उस स्थान (ब्रह्ममण्डल) में बहुत सी तस्वीरें देखने योग्य हैं और वहां की सैर करके भी आप बहुत प्रसन्न होंगे।"

सुरेन्द्र०। हम जरूर उस स्थान को देखेंगे मगर अभी नहीं। हां और यह दूसरा दर्वाजा जो बन्द है कहां जाने के लिए है?

इन्द्रजीत०। यही चुनारगढ़ वाले तिलिस्म में जाने का रास्ता है, इस समय यही दर्वाजा खोला जायगा और हम लोग इसी राह से जायँगे।

सुरेन्द्र०। खैर तो अब इसे खोलना चाहिये।

पाठक! आपको इस सन्तति के पढ़ने से मालूम होता ही होगा कि यह उपन्यास समाप्ति की तरफ चला जा रहा है। हमारे लिखने के लिए अब दो बातें रह गई हैं, चुनारगढ़ वाले (इस) तिलिस्म की कैफियत और दूसरे दुष्ट

कैदियों का मुकद्दमा जिसके साथ बचे बचाए भेद भी खुल जायँगे। हमारे पाठकों में से बहुत से ऐसे हैं जिनकी रुचि अब तिलिस्मी तमाशों की तरफ कम झुकती है परन्तु उन पाठकों की सख्या बहुत ज्यादे है जो तिलिस्म के तमाशे को पसन्द करते हैं और उसकी अवस्था विस्तार के साथ दिखाने अथवा लिखने के लिए बराबर जोर दे रहे हैं। इस उपन्यास में जो कुछ तिलिस्मी बातें लिखी गई हैं यद्यपि वे असम्भव नहीं हैं और विज्ञानवेत्ता अथवा साइन्स जानने वाले जरूर कहेंगे कि 'हा, ऐसी चीजें तैयार हो सकती हैं।' तथापि बहुत से अनजान आदमी ऐसे हैं जो इसे बिल्कुल खेल ही समझते हैं और कई इसकी देखादेखी अपनी लिखी अनूठी किताबों में असम्भव बातें लिख कर तिलिस्म के नाम को बदनाम करने लग गये हैं, इसलिए हमारा ध्यान अब तिलिस्म लिखने की तरफ नहीं झुकता मगर क्या किया जाय लाचारी है, एक तो पाठकों की रुचि की तरफ ध्यान देना पड़ता है दूसरे चुनारगढ़ के चबूतरे वाले तिलिस्म की कैफियत लिखे बिना काम नहीं चलता जिसे इस उपन्यास की बुनियाद कहना चाहिये और जिसके लिए चन्द्रकान्ता उपन्यास में वादा कर चुके हैं। अस्तु अब इस जगह चुनारगढ़ के चबूतरे वाले तिलिस्म की कैफियत लिखकर इस पक्ष को पूरा करते हैं, तब इसके बाद दोनों कुमारों की शादी और कैदियों के मामले की तरफ ध्यान दे कर इस उपन्यास को पूरा करेंगे।

महाराज की आज्ञानुसार कुँअर इन्द्रजीतसिंह दरवाजा खोलने के लिए तैयार हो गये। इस दरवाजे के ऊपर वाले महराब में किसी धातु के तीन मोर बने हुए थे जो हरदम हिला ही करते थे। कुमार ने उन तीनों मोरों की गर्दन घुमा कर एक साथ मिला दी, उसी समय दर्वाजा भी खुल गया और कुमार ने सभों को उसके अन्दर जाने के लिये कहा। जब सब उसके अन्दर चले गये तब कुमार ने भी उन मोरों को छोड़ दिया और दरवाजे के अन्दर जाकर महाराज से कहा, "यह दर्वाजा इसी ढङ्ग से खुलता है मगर इसके बन्द करने की कोई तर्कीब नहीं है, थोड़ी देर में आप से आप बन्द हो जायगा। देखिए इस तरफ भी दर्वाजे के ऊपर वाले महराब में उसी तरह के मोर बने हुए हैं अतएव इधर से भी दरवाजा खोलने के समय वही तर्कीब करनी होगी।"

दरवाजे के अन्दर जाने बाद तिलिस्मी खञ्जर से रोशनी करने की जरूरत

न रही क्योंकि यहां की छत में कई सूराख ऐसे बने हुए थे जिनमें रोशनी बखूबी आ रही थी और आगे की तरफ निगाह दौड़ाने से यह भी मालूम होता था कि थोड़ी दूर जाने बाद हम लोग मैदान में पहुँच जायँगे जहां से खुला आसमान बखूबी दिखाई देगा, अस्तु तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी बन्द कर दी गई और दोनों कुमारों के पीछे पीछे सब कोई आगे की तरफ बढ़े। लगभग डेढ़ सौ कदम चले जाने के बाद एक खुला हुआ दर्वाजा मिला जिसमें चौखट और किवाड़ कुछ भी न था। इस दर्वाजे के बाहर होने पर सभों ने अपने को एक सङ्गमर्मर के छोटे से दालान में पाया और आगे की तरफ छोटा सा बाग देखा जिसकी रविशें नेहायत खूबसूरत स्याह और सुफेद पत्थरों से बनी हुई थीं मगर पेड़ों की किस्म में से केवल कुछ जंगली पौधों और लताओं की हरियाली बाग का नाम चरितार्थ करने के लिये दिखाई दे रही थी। इस बाग के चारो तरफ चार दालान चार ढंग के बने हुए थे और बीच में छोटे छोटे कई चबूतरे और नहर की तौर पर सुन्दर और पतली नालियां बनी हुई थीं जिसमें पहाड़ से गिरते हुए झरने का साफ जल बह कर वहां के पेड़ों को तरी पहुँचा रहा था और देखने में भी बहुत भला मालूम होता था। मैदान में निकल कर और आंख उठा कर देखने पर बाग के चारो तरफ ऊँचे ऊँचे हरे भरे पहाड़ दिखाई दे रहे थे और वे इस बात की गवाही दे रहे थे कि यह बाग पहाड़ी की तराई अथवा घाटी में इस ढंग से बना हुआ है कि बाहर से किसी आदमी की इसके अन्दर आने की हिम्मत नहीं हो सकती और न कोई इसके अन्दर से निकल कर बाहर ही जा सकता है

कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने महाराज सुरेन्द्रसिंह की तरफ देख कर कहा, "उस चबूतरे वाले तिलिस्म के दो दर्जे हैं, एक तो यही बाग, और दूसरा उस चबूतरे के पास पहुँचने पर मिलेगा। इस बाग में आप जितने खूबसूरत चबूतरे देख रहे हैं सभों के अन्दर बे अन्दाज दौलत भरी पड़ी है। जिस समय हम दोनों भाई यहां आये थे, इन चबूतरों का छूना बल्कि इनके पास पहुँचना भी कठिन हो रहा था। (चबूतरे के पास ले जा कर) देखिए चबूतरे के बगल में नीचे की तरफ कड़ी लगी हुई है और इसके साथ नथी हुई जो बारीक जञ्जीर है वह (हाथ का इशारा करके) उस तरफ एक कूएँ में गिरी हुई है, इसी तरह हर

एक चबूतरे में कड़ी और जञ्जीर लगी हुई है जो उसी कूएँ में जा कर इकट्ठी हुई हैं। मैं नहीं कह सकता कि उस कूएँ के अन्दर क्या है मगर उसकी तासीर यह थी कि इन चबूतरों को कोई छू नहीं सकता था। इसके अतिरिक्त आपको यह सुन कर ताज्जुब होगा कि उस चुनार वाले तिलिस्मी चबूतरे में भी जिस पर पत्थर का (असल में किसी धातु का) आदमी सोया हुआ है एक जञ्जीर लगी हुई है और वह जञ्जीर भी भीतर ही भीतर यहां तक आकर उसी कूएँ में गिरी हुई है जिसमें ये सब जञ्जीरें इकट्ठी हुई हैं, बस यही और इतना ही यहां का तिलिस्मी है। इसके अतिरिक्त दर्वाजों को छिपाने के सिवाय और कुछ भी नहीं है। हम दोनों भाइयों को तिलिस्मी किताब की बदौलत यह सब हाल मालूम हो चुका था अतएव जब हम दोनों भाई यहां आये थे तो इन चबूतरों से बिल्कुल हटे रहते थे। पहिला काम हम लोगों ने जो किया वह यही था कि ये नालियां जो पानी से भरी और बहती हुई आप देख रहे हैं जिस पहाड़ी झरने की बदौलत लबालब हो रही हैं उसमें से एक नई नाली खोद कर उसका पानी उसी कूएँ में गिरा दिया था जिसमें सब जञ्जीरें इकट्ठी हुई हैं क्योंकि वह चश्मा भी उस कूएँ के पास ही है और अभी तक उसका पानी उस कूँए में बराबर गिर रहा है। जब उस चश्मे का पानी (कई घण्टे तक) कूँए के अन्दर गिरा तब इन चबूतरों का तिलिस्मी असर जाता रहा और ये छूने के लायक हुए, मानों बिजली की आग भरी हुई थी जो पानी गिरने से ठण्ढी हो गई। इसके बाद हम दोनों भाइयों ने तिलिस्मी खञ्जर से सब जञ्जीरों को काट काट कर इन चबूतरों का और उस चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे का भी सम्बन्ध उस कूँए से छुड़ा दिया, इसके बाद हम दोनों ने इन चबूतरों को खोल कर देखा और मालूम किया कि इसके अन्दर क्या है। अब आपकी आज्ञा होगी तो ऐयार लोग इस दौलत को चुनारगढ़ या जहां आप कहेंगे पहुँचा देंगे।"

इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने महाराज की आज्ञानुसार उन चबूतरों का ऊपरी हिस्सा जो सन्दूक के पल्ले की तरह खुलता था खोल खोल कर दिखाया। महाराज तथा और सब कोई यह देख कर बहुत प्रसन्न हुये कि उनमे बेहिसाब दौलत और जेवरों के अतिरिक्त बहुत सी अनमोल चीजे भरी हुई हैं जिनमें से दो चीजें महाराज ने बहुत ही पसन्द की। एक तो जड़ाऊ सिंहासन जिसमें अनमोल हीरे

और माणिक विचित्र ढंग से जड़े हुए थे और दूसरा किसी धातु का बना हुआ एक चन्द्रमा था इस चन्द्रमा में दो पल्ले थे, जब दोनों पल्ले एक साथ मिला दिये जाते तो उसमें चन्द्रमा की तरह साफ और निर्मल तथा बहुत दूर तक फैलने वाली रोशनी पैदा होती थी।

उन चबूतरों के अन्दर की चीजों को देखते ही देखते तमाम दिन बीत गया। उस समय कुंअर इन्द्रजीतसिंह ने महाराज की तरफ देख कर कहा, "इस बाग में इन चबूतरों के सिवाय और कोई चीज देखने योग्य नहीं है और अब रात भी हो गई है। इस लिए यद्यपि आगे की तरफ जाने में कोई हर्ज तो नहीं है मगर आज की रात इसी बाग में ठहर जाते तो अच्छा था।"

भूत०। क्या आज की रात भूखे प्यासे ही बितानी पड़ेगी!

इन्द्रजीत०। (मुस्कुराते हुए) प्यासे तो नहीं रह सकते क्योंकि पानी का चश्मा बह रहा है जितना चाहो पी सकते हो मगर खाने के नाम से तब तक कुछ नहीं मिल सकता जब तक कि हम लोग चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी चबूतरे से बाहर न हो जायँ।

जीत०। खैर कोई चिन्ता नहीं, ऐयारों के बटुये खाली न होंगे, कुछ न कुछ खाने की चीज उनमें जरूर होगी।

सुरेन्द्र०। अच्छा अब जरूरी कामों से छुट्टी पाकर किसी दालान में आराम करने का बन्दोबस्त करना चाहिये।

महाराज की आज्ञानुसार सब कोई जरूरी कामों से निपटने की फिक्र में लगे और इसके बाद एक दालान में आराम करने के लिए बैठ गये। खास खास लोगों के लिए ऐयारों ने अपने सामान में से बिस्तरे का इन्तजाम कर दिया।

दसवाँ बयान

यह दालान जिसमें इस समय महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह आराम कर रहे हैं, बनिस्बत उस दालान के जिसमें ये लोग पहिले पहिल पहुँचे थे बड़ा और खूबसूरत बना हुआ था। तीन तरफ दीवार और बाग की तरफ तेरह खम्भे और महराब लगे हुए थे जिससे इसे बारहदरी भी कह सकते हैं। इसकी कुर्सी लगभग ढाई हाथ के ऊंची थी और इसके ऊपर चढ़ने के लिए पांच सीढ़ियां बनी हुई थीं।

बारहदरी के आगे की तरफ कुछ सहन छूटा हुआ था जिसकी जमीन (फर्श) संगमर्मर और संगमूसा के चौखूटे पत्थरों से बनी हुई थी। बारहदरी की छत में मीनाकारी का काम बना हुआ था और तीनों तरफ की दीवारों में कई आलमारियां भी थीं।

रात पहर भर से कुछ ज्यादे जा चुकी थी इस बारहदरी में जिसमें सब कोई आराम कर रहे थे एक आलमारी की कार्निस के ऊपर मोमबत्ती जल रही थी जो कि देवीसिंह ने अपने ऐयारी के बटुए में से निकाल कर जलाई थी। किसी को नींद नहीं आई थी बल्कि सब कोई बैठे हुए आपुस में बातें कर रहे थे और महाराज सुरेन्द्रसिंह बाग की तरफ मुँह किये बैठे हुए थे और उन्हें सामने की पहाड़ी का आधा हिस्सा भी जिस पर इस समय अन्धकार की बारीक चादर पड़ी हुई दिखाई दे रहा था। उसी पहाड़ी पर यकायक मशाल की रोशनी देख कर महाराज चौंके और सभों को उस तरफ देखने के लिए इशारा किया।

सभों ने उस रोशनी की तरफ ध्यान दिया और दोनों कुमार ताज्जुब के साथ सोचने लगे कि यह क्या मामला है? इस तिलिस्म में हमारे सिवाय किसी गैर आदमी का आना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है फिर यह मशाल की रोशनी कैसी? खाली रोशनी ही नहीं बल्कि उसके साथ चार पाँच आदमी भी दिखाई देते हैं, हां यह नहीं जान पड़ता कि सब औरत हैं या मर्द।

और लोगों के विचार भी दोनों कुमारों ही की तरह थे और मशाल के साथ कई आदमियों को देख कर सब ताज्जुब कर रहे थे। यकायक वह रोशनी गायब हो गई और आदमी भी दिखाई देने से रह गये मगर थोड़ी ही देर बाद वह रोशनी फिर दिखाई दी। अबकी दफे रोशनी और भी नीचे की तरफ थी और उसके साथ के आदमी साफ साफ दिखाई देते थे।

गोपाल०। (इन्द्रजीतसिंह से) मैं समझता था कि आप दोनों भाइयों के सिवाय कोई गैर आदमी इस तिलिस्म में नहीं आ सकता।

इन्द्रजीत०। मेरा भी यही खयाल था मगर क्या आप भी यहां तक नहीं आ सकते? आप तो तिलिस्म के राजा हैं।

गोपाल०। हां मैं आ तो सकता हूँ मगर सीधी राह से और अपने को बचाते हुए। वे काम मैं नहीं कर सकता जो आप कर सकते हैं परन्तु आश्चर्य

तो यह है ये लोग पहाड़ पर से आते हुए दिखाई देते हैं जहां से आने का रास्ता ही नहीं है। तिलिस्म बनाने वालों ने इस बात को अच्छी तरह विचार लिया होगा।

इन्द्रजीत०। बेशक ऐसा ही है मगर यहां पर क्या समझा जाय? मेरा खयाल है कि थोड़ी ही देर में वे लोग इस बाग में आ चहुँचेंगे।

गोपाल०। बेशक ऐसा ही होगा (रुक कर) देखिये रोशनी फिर गायब हो गई, शायद वे लोग किसी गुफा में घुस गये।

कुछ देर तक सन्नाटा रहा और सब कोई बड़े गौर से उस तरफ देखते रहे इसके बाद यकायक बाग के पश्चिम तरफ वाले दालान में रोशनी मालूम होने लगी जो उस दालान के ठीक सामने था जिसमें हमारे महाराज तथा ऐयार लोग टिके हुये थे, मगर पेड़ों के सबब से यह साफ नहीं दिखाई देता था कि उस दालान में कितने आदमी आए हैं और क्या कर रहे हैं।

जब सभों को निश्चय हो गया कि वे लोग धीरे धीरे पहाड़ी के नीचे उतर कर बाग के दालान या बारहदरी में आ गये हैं तब महाराज सुरेन्द्रसिंह ने तेजसिंह को हुक्म दिया कि जाकर देखो और पता लगाओ कि वे लोग कौन हैं और क्या कर रहे हैं।

गोपाल०। (महाराज से) तेजसिंहजी का वहां जाना उचित न होगा क्योंकि यह तिलिस्म का मामला है और यहां की बातों से ये बिल्कुल बेखबर हैं, यदि आज्ञा हो तो कुँअर इन्द्रजीतसिंह को साथ ले कर मैं जाऊँ।

महाराज०। ठीक है, अच्छा तुम्हीं दोनों आदमी जा कर देखो क्या मामला है।

कुँअर इन्द्रजीतसिंह और राजा गोपालसिंह वहां से उठे और धीरे धीरे तथा पेड़ों की आड़ में अपने को छिपाते हुए उस दालान की तरफ रवाना हुए जिसमें रोशनी दिखाई दे रही थी यहां तक कि उस दालान अथवा बारहदरी के बहुत पास पहुँच गये और एक पेड़ की आड़ में खड़े हो कर गौर से देखने लगे।

इस दालान में उन्हें पन्द्रह आदमी दिखाई दिये जिनके विषय में यह जानना कठिन था कि ये मर्द हैं या औरत, क्योंकि सभों की पौशाक एक ही रंग ढंग की तथा सभों के चेहरे पर नकाब पड़ी हुई थी। इन्हीं पन्द्रह आदमियों में

से दो आदमी मशालची का काम दे रहे थे। जिस तरह उनकी पोशाक खूबसूरत और बेशकीमती थी उसी तरह मशाल भी सोनहरी तथा जड़ाऊ काम की दिखाई दे रही थी और उसके आगे की तरफ बिजली की तरह रोशनी हो रही थी। इसके अतिरिक्त उनके हाथ में तेल की कुप्पी न थी और इस बात का पता नहीं लगता था कि इस मशाल की रोशनी का सबब क्या है।

राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह ने देखा कि वे लोग शीघ्रता के साथ उस दालान के सजाने और फर्श वगैरह के ठीक करने का इन्तजाम कर रहे हैं। बारहदरी के दाहिने तरफ एक खुला हुआ दर्वाजा है जिसके अन्दर वे लोग बार बार जाते हैं और जिस चीज की जरूरत समझते हैं ले आते हैं। यद्यपि उन सभों की पोशाक एक ही रंग ढंग की है और इस लिये बड़ाई छुटाई का पता लगाना कठिन है तथापि उन सभों में एक आदमी ऐसा है जो स्वयम् कोई काम नहीं करता और एक किनारे कुर्सी पर बैठा हुआ अपने साथियों से काम ले रहा है। उसके हाथ में एक विचित्र ढंग की छड़ी दिखाई दे रही है जिसके मुट्ठे पर नेहायत खूबसूरत और कुछ बड़ा हिरन बना हुआ है। देखते ही देखते थोड़ी देर में बारहदरी सज के तैयार हो गई और कन्दीलों की रोशनी से जगमगाने लगी। उसी समय वह नकाबपोश जो कुर्सी पर बैठा हुआ था और जिसे हम उस मण्डली का सर्दार भी कह सकते हैं अपने साथियों से कुछ कह सुन कर बारहदरी के नीचे उतर आया और धीरे धीरे उस तरफ रवाना हुआ जिधर महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह टिके हुए थे।

यह कैफियत देख कर राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह जो छिपे छिपे सब तमाशा देख रहे थे वहाँ से लौटे और शीघ्र ही महाराज के पास पहुँच कर जो कुछ देखा था संक्षेप में बयान किया। उसी समय एक आदमी आता हुआ दिखाई दिया। सभों का ध्यान उसकी तरफ चला गया और इन्द्रजीतसिंह तथा राजा गोपालसिंह ने समझा कि यह वही नकाबपोशों का सर्दार है जिसे हम उस बारहदरी में देख आये हैं और जो हमारे देखते देखते वहां से रवाना हो गया था, मगर जब वह पास आया तो सभों का भ्रम जाता रहा और एकाएक इन्द्रदेव पर निगाह पड़ते ही सब कोई चौंक पड़े। राजा गोपालसिंह और इन्द्रजीतसिंह को इस बात का भी शक हुआ कि वह नकाबपोशों का सर्दार शायद इन्द्र-

देव ही हो मगर यह देख कर उन्हें ताज्जुब मालूम हुआ कि इन्द्रदेव उस (नकाबपोशों की सी) पौशाक में न था जैसा कि उस बारहदरी में देखा था बल्कि वह अपनी मामूली दर्बारी पौशाक में था।

इन्द्रदेव ने वहाँ पहुँच कर महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह, राज गोपालसिंह तथा दोनों कुमारों को अदब के साथ झुक कर सलाम किया और इसके बाद और ऐयारों से भी "जै माया की" कही।

सुरेन्द्र०। इन्द्रदेव! जब से हमने इन्द्रजीत की जुबानी यह सुना है कि इस तिलिस्म के दारोगा तुम हो तब से हम बहुत ही खुश हैं मगर ताज्जुब होता था कि तुमने इस बात की हमें कुछ भी खबर नहीं की और न हमारे साथ यहां आये। अब यकायक इस समय यहां पर तुम्हें देख कर हमारी खुशी और भी ज्यादे हो गई। आओ हमारे पास बैठ जाओ और यह कहो कि हम लोगों के साथ तुम यहां क्यों नहीं आये?

इन्द्रदेव०। (बैठ कर) आशा है कि महाराज मेरा वह कसूर माफ करेंगे, मुझे कई जरूरी काम करने थे जिसके लिये अपने ढंग पर अकेले आना पड़ा बेशक मैं इस तिलिस्म का दारोगा हूँ और इस लिये अपने को बड़ा ही खुशकिस्मत समझता हूँ कि ईश्वर ने इस तिलिस्म को आप ऐसे प्रतापी राजा के हाथ में सौंपा है। यद्यपि आपके फर्मांबर्दार और होनहार पोतों ने इस तिलिस्म को फतह किया है और इस सबब से वे इसके मालिक हुए हैं तथापि इस तिलिस्म का सच्चा आनन्द और तमाशा दिखाना मेरा ही काम है, यह मेरे सिवाय किसी दूसरे के किये नहीं हो सकता। जो काम कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का था उसे ये कर चुके अर्थात् तिलिस्म तोड़ चुके और जो कुछ इन्हें मालूम होना था हो चुका, परन्तु उन बातों भेदों और स्थानों का पता इन्हें नहीं लग सकता जो मेरे हाथ में हैं और जिनके सबब से मैं इस तिलिस्म का दारोगा कहलाता हूँ। तिलिस्म बनाने वाले ने तिलिस्म के सम्बन्ध में दो किताबें लिखी थीं जिनमें से एक तो दारोगा के सुपुर्द कर गये और दूसरी तिलिस्म तोड़ने वाले के लिये छिपा कर रख गये जो कि अब दोनों कुमारों के हाथ लगी, या कदाचित इसके अतिरिक्त और भी कोई किताब उन्होंने लिखी हो जिसका हाल मैं नहीं जानता। हाँ जो किताब दारोगा के सुपुर्द कर गये थे वह वसीयतनामे के

तौर पर पुश्तहापुश्त से हमारे कब्जे में चली आती है और आज कल मेरे पास मौजूद है। यह मैं जरूर कहूँगा कि तिलिस्म में बहुत से मुकाम ऐसे हैं जहां दोनों कुमारों का जाना तो असम्भव ही है परन्तु तिलिस्म टूटने के पहिले मैं भी नहीं जा सकता था, हां अब मैं वहाँ बखूबी जा सकता हूँ। आज मैं इसी लिये इस तिलिस्म के अन्दर आपके पास आया हूँ कि इस तिलिस्म का पूरा पूरा तमाशा आपको दिखाऊँ जिसे कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह नहीं दिखा सकते। परन्तु इन कामों के पहिले मैं महाराज से एक चीज मांगता हूँ जिसके बिना काम नहीं चल सकता।

महाराज०। वह क्या ?

इन्द्रदेव०। जब तक मैं इस तिलिस्म में आप लोगों के साथ हूँ तब तक अदब लेहाज और कायदे की पाबन्दी से माफ रक्खा जाऊँ।

महाराज०। इन्द्रदेव! हम तुमसे बहुत प्रसन्न हैं। जब तक तिलिस्म में हम लोगों के साथ हो तभी तक के लिये नहीं बल्कि हमेशे के लिये हमने इन बातों से तुम्हें छुट्टी दी, तुम विश्वास रक्खो कि हमारे बाल बच्चे और सच्चे साथी भी हमारी इस बात का पूरा पूरा लेहाज रक्खेंगे।

यह सुनते ही इन्द्रदेव ने उठ कर महाराज को सलाम किया और फिर बैठ कर कहा, अब आज्ञा होतो खाने पीने का सामान जो आप लोगों के लिये लाया हूँ हाजिर करूँ !"

महाराज०। अच्छी बात है लाओ, क्योंकि हमारे साथियों में से कई ऐसे हैं जो भूख के मारे बेताब हो रहे होंगे।

तेज०। मगर इन्द्रदेव! तुमने इस बात का परिचय तो दिया ही नहीं कि तुम वास्तव में इन्द्रदेव ही हो या कोई और ?

इन्द्रदेव०। (मुस्कुरा कर) मेरे सिवाय कोई गैर यहां आ ही नहीं सकता।

तेज०। तथापि 'चलेन्डोला।'

इन्द्रदेव०। चक्रधर।'

बीरेन्द्र०। मैं एक बात और पूछा चाहता हूँ ?

इन्द्रदेव०। आज्ञा।

बीरेन्द्र०। वह स्थान कैसा है जहां तुम रहा करते हो और जहां मायारानी

अपने दारोगा को ले कर तुम्हारे पास गई थी ?

इन्द्रदेव० । वह स्थान इसी तिलिस्म से सम्बन्ध रखता है और यहां से थोड़ी ही दूर पर है । मैं स्वयम् आप लोगों को ले चल कर वहां की सैर कराऊँगा । इसके अतिरिक्त अभी मुझे बहुत सी बातें कहनी हैं । पहले आप लोग भोजन इत्यादि से छुट्टी पा लें ।

तेज० । हम लोग मशाल की रोशनी में क्या आप ही लोगों को पहाड़ से उतरते देख रहे थे ?

इन्द्रदेव० । जी हां, मैं एक निराले ही रास्ते से यहा आया हूँ । आपलोग बेशक ताज्जुब करते होंगे कि पहाड़ पर से कौन उतर रहा है, परन्तु मैं अकेला ही नहीं आया हूँ कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूँ, मगर उनका अभी जिक्र करने का मौका नहीं है ।

इतना कह कर इन्द्रदेव उठ खड़ा हुआ और देखते ही देखते दूसरी तरफ चला गया, मगर अपनी इस बात से कि कई तमाशे भी अपने साथ लाया हूँ' कइयों को ताज्जुब और घबराहट में डाल गया ।

ग्यारहवाँ बयान

थोड़ी ही देर के बाद इन्द्रदेव फिर वहां आया । अबकी दफे उसके साथ कई नकाबपोश भी थे जो अपने हाथों में तरह तरह की खाने की चीजें लिये हुये थे । एक के हाथ में जल था जिससे जमीन धोई गई और खाने पीने की चीजें वहां रख कर वे नकाबपोश लौट गए और पुनः कई जरूरी चीज लेकर आ पहुँचे । इन्तजाम ठीक हो जाने पर इन्द्रदेव ने कायदे के साथ सभों को भोजन कराया और इस काम से छुट्टी मिलने पर उस बारहदरी में चलने के लिये अर्ज किया जिसे उसने यहां पहुँच कर सजाया था और जिसका हाल ऊपर के बयान में लिख चुके हैं ।

वास्तव में यह बारहदरी बड़ी खूबी के साथ सजाई गई थी । यहां सभों के लिये कायदे के साथ बैठने और आराम करने का सामान मौजूद था जिसे देख कर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और इन्द्रदेव की तरफ देख कर बोले, "क्या यह सब सामान इसी बाग में मौजूद था ?"

इन्द्र०। जी हां, केवल इतना ही नहीं बल्कि इस बाग में जितनी इमारतें हैं उन सभों को सजाने और दुरुस्त करने के लिये यहां काफी सामान है, इसके अतिरिक्त यहां से मेरा मकान बहुत नजदीक है इसलिये जिस चीज की जरूरत हो मैं बहुत जल्द ला सकता हूँ (कुछ सोच कर और हाथ जोड़ कर) मैं एक और भी जरूरी बात अर्ज किया चाहता हूँ।

महाराज०। वह क्या ?

इन्द्र०। यह तिलिस्म आप ही के बुजुर्गों की बदौलत बना है और उन्हीं की आज्ञानुसार जब से यह तिलिस्म तैयार हुआ है तब से मेरे बुजुर्ग लोग इसके दारोगा होते आये हैं। अब मेरे जमाने में इस तिलिस्म की किस्मत ने पलटा खाया है। यद्यपि कुमार इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने इस तिलिस्म को तोड़ा या फतह किया है और इसमें की बेहिसाब दौलत के मालिक हुए हैं तथापि यह तिलिस्म अभी दौलत से खाली नहीं हुआ है और न ऐसा खुल ही गया है कि ऐरे गैरे जिसका जी चाहे इसमें घुस आवें। हां यदि आज्ञा हो तो दोनों कुमारों के हाथ से मैं इसके बचे बचाए हिस्से भी तोड़वा सकता हूँ क्योंकि यह काम इस तिलिस्म के दारोगा का अर्थात् मेरा है परन्तु मैं चाहता हूँ कि बड़े लोगों की इस कीर्ति को एकदम से मटियामेट न करके भविष्य के लिये भी कुछ छोड़ देना चाहिये। आज्ञा पाने पर मैं इस तिलिस्म की पूरी सैर करा-ऊँगा और तब अर्ज करूँगा कि 'बुजुर्गों की आज्ञानुसार इस दास ने भी जहा तक हो सका इस तिलिस्म की खिदमत की, अब महाराज को अख्तियार है कि मुझसे हिसाब किताब समझ कर आइन्दे के लिये।जसे चाहें यहां का दारोगा मुकर्रर करें।'

महाराज०। इन्द्रदेव ! मैं तुमसे और तुम्हारे कामों से बहुत ही प्रसन्न हूँ मगर मैं यह नहीं चाहता कि तुम मुझे बातों के जाल में फँसा कर बेवकूफ बनाओ और यह कहो कि 'भविष्य के लिये किसी दूसरे को यहा का दारोगा मुकर्रर कर लो।' जो कुछ तुमने राय दी है वह बहुत ठीक है अर्थात् इस तिलिस्म के बचे बचाये स्थानों को छोड़ देना चाहिये जिसमें बड़े लोगों का नाम निशान बना रहे मगर यहां के दारोगा की पदवी सिवाय तुम्हारे खानदान के कोई दूसरा कब पा सकता है ? बस दया करके इस ढंग की बातों को छोड़ दो

और जो कुछ खुशी खुशी कर रहे हो करो।

इन्द्र०। (अदब के साथ सलाम करके) जो आज्ञा। मैं एक बात और भी निवेदन किया चाहता हूँ।

महाराज०। वह क्या ?

इन्द्रदेव०। यही कि इसी जगह से आप कृपा करके पहिले मेरे स्थान को जहां मैं रहता हूँ पवित्र कीजिये और तब यहां आकर तिलिस्म की सैर करते हुए अपने चुनारगढ़ वाले तिलिस्मी मकान में पहुँचिये। इसके अतिरिक्त इस तिलिस्म के अन्दर जो कुछ कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह ने पाया है अथवा यहां से जिन चीजों को निकाल कर चुनारगढ़ पहुँचाने की आवश्यकता है उनकी फिहरिस्त मुझे मिल जाय और ठीक तौर पर बता दिया जाय कि कौन चीज कहा पर है तो मैं उन्हें यहां से बाहर करके आपके पास भेजने का बन्दोबस्त करूँ। यद्यपि यह काम भैरोसिंह और तारासिंह भी कर सकते हैं परन्तु जिस काम को मैं एक दिन में करूँगा उसे वे चार दिन में भी पूरा न कर सकेंगे क्योंकि मुझे यहां के कई रास्ते मालूम हैं जिस चीज को जिस राह निकाल ले जाने में सुबीता देखूंगा निकाल ले जाऊँगा।

महाराज०। ठीक है, मैं भी इस बात को पसन्द करता हूँ और यह भी चाहता हूँ कि चुनार पहुँचने के पहिले ही आपके विचित्र स्थान की सैर कर लूं। चीजों की फिहरिस्त और उनका पता इन्द्रजीतसिंह आपको देंगे।

इतना कह के महाराज ने इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कुमार ने उन सब चीजों का पता इन्द्रदेव को बताया जिन्हें बाहर निकाल कर घर पहुँचाने की आवश्यकता थी और साथ ही साथ अपना तिलिस्मी किस्सा भी जिसके कहने की जरूरत थी इन्द्रदेव से बयान किया और इसके बाद दूसरी बातों का सिलसिला छिड़ा।

बीरेन्द्र०। (इन्द्रदेव से) आपने कहा था कि 'मैं कई तमाशे भी साथ लाया हूँ।' तो क्या वे तमाशे ढके ही रह जायेंगे !

इन्द्रदेव०। जी नहीं, आज्ञा हो तो अभी उन्हें पेश करूँ परन्तु यदि आप मेरे मकान पर चलकर उन तमाशों को देखेंगे तो कुछ विशेष आनन्द मिलेगा।

महाराज०। यही सही, हम लोग तो अभी तुम्हारे मकान पर चलने के

लिये तैयार हैं।

इन्द्रदेव०। अब रात बहुत चली गई है, महाराज दो चार घण्टे आराम कर लें, दिन भर की हरारत मिट जाय, जब कुछ रात बाकी रह जायगी तो मैं जगा दूँगा और अपने मकान की तरफ ले चलूंगा। तब तक मैं अपने साथियों को वहा रवाना कर देता हूँ जिसमें आगे चल कर सभों को होशियार कर दें और महाराज के लिये हर एक तरह का सामान दुरुस्त हो जाय।

इन्द्रदेव की बात को महाराज ने पसन्द करके सभों को आराम करने की आज्ञा दी और इन्द्रदेव भी वहां से बिदा होकर किसी दूसरी जगह चला गया।

इधर उधर की बातचीत करते करते महाराज को नींद आ गई, बीरेन्द्रसिंह दोनों कुमार और राजा गोपालसिंह भी सो गये तथा और ऐयारों ने भी स्वप्न देखना आरम्भ किया मगर भूतनाथ की आँखों में नींद का नाम निशान भी न था और वह तमाम रात जागता ही रह गया।

जब रात घण्टे भर से कुछ ज्यादे बाकी रह गई और सुबह की अठखेलियों के साथ चल कर खुशदिल तथा नौजवानों के दिल में गुदगुदी पैदा करने वाली ठण्ढी ठण्ढी हवा ने खुशबूदार जंगली फूलों और लताओं से हाथापाही करके उनकी सम्पत्ति छीनना और अपने को खुशबूदार बनाना शुरू कर दिया तब इन्द्रदेव भी उस बारहदरी में आ पहुँचा और सभों को गहरी नींद में सोते देख जगाने का उद्योग करने लगा। इस बारहदरी के आगे की तरफ छोटा सा सहन था जिसकी जमीन संगमूसा के स्याह और चौखूटे पत्थरों से मढ़ी हुई थीं। उस सहन के दाहिने और बाएँ कोनों पर दो सिंहासन मामूली ढंग के बने हुए थे जिन पर दो तीन आदमी बखूबी बैठ सकते थे। अस्तु इन्द्रदेव दाहिने तरफ वाले सिंहासन पर जा कर बैठ गया और उसके पावों को बारी बारी से किसी हिसाब से घुमाने वा उमेठने लगा। उसी समय सिंहासन के अन्दर से सरस और मधुर बाजे की आवाज आने लगी और थोड़ी ही देर बाद गाने की आवाज भी पैदा हुई। मालूम होता था कि कोई नौजवान औरत बड़ी खूबी के साथ गा रही है और कई आदमी पखावज बीन बन्सी और मजीरा इत्यादि बजा कर उसे मदद पहुँचा रहे हैं। यह आवाज धीरे धीरे बढ़ने और फैलने लगी, यहाँ तक कि उसने बारहदरी में सोने वाले सभों को जगा दिया अर्थात्

सब कोई चौंक कर उठ बैठे और ताज्जुब के साथ इधर उधर देखने लगे। केवल इतने ही से बेचैनी दूर न हुई और सब कोई बारहदरी से बाहर निकल कर सहन में चले आये। उसी समय इन्द्रदेव ने सामने आकर महाराज को सलाम किया।

महाराज०। यह तो मालूम हो गया कि यह सब तुम्हारी कारीगरी का नतीजा है मगर बताओ तो सही कि गाने बजाने की आवाज कहाँ से आ रही है?

इन्द्र०। आइये मै बताता हूँ। महाराज को जगाने ही के लिये यह तर्कीब की गई थी क्योंकि अब यहाँ से रवाना होने का समय हो गया विलम्ब न करना चाहिये।

इतना कह कर इन्द्रदेव सभो को सिंहासन के पास ले गया जिसमें से गाने की आवाज आ रही थी और उसका असल भेद समझा कर बोला, इसमें से मौके मौके पर हर एक राग रागिनी पैदा हो सकती है।"

इस अनूठे गाने बजाने से महाराज बहुत प्रसन्न हुए और सभो का लिये हुए इन्द्रदेव के मकान की तरफ रवाना हुए।

उस बारहदरी के बगल ही में एक कोठड़ी थी जिसमें सभो को साथ लिये हुए इन्द्रदेव चला गया, इस समय इन्द्रदेव के पास भी तिलिस्मी खञ्जर था जिससे उसने हलकी रोशनी पैदा की और उसी के सहारे सभों को लिये हुए आगे की तरफ बढ़ा।

उस कोठड़ी में जाने के बाद पहिले सभों को एक छोटे से तहखाने में उतरना पड़ा, वहाँ सभों ने लाल रंग की एक समाधि देखी जिसके बारे में दरियाफ्त करने पर इन्द्रदेव ने कहा कि यह समाधि नहीं है सुरंग का दर्वाजा है। इन्द्रदेव उस समाधि के पास बैठ गया और कोई ऐसी तरकीब की कि जिससे वह बीचोबीच से खुल गई और नीचे उतरने के लिये चार पाँच सीढ़ियाँ दिखाई दीं। इन्द्रदेव के कहे मुताबिक सब कोई नीचे उतर गये और इसके बाद सीधी सुरंग में चलने लगे। सुरंग की हालत और ऊँची नीची जमीन से साफ मालूम होता था कि यह पहाड़ खोद कर बनाई गई है और हम लोग ऊँचे की तरफ चढ़ते जा रहे हैं। हमारे मुसाफिरों को दो अढ़ाई घड़ी के लगभग चलना पड़ा और तब इन्द्रदेव ने ठहरने के लिये कहा क्योंकि यहाँ पर सुरंग खतम हो चुकी थी और सामने एक बन्द दर्वाजा दिखाई दे रहा था। इन्द्रदेव ने ताली लगा

कर ताला खोला और सभों को साथ लिये हुए उसके अन्दर गया। अब सभों ने अपने को एक सुन्दर कमरे में पाया और जब कमरे के बाहर हुए तब मालूम हुआ कि सवेरा हो चुका है।

यह इन्द्रदेव का वही मकान है जिसमें बुड्ढे दारोगा के साथ मदद पाने की उम्मीद में मायारानी गई थी। इस सुन्दर और सुहावने स्थान का हाल हम पहिले लिख चुके हैं अब पुनः बयान करने की कोई जरूरत नहीं मालूम होती।

इन्द्रदेव सभों को लिए हुए अपने छोटे से बगीचे में गया जहाँ से चारो तरफ की सुन्दर छटा दिखाई दे रही थी और खुशबूदार ठण्ढी ठण्ढी हवा दिल और दिमाग के साथ दोस्ती का हक अदा कर रही थी।

महाराज सुरेन्द्रसिंह बीरेन्द्रसिंह और दोनों कुमारों को यह स्थान बहुत पसन्द आया और बार बार उसकी तारीफ करने लगे। यद्यपि इस बगीचे में सभों के लायक दर्जे बदर्जे कुर्सियाँ बिछी हुई थीं मगर किसी का जी बैठने को नहीं चाहता था, सब कोई घूम घूम कर यहाँ का आनन्द लेना चाहते थे और ले रहे थे मगर इसी बीच में एक ऐसा मामला हो गया जिसने भूतनाथ और देवीसिंह दोनों को चौंका दिया। एक आदमी जल से भरा हुआ चाँदी का घड़ा और सोने की झारी लेकर आया और संगमर्मर की चौकी पर जो बगीचे में पड़ी हुई थी रख कर लौट चला। इसी आदमी को देख कर भूतनाथ और देवीसिंह चौंके थे क्योंकि यह वही आदमी था जिसे ये दोनों ऐयार नकाबपोशों के मकान में देख चुके थे, इसी आदमी ने नकाबपोशों के सामने एक तस्वीर पेश की थी और कहा था कि 'कृपानाथ! बस मैं इसी का दावा भूतनाथ पर करूँगा *।'

केवल इतना ही नहीं, भूतनाथ ने वहाँ से थोड़ी दूर एक झाड़ी में अपनी स्त्री को भी फूल तोड़ते देखा और धीरे से देवीसिंह को छेड़ कर कहा, "वह देखिये मेरी स्त्री भी यहाँ मौजूद है, ताज्जुब नहीं कि आपकी चम्पा भी कहीं घूम रही हो।"

---

* देखिये बीसवां हिस्सा दूसरा बयान।

बारहवाँ बयान

यद्यपि भूतनाथ को तरद्दुदों से छुट्टी मिल चुकी थी, यद्यपि भूतनाथ का कसूर माफ हो चुका था और वह महाराज के खास ऐयारों में मिला लिया गया था मगर इस जगह उस आदमी को जिसने नकाबपोशों के मकान में तस्वीर पेश करके भूतनाथ पर दावा करना चाहा था देख कर भूतनाथ की अवस्था फिर बिगड़ गई और साथ ही इसके अपनी स्त्री को भी वहाँ काम करते हुए देख कर उसे क्रोध चढ़ आया।

जब वह आदमी पानी का घड़ा और झारी रख कर लौट चला तब इन्द्रदेव ने उसे पुकार कर कहा, "अर्जुन! जरा वह तस्वीर भी तो ले आओ जिसे बार बार तुम दिखाया करते हो और जो हमारे दोस्त भूतनाथ को डराने और धमकाने के लिये एक औजार की तरह तुम्हारे पास रक्खी हुई है।"

इस नाम ने भूतनाथ के कलेजे को और भी हिला दिया। वास्तव में उस आदमी का यही नाम था और इस खयाल ने तो उसे और भी बदहवास कर दिया कि अब वह तस्वीर लेकर आवेगा।

इस समय सब कोई बाग में टहल रहे थे और इसलिये एक दूसरे से कुछ दूर हो रहा था। भूतनाथ बढ़ कर देवीसिंह के पास चला गया और उसका हाथ पकड़ कर धीरे से बोला, "देखा इन्द्रदेव का रंग ढंग?"

देवी०। (धीरे से) मैं सब कुछ देख और समझ रहा हूँ, मगर तुम घबराओ नहीं।

भूत०। मालूम होता है कि इन्द्रदेव का दिल अभी तक मेरी तरफ से साफ नहीं हुआ।

देवी०। शायद ऐसा ही हो मगर इन्द्रदेव से ऐसी उम्मीद हो नहीं सकती, मेरा दिल इसे कबूल नहीं करता। मगर भूतनाथ! तुम भी अजीब सिड़ी हो!

भूत०। सो क्या?

देवी०। यही कि नकाबपोश का पीछा करके तुमने कैसे कैसे तमाशे देखे और तुम्हें विश्वास भी हो गया कि इन नकाबपोशों से हमारा कोई भेद छिपा नहीं है फिर अन्त में यह भी मालूम हो गया कि उन नकाबपोशों के सर्दार कुँअर

इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह थे अस्तु इनसे अब कोई बात छिपी नहीं रही।

भूत०। बेशक ऐसा ही है।

देवी०। तो फिर अब क्यों तुम्हारा दम घुटा जाता है? अब तुम्हें किसका डर रह गया?

भूत०। कहते तो ठीक हो, खैर कोई चिन्ता नहीं जो कुछ होगा देखा जायगा।

देवी०। बल्कि तुम्हें यह जानना चाहिये कि दोनों कुमारों को तुम्हारे भेदों का पता क्योंकर लगा। ताज्जुब नहीं कि अब ये सब बातें खुला चाहती हों।

भूत०। शायद ऐसा ही हो मगर मेरी स्त्री के बारे में तुम क्या खयाल करते हो?

देवीसिंह०। इस बारे में मेरा तुम्हारा मामला एक सा हो रहा है अस्तु इस विषय में मैं कुछ भी नहीं कह सकता। देखो इन्द्रदेव तेजसिंह के पास चला गया है और तुम्हारी स्त्री की तरफ इशारा करके कुछ कह रहा है। तेजसिंह अलग हों तो मै उनसे कुछ पूछूँ। यहां की छटा ने तो लोगों का दिल ऐसा लुभा लिया है कि सभों ने एक दूसरे का साथ ही छोड़ दिया (चौंक कर) लो देखो तुम्हारा लड़का नानक भी ता आ पहुँचा, उसके हाथ में भी कोई तस्वीर मालूम पड़ती है, अर्जुन भी उसी के साथ है!!

भूत०। (ताज्जुब से) आश्चर्य की बात है नानक और अर्जुन का साथ कैसे हुआ? और नानक यहाँ आया ही क्यों? क्या अपनी मां के साथ आया है? क्या कपूत छोकरे ने भी मेरी तरफ से आँखें फेर ली हैं? ओफ! यह तिलिस्मी जमीन तो मेरे लिये भयानक ही है, सच्चा तिलिस्म मुझे दिखाई दे रहा है। जिन पर मुझे विश्वास था जिनका मुझे भरोसा था, जो मेरी इज्जत करते थे, यहा उन्हीं को मै अपना विपक्षी पाता हूँ और वे मुझसे बात तक करना पसन्द नहीं करते।

नानक और अर्जुन को भूतनाथ और देवीसिंह ताज्जुब के साथ देख रहे थे। नानक ने भी भूतनाथ को देखा मगर दूर ही से प्रणाम करके रह गया पास न आया और अर्जुन को लिये हुये सीधे इन्द्रदेव की तरफ चला गया जो तेजसिंह से बातें कर रहे थे। इस समय आज्ञानुसार अर्जुन अपने हाथ में तस्वीर

लिये हुए था और नानक के हाथ में भी एक तस्वीर थी।

नानक और अर्जुन को अपने पास आते देख इन्द्रदेव ने हाथ के इशारे से उन्हें दूर ही खड़े रहने के लिये कहा और उन्होंने भी ऐसाही किया। कुछ देर तक और भी तेजसिंह के साथ इन्द्रदेव बातें करता रहा इसके बाद इशारे से अर्जुन और नानक को अपने पास बुलाया और जब वे दोनों पास आ गये तो कुछ कहें सुन कर बिदा किया।

भूतनाथ यह सब तमाशा देख कर ताज्जुब कर रहा था। अर्जुन और नानक को बिदा करने बाद तेजसिंह को साथ लिये हुए इन्द्रदेव महाराज सुरेन्द्रसिंह के पास गया जो एक सुन्दर चट्टान पर खड़े खड़े ढालवीं जमीन और पहाड़ी पर से नीचे की तरफ गिरते हुए सुन्दर झरने की शोभा देख रहे थे और बीरेन्द्रसिंह भी उन्हीं के पास खड़े थे। वहां भी कुछ देर तक इन्द्रदेव ने महाराज से बातचीत की और इसके बाद चारो आदमी लौट कर बगीचे में चले आये। महाराज को बगीचे में आते देख और सब कोई भी जो इधर उधर फैले हुए तमाशा देख रहे थे बगीचे में आ कर इकट्ठे हो गये, अब मानो महाराज का एक छोटा सा दर्बार बगीचे में लग गया।

बीरे०। (इन्द्रदेव से) हाँ तो अब वे तमाशे कब देखने में आवेंगे जो आप अपने साथ तिलिस्म में लेते गये थे?

इन्द्रदेव०। जब आज्ञा हो तभी दिखाये जायँ।

बीरे०। हम लोग तो देखने के लिये तैयार बैठे हैं।

जीत०। मगर पहिले यह मालूम हो जाना चाहिये कि उनके देखने में कितना समय लगेगा। अगर थोड़ी ही देर का काम हो तो अभी देख लिया जाय।

इन्द्र०। जी वह थोड़ी देर का काम तो नहीं है, इससे यही बेहतर होगा कि पहिले जरूरी कामों से छुट्टी पाकर स्नान ध्यान तथा भोजन इत्यादि से निवृत्त हो लें।

महाराज०। हमारी भी यही राय है।

महाराज का मतलब समझ कर सब कोई उठ खड़े हुए और जरूरी कामों से छुट्टी पाने की फिक्र में लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह, बीरेन्द्रसिंह तथा और भी

सब कोई इन्द्रदेव के उचित प्रबन्ध को देख कर बहुत ही प्रसन्न हुए, किसी को किसी तरह की तकलीफ न हुई और न कोई चीज माँगने की जरूरत ही पड़ी। इन्द्रदेव के ऐयार और कई खिदमतगार आ कर मौजूद हो गये और बात की बात में सब सामान ठीक हो गया।

स्नान तथा सन्ध्या पूजा इत्यादि से छुट्टी पाकर सभों ने भोजन किया और इसके बाद इन्द्रदेव ने (बँगले के अन्दर) एक बहुत बड़े और सजे हुए कमरे में सभों को बैठाया जहां सभों के योग्य दर्जे बदर्जे बैठने का इन्तजाम किया गया था। एक ऊँची गद्दी पर महाराज सुरेन्द्रसिंह और उनके दाहिनी तरफ बीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, पण्डित बद्रीनाथ, रामनारायण, पन्नालाल तथा भूतनाथ वगैरह बैठे।

कुछ देर तक इधर उधर की बातचीत होती रही, इसके बाद इन्द्रदेव ने हाथ जोड़ कर पूछा—"अब यदि आज्ञा हो तो उन तमाशों को....."

महाराज०। हां हां, अब तो हम लोग हर तरह से निश्चिन्त हैं।

सलाम करके इन्द्रदेव कमरे के बाहर चला गया और घड़ी भर तक लौट के नहीं आया, इसके बाद जब आया तो चुपचाप अपने स्थान पर जाकर बैठ गया सब कोई (भूतनाथ पन्नालाल वगैरह) ताज्जुब के साथ उसका मुँह देखने लगे इतने ही में सामने वाले दर्वाजे का परदा हटा और नानक कमरे के अन्दर आता हुआ दिखाई दिया। नानक ने बड़े अदब के साथ महाराज को सलाम किया और इन्द्रदेव का इशारा पाकर एक किनारे बैठ गया। इस समय नानक के हाथ में एक बहुत बड़ी मगर लपेटी हुई तस्वीर थी जो कि उसने अपनी बगल में रख ली।

नानक के बाद हाथ में तस्वीर लिये हुए अर्जुन भी आ पहुँचा और महाराज को सलाम करके नानक के पास बैठ गया, उसी समय कमला का भाई अथवा भूतनाथ का लड़का हरनामसिंह दिखाई दिया, वह भी महाराज को प्रणाम करके अर्जुन के बगल में बैठ गया। हरनामसिंह के हाथ में एक छोटी सी सन्दूकड़ी थी जिसे उसने अपने सामने रख लिया।

इसके बाद नकाब पहरे हुई तीन औरतें कमरे के अन्दर आईं और अदब के साथ महाराज को सलाम करती हुई दूसरे दर्वाजे से कमरे के बाहर निकल गईं।

इस समय भूतनाथ और देवीसिंह के दिल की क्या हालत थी सो वे ही जानते होंगे। उन्हें इस बात का तो विश्वास ही था कि इन औरतों में एक तो भूतनाथ की स्त्री और दूसरी चम्पा जरूर है मगर तीसरी औरत के बारे में कुछ भी नहीं कह सकते थे।

महाराज०। (इन्द्रदेव से) इन औरतों में भूतनाथ की स्त्री और चम्पा जरूर होगी?

इन्द्र०। (हाथ जोड़ कर) जी हां कृपानाथ!

महाराज०। और तीसरी औरत कौन है?

इन्द्र०। तीसरी एक बहुत ही गरीब, नेक, सूधी और जमाने की सताई हुई औरत है जिसे देख कर और जिसका हाल सुन कर महाराज को बड़ी ही दया आवेगी। यह वह औरत है जिसे मरे हुए एक जमाना हो गया मगर अब उसे विचित्र ढंग से पैदा होते देख लोगों को बड़ा ही ताज्जुब होगा।

महाराज०। आखिर वह औरत है कौन?

इन्द्रदेव०। बेचारी दुःखिनी कमला की मां याने भूतनाथ की पहिली स्त्री।

यह सुनते ही भूतनाथ चिल्ला उठा और उसने बड़ी मुश्किल से अपने को बेहोश होते होते रोका।

* इक्कीसवाँ हिस्सा समाप्त *

सुवर्ण रेखा

श्री दुर्गाप्रसाद खत्री रचित अद्भुत वैज्ञानिक उपन्यास। इस उपन्यास में एक बड़ी ही विचित्र कहानी लिखी गई है। किसी वैज्ञानिक को इस बात का पता लग गया कि समुद्र के पानी में नमक की तरह सोना भी घुला हुआ रहता है। यही नहीं, बड़े ही सहज में इस सोने को पानी से अलग करने की उसे तर्कीब भी मिल गई और उसने हजारों मन सोना पानी से निकाल कर रख दिया। यहाँ तक तो कोई बात न थी, पर जब वह सोना बिकने के लिये बाजार में पहुँचा तब मजा आने लगा। यकायक जब हजारों मन सोना बिक्री के वास्ते यूरोप और अमेरिका के बाजारों में पहुँच गया तो वहाँ का सोने का बाजार एकदम गिर गया। बड़ी उथल पुथल मची। बड़े बड़े लखपती एक दिन में कंगाल और कंगाल लखपती बनने लगे। सब व्यापार चौपट हो गया। बड़े बड़े कल कारखाने बंद होने लगे। जमीन जायदादों की कीमत उलट पुलट होने लगी। चारो तरफ हड़कम मच गया और सब के सब, दुनिया भर के अमीर, दुनिया भर की सरकारें, इस बात का पता लगाने के फेर में पड़ गईं कि यह मामला क्या है? कौन आदमी इतना सोना बेच रहा है? और उसके पास इतना सोना आया तो कहाँ से? बड़े बड़े जासूस छूटे और गहरी चालाकियाँ होने लगीं, जिनके जाल में वह बेचारा वैज्ञानिक बुरी तरह फँस गया और अपनी जान बचाने की नीयत से एक बड़ा ही मजबूत जहाज बनवा कर उस पर रहने लगा, पर वहां भी जासूस पहुँच ही गए। इसके बाद क्या हुआ सो पढ़ कर आप ताज्जुब में पड़ जायंगे। बड़ा ही रोचक किस्सा है।

* श्रीः *

चन्द्रकान्ता सन्तति

बाईसवाँ हिस्सा

—०—

पहिला बयान

भूतनाथ की अवस्था ने सभों का ध्यान अपनी तरफ खींच लिया। कुछ देर तक सन्नाटा रहा और इसके बाद इन्द्रदेव ने पुनः महाराज की तरफ देख कर कहा—

"महाराज! ध्यान देने और विचार करने पर सभों को मालूम होगा कि आज कल आपका दर्बार 'नाट्यशाला' (थियेटर का घर) हो रहा है। नाटक खेल कर जो जो बातें दिखाई जा सकती हैं और जिनके देखने से लोगों को नसीहत मिल सकती है तथा मालूम हो सकता है कि दुनिया में किस दर्जे तक के नेक और बद, दुखिया और सुखिया, गम्भीर और छिछोरे इत्यादि पाये जाते हैं, वे सब इस समय (आज कल) आपके यहां प्रत्यक्ष हो रहे हैं। ग्रह-दशा के फेर में जिन्होंने दुःख भोगा वे भी मौजूद हैं और जिन्होंने अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मारी वे भी दिखाई दे रहे हैं, जिन्होंने अपने किये का फल ईश्वरेच्छा से पा लिया है वे भी आये हुए हैं और जिन्हें अब सजा दी जायगी वे भी गिरफ्तार किये गये हैं। बुद्धिमानों का यह कथन कि 'जो बुरी राह चलेगा

उसे बुरा फल अवश्य मिलेगा' ठीक है, परन्तु कभी कभी ऐसा भी होता है कि अच्छी राह चलने वाले तथा नेक लोग भी दुःख के चेहले में फँस जाते हैं और दुर्जन तथा दुष्ट लोग आनन्द के साथ दिन काटते दिखाई देते हैं। इसे लोग ग्रहदशा का कारण कहते हैं मगर नहीं इसके सिवाय कोई और बात भी जरूर है। परमात्मा की दी हुई बुद्धि और विचारशक्ति का अनादर करने वाले ही प्रायः संकट में पड़ कर तरह तरह के दुःख भोगते हैं। मेरे कहने का तात्पर्य यही है कि इस समय अथवा आज कल आपके यहां सब तरह के जीव दिखाई देते हैं, दृष्टान्त देने के बदले केवल इशारा करने से काम निकलता है। हां मैं यह कहना तो भूल ही गया कि इन्हीं में ऐसे भी जीव आए हुए हैं जो अपने किये का नहीं बल्कि अपने सम्बन्धियों के किये हुए पापों का फल भोग रहे हैं और इसी से नाते (रिश्ते) और सम्बन्ध का गूढ़ अर्थ भी निकलता है। बेचारी लक्ष्मीदेवी की तरफ देखिये जिसने किसी का कुछ भी नहीं बिगाड़ा और फिर भी हद दर्जे की तकलीफ उठा कर ताज्जुब है कि जीती बच गई। ऐसा क्यों हुआ ? इसके जवाब में मैं तो यही कहूँगा कि राजा गोपालसिंह की बदौलत, जो बेईमान दारोगा के हाथ की कठपुतली हो रहे थे और इस बात की कुछ भी खबर नहीं रखते थे कि उनके घर में क्या हो रहा है उनके कर्मचारियों ने उन्हें कैसे जाल में फँसा रक्खा है। जिस राजा को अपने घर की खबर न होगी, वह प्रजा का क्या उपकार कर सकता है और ऐसा राजा अगर संकट में पड़ जाय तो आश्चर्य ही क्या है! केवल इतना ही नहीं, इनके दुःख भोगने का सबब और भी है। बड़ों ने कहा है कि 'स्त्री' के आगे भेद की बात प्रगट करना बुद्धिमानों का काम नहीं है परन्तु राजा गोपालसिंह ने इस बात पर कुछ भी ध्यान न दिया और दुष्टा मायारानी की मुहब्बत में फँस कर तथा अपने भेदों को बता कर बर्बाद हो गये। सज्जन और सरल स्वभाव होने से ही दुनिया का काम नहीं चलता, कुछ नीति का भी अवलम्बन करना ही पड़ता है। इसी तरह महाराज शिवदत्त को देखिये जिसे खुशामदियों ने मिल जुल कर बर्बाद कर दिया। जो खुशामद में पड़ कर अपने को सब से बड़ा समझ बैठते हैं और दुश्मन को कोई चीज नहीं समझते हैं, उनकी वैसी ही गति होती है जैसी शिवदत्त की हुई। दुष्टों और दुर्जनों की बात जाने दीजिये, उनको

तो उनके बुरे कर्मों का फल मिलना ही चाहिये मिला ही है और मिलेगा ही, उनका जिक्र तो मैं पीछे करूँगा, अभी तो मैं उन लोगों की तरफ इशारा करता हूँ जो वास्तव में बुरे नहीं थे मगर नीति पर न चलने तथा बुरी सोहबत में पड़े रहने के कारण संकट में पड़ गये। मैं दावे के साथ कहता हूँ कि भूतनाथ ऐसा नेक दयावान और चतुर ऐयार बहुत कम दिखाई देगा, मगर लालच और ऐयाशी के फेर में पड़ कर यह ऐसा बर्बाद हुआ कि दुनिया भर में मुँह छिपाने और अपने को मुर्दा मशहूर करने पर भी इसे सुख की नींद नसीब न हुई। अगर यह मेहनत करके ईमानदारी के साथ दौलत पैदा किया चाहता तो आज इसकी दौलत का अन्दाजा करना कठिन होता और अगर ऐयाशी के फेर में न पड़ा होता तो आज नाती पोतों से इसका घर दूसरों के लिये नजीर गिना जाता। इसने सोचा कि मैं मालदार हूँ, होशियार हूँ, चालाक हूँ, और ऐयार हूँ, कुलटा स्त्रियों और रण्डियों की सोहबत का मजा ले कर सफाई के साथ अलग हो जाऊँगा, मगर इसे अब मालूम हुआ होगा कि रंडियाँ ऐयारों के भी कान काटती हैं। नागर वगैरह के बर्ताव का जब यह याद करता होगा तब इसके कलेजे में चोट सी लगती होगी। मैं इस समय इसकी शिकायत करने पर उतरू नहीं हुआ हूँ बल्कि इसके दिल पर से पहाड़ सा बोझ हटा कर उसे हलका किया चाहता हूँ, हाँ इधर कई वर्षों से इसका विश्वास अवश्य उठ गया था और मैं इसकी सोहबत पसन्द नहीं करता था, मगर इसमें मेरा कोई कसूर नहीं, किसी की चालचलन जब खराब हो जाती है तब बुद्धिमान लोग उसका विश्वास नहीं करते और शास्त्र की भी ऐसी ही आज्ञा है, अतएव मुझे भी वैसा ही करना पड़ा। यद्यपि मैंने इसे किसी तरह की तकलीफ नहीं पहुँचाई परन्तु इसकी दोस्ती को एक दम भूल गया, मुलाकात होने पर उसी तरह वर्ताव करता था जैसा लोग नए मुलाकाती के साथ किया करते हैं। हाँ अब जब कि यह अपनी भूलों को सोच समझ कर पछता चुका है, एक अच्छे ढङ्ग से नेकी के साथ नामवरी पैदा करता हुआ दुनियामें फिर दिखाई देने लगा है, और महाराज भी इसकी योग्यता से प्रसन्न होकर इसके अपराधों को (दुनिया के लिए) क्षमा कर चुके हैं, तब मैंने भी इसके अपराधों को दिल ही दिल में क्षमा कर इसे अपना मित्र समझ लिया है और फिर उसी निगाह से देखने लगा हूँ

जिस निगाह से पहिले देखता था। परन्तु इतना मैं जरूर कहूँगा कि भूतनाथ ही एक ऐसा आदमी है जो दुनिया में नेकचलनी के नतीजे को दिखाने के लिये नमूना बन रहा है। आज यह अपने भेदों को प्रगट होते देख डरता है और चाहता है कि हमारे भेद छिपे रह जायँ, मगर यह इसकी भूल है क्योंकि किसी के ऐब छिपे नहीं रहते। सब नहीं तो बहुत कुछ दोनों कुमारों को मालूम हो चुके हैं और महाराज भी जान गये हैं, ऐसी अवस्था में इसे अपना किस्सा पूरा पूरा बयान करके दुनिया में एक नजीर छोड़ देना चाहिये और साथ ही इसके (भूतनाथ की तरफ देखते हुए) अपने दिल के बोझ का भी हलका कर देना चाहिये। भूतनाथ ! तुम्हारे दो चार भेद ऐसे हैं जिन्हें सुन कर लोगों की आखें खुल जायँगी और लोग समझेंगे कि आदमी ऐसे ऐसे काम भी कर गुजरते हैं और उनका नतीजा ऐसा होता है, मगर यह तो कुछ तुम्हारे ही ऐसे बुद्धिमान और अनूठे ऐयार का काम है कि इतना करने पर भी आज तुम भले चंगे ही नहीं दिखाई देते हो बल्कि नेकनामी के साथ महाराज के ऐयार कहलाने की इज्जत पा चुके हो। मैं फिर कहता हूँ कि किसी बुरी नीयत से इन बातों का जिक्र मैं नहीं करता बल्कि तुम्हारे दिल का खुटका दूर करने के साथ ही साथ जिनके नाम से तुम डरते हो उन्हें तुम्हारा दोस्त बनाया चाहता हूँ, अस्तु तुम्हें बेखौफ अपना हाल बयान कर देना चाहिये।"

भूत०। ठीक है, मगर मैं क्या करूँ, मेरी जुबान नहीं खुलती, मैंने ऐसे ऐसे बुरे काम किये हैं कि जिन्हें याद करके आज मेरे रोंगटे खड़े हो जाते हैं और आत्महत्या करने की जी में इच्छा होती है मगर नहीं, मैं बदनामी के साथ दुनिया से उठ जाना पसन्द नहीं करता अतएव जहाँ तक हो सकेगा एक दफे नेकनामी अवश्य पैदा करूँगा।

इन्द्र०। नेकनामी पैदा करने का ध्यान जहां तक बना रहे अच्छा ही है परन्तु मैं समझता हूँ कि तुम नेकनामी उसी दिन पैदा कर चुके जिस दिन हमारे महाराज ने तुम्हें अपना ऐयार बनाया, इस लिये कि तुमने इधर बहुत ही अच्छे अच्छे काम किये हैं और वे सब ऐसे थे जिन्हें अच्छे से अच्छा ऐयार भी कदाचित् नहीं कर सकता था। चाहे तुमने पहिले कैसी ही बुराई और कैसे ही खोटे काम क्यों न किये हों मगर आज हम लोग तुम्हारे देनदार हो रहे हैं, तुम्हारे

एहसान के बोझ से दबे हुए हैं, और समझते हैं कि तुम अपने दुष्कर्मों का प्रायश्चित्त कर चुके हो।

भूत०। आप जो कुछ कहते हैं वह आपका बड़प्पन है परन्तु मैंने जो कुछ कुकर्म किये हैं, मैं समझता हूँ कि उनका प्रायश्चित्त ही नहीं है, तथापि अब तो मैं महाराज की शरण में आ ही चुका हूँ और महाराज ने भी मेरी बुराइयों पर ध्यान न देकर मुझे अपना दासानुदास स्वीकार कर ही लिया है इससे मेरी आत्मा सन्तुष्ट है और मैं अपने को दुनियाँ में मुँह दिखाने योग्य समझने लगा हूँ मैं यह भी समझता हूँ कि आप जो कुछ आज्ञा कर रहे हैं यह वास्तव में महाराज की आज्ञा है जिसे मैं कदापि उल्लघन नहीं कर सकता अस्तु मैं अपनी अद्भुत जीवनी सुनाने के लिये तैयार हूँ, परन्तु.....

इतना कह कर भूतनाथ ने एक लम्बी साँस ली और महाराज सुरेन्द्रसिंह की तरफ देखा।

सुरेन्द्र०। भूतनाथ! यद्यपि हमलोग तुम्हारा कुछ कुछ हाल जान चुके हैं मगर फिर भी तुम्हारा पूरा पूरा हाल तुम्हारे ही मुँह से सुनने को इच्छा रखते हैं। तुम बयान करने में किसी तरह का सकोच न करो। इससे तुम्हारा दिल भी हलका हो जायगा और दिन रात जो तुम्हें खुटका बना रहता है वह भी जाता रहेगा।

भूत०। जो आज्ञा।

इतना कह कर भूतनाथ ने सलाम किया और अपनी जीवनी इस तरह बयान करने लगा—

* भूतनाथ की जीवनी *

भूत०। सब के पहले मै वही बात कहूँगा जिसे आप लोग नहीं जानते, अर्थात् मैं नौगढ़ के रहने वाले और देवीसिंह के सगे चचा जीवनसिंह का लड़का हूँ। मेरी सौतेली माँ मुझे देखना पसन्द नहीं करती थीं और मैं उसकी आँखों में कांटे की तरह गड़ा करता था। मेरे ही सबब से मेरी मां की इज्जत और कदर थी और उस बाझ को कोई पूछता भी न था अतएव वह मुझे दुनियाँ ही से उठा देने की फिक्र में लगी और यह बात मेरे पिता को भी मालूम हो गई इसलिये जब की मैं आठ वर्ष का था मेरे पिता ने मुझे अपने मित्र देवदत्त ब्रह्म-

चारी के सुपुर्द कर दिया जो तेजसिंहजी के * गुरु थे और महात्माओं की तरह नौगढ़ की उसी तिलिस्मी खोह में रहा करते थे जिसे राजा बीरेन्द्रसिंहजी ने फतह किया है। मैं नहीं जानता कि मेरे पिता ने मेरे विषय में उन्हें क्या समझाया और क्या कहा परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रह्मचारीजी मुझे अपने लड़के की तरह मानते, पढ़ाते, लिखाते और साथ ही साथ ऐयारी भी सिखाते थे, परन्तु जड़ी बूटियों के प्रभाव से उन्होंने मेरी सूरत में बहुत बड़ा फर्क डाल दिया था जिसमें कोई मुझे पहिचान न ले। मेरे पिता मुझे देखने के लिये बराबर इनके पास आया करते थे।

इतना कह कर भूतनाथ कुछ देर के लिए चुप हो गया और सभों के मुँह की तरफ देखने लगा।

सुरेन्द्र०। (ताज्जुब के साथ) ओफ ओह !! क्या तुम जीवनसिंह के वही लड़के हो जिसके बारे में उन्होंने मशहूर कर दिया था कि उसे जंगल में शेर उठा ले गया !!

भूत०। (हाथ जोड़ कर) जी हाँ।

तेज०। और आप वही हैं जिसे गुरुजी 'फिरकी' कह के पुकारा करते थे क्योंकि आप एक जगह ज्यादे देर तक बैठते न थे!

भूत०। जी हां।

देवी०। यद्यपि मैं बहुत दिनों से आपको भाई की तरह मानने लग गया हूँ परन्तु आज यह जान कर मेरी खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा कि आप वास्तव में मेरे भाई हैं, मगर यह तो बताइये कि ऐसी अवस्था में शेरसिंह आपके भाई क्योंकर हुए? वह कौन हैं?

भूत०। वास्तव में शेरसिंह मेरा भाई नहीं है बल्कि गुरुभाई और उन्हीं ब्रह्मचारीजी का लड़का है मगर हाँ लड़कपन ही से एक साथ रहने के कारण हम दोनों में भाई की सी मुहब्बत हो गई थी।

तेज०। आज कल शेरसिंह कहां हैं?

भूत०। मुझे उनकी कुछ भी खबर नहीं है मगर मेरा दिल गवाही

* चन्द्रकान्ता पहिला हिस्सा छठे बयान में तेजसिंह ने अपने गुरु में बीरेन्द्रसिंह से कुछ कहा था।

कि अब वे हम लोगों को दिखाई न देंगे।

बीरे०। सो क्यों ?

भूत०। इसीलिये कि वे भी अपने को छिपाये और हम लोगों में मिले जुले रहते थे और साथ ही इसके ऐबों से खाली न थे।

सुरे०। खैर कोई चिन्ता नहीं, अच्छा तब ?

भूत०। अस्तु मैं उन्हीं ब्रह्मचारीजी के पास रहने लगा। कई वर्ष बीत गये। पिताजी मुझसे मिलने के लिये कभी कभी आया करते थे और जब मैं बड़ा हुआ तो उन्होंने मुझे अपने से जुदा करने का सबब भी बयान किया और वे यह जान कर बहुत प्रसन्न हुए कि मैं ऐयारी के फन में बहुत तेज और होशियार हो गया हूँ। उस समय उन्होंने ब्रह्मचारी जी से कहा कि इसे किसी रियासत में नौकर रखा देना चाहिए तब इसकी ऐयारी खुलेगी। मुख्तसर यह कि ब्रह्मचारीजी की ही बदौलत मैं गदाधरसिंह के नाम से रणधीरसिंहजी के यहाँ और शेरसिंह महाराज दिग्विजयसिंह के यहाँ नौकर हो गये और यह जाहिर किया गया कि शेरसिंह और गदाधरसिंह दोनों भाई हैं, और हम दोनों आपुस में प्रेम भी ऐसा ही रखते थे।

उन दिनों रणधीरसिंह की जमींदारी में तरह तरह के उत्पात मचे हुए थे और बहुत से आदमी उनके जानी दुश्मन हो रहे थे। उनके आपुस वालों को तो इस बात का विश्वास हो गया था कि अब रणधीरसिंहजी की जान किसी तरह नहीं बच सकती क्योंकि उन्हीं दिनों उनका ऐयार श्रीसिंह दुश्मनों के हाथों से मारा जा चुका था और खूनी का कुछ पता नहीं लगता था। कोई दूसरा ऐयार भी उनके पास न था इसलिये वे बड़े ही तरद्दुद में पड़े हुए थे। यद्यपि उन दिनों उनके यहाँ नौकरी करना अपनी जान खतरे में डालना था मगर मुझे इन बातों की कुछ भी परवाह न हुई। रणधीरसिंहजी भी मुझे नौकर रख कर बहुत प्रसन्न हुए और वे मेरी खातिरदारी में कभी किसी तरह की कमी नहीं करते थे। इसका दो सबब था, एक तो उन दिनों उन्हें ऐयार की सख्त जरूरत थी, दूसरे मेरे पिता से और उनसे कुछ मित्रता भी थी जो कुछ दिन के बाद मालूम हुआ।

रणधीरसिंहजी ने मेरा ब्याह भी शीघ्र ही करा दिया। सम्भव है कि इसे भी

मैं उनकी कृपा और स्नेह का कारण समझूँ, पर यह भी हो सकता है कि मेरे पैर में गृहस्थी की बेड़ी डालने और कहीं भाग जाने लायक न रखने के लिए उन्होंने ऐसा किया हो क्योंकि अकेला और बेफिक्र आदमी कहीं पर जन्म भर रहे और काम करे इसका विश्वास लोगों को कम रहता है। खैर जो कुछ हो मतलब यह है कि उन्होंने मुझे बड़ी इज्जत और प्यार के साथ अपने यहाँ रक्खा और मैंने भी थोड़े ही दिनों में ऐसे ऐसे अनूठे काम कर दिखाए कि उन्हें ताज्जुब होता था। सच तो यों है कि उनके दुश्मनों की हिम्मत टूट गई और वे दुश्मनी की आग में आप ही जलने लगे।

कायदे की बात है कि जब आदमी के हाथ से दो चार काम अच्छे निकल जाते हैं और चारो तरफ उसकी तारीफ होने लगती है तब वह अपने काम की तरफ से बेफिक्र हो जाता है। वही हाल मेरा भी हुआ।

आप जानते ही होंगे कि रणधीरसिंहजी का दयाराम नामी एक भतीजा था जिसे वे बहुत प्यार करते थे और वही उनका वारिस होने वाला था। उसके माँ बाप लड़कपन ही में मर चुके थे मगर चाचा की मुहब्बत के सबब उसे मां बाप के मरने का दुःख कुछ मालूम न हुआ। वह (दयाराम) उम्र में मुझसे कुछ छोटा था मगर मेरे और उसके बीच में हद दर्जे की दोस्ती और मुहब्बत हो गई थी। जब हम दोनों आदमी घर पर मौजूद रहते तो बिना मिले जी नहीं मानता। दयाराम का उठना बैठना मेरे यहां ज्यादे होता था, अक्सर रात को वह मेरे यहां ही खा पी कर सो जाता था और उसके घर वाले भी इसमें किसी तरह का रंज नहीं मानते थे।

जो मकान मुझे रहने के लिए मिला था वह निहायत उम्दा और शानदार था। उसके पीछे की तरफ एक छोटा सा नजर बाग था जो दयाराम के शौक की बदौलत हरदम हरा भरा गुलजार और सुहावना बना रहता था प्रायः संध्या के समय हम दोनों दोस्त उसी बाग में बैठ कर भाँग बूटियाँ छानते और संध्योपासन से निवृत्त हो बहुत रात गये तक गप्प शप्प किया करते।

जेठ का महीना था और गर्मी हद दर्जे की पड़ रही थी। पहर रात बीत जाने पर हम दोनों दोस्त उसी नजर बाग में दो चारपाई के ऊपर लेटे हुए आपुस में धीरे धीरे बातें कर रहे थे। मेरा खूबसूरत और प्यारा कुत्ता मेरे पाय-

ताने की तरफ एक पत्थर की चौकी पर बैठा हुआ था। बात करते करते हम दोनों को नींद आ गई।

आधी रात से कुछ ज्यादे बीती होगी जब मेरी आँख कुत्ते के भौंकने की आवाज से खुल गई। मैंने उस पर कुछ विशेष ध्यान न दिया और करवट बदल कर फिर आंखें बन्द कर लीं क्योंकि वह कुत्ता मुझसे बहुत दूर और नजर बाग के पिछले हिस्से की तरफ था, मगर कुछ ही देर बाद वह मेरी चारपाई के पास आकर भौंकने लगा और पुनः मेरी आंख खुल गई। मैंने कुत्ते को अपने सामने बेचैनी की हालत में देखा, उस समय वह जुबान निकाले हुए जोर जोर से हांफ रहा और दोनों अगले पैरों से जमीन खोद रहा था।

मैं अपने कुत्ते की आदतों को खूब जानता और समझता था, अस्तु उसकी ऐसी अवस्था देखकर मेरे दिल में खुटका हुआ और मैं घबड़ा कर उठ बैठा अपने मित्र को भी उठा कर होशियार कर देने की नीयत से मैंने उनकी चारपाई की तरफ देखा मगर चारपाई खाली पाकर मैं बेचैनी के साथ चारो तरफ देखने लगा और उठ कर चारपाई के नीचे खड़े होने के साथ ही मैंने अपने सिरहाने के नीचे से खञ्जर निकाल लिया। उस समय मेरा नमकहलाल कुत्ता मेरी धोती पकड़ कर बार बार खैंचने और बाग के पिछले हिस्से की तरफ चलने का इशारा करने लगा और जब मैं उसके इशारे के मुताबिक चला तो वह धोती छोड़ कर आगे आगे दौड़ने लगा। कदम बढ़ाता हुआ मैं उसके पीछे पीछे चला। उस समय मालूम हुआ कि मेरा कुत्ता जख्मी है, उसके पिछले पैर में चोट आई है इसलिये वह पैर उठा कर दौड़ता था। अस्तु कुत्ते के पीछे पीछे चल कर मैं पिछली दीवार के पास जा पहुँचा जहाँ मालती और मे'मि-याने की लताओं के सबब घना कुंज और पूरा अन्धकार हो रहा था। कुत्ता उस झुरमुट के पास जाकर रुक गया और मेरी तरफ देख कर दुम हिलाने लगा। उसी समय मैंने झाड़ी में से तीन आदमियों को निकलते हुए देखा जो बाग की दीवार के पास चले गए और फुर्ती से दीवार लाँघ कर पार हो गये। उन तीनों में से एक आदमी के हाथ में एक छोटी सी गठड़ी थी जो दीवार लाँघते समय उसके हाथ से छूट कर बाग के भीतर ही गिर पड़ी। निःसन्देह वह गठड़ी लेने के लिये भीतर लौटता मगर उसने मुझे और मेरे कुत्ते को देख लिया था इस

लिए उसकी हिम्मत न पड़ी।

गठड़ी गिरने साथ ही मैंने जफील बुलाई और खञ्जर हाथ में लिए हुये उस आदमी का पीछा करना चाहा अर्थात् दीवार की तरफ बढ़ा, मगर कुत्ते ने मेरी धोती पकड़ ली और झाड़ी की तरफ हट कर खैंचने लगा जिससे मैं समझ गया कि इस झाड़ी में कोई और भी छिपा हुआ है जिसकी तरफ कुत्ता इशारा कर रहा है। मैं सम्हल कर खड़ा हो गया और गौर के साथ उस झाड़ी की तरफ देखने लगा? उसी समय पत्तों की खड़खड़ाहट ने विश्वास दिला दिया कि इसमें कोई और भी है। मैं इस ख्याल से कि जिस तरह पहिले तीन आदमी दीवार लाँघ कर भाग गये हैं उसी तरह इनको भी भाग जाने न दूँगा, घूम कर दीवार की तरफ चला गया। उस समय मैंने देखा कि एक चार डण्डे की सीढ़ी दीवार के साथ लगी हुई है जिसके सहारे से वे तीनों निकल गये थे। मैंने वह सीढ़ी उठा कर उस गठड़ी के उपर फेंक दी जो उसके हाथ से छूट कर गिर पड़ी थी क्योंकि मैं उस गठड़ी की हिफाजत का भी ख्याल कर रहा था।

सीढ़ी हटाने के साथ ही दो आदमी उस झाड़ी में से निकले और बड़ी बहादुरी के साथ मेरा मुकाबिला किया और मैं भी जी तोड़ कर उनके साथ लड़ने लगा। अन्दाज से मालूम हो गया कि गठड़ी उठा लेने की तरफ ही उन दोनों का ध्यान विशेष है। आप सुन चुके हैं कि मेरे हाथ में केवल खञ्जर था, मगर उन दोनों के हाथ में लम्बे लम्बे लट्ठ थे और मुकाबला करने में भी वे दोनों कमजोर न थे अस्तु मुझे भी अपने बचाव का ज्यादे खयाल था और मैं तब तक लड़ाई खतम करना नहीं चाहता था जब तक मेरे आदमी न आ जायँ जिन्हें जफील देकर मैंने बुलाया था।

आधी घड़ी से ज्यादे देर तक मेरा उनका मुकाबला रहा। उसी समय मुझे रोशनी दिखाई दी और मालूम हुआ कि मेरे आदमी चले आ रहे हैं। उनकी तरफ देख कर मेरा ध्यान कुछ बटा ही था कि एक आदमी के हाथ का लट्ठ मेरे सिर पर बैठा और मैं चक्कर खा कर जमीन पर गिर पड़ा।

दूसरा बयान

जब मेरी आँख खुली मैंने अपने को अपने आदमियों से घिरा हुआ पाया। मशालों की रोशनी बखूबी हो रही थी। जांच करने पर मालूम हुआ कि मैं

आधी घड़ी से ज्यादे देर तक बेहोश नहीं रहा। जब मैंने दुश्मन के बारे में दरियाफ्त किया तो मालूम हुआ कि वे दोनों भी भाग गये मगर मेरे आदमियों के पहुँचने के सबब से उस गठड़ी को न ले जा सके। मैंने अपनी हिम्मत और ताकत पर ख्याल किया तो मालूम हुआ कि मैं इस समय उनका पीछा करने लायक नहीं हूँ। आखिर लाचार हो और पहरे का इन्तजाम कर के मैं गठड़ी लिये हुये अपने कमरे में चला आया मगर अपने मित्र की तरफ से मेरा दिल बड़ा ही बेचैन रहा और तरह तरह के शक पैदा होते रहे।

मेरे कमरे में रोशनी बखूबी हो रही थी। दरवाजा बन्द करके मैंने गठड़ी खोली और उसके अन्दर की चीजों को बड़े गौर से देखने लगा।

गठड़ी में दो जोड़ तो कपड़े निकले जिन्हें मैं पहिचानता न था मगर वे कपड़े पहिरे हुये और मैले थे। कागजों का एक मुट्ठा निकला जिसे देखते ही मैं पहिचान गया कि यह रणधीरसिंह के खास सन्दूक के कागज हैं। मोम का एक सांचा कई कपड़ों की तह में लपेटा हुआ निकला, जो खास रणधीरसिंहजी की मोहर पर से उठाया गया था। इन चीजों के अतिरिक्त मोतियों की एक माला एक कण्ठा और तीन जड़ाऊ अँगूठियां निकलीं। ये चीजें मेरे मित्र दयारामसिंह की थीं। इन सब चीजों को पहिरे हुए ही आज वे मेरे यहां से गायब हुये थे।

इन सब चीजों को देख कर मैं बड़ी देर तक सोच विचार में पड़ा रहा। उसी समय कमरे का वह दर्वाजा खुला जो जनाने मकान में जाने के लिए था और मेरी स्त्री (कमला की मां) आती हुई दिखाई पड़ी। उस समय वह एक बच्चे की मां हो चुकी थी और अपने बच्चे को भी गोद में लिये हुए थी। इसमें कोई शक नहीं कि मेरी स्त्री बुद्धिमान थी और छोटे मोटे कामों में मैं उसकी राय भी लिया करता था।

उसकी सूरत देखते ही मैं पहिचान गया कि तरद्दुद और घबराहट ने उसे अपना शिकार बना लिया है अस्तु मैंने उसे बुला कर अपने पास बैठाया और सब हाल कह सुनाया, साथ ही इसके यह भी कहा कि मैं इसी समय अपने दोस्त का पता लगाने के लिये जाया चाहता हूँ। मगर उसने इस आखिरी बात को कबूल नहीं किया और कहा, "मेरी राय में पहिले रणधीरसिंहजी से मिल लेना चाहिये।"

कई बातों को सोच विचार कर मैंने उसकी राय कबूल की और उस गठड़ी को लेकर रणधीरसिंहजी से मिलने के लिये रवाना हुआ। मुझे इस बात का भी धोखा लगा हुआ था कि रास्ते में कहीं दुश्मनों से मुलाकात न हो जाय जो जरूर इस गठड़ी को छीन लेने की धुन में लगे हुए होंगे, इसलिये मैंने अपने दो शागिर्दों को भी साथ में ले लिया।

रणधीरसिंहजी बेफिक्र और आराम की नींद सो रहे थे जब मैंने पहुँच कर उन्हें उठाया। जागने के साथ ही वे मुझे देख कर चौंके और बोले, "क्यों क्या मामला है जो इस समय ऐसे ढङ्ग से यहां आये हो? दयाराम कुशल से तो है?"

मेरी सूरत देखते ही उन्होंने दयाराम का कुशल पूछा इससे मुझे बड़ा ही ताज्जुब हुआ। खैर मैं उनके पास बैठ गया और जो कुछ मामला हुआ था साफ साफ कह सुनाया।

मैं इस किस्से को मुख्तसर ही में बयान करूँगा। रणधीरसिंहजी इस हाल को सुन कर बहुत ही दुःखी और उदास हुए। बहुत कुछ बातचीत करने के बाद अन्त में बोले, "दयाराम मेरा एक ही एक वारिस और तुम्हारा दिली दोस्त है, ऐसी अवस्था में उसके लिये क्या करना चाहिये सो तुम ही सोच लो मैं क्या कहूँ! मैं तो समझ चुका था कि दुश्मनों की तरफ से अब निश्चिन्त हुआ मगर नहीं.....।"

इतना कह कर वे कपड़े से अपना मुँह ढांप कर रोने लगे। मैं उन्हें बहुत समझा बुझा कर बिदा हुआ और अपने घर चला आया। अपनी स्त्री से मिल कर सब हाल कहने और समझाने बुझाने के बाद मैं अपने दो शागिर्दों को साथ लेकर घर से बाहर निकला। बस यहीं से मेरी बदकिस्मती का जमाना शुरू हुआ।

इतना कह कर भूतनाथ अटक गया और सिर नीचा कर के कुछ सोचने लगा। सब कोई बेचैनी के साथ उसकी तरफ देख रहे थे और भूतनाथ की अवस्था से मालूम होता था कि वह इस बात को सोच रहा है कि मैं अपना किस्सा आगे बयान करूँ या नहीं। उसी समय दो आदमी और कमरे के अन्दर चले आये और महाराज को सलाम करके खड़े हो गये। इनकी सूरत देखते ही भूतनाथ के चेहरे का रंग उड़ गया और वह डरे हुए ढङ्ग से उन दोनों की तरफ देखने लगा।

ये दोनों आदमी जो अभी अभी कमरे में आये हैं वे ही हैं जिन्होंने भूतनाथ को अपना नाम 'दलीपशाह' बतलाया था। इन्द्रदेव की आज्ञा पा कर वे दोनों भूतनाथ के पास ही बैठ गये।

तीसरा बयान

प्रेमी पाठक भूले न होंगे कि दो आदमियों ने भूतनाथ से अपना नाम दलीपशाह बतलाया था जिसमें से एक को पहिला दलीप और दूसरे को दूसरा दलीप समझना चाहिये।

भूतनाथ तो पहिले ही इस सोच में पड़ गया था कि अपना हाल आगे बयान करे या नहीं, अब दोनों दलीपशाह को देख कर वह और भी घबड़ा गया। ऐयार लोग समझ रहे थे कि अब उसमें बात करने की भी ताकत नहीं रही। उस समय इन्द्रदेव ने भूतनाथ से कहा, "क्यों भूतनाथ, चुप क्यों हो गये? कहो, हाँ तब आगे क्या हुआ?"

इसका जवाब भूतनाथ ने कुछ न दिया और सिर झुका कर जमीन की तरफ देखने लगा। उस समय पहिले दलीपशाह ने हाथ जोड़ कर महाराज की तरफ देखा और कहा, "कृपानाथ! भूतनाथ को अपना हाल बयान करने में बड़ा कष्ट हो रहा है, और वास्तव में बात भी ऐसी ही है। कोई भला आदमी अपनी उन बातों को जिन्हें वह ऐब समझता है अपनी जुबान से अच्छी तरह बयान नहीं कर सकता। अस्तु यदि आज्ञा हो तो मैं इसका हाल पूरा पूरा बयान कर जाऊँ क्योंकि मैं भी भूतनाथ का हाल उतना ही जानता हूँ जितना स्वयम् भूतनाथ, और भूतनाथ जहां तक बयान कर चुके हैं उसे मैं बाहर खड़ा खड़ा सुन भी चुका हूँ। जब मैंने समझा कि अब भूतनाथ से अपना हाल नहीं कहा जाता तब मैं यह अर्ज करने के लिये हाजिर हुआ हूँ। (भूतनाथ की तरफ देख के) मेरे इस कहने से आप यह न समझियेगा कि मैं आपके साथ दुश्मनी कर रहा हूँ! नहीं, जो काम आप के सुपुर्द किया गया है उसे आपके बदले में मैं आसानी के साथ कर दिया चाहता हूँ।"

इन दोनों आदमियों (दलीपशाह) को महाराज तथा और सभों ने भी ताज्जुब के साथ देखा था मगर यह समझ कर इन्द्रदेव से किसी ने कुछ भी न

पूछा कि जो कुछ है थोड़ी देर में मालूम हो ही जायगा, मगर जब दलीपशाह ऊपर लिखी बात बोल कर चुप हो गया तब महाराज ने भेद भरी निगाहों से इन्द्रजीतसिंह की तरफ देखा और कुमार ने झुक कर धीरे से कुछ कह दिया जिसे बीरेन्द्रसिंह तथा तेजसिंह ने भी सुना तथा इनके जरिये से हमारे और साथियों को भी मालूम हो गया कि कुमार ने क्या कहा।

दलीपशाह की बात सुन कर इन्द्रदेव ने महाराज की तरफ देखा और हाथ जोड़ कर कहा, "इन्होंने (दलीपशाह ने) जो कुछ कहा वास्तव में ठीक है, मेरी समझ में अगर भूतनाथ का किस्सा इन्हीं की जुबानी सुन लिया जाय तो कोई हर्ज नहीं है।" इसके जवाब में महाराज ने मंजूरी के लिए सिर हिला दिया।

इन्द्र०। (भूतनाथ की तरफ देख के) क्यों भूतनाथ! इसमें तुम्हें किसी तरह का उज्र है?

भूत०। (महाराज की तरफ देख कर और हाथ जोड़ कर) जो महाराज की मर्जी, मुझमें 'नहीं' करने की सामर्थ्य नहीं है। मुझे क्या खबर थी कि कसूर माफ हो जाने पर भी यह दिन देखना नसीब होगा। यद्यपि यह मैं खूब जानता हूँ कि मेरा भेद अब किसी से छिपा नहीं रहा परन्तु फिर भी अपनी भूल बार बार कहने या सुनने से लज्जा बढ़ती ही जाती है कम नहीं होती खैर कोई चिन्ता नहीं, जैसे होगा वैसे अपने कलेजे को मजबूत करूँगा और दलीपशाह की कही हुई बातें सुनूँगा तथा देखूँगा कि ये महाशय कुछ झूठ का भी प्रयोग करते हैं या नहीं।

दलीप०। नहीं भूतनाथ! मैं झूठ कदापि न बोलूँगा इससे तुम बेफिक्र रहो! (इन्द्रदेव की तरफ देख के) अच्छा तो अब मैं प्रारम्भ करता हूँ।

दलीपशाह ने इस तरह कहना शुरू किया :—

महाराज! इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐयारी के फन में भूतनाथ पहिले सिरे का ओस्ताद और तेज आदमी है। अगर यह ऐयाशी के दरिया में गोते लगा कर अपने को बरबाद न कर दिये होता तो इसके मुकाबिले का ऐयार आज दुनिया में दिखाई न देता। मेरी सूरत देख कर ये चौंकते और डरते हैं और इनका डरना वाजिब ही है मगर अब मैं इनके साथ किसी तरह का बुरा बर्ताव नहीं कर सकता क्योंकि मैं ऐसा करने के लिये दोनों कुमारों से प्रतिज्ञा कर चुका हूँ

और इनकी आज्ञा मैं किसी तरह टाल नहीं सकता क्योंकि इन्हीं की बदौलत आज मैं दुनिया की हवा खा रहा हूँ। (भूतनाथ की तरफ देख के) भूतनाथ ! मैं वास्तव में दलीपशाह हूँ, उस दिन तुमने मुझे नहीं पहिचाना तो इसमें तुम्हारी आँखों का कोई कसूर नहीं है, कैद की सख्तियों के साथ साथ जमाने की चाल ने मेरी सूरत ही बदल दी है, तुम तो अपने हिसाब से मुझे मार ही चुके थे और तुम्हें मुझसे मिलने की कभी उम्मीद भी न थी मगर सुन लो और देख लो कि ईश्वर की कृपा से मैं अभी तक जीता जागता तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। यह कुँअर साहब के चरणों का प्रताप है। अगर मैं कैद न हो जाता तो तुम से बदला लिये बिना कभी न रहता मगर तुम्हारी किस्मत अच्छी थी जो मैं कैद हो गया, और छूटा भी तो कुँअर साहब के हाथ से जो तुम्हारे पक्षपाती हैं। तुम्हें इन्द्रदेव से भी बुरा न मानना चाहिये और यह न सोचना चाहिये कि तुम्हें दुःख देने के लिये इन्द्रदेव तुम्हारा पुराना पचड़ा खुलवा रहे हैं। तुम्हारा किस्सा तो सब को मालूम हो चुका है, इस समय ज्यों का त्यों चुपचाप रह जाने पर तुम्हारे चित्त को शान्ति नहीं मिल सकती और तुम हम लोगों की सूरत देख देख कर दिन रात तरद्दुद में पड़े रहोगे अस्तु तुम्हारे पिछले ऐबों को खोल कर इन्द्रदेव तुम्हारे चित्त को शान्ति दिया चाहते हैं और तुम्हारे दुश्मनों को जिनके साथ तुम ही ने बुराई की है, तुम्हारा दोस्त बना रहे हैं। ये यह भी चाहते हैं कि तुम्हारे साथ ही साथ हम लोगों का भेद भी खुल जाय और तुम जान जाओ कि हम लोगों ने तुम्हारा कसूर माफ कर दिया है क्योंकि अगर ऐसा न होगा तो जरूर तुम हम लोगों को मार डालने की फिक्र में पड़े रहोगे और हम लोग इस धोखे में रह जायंगे कि हमने इनका कसूर तो माफ ही कर दिया अब ये हमारे साथ बुराई न करेंगे। (जीतसिंह की तरफ देख कर) अब मैं मतलब की तरफ झुकता हूँ और भूतनाथ का हिस्सा बयान करता हूँ।

जिस जमाने का हाल भूतनाथ बयान कर रहा है अर्थात् जिन दिनों भूतनाथ के मकान से दयाराम गायब हो गये थे उन दिनों यही नागर काशी के बाजार में बेश्या बन कर बैठी हुई अमीरों के लड़कों को चौपट कर रही थी इसकी बढ़ी चढ़ी खूबसूरती लोगों के लिये जहर हो रही थी और माल के साथ ही

बिशेष प्राप्ति के लिये यह लोगों की जान पर भी वार करती थी। यही दशा मनोरमा की भी थी परन्तु इसकी बनिस्बत वह बहुत ज्यादे रुपये वाली होने पर भी नागर की सी खूबसूरत न थी, हाँ चालाक जरूर ज्यादे थी। और लोगों की तरह भूतनाथ और दयाराम भी नागर के प्रेमी हो रहे थे। भूतनाथ को अपनी ऐयारी का घमण्ड था और नागर को अपनी चालाकी का। भूतनाथ नागर के दिल पर कब्जा किया चाहता था और नागर इनकी तथा दयाराम की दौलत अपने खजाने में मिलाना चाहती थी।

दयाराम की खोज में घर से शागिर्दों को साथ लिये हुए बाहर निकलते ही भूतनाथ ने काशी का रास्ता लिया और तेजी के साथ सफर तय करता हुआ नागर के मकान पर पहुँचा। नागर ने भूतनाथ की बड़ी खातिरदारी और इज्जत की तथा कुशल मंगल पूछने के बाद यकायक यहाँ आने का सबब भी पूछा।

भूतनाथ ने अपने आने का ठीक ठीक सबब तो नहीं बताया मगर नागर समझ गई कि कुछ दाल में काला जरूर है। इसी तरह भूतनाथ को भी इस बात का शक पैदा हो गया कि दयाराम की चोरी में नागर का कुछ न कुछ लगाव जरूर है अथवा यह उन आदमियों को जरूर जानती है जिन्होंने दयाराम के साथ ऐसी दुश्मनी की है।

भूतनाथ का शक काशी ही वालों पर था इस लिये काशी ही में अड्डा बना कर इसने इधर उधर घूमना और दयाराम का पता लगाना आरम्भ किया। जैसे जैसे दिन बीतता था भूतनाथ का शक भी नागर के ऊपर बढ़ता था। सुनते हैं कि उसी जमाने में भूतनाथ ने एक औरत के साथ काशीजी में ही शादी भी कर ली थी जिससे कि नानक पैदा हुआ है क्यों कि इस झमेले में भूतनाथ को बहुत दिनों तक काशी में रहना पड़ा था।

सच है कि कम्बख्त रण्डियाँ रुपये के सिवा और किसी की नहीं होतीं। जो दयाराम कि नागर को चाहता मानता और दिल खोल कर रुपया देता था नागर उसी के खून की प्यासी हो गई क्योंकि ऐसा करने से उसे बिशेष प्राप्ति की आशा थी। भूतनाथ ने यद्यपि अपने दिल का हाल नागर से बयान नहीं किया मगर नागर को विश्वास हो गया कि भूतनाथ को उसपर शक है

और वह दयाराम ही की खोज में काशी आया हुआ है, अस्तु नागर ने अपना उचित प्रबन्ध करके काशी छोड़ दी और गुप्त रीति से जमानियाँ में जा बसी। भूतनाथ भी मिट्टी सूँघता हुआ उसकी खोज में जमानिया जा पहुँचा और एक भाड़े का मकान ले कर वहाँ रहने लगा।

इस खोज ढूँढ़ में वर्षों बीत गये मगर दयाराम का पता न लगा। भूतनाथ ने अपने मित्र इन्द्रदेव से भी मदद माँगी और इन्द्रदेव ने मदद दी भी मगर नतीजा कुछ भी न निकला। इन्द्रदेव ही के कहने से मैं उन दिनों भूतनाथ का मददगार बन गया था।

इस किस्से के सम्बन्ध में रणधीरसिंह के रिश्तेदारों की तथा जमानियाँ गयाजी और राजगृही इत्यादि की भी बहुत सी बातें कही जा सकती हैं परन्तु मैं उन सभों का बयान करना व्यर्थ समझता हूँ और केवल भूतनाथ का ही किस्सा चुन चुन कर बयान करता हूँ जिससे कि खास मतलब है।

मैं कह चुका हूँ कि दयाराम का पता लगाने के काम में उन दिनों मैं भी भूतनाथ का मददगार था मगर अफसोस! भूतनाथ की किस्मत तो कुछ और ही कराया चाहती थी इसलिये हम लोगों की मेहनत का कोई अच्छा नतीजा न निकला, बल्कि एक दिन जब मिलने के लिये मैं भूतनाथ के डेरे पर गया तो मुलाकात होने के साथ ही भूतनाथ ने आँखें बदल कर मुझसे कहा, "देखो दलीपशाह! मैं तो तुम्हें बहुत अच्छा और नेक समझता था मगर तुम बहुत ही बुरे और दगाबाज निकले। मुझे ठीक ठीक पता लग चुका है कि दयाराम का भेद तुम्हारे दिल के अन्दर है और तुम हमारे दुश्मनों के मददगार और भेदिये हो तथा खूब जानते हो कि इस समय दयाराम कहाँ हैं। तुम्हारे लिये यही अच्छा है कि सीधी तरह उसका (दयाराम का) पता बता दो नहीं तो मैं तुम्हारे साथ बुरी तरह पेश आऊँगा और तुम्हारी मिट्टी पलीद करके छोड़ूंगा!'

महाराज! मैं नहीं कह सकता कि उस समय भूतनाथ की इन बेतुकी बातों को सुन कर मुझे कितना क्रोध चढ़ आया। मैं उसके पास बैठा भी नहीं और न उसकी बात का कुछ जवाब ही दिया, बस चुपचाप पिछले पैर लौटा और मकान के बाहर निकल आया। मेरा घोड़ा बाहर खड़ा था, मैं उस पर सवार होकर

सीधे इन्द्रदेव की तरफ चला गया। (इन्द्रदेव की तरफ हाथ का इशारा कर के) दूसरे दिन इनके पास पहुँचा और जो कुछ बीती थी इनसे कह सुनाया। इन्हें भी भूतनाथ की बातें बहुत बुरी मालूम हुईं और एक लम्बी सांस लेकर ये मुझसे बोले, "मैं नहीं जानता कि इन दो चार दिनों में भूतनाथ को कौन सी नई बात मालूम हो गई और किस बुनियाद पर उसने तुम्हारे साथ ऐसा सलूक किया। खैर कोई चिन्ता नहीं भूतनाथ अपनी इस बेवकूफी पर अफसोस करेगा और पछतावेगा, तुम इस बात का खयाल न करो और भूतनाथ से मिलना जुलना छोड़ कर दयाराम की खोज में लगे रहो, तुम्हारा अहसान रणधीरसिंह पर और मेरे ऊपर होगा।"

इन्द्रदेव ने बहुत कुछ कह सुन कर मेरा क्रोध शान्त किया और दो दिन तक मुझे अपने यहा मेहमान रक्खा। तीसरे दिन मै इन्द्रदेव से बिदा होने वाला ही था कि इनके एक शागिर्द ने आ कर एक विचित्र खबर सुनाई। उसने कहा कि आज रात को बारह बजे के समय मिर्जापुर के एक जमींदार 'राजसिंह' के यहां दयाराम के होने का पता मुझे लगा है। खुद मेरे भाई ने यह खबर दी है। उसने यह भी कहा है कि आज कल नागर भी उन्हीं के यहां है।

इन्द्र०। (शागिर्द से) वह खुद मेरे पास क्यों नहीं आया ?

शागिर्द०। वह आप ही के पास आ रहा था, मुझसे रास्ते में मुलाकात हुई और उसके पूछने पर मैंने कहा कि दयारामजी का पता लगाने के लिये मैं तैनात किया गया हूँ। उसने जवाब दिया कि अब तुम्हारे जाने की कोई जरूरत न रही। मुझे उनका पता लग गया और यही खुशखबरी सुनाने के लिये मैं सरकार के पास जा रहा हूँ, मगर अब तुम मिल गये हो तो मेरे जानें की कोई जरूरत नहीं, जो कुछ मै कहता हूँ तुम जाकर उन्हें सुना दो और मदद ले कर बहुत जल्द मेरे पास आओ, मैं फिर उसी जगह जाता हूँ, कहीं ऐसा न हो कि दयारामजी वहाँ से भी निकाल कर किसी दूसरी जगह पहुँचा दिये जायँ और हम लोगों को पता न लगे, मैं जा कर इस बात का ध्यान रक्खूँगा। इसके बाद उसने सब कैफियत बयान की और अपने मिलने का पता बताया।

इन्द्र०। ठीक है, उसने जो कुछ किया बहुत अच्छा किया, अब उसे मदद पहुँचाने का बन्दोबस्त करना चाहिये।

शागिर्द० । यदि आज्ञा हो तो भूतनाथ को भी इस बात की इत्तला दे दी जाय ?

इन्द्र० । कोई जरूरत नहीं, अब तुम जाकर कुछ आराम करो, तीन घन्टे बाद फिर तुम्हें सफर करना होगा ।

इसके बाद इन्द्रदेव का शागिर्द जब अपने डेरे पर चला गया तब मुझसे और इन्द्रदेव से बातचीत होने लगी । इन्द्रदेव ने मुझसे मदद माँगी और मुझे मिर्जापुर जाने के लिये कहा, मगर मैंने इन्कार किया और कहा कि अब मैं न तो भूतनाथ का मुँह देखूँगा और न उसके किसी काम में शरीक होऊँगा । इसके जवाब मेंइन्द्रदेव ने मुझे पुनः समझाया और कहा कि यह काम भूतनाथ का नहीं है, मैं कह चुका हूँ कि इसका अहसान मुझ पर और रणधीरसिंहजी पर होगा ।

इसी तरह की बहुत सी बातें हुईं । लाचार मुझे इन्द्रदेव की बात माननी पड़ी और कई घण्टे के बाद इन्द्रदेव के उसी शागिर्द 'शम्भू' को साथ लिये हुये मैं मिर्जापुर की तरफ रवाना हुआ । दूसरे दिन हम लोग मिर्जापुर जा पहुँचे और बताए हुए ठिकाने पर पहुँच कर शम्भू के भाई से मुलाकात की । दरियाफ्त करने पर मालूम हुआ कि दयाराम अभी तक मिर्जापुर की सरहद के बाहर नहीं गये हैं, अस्तु जो कुछ हम लोगों को करना था आपुस में तै करने के बाद सूरत बदल कर बाहर निकले ।

दयाराम को ढूँढ निकालने के लिये हमने कैसी कैसी मेहनत का और हम लोगों को किस तरह की तकलीफें उठानी पड़ीं, इसका बयान करना किस्से को व्यर्थ तूल देना और अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना है । महाराज के (आपके) नामी ऐयारों ने जैसे जैसे अनूठे काम किये हैं, उनके सामने हमारी ऐयारी कुछ भी नहीं है अतएव केवल इतना ही कहना काफी है कि हम लोगों ने अपनी हिम्मत से बढ़ कर काम किया और हद दर्जे की तकलीफ उठा कर दयारामजी को ढूँढ निकाला । केवल दयाराम ही को नहीं बल्कि उनके साथ ही साथ 'राजसिंह' को भी गिरफ्तार करके हम लोग अपने ठिकाने पर ले आये, मगर अफसोस ! हम लोगों की सब मेहनत पर भूतनाथ ने पानी ही नहीं फेर दिया बल्कि जन्म भर के लिये अपने माथे पर कलङ्क का टीका लगाया ।

कैद की सख्ती उठाने के कारण दयाराम जी बहुत ही कमजोर और बीमार हो रहे थे, उनमें बात करने की भी ताकत न थी, इसलिये हम लोगों ने उसी समय उन्हें उठा कर इन्द्रदेव के पास ले जाना मुनासिब न जाना और दो तीन दिन तक आराम देने के नीयत से अपने गुप्त स्थान पर जहां हम लोग टिके हुए थे ले गये। जहां तक हो सका नरम बिछावन का इन्तजाम करके उस पर उन्हें लिटा दिया और उनके शरीर में ताकत लाने का बन्दोबस्त करने लगे। इस बात का भी निश्चय कर लिया कि जब तक इनकी तबियत ठीक न हो जायगी इनसे कैद किये जाने का सबब तक न पूछेंगे।

दयारामजी के आराम का इन्तजाम करने के बाद हम लोगों ने अपने अपने हर्बे खोल कर उनकी चारपाई के नीचे रख दिये, कपड़े उतारे, और बातचीत करने तथा दुश्मनी का सबब जानने के लिये राजसिंह को होश में लाये और उसकी मुश्कें खोल कर बातचीत करने लगे क्योंकि उस समय इस बात का डर हम लोगों को कुछ भी न था कि वह हम पर हमला करेगा या हम लोगों का कुछ बिगाड़ सकेगा।

जिस मकान में हम लोग टिके हुये थे वह बहुत ही एकान्त और उजाड़ महल्ले में था। रात का समय था और मकान की तीसरी मञ्जिल पर हम लोग बैठे हुए थे। एक मद्धिम चिराग आले पर जल रहा था। दयारामजी की पलङ्ग हम लोगों के पीछे की तरफ थी और राजसिंह सामने बैठे हुए ताज्जुब के साथ हम लोगों का मुँह देख रहे थे। उसी समय यकायक कई दफे धम्माके की आवाज आई और उसके कुछ ही देर बाद भूतनाथ तथा उसके दो साथियों को हम लोगों ने अपने सामने खड़े देखा। सामना होने के साथ ही भूतनाथ ने मुझसे कहा, "क्यों बे शैतान के बच्चे! आखिर मेरी बात ठीक निकली न। तू ही ने राजसिंह के साथ मेल करके हमारे साथ दुश्मनी पैदा की, खैर ले अपने किये का फल चख!!"

इतना कह कर भूतनाथ ने मेरे ऊपर खञ्जर का वार किया जिसे बड़ी खूबी के साथ मेरे साथी ने रोका। मैं भी उठ कर खड़ा हो गया और भूतनाथ के साथ लड़ाई होने लगी। भूतनाथ ने एक ही हाथ में राजसिंह का काम तमाम कर दिया और थोड़ी ही देर में मुझे भी खूब जख्मी किया, यहां तक कि मैं जमीन

पर गिर पड़ा और मेरे दोनों साथी भी बेकार हो गये। उस समय दयारामजी को जो पड़े पड़े सब तमाशा देख रहे थे जोश चढ़ आया और वे चारपाई पर से उठ कर खाली हाथ भूतनाथ के सामने आ खड़े हुए, कुछ बोला ही चाहते थे कि भूतनाथ के हाथ का खञ्जर उनके कलेजे के पार हो गया और वे बेदम हो कर जमीन पर गिर पड़े !!

चौथा बयान

मै नहीं कह सकता कि भूतनाथ ने ऐसा क्यों किया। भूतनाथ का कौल तो यही है कि मैंने उनको पहिचाना नहीं, और धोखा हुआ। खैर जो हो, दयाराम के गिरते ही मेरे मुँह से 'हाय' की आवाज निकली और मैंने भूतनाथ से कहा, "ए कम्बख्त ! तैने बेचारे दयारामजी को क्यों मार डाला जिन्हें बड़ी मुश्किल से हम लोगों ने खोज निकाला था।"

मेरी बात सुनते ही भूतनाथ सन्नाटे में आ गया। इसके बाद उसके दोनों साथी तो न मालूम क्या सोच कर एक दम भाग खड़े हुए, मगर भूतनाथ बड़ी बेचैनी से दयारामजी के पास बैठकर उनका मुँह देखने लगा। उस समय भूतनाथ के देखते ही देखते उन्होंने आखिरी हिचकी ली और दम तोड़ दिया। भूतनाथ उनकी लाश के साथ चिमट कर रोने लगा और बड़ी देर तक रोता रहा। तब तक हम तीनों आदमी भी पुनः मुकाबिला करने लायक हो गये और इस बात से हम लोगों का साहस और भी बढ़ गया कि भूतनाथ के दोनों साथी उसे अकेला छोड़ कर भाग गये थे। मैंने मुश्किल से भूतनाथ को उनसे अलग किया और कहा, "अब रोने और नखरा करने से फायदा ही क्या होगा, उनके साथ ऐसी ही मुहब्बत थी तो उन पर वार न करना था, अब उन्हें मार कर औरतों की तरह नखरा करने बैठे हो ?"

इतना सुन कर भूतनाथ ने अपनी आंखें पोंछी और मेरी तरफ देख के कहा, "क्या मैंने जान बूझ कर इन्हें मार डाला है ?"

मैं०। बेशक ! क्या यहां आने के साथ ही तुमने उन्हें चारपाई पर पड़े हुए नहीं देखा था ?

भूत०। देखा था, मगर मैं नहीं जानता था कि ये दयाराम हैं। इतने मोटे

ताजे आदमी को यकायक ऐसा दुबला पतला देखकर मैं कैसे पहिचान सकता था?

मैं० । क्या खूब, ऐसे ही तो तुम अन्धे थे ? खैर इसका इन्साफ तो रणधीरसिंह के सामने हो रहेगा । इस समय तुम हमसे फैसला कर लो क्योंकि अभी तक तुम्हारे दिल में लड़ाई का हौसला जरूर बना होगा ।

भूत० । (अपने को सँभाल कर और मुँह पोंछ कर) नहीं नहीं, मुझे अब लड़ने का हौसला नहीं है, जिसके वास्ते मैं लड़ता था जब वही नहीं रहा तो अब क्या ? मुझे ठीक पता लग चुका था कि दयाराम तुम्हारे फेर में पड़े हुए हैं, और सो अपनी आंखो से देख भी लिया, मगर अफसोस है कि मैंने पहिचाना नहीं और वे इस तरह धोखे में मारे गये, लेकिन इसका कसूर भी तुम्हारे ही सिर लग सकता है ।

मैं० । खैर अगर तुम्हारे किये हो सके तो तुम बिल्कुल कसूर मेरे ही सिर थोप देना, मैं अपनी सफाई आप कर लूँगा, मगर इतना समझ रक्खो कि लाख कोशिश करने पर भी तुम अपने को बचा नहीं सकते क्योंकि मैंने इन्हें खोज निकालने में जो कुछ मेहनत की थी वह इन्द्रदेवजी के कहने से की थी, न तो मैं अपनी प्रशंसा कराना चाहता था और न मैं इनाम ही लेना चाहता था, जरूरत पड़ने पर मैं इन्द्रदेव की गवाही दिला सकता हूँ और तुम अपने को बेकसूर साबित करने के लिए नागर को पेश कर देना, जिसके कहने और सिखाने से तुमने मेरे साथ दुश्मनी पैदा कर ली ।

इतना सुन कर भूतनाथ सन्नाटे में आ गया । सिर झुका कर देर तक सोचता रहा और इसके बाद लम्बी सांस लेकर उसने मेरी तरफ देखा और कहा, "बेशक मुझे नागर कम्बख्त ने धोखा दिया ! अब तो मुझे भी इन्हीं के साथ मर मिटना चाहिये !" इतना कह कर भूतनाथ ने खञ्जर हाथ में ले लिया मगर कुछ कर न सका अर्थात् अपनी जान न दे सका ।

महाराज ! जवाँमर्दों का यह कहना बहुत ठीक है कि बहादुरों को अपनी जान प्यारी नहीं होती । वास्तव में जिसे अपनी जान प्यारी होती है वह कोई हौसले का काम नहीं कर सकता और जो अपनी जान हथेली पर लिये रहता है और समझता है कि दुनिया में मरना एक ही बार है कोई बार बार नहीं मरता, वही सब कुछ कर सकता है । भूतनाथ के बहादुर होने में सन्देह नहीं परन्तु

इसे अपनी जान प्यारी जरूर थी, और इस उल्टी बात का सबब यही था कि यह ऐयाशी के नशे में चूर था। जो आदमी ऐयाश होता है उसमें ऐयाशी के सबब कई तरह की बुरायाँ आ जाती हैं और उन बुराईयों की बुनियाद जम जाने के कारण ही उसे अपनी जान प्यारी हो जाती है तथा वह कोई काम नहीं कर सकता। यही सबब था कि उस समय भूतनाथ अपनी जान न दे सका, बल्कि उसकी हिफाजत करने का ढङ्ग जमाने लगा, नहीं तो उस समय मौका ऐसा ही था, इससे जैसी भूल हो गई थी उसका बदला तभी पूरा होता जब यह भी उसी जगह अपनी जान दे देता और उस मकान से तीनों लाशें एक साथ ही निकाली जातीं।

भूतनाथ ने कुछ देर तक सोचने के बाद मुझसे कहा—"मुझे इस समय अपनी जान भारी हो रही है और मैं मर जाने के लिये तैयार हूँ मगर मैं देखता हूँ कि ऐसा करने से भी किसी को फायदा नहीं पहुँचेगा। मैं जिसका नमक खा चुका हूँ और खाता हूँ उसका और भी नुक्सान होगा क्योंकि इस समय वह दुश्मनों से घिरा हुआ है। अगर मै जीता रहूँगा तो उनके दुश्मनों का नामो-निशान मिटा कर उन्हें बेफिक्र कर सकूँगा, अतएव मैं माफी माँगता हूँ और चाहता हूँ कि तुम मेहरबानी कर मुझे सिर्फ दो साल के लिए जीता छोड़ दो।"

मैं०। दो वर्ष के लिए क्या मैं जिन्दगी भर के लिये तुम्हें छोड़ देता हूँ, जब तुम मुझसे लड़ना नहीं चाहते तो मैं क्यों तुम्हें मारने लगा? बाकी रही यह बात कि तुमने खामखाह मुझसे दुश्मनी पैदा कर ली है सो उसका नतीजा तुम्हें आप से आप मिल जायगा जब लोगों को यह मालूम होगा कि भूतनाथ के हाथ से बेचारा दयाराम मारा गया।

भूतनाथ०। नहीं नहीं, मेरा मतलब तुम्हारी पहिली बात से नहीं है बल्कि दूसरी बात से है, अर्थात् अगर तुम चाहोगे तो लोगों को इस बात का पता ही नहीं लगेगा कि दयाराम भूतनाथ के हाथ से मारा गया।

मैं०। यह क्यों कर छिप सकता है?

भूतनाथ०। अगर तुम छिपाओ तो सब कुछ छिप जायगा।

मुख्तसर यह कि धीरे धीरे बातों को बढ़ाता हुआ भूतनाथ मेरे पैरों पर गिर पड़ा और बड़ी खुशामद के साथ कहने लगा कि तुम इस मामले को

छिपा कर मेरी जान बचा लो। केवल इतना ही नहीं, इसने मुझे हर तरह के सब्ज बाग दिखाये और कसमें दे देकर मेरी नाक में दम कर दिया। लालच में तो मैं नहीं पड़ा मगर पिछली मुरौवत के फेर में जरूर पड़ गया और भेद को छिपाये रखने की कसम खाकर अपने साथियों को साथ लिये हुए मैं उस घर से बाहर निकल गया। भूतनाथ तथा दोनों लाशों को उसी तरह छोड़ दिया, फिर मुझे नहीं मालूम कि भूतनाथ ने उन लाशों के साथ क्या बर्ताव किया।

यहाँ तक भूतनाथ का हाल कह कर कुछ देर के लिये दलीपशाह चुप हो गया और उसने इस नीयत से भूतनाथ की तरफ देखा कि देखें यह कुछ बोलता है या नहीं। इस समय भूतनाथ की आँखो से आँसू की नदी बह रही थी और वह हिचकियां ले ले कर रो रहा था। बड़ी मुश्किल से भूतनाथ ने अपने दिल को सम्हाल और दुपट्टे से मुँह पोंछ कर कहा, "ठीक है, ठीक है, जो कुछ दलीपशाह ने कहा सब सच है, मगर यह बात मैं कसम खाकर कह सकता हूँ कि मैंने जान बूझ कर दयाराम को नहीं मारा। वहां राजसिंह को खुले हुए देख कर मेरा शक यकीन के साथ बदल गया और चारपाई पर पड़े हुए देख कर भी मैंने दयाराम को नहीं पहिचाना मैंने समझा कि यह भी कोई दलीपशाह का साथी होगा बेशक दलीपशाह पर मेरा शक मजबूत हो गया था और मैं समझ बैठा था कि जिन लोगों ने दयाराम के साथ दुश्मनी की है दलीपशाह जरूर उनका साथी है। यह शक यहा तक मजबूत हो गया था कि दयाराम के मारे जाने पर भी दलीपशाह की तरफ से मेरा दिल साफ न हुआ बल्कि मैंने समझा कि इसी (दलीपशाह) ने दयाराम को वहां लाकर कैद किया था। जिस नागर पर मुझे शक हुआ था उसी कम्बख्त की जादू भरी बातों में मैं फँस गया और उसी ने मुझे विश्वास दिला दिया कि इसका कर्ता धर्ता दलीपशाह है। यही सबब है कि इतना हो जाने पर भी मैं दलीपशाह का दुश्मन बना ही रहा। हाँ दलीपशाह ने एक बात नहीं कही, वह यह है कि इस भेद को छिपाये रखने की कसम खाकर भी दलीपशाह ने मुझे सूखा नहीं छोड़ा। इसने कहा कि तुम कागज पर लिख कर माफी माँगो तब मैं तुम्हें माफ करके यह भेद छिपाये रखने की कसम खा सकता हूँ। लाचार होकर मुझे ऐसा करना पड़ा और मैं माफी के लिये चिट्ठी लिख हमेशा के लिये इसके हाथ में फँस गया।"

दलीप०। बेशक यही बात है, और अगर मैं ऐसा न करता तो थोड़े ही दिन बाद भूतनाथ मुझे दोषी ठहरा कर आप सच्चा बन जाता। खैर अब मैं इसके आगे का हाल बयान करता हूँ जिसमें थोड़ा सा हाल तो ऐसा होगा जो मुझे खास भूतनाथ से मालूम हुआ था।

इतना कह कर दलीपशाह ने फिर बयान करना शुरू किया :—

दलीप०। जैसा कि भूतनाथ कह चुका है बहुत मिन्नत और खुशामद से लाचार हो कर मैंने कसूरवार होने और माफी माँगने की चिट्ठी लिखा कर इसे छोड़ दिया और इसका ऐब छिपा रखने का वादा करके अपने साथियों को साथ लिये हुये उस घर से बाहर निकल गया और भूतनाथ की इच्छानुसार दयाराम की लाश को और भूतनाथ को उसी मकान में छोड़ दिया। फिर मुझे नहीं मालूम कि क्या हुआ और इसने दयाराम की लाश के साथ कैसा बर्ताव किया।

वहाँ से बाहर होकर मैं इन्द्रदेव की तरफ रवाना हुआ मगर रास्ते भर सोचता जाता था कि अब मुझे क्या करना चाहिये, दयाराम का सच्चा सच्चा हाल इन्द्रदेव से बयान करना चाहिये या नहीं। आखिर हम लोगों ने निश्चय कर लिया कि जब भूतनाथ से वादा कर ही चुके हैं तो इस भेद को इन्द्रदेव से भी छिपा ही रखना चाहिये।

जब हम लोग इन्द्रदेव के मकान में पहुँचे तो उन्होंने कुशल मंगल पूछने के बाद दयाराम का हाल दरयाफ्त किया जिसके जवाब में मैंने असल मामले को तो छिपा रक्खा और बात बना कर यों कह दिया कि जो कुछ मैंने या आपने सुना था वह ठीक ही निकला अर्थात् राजसिंह ही ने दयाराम के साथ वह सलूक किया और दयाराम राजसिंह के घर में मौजूद भी थे मगर अफसोस, बेचारे दयाराम को हम लोग छुड़ा न सके और वे जान से मारे गये।

इन्द्र०। (चौंक कर) हैं! जान से मारे गये!!

मैं०। जी हाँ और इस बात की खबर भूतनाथ को भी लग चुकी थी। मेरे पहिले ही भूतनाथ राजसिंह के उस मकान में जिसमें उनसे दयाराम को कैद कर रक्खा था पहुँच गया और उसने अपने सामने दयाराम की लाश देखी जिसे कुछ ही देर पहिले राजसिंह ने मार डाला था अस्तु भूतनाथ ने उसी समय

राजसिंह का सिर काट डाला, सिवाय इसके वह और कर ही क्या सकता था! इसकेथोड़ी देर बाद हम लोग भी उस घर में जा पहुँचे और दयाराम तथा राजसिंह की लाश और भूतनाथ को वहां मौजूद पाया। दरियाफ्त करने पर भूतनाथ ने सब हालब यान किया और अफसोस करते हुए हम लोग वहां से रवाना हुए।

इन्द्र०। अफसोस! बहुत ही बुरा हुआ! खैर ईश्वर की मर्जी!

मैंने भूतनाथ के ऐब को छिपा कर जो कुछ इन्द्रदेव से कहा भूतनाथ की इच्छानुसार ही कहा था। भूतनाथ ने भी यही बात मशहूर की और इस तरह अपने ऐब को छिपा रक्खा।

यहाँ तक भूतनाथ का किस्सा कह कर जब दलीपशाह कुछ देर के लिये चुप हो गया तब तेजसिंह ने उससे पूछा, "तुमने तो भला भूतनाथ की बात मान कर उस मामले को छिपा रक्खा मगर शम्भू वगैरह इन्द्रदेव के शागिर्दों ने अपने मालिक से इस भेद को क्यों छिपाया?"

दलीप०। (एक लम्बी साँस लेकर) खुशामद और रुपया बड़ी चीज है, बस इसी से समझ जाइये और मैं क्या कहूँ!

तेज०। ठीक है, अच्छा तब क्या हुआ? भूतनाथ की कथा इतनी ही है या और भी कुछ?

दलीप०। जी अभी भूतनाथ की कथा समाप्त नहीं हुई अभी मुझे बहुत कुछ कहना बाकी है। और बातों के सिवाय भूतनाथ से एक कसूर ऐसा हुआ है जिसका रञ्ज भूतनाथ को इससे भी ज्यादा होगा।

तेज०। सो क्या?

दलीप०। सो भी मैं अर्ज करता हूँ।

इतना कह कर दलीपशाह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया:—

"इस मामले को वर्षों बीत गये। मैं भूतनाथ की तरफ से कुछ दिनों तक तो बेफिक्र रहा मगर जब यह मालूम हुआ कि भूतनाथ मेरी तरफ से निश्चिन्त नहीं है बल्कि मुझे इस दुनिया से उठा बेफिक्र हुआ चाहता है, तो मैं भी होशियार हो गया और दिन रात अपने बचाव की फिक्र में डूबा रहने लगा। (भूतनाथ की तरफ देख कर) भूतनाथ! अब मैं वह हाल बयान करूँगा जिसकी तरफ उस दिन मैंने इशारा किया था जब तुम हमें गिरफ्तार करके एक विचित्र

पहाड़ी स्थान * में ले गये थे और जिसके विषय में तुमने कहा था कि—यद्यपि मैंने दलीपशाह की सूरत नहीं देखी है—इत्यादि। मगर तुम इस समय भी...

भूतनाथ०। (बात काट कर) भला मैं कैसे कह सकता हूँ कि मैंने दलीपशाह की सूरत नहीं देखी है जिसके साथ ऐसे ऐसे मामले हो चुके हैं, मगर उस दिन मैंने तुम्हें धोखा देने के लिए वे शब्द कहे थे क्योंकि मैंने तुम्हें पहिचाना नहीं था। इस कहने से मेरा यही मतलब था कि अगर तुम दलीपशाह न होगे तो कुछ न कुछ जरूर बात बनाओगे। खैर जो कुछ हुआ सो हुआ मगर क्या तुम वास्तव में अब उस किस्से को बयान करने वाले हो ?

दलीप०। हाँ मैं उसे जरूर बयान करूँगा।

भूत०। मगर उसके सुनने से किसी को कुछ फायदा नहीं पहुँच सकता है और न किसी तरह की नसीहत ही हो सकती है। यह तो महज मेरी नादानी और पागलपने की बात थी जहाँ तक मैं समझता हूँ उसे छोड़ देने से कोइ हर्ज नहीं होगा।

दलीप०। नहीं, उसका बयान करना जरूरी जान पड़ता है, क्या तुम नहीं जानते या भूल गये कि उसी किस्से को सुनने के लिये कमला की माँ अर्थात् तुम्हारी स्त्री यहां आई हुई है ?

भूत०। ठीक है, मगर हाय ! मैं सच्चा बदनसीब हूँ जो इतना होने पर भी उन्हीं बातों को.....

इन्द्रदेव०। अच्छा अच्छा, जाने दो भूतनाथ ! अगर तुम्हें इस बात का शक है कि दलीपशाह बातें बना कर कहेगा या उसके कहने का ढंग लोगों पर बुरा असर डालेगा तो मैं दलीपशाह को वह हाल कहने से रोक दूँगा और तुम्हारे ही हाथ की लिखी हुई तुम्हारी अपनी जीवनी पढ़ने के लिए किसी को दूँगा जो उस सन्दूकड़ी में बन्द है।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने वही सन्दूकड़ी निकाली जिसकी सूरत देखने ही से भूतनाथ का कलेजा काँपता था।

उस सन्दूकड़ी को देखते ही एक दफे तो भूतनाथ घबड़ाना सा हो कर काँपा मगर तुरत ही उसने अपने को सम्हाल लिया और इन्द्रदेव की तरफ देख

* देखिये बीसवां हिस्सा, बारहवां बयान।

के बोला, "हाँ हाँ, आप कृपा कर इस सन्दूकड़ी को मेरी तरफ बढ़ाइये क्योंकि यह मेरी चीज है और मैं इसे ले लेने का हक रखता हूँ। यद्यपि कई ऐसे कारण हो गये हैं जिनसे आप कहेंगे कि यह सन्दूकड़ी तुम्हें नहीं दी जायगी मगर फिर भी मैं इसी समय इस पर कब्जा कर सकता हूँ क्योंकि देवीसिंह जी मुझ से प्रतिज्ञा कर चुके हैं कि यह सन्दूकड़ी बन्द की बन्द तुम्हें दिला दूँगा अस्तु देवीसिंहजी की प्रतिज्ञा झूठी नहीं हो सकती।" इतना कह कर भूतनाथ ने देवीसिंह की तरफ देखा।

देवी०। (महाराज से) निःसन्देह मैं ऐसी प्रतिज्ञा कर चुका हूँ।

महा०। अगर ऐसा है तो तुम्हारी प्रतिज्ञा झूठी नहीं हो सकती, मैं आज्ञा देता हूँ कि तुम अपनी प्रतिज्ञा पूरी करो।

इतना सुनते ही देवीसिंह उठ खड़े हुए। उन्होंने इन्द्रदेव के सामने से वह सन्दूकड़ी उठा ली और यह कहते हुए भूतनाथ के हाथ में दे दी, "लो मैं अपनी प्रतिज्ञा पूरी करता हूँ, तुम महाराज को सलाम करो जिन्होंने मेरी और तुम्हारी इज्जत रख ली!"

भूतनाथ०। (महाराज को सलाम करके) महाराज की कृपा से अब मैं जी उठा!

तेज०। भूतनाथ! तुम निश्चय जानो कि यह सन्दूकड़ी अभी तक खोली नहीं गई है, अगर सहज में खुलने लायक होती तो शायद खुल गई होती।

भूत०। (सन्दूकड़ी को अच्छी तरह देख भाल कर) बेशक यह अभी तक नहीं खुली है! मेरे सिवाय कोई दूसरा आदमी इसे बिना तोड़े खोल भी नहीं सकता। यह सन्दूकड़ी मेरी बुराइयों से भरी हुई है, या यों कहिये कि यह मेरे भेदों का खजाना है। यद्यपि इसमें के कई भेद खुल चुके हैं खुल रहे हैं और खुलते जायेंगे, तथापि इस समय इसे ज्यों का त्यों बन्द पा कर मैं बराबर महाराज को दुआ देता हुआ यही कहूँगा कि मैं जी उठा, जी उठा, जी उठा! अब मैं खुशी से अपनी जीवनी कहने और सुनने के लिये तैयार हूँ और साथ ही इसके यह भी कहे देता हूँ कि अपनी जीवनी के सम्बन्ध में जो कुछ मैं कहूँगा सच कहूँगा।

इतना कह कर भूतनाथ ने वह सन्दूकड़ी अपने बटुए में रख ली और पुनः हाथ जोड़ के महाराज से बोला, "महाराज! मैं वादा कर चुका हूँ कि अपना

हाल सच सच बयान करूँगा, परन्तु मेरा हाल बहुत बड़ा और शोक दुःख तथा भयंकर घटनाओं से भरा हुआ है। मेरे प्यारे मित्र इन्द्रदेवजी, जिन्होंने मेरे अपराधों को क्षमा कर दिया है, कहते हैं कि तेरी जीवनी से लोगों का उपकार होगा और वास्तव में बात भी ठीक ही है अतएव कई कठिनाइयों पर ध्यान दे कर मैं विनय पूर्वक महाराज से एक महीने की मोहलत मांगता हूँ। इस बीच में मैं अपना पूरा पूरा हाल लिख कर पुस्तक के रूप में महाराज के सामने पेश करूँगा और सम्भव है कि महाराज उसे सुन सुना कर यादगार की तौर पर अपने खजाने में रखने की आज्ञा देंगे। इस एक महीने के बीच में मुझे भी सब बातें याद कर के लिख लेने का मौका मिलेगा और मैं अपनी निर्दोष स्त्री तथा उन लोगों से जिन्हें देखने की भी आशा नहीं थी परन्तु जो बहुत कुछ दुःख भोग कर भी दोनों कुमारों की बदौलत इस समय यहाँ आ गये हैं और जिन्हें मैं अपना दुश्मन समझता था मगर अब महाराज की कृपा से जिन्होंने मेरे कसूरों को माफ कर दिया है मिल जुल कर कई बातों का पता भी लगा लूँगा जिससे मेरा किस्सा सिलसिलेवार और ठीक कायदे से हो जायगा।"

इतना कह कर भूतनाथ ने इन्द्रदेव राजा गोपालसिंह दोनों कुमारों और दलीपशाह वगैरह की तरफ देखा और तुरत ही मालूम कर लिया कि उसकी अर्जी कबूल कर ली जायगी।

महाराज ने कहा, 'कोई चिन्ता नहीं, तब तक हम लोग कई जरूरी कामों से छुट्टी पा लेंगे।' राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव ने भी इस बात को पसन्द किया और इसके बाद इन्द्रदेव ने दलीपशाह की तरफ देख कर पूछा, 'क्यों दलीपशाह! इसमें तुम लोगों को तो कोई उज्र नहीं है?'

दलीप०। (हाथ जोड़ कर) कुछ भी नहीं, क्योंकि जब महाराज की आज्ञानुसार हम लोगों को भूतनाथ से किसी तरह की दुश्मनी भी नहीं रही और न यही उम्मीद है कि भूतनाथ हमारे साथ किसी तरह की खुटाई करेगा, परन्तु मैं इतना जरूर कहूँगा कि हम लोगों का किस्सा भी महाराज के सुनने लायक है और हम लोग भूतनाथ के बाद अपना किस्सा भी सुनाया चाहते हैं।

महाराज०। निःसन्देह तुम लोगों का किस्सा भी सुनने योग्य होगा और हम लोग उसके सुनने की अभिलाषा रखते हैं। यदि सम्भव हुआ तो पहिले

तुम्हीं लोगों का किस्सा सुनने में आवेगा। मगर सुनो दलीपशाह! यद्यपि भूतनाथ तुम लोगों का कसूरवार है परन्तु इधर हम लोगों के साथ भूतनाथ ने जो कुछ किया है उसके लिये हम लोग इसके अहसानमन्द हैं और इसे अपना हितू समझते हैं।

इन्द्र०। बेशक बेशक!

गोपाल०। जरूर हम लोग इसके अहसान के बोझ से दबे हुए हैं!

दलीप०। मैं भी ऐसा ही समझता हूँ क्योंकि भूतनाथ ने इधर जो जो अनूठे काम किये हैं उसका हाल कुँअर साहब की जुबानी हम लोग सुन चुके हैं। इसी ख्याल से तथा कुँअर साहब की आज्ञा से हम लगों ने सच्चे दिल से भूतनाथ का अपराध क्षमा ही नहीं कर दिया बल्कि कुँअर साहब के सामने इस बात की प्रतिज्ञा भी कर चुके हैं कि भूतनाथ को दुश्मनी की निगाह से कभी न देखेंगे।

महाराज०। बेशक ऐसा ही होना चाहिये अस्तु बहुत सी बातों को सोच कर और इसकी कारगुजारी पर ध्यान दे कर हमने इसका कसूर माफ करके इसे अपना ऐयार बना लिया है, आशा है कि अब तुम लोग भी इसे अपनायत की निगाह से देखोगे और पिछली बातों को बिल्कुल भूल जाओगे।

दलीप०। महाराज अपनी आज्ञा के विरुद्ध चलते हुए हम लोगों को कदापि न देखेंगे यह हमारी प्रतिज्ञा है।

महाराज०। (अर्जुनसिंह तथा दलीपशाह के दूसरे साथी की तरफ देख कर) तुम लोगों की जुबान से भी हम ऐसा ही सुना चाहते हैं।

दलीप का साथी०। मेरी भी यही प्रतिज्ञा है और ईश्वर से प्रार्थना है कि वह मेरे दिल में दुश्मनी के बदले दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करने वाली भूतनाथ की मुहब्बत पैदा करे।

महाराज०। शाबाश! शाबाश!!

अर्जुन०। कुँअर साहब के सामने मैं जो कुछ प्रतिज्ञा कर चुका हूँ उसे महाराज सुन चुके होंगे, इस समय महाराज के सामने भी शपथ खाकर कहता हूँ कि स्वप्न में भी भूतनाथ के साथ दुश्मनी का ध्यान आने पर मैं अपने को दोषी समझूँगा।

इतना कह कर अर्जुनसिंह ने वह तस्वीर जो उसके हाथ में थी फाड़ डाली और टुकड़े टुकड़े करके भूतनाथ के आगे फेंक दी और पुनः महाराज की तरफ देख कर कहा, "यदि आज्ञा हो और बेअदबी न समझी जाय तो हम लोग इसी समय भूतनाथ से गले गले मिल कर अपने उदास दिल को प्रसन्न कर लें।"

महाराज०। यह तो हम स्वयम् कहने वाले थे।

इतना सुनते ही दोनों दलीप अर्जुन और भूतनाथ आपुस में गले गले मिले और इसके बाद महाराज का इशारा पा कर एक साथ बैठ गये।

भूतनाथ०! (दूसरे दलीप और अर्जुनसिंह की तरफ देख कर) अब कृपा कर के मेरे दिल का खटका मिटाओ और साफ साफ बता दो कि तुम दोनों में से असल में अर्जुनसिंह कौन है? जब मैं दलीपशाह को बेहोश करके उस घाटी में ले गया था * तब तुम दोनों में से कौन महाशय वहाँ पहुँच कर दूसरे दलीपशाह बनने को तैयार हुए थे?

दूसरा दलीप०। (हँस कर) उस दिन मैं ही तुम्हारे पास पहुँचा था। इत्तफाक से उस दिन मैं अर्जुनसिंह की सूरत बन कर बाहर घूम रहा था और जब तुम दलीपशाह को धोखा देकर ले चले तब मैंने छिप कर पीछा किया था। आज केवल धोखा देने के लिये ही अर्जुनसिंह के रहते मैं अर्जुनसिंह बन कर दलीपशाह के साथ यहाँ आया हूँ।

इतना कह कर दूसरे दलीप ने पास से गीला गमछा उठाया और अपने चेहरे का रंग पोंछ डाला जो उसने थोड़ी देर के लिये बनाया या लगाया था।

चेहरा साफ होते ही उसकी सूरत ने राजा गोपालसिंह को चौंका दिया और वह यह कहते हुए उसके पास चले गए कि क्या आप भरतसिंह ही हैं जिनके विषय में इन्द्रजीतसिंह ने हमें नकाबपोश बन कर इत्तला दी थी? † और इसके जवाब में "जी हाँ" सुन कर वे भरतसिंह के गले में चिमट गए। इसके बाद उनका हाथ थामे हुए गोपालसिंह अपनी जगह पर चले आए और भरतसिंह को अपने पास बैठा कर महाराज से बोले, "इनके मिलने की मुझे हद्द से ज्यादे खुशी हुई, बहुत देर से मैं चाहता था कि इनके विषय में कुमार से कुछ पूछूँ।"

* देखिए बीसवां हिस्सा, तेरहवां बयान।

† देखिये बीसवें हिस्से के बयान आठवें में कुमार की चीठी।

महाराज०। मालूम होता है कि इन्हें भी दारोगा ही ने अपना शिकार बनाया था?

भरत०। जी हाँ, आज्ञा होने पर मैं अपना हाल बयान करूँगा।

इन्द्रजीत०। (महाराज से) तिलिस्म के अन्दर मुझे पाँच कैदी मिले थे जिसमें से तीन तो यही अर्जुनसिंह भरतसिंह और दलीपशाह हैं, इनके अतिरिक्त दो और हैं जो यहाँ बुलाये नहीं गये। दारोगा मायारानी तथा उनके पक्षवालों के सम्बन्ध में इन पाँचों ही का किस्सा सुनने योग्य है। जब कैदियों का मुकदमा होगा तब आप देखियेगा कि इन लोगों की सूरत देख कर कैदियों की क्या हालत होती है।

महाराज०। वे दोनों कहाँ हैं?

इन्द्रजीत०। इस समय यहाँ मौजूद नहीं है, छुट्टी लेकर अपने घर की अवस्था देखने गये हैं, दो चार दिन में आ जायेंगे।

भूत०। (इन्द्रदेव से) यदि आज्ञा हो तो मैं भी कुछ पूछूँ?

इन्द्रदेव०। आप जो कुछ पूछेंगे उसे मैं खूब जानता हूँ मगर खैर पूछिये।

भूत०। कमला की माँ आप लोगों को कहाँ से और क्योंकर मिली?

इन्द्र०। यह तो उसी की जुबानी सुनने में ठीक होगा। जब वह अपना किस्सा बयान करेगी कोई बात छिपी न रह जायगी।

भूत०। और नानक की माँ तथा देवीसिंहजी की स्त्री के विषय में कब मालूम होगा?

इन्द्र०। वह भी उसी समय मालूम हो जायगा। मगर भूतनाथ! (मुस्कुरा कर) तुमने और देवीसिंह ने नकाबपोशों का पीछा करके व्यर्थ यह खुटका और तरद्दुद खरीद लिया। यदि उनका पीछा न करते और पीछे से तुम दोनों को मालूम होता कि तुम्हारी स्त्रियें भी इस काम में शरीक हुई थीं तो तुम दोनों को एक प्रकार की प्रसन्नता होती। प्रसन्नता तो अब भी होगी मगर खुटके और तरद्दुद से कुछ खून सुखा लेने के बाद!!

इतना कह कर इन्द्रदेव हँस पड़े और इसके बाद सभों के चेहरों पर मुस्कुराहट दिखाई देने लगी।

तेज०। (मुस्कुराते हुए देवीसिंह से) अब तो आपको भी मालूम हो गया

होगा कि आपका लड़का तारासिंह कई विचित्र भेदों को आपसे क्यों छिपाता था?

देवी०। जी हाँ, सब कुछ मालूम हो गया। जब अपने को प्रगट करने के पहिले ही दोनों कुमारों ने भैरो और तारा को अपना साथी बना लिया तो हम लोग जहाँ तक आश्चर्य में डाले जाते थोड़ा था!

देवीसिंह की बात सुन कर पुनः सभों ने मुस्कुरा दिया और अब दर्बार का रंग ढंग ही कुछ दूसरा हो गया अर्थात् तरद्दुद के बदले सभों के चेहरे पर हँसी और मुस्कुराहट दिखाई देने लगी।

तेज०। (भूतनाथ से) भूतनाथ! आज तुम्हारे लिये बड़ी खुशी का दिन है क्योंकि और बातों के अतिरिक्त तुम्हारी नेक और सती स्त्री भी तुम्हें मिल गई जिसे तुम मरी हुई समझते थे और हरनामसिंह तुम्हारा लड़का भी तुम्हारे पास बैठा हुआ दिखाई देता है जो बहुत दिनों से गायब था और जिसके लिये बेचारी कमला बहुत ही परेशान थी, जब वह हरनामसिंह का हाल सुनेगी तो बहुत ही प्रसन्न होगी।

भूत०। निःसन्देह ऐसा ही है, परन्तु मैं हरनामसिंह के सामने भी एक सन्दूकड़ी देख कर डर रहा हूँ और सोचता हूँ कि कहीं यह भी मेरे लिये कोई दुःखदाई मसाला लेकर न आया हो!!

इन्द्रदेव०। (हँस कर) भूतनाथ! अब तुम अपने दिल को व्यर्थ के खटकों में न डालो, जो कुछ होना था सो हो गया, अब तुम पूरे तौर पर महाराज के ऐयार हो गये, किसी की मजाल नहीं कि तुम्हें किसी तरह की तकलीफ दे और महाराज भी तुम्हारे बारे में अब किसी तरह की शिकायत नहीं सुनना चाहते। हरनामसिंह तो तुम्हारा लड़का ही है, वह तुम्हारे साथ बुराई कर ही नहीं सकता! इसी समय महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जीतसिंह की तरफ देख कर कुछ इशारा किया और जीतसिंह ने इन्द्रदेव से कहा, 'भूतनाथ का मामला तो अब तै हो गया, इसके बारे में महाराज अब किसी तरह की शिकायत सुना नहीं चाहते, इसके अतिरिक्त भूतनाथ ने वादा भी किया है कि अपनी जीवनी लिख कर महाराज दोनों के सामने पेश करेगा। अस्तु अब रह गये दलीपशाह अर्जुनसिंह और भरतसिंह तथा कमला की माँ। इन सभों पर जो कुछ मुसीबतें गुजरी हैं उसे महाराज

सुना चाहते हैं परन्तु इस समय नहीं, क्योंकि विलम्ब बहुत हो गया, अब महाराज आराम करेंगे, अस्तु अब दर्बार बर्खास्त करना चाहिये जिसमें और लोग भी आपुस में मिलजुल कर अपने अपने दिल की कुलफत निकाल लें क्योंकि अब यहां किसी को किसी से मिलने में अथवा आपुस का बर्ताव करने में परहेज न होना चाहिये !

इन्द्र० । (हाथ जोड़ कर) जो आज्ञा ।

दर्बार बर्खास्त हुआ । इन्द्रदेव की इच्छानुसार महाराज आराम करने के लिये जीतसिंह को साथ लिए एक दूसरे कमरे में चले गये । इसके बाद और सब कोई उठे और अपने अपने ठिकाने पर जैसा कि इन्द्रदेव ने इन्तजाम कर दिया था चले गये, मगर कई आदमी जो आराम नहीं किया चाहते थे बँगले के बाहर निकल कर बागीचों की तरफ रवाना हुए ।

पाँचवाँ बयान

एक सुन्दर सुनहरे पाँवों वाली मुसहरी पर महाराज सुरेन्द्रसिंह लेटे हुए हैं। ऐयारों के सिरताज जीतसिंह उसी मुसहरी के पास फर्श पर बैठे तथा दाहिने हाथ से मुसहरी पर ढासना लगाये धीरे धीरे बातें कर रहे हैं ।

महा० । इन्द्रदेव का स्थान बहुत ही सुन्दर और रमणीक है, यहां से जाने का तो जी ही नहीं चाहता ।

जीत० । ठीक है, इस स्थान की तरह इन्द्रदेव का बर्ताव भी चित्त प्रसन्न है, परन्तु मेरी राय यही है कि जहाँ तक जल्द हो यहां से लौट चलना च मु-

महा० । हम भी यही सोचते हैं । इन लोगों की जीवनी और अद्भुत भरी कहानी तो वर्षों तक सुनते ही रहेंगे परन्तु इन्द्रजीत और आनन्द की शे जहां तक जल्द हो सके कर ही देना चाहिये । जिसमें और किसी तरह के वि पड़ने का फिर डर न रहे ।

जीत० । जरूर ऐसा होना चाहिये, इसीलिये मैं चाहता हूँ कि यह जल्द चलिये भरतसिंह वगैरह की कहानी वहां ही सुन लेंगे या शादी के ब- और लोगों को भी यहां ले आवेंगे जिसमें वे लोग भी तिलिस्म और इस स्थ का आनन्द ले लें ।

महा० । अच्छी बात है, खैर यह बताओ कि कमलिनी और लाडिली के विषय में भी तुमने कुछ सोचा ?

जीत० । उन दोनों के लिए जो कुछ आप विचार रहे हैं वही मेरी भी राय है उनकी भी शादी दोनों कुमारों के साथ कर ही देना चाहिये ।

महा० । है न यही राय ?

जीत० । जी हां, मगर किशोरी और कामिनी की शादी के बाद क्योंकि किशोरी एक राजा की लड़की है इसलिये उसी की औलाद को गद्दी का हकदार होना चाहिये, यदि कमलिनी के साथ पहिले शादी हो जायगी तो उसी का लड़का गद्दी का मालिक समझा जायगा, इसी से मैं चाहता हूँ कि पटरानी किशोरी ही बनाई जाय ।

महा० । यह बात तो ठीक है, अस्तु ऐसा ही होगा और साथ ही इसके कमला की शादी भैरो के साथ और इन्दिरा की तारा के साथ कर दी जायगी ।

जीत० । जो मर्जी ।

महाराज० । अच्छा तो अब यही निश्चय रहा कि दलीपशाह और भरतसिंह की बीती यहां से चलने बाद घर ही पर सुनना चाहिये ।

जीत० । जी हां, सच तो यों है कि ऐसा करना ही पड़ेगा क्योंकि इन लोगों की कहानी दारोगा और जयपाल इत्यादि कैदियों से घना सम्बन्ध रखती है बल्कि यों कहना चाहिये कि इन्हीं लोगों के इजहार पर उन लोगों के मुकद्दमे का दारोमदार (हेस नेस) है और यही लोग उन कैदियों को लाजवाब करेंगे ।

महा० । निःसन्देह ऐसा ही है, इसके अतिरिक्त उन कैदियों ने हम लोगों तथा हमारे सहायकों को बड़ा ही दुःख दिया है और दोनों कुमारों की शादी में भी बड़े बड़े विघ्न डाले हैं अतएव उन कम्बख्तों का कुमारों की शादी का जल्सा भी दिखा देना चाहिये जिसमें वे लोग भी अपनी आंखों से देख लें कि जिन बातों को वे बिगाड़ा चाहते थे वे आज कैसी खूबी और खुशी के साथ हो रही हैं, इसके बाद उन लोगों को सजा देना चाहिये । मगर अफसोस तो यह है कि मायारानी और माधवी जमानिया ही में मार डाली गईं नहीं तो वे दोनों भी देख लेतीं कि.....

जीत० । खैर उनकी किस्मत में यही बदा था ।

महा० । अच्छा तो एक बात का और खयाल रखना चाहिये ।

जीत० । आज्ञा ?

महा० । भूतनाथ वगैरह को मौका देना चाहिये कि वे अपने सम्बन्धियों से बखूबी मिल जुल कर अपने दिल का खुटका निकाल लें, क्यों कि हम लोग तो उनका हाल वहां चल कर ही सुनेंगे ।

जीत० । बहुत खूब ।

इतना कह कर जीतसिंह उठ खड़े हुए और कमरे से बाहर चले गये ।

छठवाँ बयान

इन्द्रदेव के इस स्वर्ग तुल्य स्थान में बँगले से कुछ दूर हटकर बगीचे के दक्खिन तरफ एक घना जामुन का पेड़ है जिसे सुन्दर लताओं ने घेर कर देखने योग्य बना रक्खा है और वहां एक कुञ्ज की सी छटा दिखाई पड़ती है । उसी के नीचे साफ पानी का एक चश्मा भी बह रहा है । अपनी सुरीली बोली से लोगों के दिल लुभा लेने वाली चिड़ियायें सन्ध्या का समय निकट जान अपने घोसलों के चारो तरफ फुदक फुदक कर अपने अपौरुष बच्चों को चैतन्य करती हुई कह रही हैं कि लो मैं बहुत दूर से तुम लोगों के लिये दाना पानी अपने पेट में भर लाई हूँ जिससे तुम्हारी सन्तुष्टी की जायगी ।

यह रमणीक स्थान ऐसा है कि यहां दो चार आदमी छिप कर इस तरह बैठ सकते हैं कि वे चारो तरफ के आदमियों को बखूबी देख लें पर उन्हें कोई भी न देखे । इस स्थान पर हम इस समय भूतनाथ और उसकी पहिली स्त्री कमला की मां को पत्थर की चट्टानों पर बैठे बातें करते हुए देख रहे हैं । ये दोनों मुद्दत के बिछुड़े हुए हैं और दोनों के दिल में शिकायतों का खजाना भरा हुआ है जिसे वह इस समय बेतरह उगलने के लिये तैयार हैं । प्यारे पाठक ! आइये हम आप मिल कर जरा इन दोनों की बातें तो सुन लें ।

भूत० । शान्ता * ! आज तुमसे मिल कर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ ।

शान्ता० । क्यों ? जो चीज किसी कारणवश खो जाती है उसे यकायक पाने से प्रसन्नता हो सकती है, मगर जो चीज जान बूझ कर फेंक दी जाती है

* शान्ता कमला की मां का नाम था ।

उसके पाने की प्रसन्नता कैसी ?

भूत० । यदि किसी को कहीं से एक पत्थर का टुकड़ा मिल जाय और वह उसे बेकार या बदसूरत समझ कर फेंक दे, तथा कुछ समय के बाद जब उसे यह मालूम हो कि वास्तव में वह हीरा था पत्थर नहीं, तो क्या उसके फेंक देने का उसको दुःख न होगा ? या उसे पुःन पा कर प्रसन्नता न होगी ?

शान्ता० । अगर वह आदमी जिसने हीरे को पत्थर समझ कर फेंक दिया है, यह जान कर कि वह वास्तव में हीरा था उसकी खोज करे, या इस विचार से कि उसे मैंने फलानी जगह छोड़ा या फेंका है वहां जाने से जरूर मिल जायगा उसकी तरफ दौड़ा जाय, तो बेशक समझा जायगा कि उसे उसके फेंक देने का रञ्ज हुआ था और उसके मिल जाने से प्रसन्नता होगी, लेकिन यदि ऐसा नहीं है तो नहीं।

भूत० । ठीक है, मगर वह आदमी उस जगह जहां उसने हीरे को पत्थर समझ कर फेंका था पुःन उसे पाने की आशा में तभी जायगा जब अपना जाना सार्थक समझेगा। परन्तु जब उसे यह निश्चय हो जायगा कि वहां जाने से उस हीरे के साथ तू भी बर्बाद हो जायगा अर्थात् वह हीरा भी काम का न रहेगा और तेरी भी जान जाती रहेगी तब वह उसकी खोज में क्यों कर जायगा?

शान्ता० । ऐसी अवस्था में वह अपने को इस योग्य बनावेहीगा नहीं कि वह उस हीरे की खोज में जाने लायक न रहे यदि यह बात उसके हाथ में होगी और वह उस हीरे को वास्तव में हीरा समझता होगा।

भूतनाथ० । बेशक मगर शिकायत की जगह तो ऐसी अवस्था में हो सकती थी जब वह अपने बिगड़े हुए कँटीले रास्तेको जिसके सबब से वह उस हीरे तक नहीं पहुँच सकता था पुनः सुधारने और साफ करने के लिए परले सिरे का उद्योग करता हुआ दिखाई न देता ।

शान्ता० । ठीक है, लेकिन जब वह हीरा यह देख रहा है कि उसका अधिकारी या मालिक बिगड़ी हुई अवस्था में भी एक मानिक के टुकड़े को कलेजे से लगाये हुए घूम रहा है और यदि वह चाहता तो उस हीरे को भी उसी तरह रख सकता था मगर अफसोस उस हीरे की तरफ जो वास्तव में पत्थर ही समझा गया है कोई भी ध्यान नहीं देता जो बे हाथ पैर का हो कर भी उसी मालिक की

खोज में जगह जगह की मिट्टी छानता फिर रहा है जिसने जान बूझ कर उसे पैर में गड़ने वाले कंकड़ की तरह अपने आगे से उठाकर फेंक दिया है और जानता है कि उस पत्थर के टुकड़े के साथ जिसे वह व्यर्थ ही हीरा कह रहा है वास्तव में छोटी छोटी दो कनियाँ भी चिपकी हुई हैं जो छोटी होने के कारण सहज ही मिट्टी में मिल जा सकती हैं, तब भी क्या शिकायत की जगह नहीं है !!

भूत०। परन्तु अदृष्ट भी कोई वस्तु है, प्रारब्ध भी कुछ कहा जाता है, और होनहार भी किसी का नाम है ?

शान्ता०। यह दूसरी बात है, इन सभों का नाम लेना वास्तव में निरुत्तर (लाजवाब) होना और चलती बहस को जान बूझ कर बन्द कर देना ही नहीं है बल्कि उद्योग ऐसे अनमोल पदार्थ की तरफ से मुँह फेर लेना भी है ! अस्तु जाने दीजिये, मेरी यह इच्छा भी नहीं है कि आपको परास्त करने की अभिलाषा से मैं बिवाद करती ही जाऊँ, यह तो बात ही बात में कुछ कहने का मौका मिल गया और छाती पर पत्थर रख कर जी का उबाल निकाल लिया, नहीं तो जरूरत ही क्या थी ।

भूतनाथ०। मैं कसूरवार हूँ और बेशक कसूरवार हूँ मगर यह उम्मीद भी तो न थी कि ईश्वर की कृपा से तुम्हे इस तरह जीती इस दुनिया में देखूँगा।

शान्ता०। अगर यही आशा या अभिलाषा होती तो अपने परलोकगामी होने की खबर मुझ अभागी के कानों तक पहुँचाने की कोशिश क्यों करते और...

भूत०। बस बस, अब मुझ पर दया करो और इस ढंग की बातें छोड़ दो क्योंकि आज बड़े भागों से मेरे लिये यह खुशी का दिन नसीब हुआ है। इसे जली कटी बातें सुना कर पुनः कड़वा न करो और यह सुनाओ कि तुम इतने दिनों तक कहां छिपी हुई थीं और अपनी लड़की कमला को किस तरह धोखा दे कर चली गईं कि आज तक वह तुमको मरी हुई ही समझती है ?

इस समय शान्ता का खूबसूरत चेहरा नकाब से ढका हुआ नहीं है। यद्यपि वह जमाने के हाथों सताई हुई तथा दुबली पतली और उदास है और उसका तमाम बदन पीला पड़ गया है मगर फिर भी आज की खुशी उसके सुन्दर बादामी चेहरे पर रौनक पैदा कर रही है और इस बात की इजाजत नहीं देती कि कोई उसे ज्यादे उम्र वाली कह कर खूबसूरतों की पंक्ति में बैठने से रोके। हजार गई

गुजरी होने पर वह रामदेई (भूतनाथ की दूसरी स्त्री) से बहुत अच्छी मालूम पड़ती है और इस बात को भूतनाथ भी बड़े गौर से देख रहा है। भूतनाथ की आखिरी बात सुन कर शान्ता ने अपनी डबडबाई हुई बड़ी बड़ी आंखों को आंचल से साफ किया और एक लम्बी सांस ले कर कहा—

शान्ता०। मैं रणधीरसिंह के यहां से कभी न भागती अगर अपना मुँह किसी को दिखाने लायक समझती। मगर अफसोस आपके भाई ने इस बात को अच्छी तरह मशहूर कर दिया कि आपके दुश्मन (अर्थात् आप) इस दुनिया से उठ गये! यद्यपि इसके सबूत में उन्होंने बहुत सी बातें पेश कीं मगर मुझे विश्वास न हुआ तथापि इस गम में मैं बीमार हो गई और दिन दिन मेरी बीमारी बढ़ती ही गई। उसी जमाने में मेरी मौसेरी बहिन अर्थात् दलीपशाह की स्त्री मुझे देखने के लिये मेरे घर आई। मैंने अपने दिल का हाल और बीमारी का सबब उससे बयान किया और यह भी कहा कि जिस तरह मेरे पति ने सही सलामत रह कर भी अपने को मरा हुआ मशहूर किया उसी तरह मुझे भी तुम कहीं छिपा कर मरा हुआ मशहूर कर दो। अगर ऐसा हो जायगा तो मैं अपने पति को ढूंढ निकालने का उद्योग करूँगी। उन्होंने मेरी बात पसन्द कर ली और लोगों को यह कह कर कि मेरे यहां की आबहवा अच्छी है वहां शान्ता को बहुत जल्द आराम हो जायगा, मुझे अपने यहां उठा ले जाने का बन्दोबस्त किया और रणधीरसिंहजी से इजाजत भी ले ली। मैं दो दिन तक अपनी लड़की कमला को नसीहत करती रही और इसके बाद उसे किशोरी के हवाले कर के और अपने छोटे दूध पीते बच्चे को गोद में ले कर दलीपशाह के घर चली आई और धीरे धीरे आराम होने लगा। थोड़े ही दिन बाद दलीपशाह के घर में उस भयानक आधी रात के समय आपका आना हुआ, मगर हाय! उस समय आपकी अवस्था पागलों की सी हो रही थी और आपने धोखे में पड़ कर अपने प्यारे लड़के का जिसे मैं अपने साथ ले गई थी खून कर डाला *।

इतना कहते कहते शान्ता का जी भर आया और वह हिचकियां ले ले रोने लगी। भूतनाथ की भी बुरी अवस्था हो रही थी और इससे ज्यादे वह इस घटना

* दलीपशाह ने बीसवें हिस्से के तेरहवें बयान में इस घटना की तरफ भूतनाथ से इशारा किया था।

का हाल नहीं सुना चाहता था। वह यह कहता हुआ कि—"बस माफ करो माफ करो, अब इसका जिक्र न करो!" अपनी स्त्री शान्ता के पैरों पर गिरा ही चाहता था कि उसने पैर खैंच कर भूतनाथ का सिर थाम लिया और कहा—"हां हां! यह क्या करते हो? क्यों मेरे सिर पर पाप चढ़ाते हो? मैं खूब जानती हूँ कि आपने उसे नहीं पहिचाना मगर इतना जरूर समझते थे कि वह दलीपशाह का लड़का है, अस्तु फिर भी आपको ऐसा नहीं करना चाहता था, खैर अब मैं इस जिक्र को छोड़ देती हूँ।"

इतना कह कर शान्ता ने अपने आंसू पोंछे और फिर इस तरह बयान करना शुरू किया—

"शोक और दुःख से मैं पुनः बीमार पड़ गई मगर आशालता ने धीरे धीरे कुछ दिन में अपनी तरह मुझे भी हरा (आराम) कर दिया। यह आशा केवल इसी बात की थी कि एक दफे आपसे जरूर मिलूँगी। मुश्किल तो यह थी कि उस घटना ने दलीपशाह को भी आपका दुश्मन बना दिया था, केवल घटना ने ही नहीं, इसके अतिरिक्त भी दलीपशाह को बर्बाद करने में आपने कुछ उठा न रक्खा था, यहाँ तक कि आखिर वह दारोगा के हाथ फँस ही गया।"

भूत०। (बेचैन के साथ लम्बी सांस लेकर) ओफ! मैं कह चुका हूँ कि इस बात को मत छेड़ो केवल अपना हाल बयान करो मगर तुम नहीं मानतीं!

शान्ता०। नहीं नहीं, मैं तो अपना ही हाल बयान कर रही हूँ, खैर मुख्तसर ही में कहती हूँ।

उस घटना के बाद ही मेरी इच्छानुसार दलीपशाह ने मेरा और बच्चे का मर जाना मशहूर किया जिसे सुन कर हरनामसिंह और कमला भी मेरी तरफ से निश्चिन्त हो गये। जब खुद दलीपशाह भी दारोगा के हाथ में फँस गया तब मैं बहुत ही परेशान हुई और सोचने लगी कि अब क्या करना चाहिये। उस समय दलीपशाह के घर में उसकी स्त्री, एक छोटा सा बच्चा, और मैं, केवल ये तीन ही आदमी रह गये थे। दलीपशाह की स्त्री को मैंने धीरज धराया और कहा कि अभी अपनी जान मत बर्बाद कर, मैं बराबर साथ दूँगी और दलीपशाह को खोज निकालने में उद्योग करूँगी, मगर अब हम लोगों को यह घर एक दम छोड़ देना चाहिये और ऐसी जगह छिप कर रहना चाहिये जहाँ दुश्म-

नों को हम लोगों का पता न लगे। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् हम लोगों की जो कुछ जमा पूँजी थी उसे लेकर हमने उस घर को एक दम छोड़ दिया और काशीजी में जाकर एक अन्धेरी गली के पुराने और गन्दे मकान में डेरा डाला मगर इस बात की टोह लेते रहे कि दलीपशाह कहाँ हैं अथवा छूटने के बाद अपने घर की तरफ जा कर हम लोगो को ढूँढ़ते हैं या नहीं। इसी फिक्रमें मैं कई दफे सूरत बदल कर बाहर निकली और इधर उधर घूमती रही। इत्तफाक से दिल में यह बात पैदा हुई कि किसी तरह अपने लड़के हरनामसिंह से छिप कर मिलना और उसे अपना साथी बना लेना चाहिये। ईश्वर ने मेरी यह मुराद पूरी की। जब माधवी कुँअर इन्द्रजीतसिंह को फँसा ले गई और उसके बाद उसने किशोरी पर भी कब्जा कर लिया तब कमला और हरनामसिंह दोनों आदमी किशोरी की खोज में निकले और एक दूसरे से जुदा हो गये। किशोरीकी खोज में हरनामसिंह काशी की गलियों में घूम रहा था जब उस पर मेरी निगाह पड़ी और मैंने इशारे से अलग बुला कर अपना परिचय दिया। उसको मुझसे मिल कर जितनी खुशी हुई उसे मैं बयान नहीं कर सकती। मैं उसे अपने घरमें ले गई और सब हाल उससे कह अपने दिल का इरादा जाहिर किया जिसे उसने खुशी से मञ्जूर कर लिया। उस समय मैं चाहती तो कमला को अपने पास बुला लेती मगर नहीं, उसे किशोरी की मदद के लिये छोड़ दिया क्योंकि किशोरी के निमक को मैं किसी तरह भूल नहीं सकती थी अस्तु मैंने केवल हरनामसिंह को अपने पास रख लिया और खुद चुपचाप घर में बैठी रह कर आपके और दलीपशाह के पता लगाने का काम लड़के के सुपुर्द किया। बहुत दिनों तक बेचारा लड़का चारो तरफ मारा मारा फिरा और तरह तरह की खबरें लाकर मुझे सुनाता रहा जब आप प्रगट हो कर कमलिनी के साथी बन गये और उसके काम के लिये चारो तरफ घूमने लगे तब हरनामसिंह ने भी आपको देखा और पहिचान कर मुझे इत्तला दी। थोड़े दिन बाद यह भी उसी की जुबानी मालूम हुआ कि अब आप नेकनाम होकर दुनिया में अपने को प्रगट किया चाहते हैं। उस समय मैं बहुत प्रसन्न हुई और मैंने हरनाम को राय दी कि तू किसी तरह राजा बीरेन्द्रसिंह के किसी ऐयार की शागिर्दी कर ले। आखिर वह तारासिंह से मिला और उसके साथ रह कर थोड़े ही दिनों उसका प्यारा शागिर्द बल्कि

दोस्त बन गया। तब उसने अपना सब सच हाल तारासिंह को कह सुनाया और तारासिंह ने भी उसके साथ बहुत अच्छा बर्ताव कर के उसकी इच्छानुसार उसके भेदों को छिपाया। तब से हरनामसिंह सूरत बदले हुए तारासिंह का काम करता रहा और मुझे भी आप की पूरी पूरी खबर मिलती रही। आप को शायद इस बात की खबर न हो कि तारासिंह की माँ चम्पा से और मुझसे बहिन का रिश्ता है, वह मेरे मामा की लड़की है, अस्तु जब चम्पा ने अपने लड़के की जुबानी हरनामसिंह का हाल सुना और यह मालूम हुआ कि वह रिश्ते में उसका भतीजा होता है तब उसने भी उस पर दया प्रगट की और तब से उसे बराबर अपने लड़के की तरह मानती रही।

जमानिया के तिलिस्म को खोलते और कैदियों को साथ लिये हुए जब दोनों कुमार उस खोह वाले तिलिस्मी बंगले में पहुँचे तो उन्होंने भैरोसिंह और तारासिंह को अपने पास बुलालिया और तिलिस्म का पूरा पूरा हाल उनसे कह के उन दोनों को अपने पास रक्खा। दलीपशाह को यह हाल भी तारासिंह ही से मालूम हुआ कि उनके बाल बच्चे ईश्वर की कृपा से अभी तक राजी खुशी हैं, साथ ही इसके मेरा हाल भी दलीपशाह को मालूम हुआ। उस समय तारासिंह दोनों कुमारों से आज्ञा ले कर हरनामसिंह को उस बँगले में ले आये और दलीपशाह से उसकी मुलाकत कराई। हरनामसिंह को साथ ले कर दलीपशाह काशी गये और वहां से मुझ को तथा अपनी स्त्री और लड़के को साथ लेकर कुमार के पास चले आये। जब तारासिंह की जुबानी चम्पा ने यह हाल सुना तो वह मुझसे मिलने के लिये तारासिंह के साथ यहां अर्थात् उस बँगले में आई।

भूत०। जब दोनों कुमार नकाबपोश बन कर भैरोसिंह और तारासिंह को यहां ले आये उसके पहिले तो तारासिंह यहां नहीं आये थे?

शान्ता०। जी उसके पहिले ही से वे दोनों यहां आते जाते रहे, उस दिन तो प्रगट रूप से यहाँ लाये गये थे। क्या इतना हो जाने पर भी आपको अन्दाज से मालूम न हुआ?

भूत०। ठीक है, इस बात का शक तो मुझे और देवीसिंह को भी होता रहा।

शान्ता का किस्सा भूतनाथ ने बड़े गौर के साथ ध्यान दे कर सुना और तब देर तक आरजू मिन्नत के साथ शान्ता से माफी माँगता रहा। इसके बाद

पुनः दोनों में बातचीत होने लगी—

शान्ता०। अब तो आप को मालूम हुआ कि चम्पा यहाँ क्योंकर और किस लिये आई।

भूत०। हाँ यह भेद तो खुल गया मगर इसका पता न लगा कि नानक और उसकी माँ का यहाँ आना कैसे हुआ।

शान्ता०। सो मैं न कहूँगी, यह उसी से पूछ लेना।

भूत०। (ताज्जुब से) सो क्यों?

शान्ता०। मैं उसके बारे में कुछ कहा ही नहीं चाहती!

भूत०। आखिर इसका कोई सबब भी है?

शान्ता०। सबब यही है कि उसकी यहाँ कोई इज्जत नहीं है बल्कि वह बेकदरी की निगाह से देखी जाती है।

भूत०। वह है भी इसी योग्य! पहिले तो मैं उसे प्यार करता था मगर जब से यह सुना कि उसी की बदौलत मैं जैपाल (नकली बलभद्र) का शिकार बन गया और एक भारी आफत में फँस गया, तब से मेरी तबीयत उससे खट्टी हो गई।

शान्ता०। सो क्यों?

भूत०। इसी लिये कि वह बेगम की गुप्त सहेली नन्हों से गहरी मुहब्बत रखती है * और इसी सबब से वह कागज का मुट्ठा जो मैंने अपने फायदे के लिये तैयार किया था गायब हो के जयपाल के हाथ लग गया और उससे मुझे नुकसान पहुँचा। इस बात का सबूत भी मैंने अपनी आँखों से देख लिया।

शान्ता०। सो ठीक है, मैं भी दलीपशाह से यह बात सुन चुकी हूँ।

भूत०। इसी से अब मैं उसे अपनी स्त्री नहीं बल्कि दुश्मन समझता हूँ। केवल नन्हों ही से नहीं बल्कि कम्बख्त गौहर से भी वह दोस्ती रखती थी और वह दोस्ती पाक न थी। (लम्बी सांस लेकर) अफसोस! इसी से उस खोटी का लड़का नानक भी खोटा ही निकला।

शान्ता०। (मुस्कुरा कर) तब आप उसके लिए इतना परेशान क्यों थे? क्योंकि यह बात सुनने के बाद ही तो आपने उसे नकाबपोशों के स्थान में देखा था!!

* उन्नीसवाँ हिस्सा बारहवाँ बयान, देखिये नकाबपोश की बातचीत।

भूत० । वह परेशानी मेरी उसकी मुहब्बत के सबब से न थी बल्कि इस ख्याल से थी कि कहीं वह मुझ पर कोई नई आफत लाने के लिये तो नकाब-पोशों से नहीं आ मिली।

शान्ता० । ठीक है, यह खयाल भी हो सकता था।

भूत० । फिर इसी बीच में जब उसने मुझे जङ्गल में गाना सुना के धोखा दिया और गिरफ्तार कर के अपने स्थान पर ले गई जिसका हाल शायद तुम्हें मालूम होगा, तब मेरा रञ्ज और भी बढ़ गया *।

शान्ता० । यह हाल मुझे मालूम है मगर यह कार्रवाई इसकी न थी बल्कि इन्द्रदेव की थी। उन्हीं ही ने आपके साथ यह ऐयारी की थी और उस दिन जङ्गल में घोड़े पर सवार जो औरत आप को मिली थी और जिसे आपने अपनी स्त्री समझा था, वह भी इन्द्रदेव का एक ऐयार ही था। यह बात मैं उन्हीं (इन्द्रदेव) की जुबानी सुन चुकी हूँ शायद आप से भी वे कहें। हां उस दिन बँगले में जिस औरत को आपने देखा था वह बेशक नानक की मां थी। वह तो खुद कैदियों की तरह यहां रक्खी गई है। मैदान की हवा क्योंकर खा सकती है! दोनों कुमार नहीं चाहते थे कि प्रगट होने के पहिले ही कोई उन लोगों का पता लगा ले, इसी लिये ये सब खेल खेले गये। (कुछ सोच कर) आखिर आपने धीरे धीरे नानक की मां का हाल पूछ ही लिया, मैं उसके बारे में कुछ भी नहीं कहा चाहती थी, अस्तु अब इससे आगे और कुछ भी न कहूँगी, आप उसके बारे में मुझसे कुछ न पूछें।

भूत० । नहीं नहीं, जब इतना बता चुकी हो तो कुछ और भी बताओ क्योंकि मैं उससे मिल कर कुछ भी नहीं पूछा चाहता बल्कि अब उसका मुँह देखना भी मुझे पसन्द नहीं है। अच्छा यह तो बताओ कि वह कम्बख्त यहाँ क्यों लाई गई?

शान्ता० । लाई नहीं गई बल्कि उसी नन्हों के यहां गिरफ्तार की गई, उस समय नानक भी उसके साथ था।

भूतनाथ० । (आश्चर्य और क्रोध से) फिर भी उसी नन्हों के यहां गई थी।

शान्ता० । जी हां!

* देखिये बीसवें हिस्से का अन्त।

भूत० । (लम्बी सांस ले कर) लोग सच कहते हैं कि ऐयाशी का नतीजा बहुत बुरा निकलता है !

शान्ता० । अस्तु अब उसके बारे में मुझसे कुछ न पूछिये, इन्द्रदेवजी आपको सब कुछ बता देंगे ।

भूत० । हाँ ठीक है, खैर अब उसके बारे में कुछ न पूछूँगा, जो कुछ पूछूँगा वह तुम्हारे और हरनाम ही के बारे में होगा । अच्छा एक बात और बताओ, आज के दर्बार में मैंने हरनाम को हाथ में एक सन्दूकड़ी लिए हुए देखा था, वह सन्दूकड़ी कैसी थी और उसमें क्या था ?

शान्ता० । उसमें दारोगा के हाथ की लिखी हुई बहुत सी चिट्ठियाँ हैं जिनके देखने से आप को निश्चय हो जायगा कि आपने दलीपशाह को व्यर्थ ही अपना दुश्मन समझ लिया था । पहिले जब दारोगा ने दलीपशाह को लालच दिखा कर लिखा था कि वह आप को गिरफ्तार करा दे, तब दो चार चिट्ठियों में तो दलीपशाह ने इस नीयत से कि दारोगा की शैतानियों का सबूत उससे मिल कर बटोर लें दारोगा के मतलब ही का जवाब दिया था जिससे खुश होकर उसने कई चीठियों में दलीपशाह को तरह तरह के सब्ज बाग दिखलाए, मगर जब दारोगा की कई चीठियाँ दलीपशाह ने बटोर लीं तब साफ जवाब दे दिया । उस समय दारोगा बहुत घबड़ाया और उसने सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि दलीपशाह मुझसे दुश्मनी करके मेरा भेद खोल दे, अस्तु किसी तरह उसे गिरफ्तार कर लेना चाहिये । उस समय कम्बख्त दारोगा आपसे मिला और उसने दलीपशाह की पहली चीठियाँ आप को दिखा कर खुद आप ही को दलीपशाह का दुश्मन बना दिया, बल्कि आप ही के जरिये से दलीपशाह को गिरफ्तार भी करा लिया ।

भूत० । ठीक है, इस विषय में मैंने बहुत बड़ा धोखा खाया ।

शान्ता० । मगर दलीपशाह को गिरफ्तार कर लेने पर भी वे चीठियाँ दारोगा के हाथ न लगीं क्योंकि वे दलीपशाह की स्त्री के कब्जे में थीं, अब हमलोग उन्हें अपने साथ लाये हैं जिसमें दारोगा के मुकद्दमे में पेश करें ।

भूत० । अस्तु अब मेरे दिल का खुटका निकल गया और मुझे निश्चय हो गया कि हरनाम की कोई कार्रवाई मेरे खिलाफ न होगी ।

शान्ता० । भला वह कोई काम ऐसा क्यों करेगा जिससे आपको तकलीफ हो ? ऐसा ख्याल भी आप को न रखना चाहिये ।

इन दोनों में इस तरह की बातें हो ही रही थीं कि किसी के आनेकी आहट मालूम हुई । भूतनाथ ने घूम कर देखा तो नानक पर निगाह पड़ी । जब वह पास आया तब भूतनाथ ने उससे पूछा, क्यों, क्या चाहते हो ?"

नानक० । मेरी माँ आप से मिला चाहती हैं ।

भूत० । तो यहाँ पर क्यों न चली आई ? यहाँ कोई गैर तो था नहीं ।

नानक० । सो तो वह जानें ।

भूत० । अच्छा जाओ, उसे इसी जगह मेरे पास भेज दो ।

नानक० । बहुत अच्छा ।

इतना कह कर नानक चला गया और इसके बाद शान्ता ने भूतनाथ से कहा, "शायद उसे मेरे सामने आपसे बातचीत करना मञ्जूर न हो, शर्म आती हो या किसी तरह का और भी कुछ खयाल हो, अस्तु आज्ञा दीजिये तो मैं चली जाऊँ फिर.....

भूत० । नहीं, उसे जो कुछ कहना होगा तुम्हारे सामने ही कहेगी, तुम चुपचाप बैठी रहो ।

शान्ता० । सम्भव है कि वह मेरे रहते यहाँ न आवे या उसे इस बात का खयाल हो कि तुम मेरे सामने उसकी बेइज्जती करोगे ।

भूत० । हो सकता है, मगर.....(कुछ सोच के) अच्छा तुम जाओ ।

इतना सुन कर शान्ता वहाँ से उठी और बँगले की तरफ रवाना हुई । इस समय सूर्य्य अस्त हो चुका था और चारो तरफ से अँधेरी झुकी आती थी ।

सातवाँ बयान

इन्द्रदेव का यह स्थान बहुत बड़ा था । इस समय यहां जितने आदमी आये हुए हैं उनमें से किसी को किसी तरह की भी तकलीफ नहीं हो सकती थी और इसके लिये प्रबन्ध भी बहुत अच्छा कर रक्खा गया था । औरतों के लिये एक खास कमरा मुकर्रर किया गया था मगर रामदेई (नानक की मां) की निगरानी की जाती थी और इस बात का भी बन्दोबस्त कर रक्खा गया था कि

कोई किसी के साथ दुश्मनी का बर्ताव न कर सके। महाराज सुरेन्द्रसिंह बीरेन्द्रसिंह और दोनों कुमारों के कमरे के आगे पहरे का पूरा पूरा इन्तजाम था और हमारे ऐयार लोग भी बराबर चौकन्ने रहा करते थे।

यद्यपि भूतनाथ एकान्त में बैठा हुआ अपनी स्त्री से बातें कर रहा था मगर यह बात इन्द्रदेव और देवीसिंह से छिपी हुई न थी जो इस समय बगीचे में टहलते हुए बातें कर रहे थे। इन दोनों को देखते ही देखते नानक भूतनाथ की तरफ गया और लौट आया, इसके बाद भूतनाथ की स्त्री अपने डेरे पर चली गई और फिर रामदेई अर्थात् नानक की माँ भूतनाथ की तरफ जाती हुई दिखाई पड़ी। उस समय इन्द्रदेव ने देवीसिंह से कहा, 'सिंहजी! देखिये भूतनाथ अपनी पहिली स्त्री से बातचीत कर चुका है, अब उसने नानक की माँ को अपने पास बुलाया है। शान्ता की जुबानी उसकी खुटाई का हाल तो उसे जरूर मालूम हो ही गया होगा, इसलिये ताज्जुब नहीं कि वह गुस्से में आकर रामदेई के हाथ पैर तोड़ डाले!"

देवी०। ऐसा हो तो कोई ताज्जुब की बात नहीं है, मगर उस औरत ने भी तो सजा पाने ही लायक काम किया है।

इन्द्र०। ठीक है, मगर इस समय उसे बचाना चाहिये।

देवी०। तो जाइये वहाँ छिप कर तमाशा देखिये और मौका पड़ने पर उसकी सहायता कीजिएगा। (मुस्कुरा कर) आप ही आग लगाते हैं और आप ही बुझाने दौड़ते है!!

इन्द्र०। (हँस कर) आप तो दिल्लगी करते हैं!!

देवी०। दिल्लगी काहे की, क्या आपने उसे गिरफ्तार नहीं कराया है और अगर गिरफ्तार कराया है तो क्या इनाम देने के लिए?

इन्द्र०। (मुस्कुराते हुए) तो आपकी राय है कि इसी समय उसकी मरम्मत की जाय!!

देवी०। चाहिए तो ऐसा ही! जी में आवे तो तमाशा देखने चलिए। कहिये तो मैं भी आपके साथ चलूँ।

इन्द्र०। नहीं नहीं, ऐसा न होना चाहिये। भूतनाथ आपका दोस्त है और अब तो नातेदार भी है। आप ऐसे मौके पर उसके सामने जा सकते हैं। जाइये

और उसे बचाइए, मेरा जाना मुनासिब न होगा।

देवी०। (हँस कर) तो आप चाहते हैं कि मैं भी भूतनाथ के हाथ से दो एक धूँसे खा लूँ? अच्छा साहब, जाता हूँ. आपका हुक्म कैसे टालूँ, आज आपने बड़ी बड़ी बातें मुझे सुनाई हैं इसलिये आपका अहसान भी तो मानना होगा!

इतना कहते हुए देवीसिंह पेड़ों की आड़ देते हुए भूतनाथ की तरफ रवाना हुए और जब ऐसी जगह पहुँचे जहां से उन दोनों की बातें बखूबी सुन सकते थे तब एक चट्टान पर बैठ गये और सुनने लगे कि वे दोनों क्या बातें करते हैं।

भूत०। खैर अच्छा ही हुआ जो तुम यहां तक आ गईं, मुझसे मुलाकात भी हो गई और मैं 'लामाघाटी' तक जाने से बच गया। मगर यह तो बताओ कि अपनी सहेली 'नन्हों' को यहां तक क्यों न लेती आईं, मैं भी जरा उससे मिल के अपना कलेजा ठण्ढा कर लेता?

रामदेई०। नन्हों बेचारी पर क्यों आक्षेप करते हो, उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? और वह यहां आती ही काहे को? क्या तुम्हारी लौंड़ी थी? व्यर्थ ही एक आदमी को बदनाम और दिक करने के लिये लोग टूटे पड़ते हैं!!

भूत०। (उमड़ते हुए गुस्से को दबा कर) छीः छीः, वह बेचारी हमारी लौंडी क्यों होने लगी, लौंडी तो तुम उसकी थीं जो झख मारने के लिये उसके घर गई थीं!

रामदेई०। (आँचल से आंसू पोंछती हुई) अगर मैं उसके यहां गई तो क्या पाप किया? मैं पहिले ही नानक से कहती थी कि जाकर पूछ आओ तब मैं नन्हों के यहां जाऊँ नहीं तो कहीं व्यर्थ ही बात का बतंगड़ न बन जाय, मगर लड़के ने न माना और आखिर वही नतीजा निकला। बदमाशों ने वहां पहुँच कर उसे भी बेइज्जत किया और मुझे भी बेइज्जत करके यहाँ तक घसीट लाये, उसके सिर झूठे ही कलंक थोप दिया कि वह बेगम की सहेली है।

इतना कह कर रामदेई नखरे के साथ रोने लगी।

भूत०। तुमने पहिले भी कभी उसका जिक्र मुझसे किया था कि वह तुम्हारी नातेदार है, या मुझसे पूछ कर कभी उसके यहां गई थीं?

रामदेई०। एक दफे गई सो तो यह गति हुई, और जाती तो न मालूम क्या होता!!

भूत० । जो लोग तुझे यहां ले आये हैं वे बदमाश थे ?

रामदेई० । बदमाश तो कहे ही जायँगे । जो व्यर्थ दूसरों को दुःख दे वही बदमाश होते हैं और क्या बदमाशों के सिर सींग होती है ? तुम्हारी अक्ल पर तो पत्थर पड़ गया है कि जो लोग तुम्हारी बेइज्जती पर बेइज्जती किये ही जाते हैं उन्हीं के लिये तुम जान दे रहे हो ! न मालूम तुम्हें ऐसी क्या गरज पड़ी हुई है !

भूत० । ठीक है ठीक है, यही राय लेने के लिये तो मैंने तुम्हें यहां एकान्त में बुलाया है । अगर तुम्हारी राय होगी तो मैं देखते देखते इन लोगों से बदला ले लूँगा, क्या मैं कमजोर या दब्बू हूँ ?

रामदेई० । जरूर बदला लेना चाहिये, अगर तुम ऐसा न करोगे तो मैं समझूँगी कि तुमसे बढ़ कर कर्मीना कोई नहीं है !

इतना सुन कर भूतनाथ को बेहिसाब क्रोध चढ़ आया मगर फिर भी उसने अपने क्रोध को दबाया और कहा—

भूत० । अच्छा तो अब मैं ऐसा ही करूँगा, मगर यह तो बताओ कि शेर की लड़की 'गौहर' से तुमसे क्या नाता है ?

रामदेई० । उस मुसलमानिन से मुझसे क्या नाता होगा ? मैंने तो कभी उसकी सूरत भी नहीं देखी ।

भूत० । लोग तो कहते हैं कि तुम उसके यहां भी जाती आती हो और मेरे बहुत से भेद तुमने उसे बता दिये हैं !!

रामदेई० । सब झूठ है ! ये लोग बात लगाने वाले जैसे ही धूर्त और पाजी हैं वैसे ही तुम सीधे और बेवकूफ हो !!

अब भूतनाथ अपने गुस्से को बर्दाश्त न कर सका और उसने एक चपत रामदेई के गाल पर ऐसी जमाई कि वह तलमला कर जमीन पर लेट गई मगर उसे चिल्लाने का साहस न हुआ । कुछ देर बाद वह उठ बैठी और भूतनाथ का मुँह देखने लगी ।

भूत० । कमीनी ! हरामजादी । जिनके लिये मैं जान तक देने को तैयार हूँ उन्हीं लोगों की शान में तूँ ऐसी बातें कह रही है जो एक पराये को भी कहना उचित नहीं है और जिसे मैं एक सायत के लिये भी बर्दाश्त नहीं कर सकता । ले समझ ले और कान खोल कर सुन ले कि तेरे हाथ की लिखी वह चीठी मुझे

मिल गई है जो तूने चाँद वाले दिन गौहर के यहाँ मिलने के लिये नन्हों के पास भेजी थी और जिसमें तूने अपना परिचय 'करौंदा की छैंये छैंये' दिया था ! बस इसी से समझ ले कि तेरी सब कलई खुल गई और तेरी सब बेईमानी लोगों को मालूम हो गई। अब तेरा नखरे के साथ रोना और बातें बना कर अपने को बेकसूर साबित करना व्यर्थ है। अब तेरी मुहब्बत एक रत्ती बराबर मेरे दिल में नहीं रह गई और मैं तुझे उस जहरीली नागिन से भी हजार दर्जे बढ़ के समझने लग गया जिसे खूबसूरत होने पर भी कोई हाथ से छूने तक का साहस नहीं कर सकता। मुझे आज इस बात का सख्त रञ्ज है कि मैंने तुझे इतने दिन तक प्यार किया और इस बात की तरफ कुछ भी ध्यान न दिया कि उस मुहब्बत ऐयाशी और शौक का नतीजा एक न एक दिन जरूर भयानक होता है जिसे छिपाने की जरूरत समझी जाती है और जिसका जाहिर होना शर्मिन्दगी और बेहयाई का सबब समझा जाता है। मुझे इस बात का अफसोस है कि तुझसे अनुचित सम्बन्ध रख कर मैंने उस उचित सम्बन्ध वाली का साथ छोड़ दिया जिसकी जूतियों की बराबरी भी तू नहीं कर सकती या यों कहना चाहिये कि तेरे शरीर का चमड़ा जिसकी जूतियों में भी देखना मैं पसन्द नहीं कर सकता। मुझे इस बात का दुःख है कि नागर या मायारानी के कब्जे से तुझे छुड़ाने के लिए मैंने तरह तरह के ढोंग रचे और इसका दम भर के लिये भी विचार न किया कि मैं उस क्षई रोग को पुनः अपनी छाती से लगाने का प्रबन्ध कर रहा हूँ जिसे पहिली ही अवस्था में ईश्वर की कृपा ने मुझसे अलग कर दिया था। ये बातें तू अपने ही लिये न समझ बल्कि अपने जाये नानक के लिये भी समझ कर मेरे सामने से उठ जा और उससे भी कह दे कि आज से मेरे सामने आ कर मेरी जूतियों का शिकार न बने। यदि मेरे पुराने विचार न बदल गये होते और उन दिनों की तरह आज भी मैं पाप को पाप न समझता होता तो आज तेरी खाल खिंचवा कर नमक और मिर्च का उपटन लगवा देता मगर खैर अब इतना ही कहता हूँ कि मेरे सामने से उठ जा और फिर कभी अपना काला मुँह मुझे मत दिखाइयो। जिस कुल को तू पहिले कलंक लगा चुकी है अब भी उसी कुल की बदनामी की सबब बन कर दुनिया की हवा खा।

रामदेई के पास भूतनाथ की बातों का कोई जवाब न था। वह अपनी

पुरानी चीठी का सच्चा परिचय सुन कर बदहवास हो गई और समझ गई कि उसके अच्छे नसीबे के पहिये की धुरी टूट गई जिसे वह किसी तरह भी बना नहीं सकती। वह अपने धड़कते हुए कलेजे और काँपते हुये बदन के साथ भूतनाथ की बातें सुनती रही और अन्त में उठने का साहस करने पर भी अपनी जगह से न हिल सकी मगर भूतनाथ वहां से उठ खड़ा हुआ और बँगले की तरफ चल पड़ा। थोड़ी ही दूर गया होगा कि देवीसिंह से मुलाकात हुई जिसने इसका हाथ पकड़ लिया और कहा, "भूतनाथ! शाबाश शाबाश!! जो कुछ नेक और बहादुर आदमियों को करना चाहिये, इस समय तुमने वही किया मैं छिप कर तुम्हारी सब बातें सुन रहा था। अगर तुम कोई बेजा काम करना चाहते तो मैं तुम्हें जरूर रोकता मगर ऐसा करने का मौका न हुआ जिससे मैं बहुत ही खुश हूँ। अच्छा जाओ अपने कमरे में आराम करो, मै इन्द्रदेव के पास जाता हूँ।"

आठवां बयान

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी है। एक सुन्दर सजे हुए कमरे में राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव बैठे हैं और उनके सामने नानक हाथ जोड़े बैठा दिखाई देता है।

गोपाल०। (नानक से) ठीक है, यद्यपि उन बातों में तुमने अपनी तरफ से कुछ नमक मिर्च जरूर लगाई होगी मगर फिर भी मुझे कोई ऐसी बात नहीं जान पड़ती जिससे भूतनाथ को दोषी ठहराऊँ। उसने जो कुछ तुम्हारी माँ से कहा सच कहा और उसके साथ जैसा बर्ताव किया वह उचित ही था। इस विषय में मैं भूतनाथ को कुछ भी नहीं कह सकता और न अब तुम्हारी बातों पर भरोसा ही कर सकता हूँ। बड़े अफसोस की बात है कि मेरी नसीहत ने तुम्हारे दिल पर कुछ भी असर न किया * और अगर कुछ किया भी तो वह चार दिन बाद जाता रहा। अगर तुम अपनी माँ के साथ नन्हों के मकान में गिरफ्तार न हुए होते तो कदाचित मैं तुम्हारे धोखे में आ जाता मगर अब मैं किसी तरह भी तुम्हारा साथ नहीं दे सकता।

नानक०। मगर आप मेरा कसूर माफ कर चुके हैं और.....

* देखिये उन्नीसवाँ हिस्सा तीसरा बयान।

इन्द्र० । (नानक से) अगर तुम उस माफी को पाकर खुश हुए थे तो फिर पुराने रास्ते पर क्यों गये और पुनः अपनी मां को लेकर नन्हों के पास क्यों पहुँचे ? तुम्हें बात करते शर्म नहीं आती !!

गोपाल० । फिर भी मैं अपनी जुबान (माफी) का ख्याल करूँगा और तुम्हें किसी तरह की तकलीफ न दूँगा, मगर अब भूतनाथ की तरह मैं भी तुम्हारी सूरत देखना पसन्द नहीं करता और न भूतनाथ को इस विषय में कुछ कहना चाहता हूँ । इन्द्रदेव ने तुम्हारे साथ इतनी ही रेयायतकी सो बहुत किया कि तुमको यहां से निकल जाने की आज्ञा दे दी नहीं तो तुम इस लायक थे कि जन्म भर कैद में पड़े सड़ा करते ।

नानक० । जो आज्ञा, मगर मेरे पिता से इतना तो दिला दीजिये कि मेरी मां जन्म भर खाने पीने की तरफ से बेफिक्र रहे ।

इन्द्र० । अबे कमीने ! तुझे यह कहते शर्म नहीं मालूम होती ! इतना बड़ा होके भी तू अपनी मां के लायक दाना पानी नहीं जुटा सकता ? खैर अब तुझे आखिरी मर्तबे कहा जाता है कि अब हम लोगों से किसी तरह की उम्मीद न रख और अपनी मां को साथ लेकर यहां से चला जा, भूतनाथ ने भी मुझे ऐसा ही कहने के लिए कहला भेजा है ।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने ताली बजाई और साथ ही अपने ऐयार सर्यू-सिंह को कमरे के अन्दर आते देखा ।

इन्द्र० । (सर्यू से) भूतनाथ कहां है ?

सर्यू० । नम्बर पांच के कमरे में देवीसिंहजी से बातें कर रहे हैं, वे दोनों यहां आये भी थे मगर यह सुन कर कि नानक यहां बैठा हुआ है, पिछले पैर लौट गये ।

इन्द्र० । अच्छा तुम जाओ और उन्हें यहां बुला लाओ ।

सर्यूसिंह० । जो आज्ञा परन्तु मुझे आशा नहीं है कि वे लोग नानक के रहते यहां आवेंगे ।

इन्द्र० । अच्छा तो मैं खुद जाता हूँ ।

गोपाल० । हाँ तुम्हारा ही जाना ठीक होगा, देवीसिंहजी को भी बुलाते लाना ।

इन्द्रदेव उठ कर चले गये और थोड़ी ही देर में भूतनाथ तथा देवीसिंह को साथ लिए हुए आ पहुँचे ।

गोपाल०। (भूतनाथ से) क्यों साहब! आप यहां तक आ कर लौट क्यों गये?

भूतनाथ०। यों ही, मैंने समझा कि आप लोग किसी खास बातों में लगे हुए हैं।

गोपाल०। अच्छा बैठिये और एक बात का जवाब दीजिये।

भूत०। कहिये?

गोपाल०। रामदेई और नानक के बारे में आप क्या हुक्म देते हैं?

भूत०। महाराज ने क्या आज्ञा दी है?

गोपाल०। उन्होंने इनका फैसला आप ही के ऊपर छोड़ा है।

भूत०। फिर जो राय आप लोगों की हो, मैंने तो इन दोनों के बारे में इसकी माँ को हुक्म सुना ही दिया है।

गोपाल०। इनके कसूर तो आप सुन ही चुके होंगे।

भूत०। पिछले कसूरों को तो मैं सुन ही चुका हूँ, हाँ नया कसूर सिर्फ इतना ही मालूम हुआ है कि ये दोनों नन्हो के यहां गिरफ्तार हुए हैं।

गोपाल०। इसके अतिरिक्त एक बात और है।

भूत०। वह क्या?

गोपाल०। यही कि ये दोनों अगर खाली हाथ न होते तो बेचारी शान्ता को जान से मार डालते।

इतने ही में नानक बोल उठा, "नहीं नहीं, यह आपके जासूसों ने हमारे ऊपर झूठा इलजाम लगाया है!"

भूत०। अगर यह बात है तो मैं इसे हथकड़ी बेड़ी से खाली क्यों देखता हूँ?

इन्द्रदेव०। इसीलिये कि हमारे हाते के अन्दर ये लोग कुछ कर नहीं सकते। जब ये लोग यहां गिरफ्तार होकर आये तो कुछ दिन तक तो भलमनसी के साथ रहे मगर आज इनकी नीयत बिगड़ी हुई मालूम पड़ी।

भूतनाथ०। खैर, अब आप ही इनके लिए हुक्म सुनाइये। मगर इन्द्रदेव! आप यह न समझियेगा कि इन लोगों के बारे में मुझे किसी तरह का रञ्ज है। मैं सच कहता हूँ कि इन दोनों का यहाँ आना मेरे लिए बहुत अच्छा हुआ। मैं इन लोगों के फेर में बेतरह फँसा हुआ था। आज मालूम हुआ कि ये लोग जहर हलाहल से भी बढ़े हुए हैं, अस्तु आज इन लोगों से पीछा छुड़ा कर मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ। मेरे सिर से बोझा उतर गया और अब मेरी जिन्दगी

खुशी के साथ बीतेगी। आप का कहना सच निकला अर्थात् इनका यहां आना मेरे लिये खुशी का सबब हुआ।

इन्द्रदेव०। अच्छा यह बताइये कि ये अगर इसी तरह छोड़ दिये जाएँ तो आपके खजाने को तो किसी तरह का नुकसान नहीं पहुँचा सकते 'लामा-घाटी' के अन्दर है?

भूत०। कुछ भी नहीं, और 'लामाघाटी' के अन्दर जेवरों के अतिरिक्त और कुछ है भी नहीं, सो जेवरों को मैं वहां से मँगवा ले सकता हूँ।

इन्द्रदेव०। अगर सिर्फ नानक की मां के जेवरों से आपका मतलब है तो वह अब मेरे कब्जे में है क्योंकि नन्हों के यहां वह बिना जेवरों के नहीं गई थी।

भूतनाथ०। बस तो मैं उस तरफ से भी बेफिक्र हो गया, यद्यपि उन जेवरों की मुझे कोई परवाह नहीं है मगर उसके पास मैं एक कौड़ी भी नहीं छोड़ा चाहता। इसके अतिरिक्त यह भी जरूर कहूँगा कि अब ये लोग सूखा छोड़ देने लायक नहीं रहे।

इन्द्रदेव०। खैर जैसी राय होगी वैसा ही किया जायगा।

इतना कह कर इन्द्रदेव ने पुनः सर्यूसिंह को बुलाया और जब वह कमरे के अन्दर आ गया तो कहा—"थोड़ी देर के लिये नानक को बाहर ले जाओ।"

नानक को लिये हुये सर्यूसिंह कमरे के बाहर चला गया और इसके बाद चारो आदमी विचार करने लगे कि नानक और उसकी मां के साथ क्या बर्ताव करना चाहिये। देर तक सोच विचार कर यही निश्चय किया गया कि उन दोनों को देश से निकाल दिया जाय और कह दिया जाय कि जिस दिन हमारे महाराज की अमलदारी में दिखाई दोगे उसी दिन मार डाले जाओगे।"

इस हुक्म पर महाराज से आज्ञा लेने की इन लोगों को कोई जरूरत न थी क्योंकि उन्होंने सब बातें सुन सुना कर पहिले ही हुक्म दे दिया था कि भूतनाथ की आज्ञानुसार काम किया जाय, अस्तु नानक कमरे के अन्दर बुलाया गया और इसके बाद रामदेई भी बुलाई गई। जब दोनों इकट्ठे हो गये तो उन्हें हुक्म सुना दिया गया।

यह हुक्म यद्यपि साधारण मालूम होता है मगर उन दोनों के लिये ऐसा न था कि जिन्हें भूतनाथ की बदौलत शाहखर्ची की आदत पड़ गई थी।

नानक और रामदेई की आंखों से आँसू जारी था जब इन्द्रदेव ने सर्यूसिंह को हुक्म दिया कि चार आदमी इन दोनों को ले जायँ और महाराज की सरहद के बाहर कर आवें सर्यूसिंह दोनों को लिये हुए कमरे के बाहर निकल गया।

भूत०। सिर से बोझ उतरा और कम्बख्तों से पीछा छूटा, अच्छा अब बताइये कि कल क्या क्या होगा।

गोपाल०। महाराज ने तो यही हुक्म दिया है कि कल यहां से डेरा कूच किया जाय और तिलिस्म की सैर करते हुए चुनारगढ़ पहुँचें, चम्पा शान्ता हरनामसिंह भरतसिंह और दलीपशाह वगैरह बाहर की राह से चुनार भेज दिये जायँ, यदि हमारे किसी ऐयार की भी इच्छा हो तो उनके साथ चला जाय।

भूतनाथ०। ऐसा कौन बेवकूफ होगा जो तिलिस्म की सैर छोड़ उनके साथ जायगा!

देवीसिंह०। सभी कोई ऐसा कहते हैं।

भूतनाथ०। हां यह तो बताइये कि मैंने नानक को जब दरबार में देखा था तो उसके हाथ में एक लपेटी तस्वीर थी, अब वह तस्वीर कहां है और उसमें क्या बात थी?

इन्द्रदेव०। वह कागज जिसे आप तस्वीर समझे हुए हैं मेरे पास है, मैं आपको दिखाऊँगा। असल में वह तस्वीर नहीं है बल्कि उसने एक बहुत बड़ी दर्खास्त लिख कर तैयार की थी जो दर्बार में आ के पेश किया चाहता था, मगर ऐसा कर न सका।

भूत०। उसमें लिखा क्या था?

इन्द्रदेव०। जो लोग उसे गिरफ्तार कर लाये हैं उनकी शिकायत के सिवाय और कुछ भी नहीं। साथ ही इसके उस दर्खास्त में इस बात पर बहुत जोर दिया गया था कि कमला की मां वास्तव में मर गई है और आज जिस शान्ता को सब कोई देख रहे हैं वह वास्तव में नकली है।

भूत०। वाह रे शैतान! (कुछ सोच कर) तो शायद वह दर्खास्त महाराज के हाथ तक नहीं पहुँची?

इन्द्र०। क्यों नहीं, मैंने जान बूझ कर उसे ऐसा करने का मौका दिया। वह रात को पहरे वालों से इत्तला करा कर खुद महाराज के पास पहुँचा और

उनके सामने वह दर्खास्त रख दी। उस समय महाराज ने मुझे बुलाया और मुझी को वह दर्खास्त पढ़ने के लिए दी गई उसे सुन कर महाराज ने मुस्कुरा दिया और इशारा किया कि वह कमरे के बाहर निकाल दिया जाय क्योंकि इसके पहले मैं शान्ता और हरनामसिंह का पूरा पूरा हाल महाराज से अर्ज कर चुका था।

भूत०। अच्छा मुझे भी वह दर्खास्त दिखाइयेगा।

इन्द्र०। (उँगली से इशारा करके) वह कारनिस के ऊपर पड़ी हुई है, देख लीजिये।

भूतनाथ ने दर्खास्त उतार कर पढ़ी और इसके बाद कुछ देर तक उन लोगों में बातचीत होती रही।

नौवाँ बयान

सुबह का सोहावना समय सब जगह एक सा नहीं मालूम होता, घर की खिड़कियों में से उसका चेहरा कुछ और ही दिखाई देता है और बाग में उसकी कैफियत कुछ और ही मस्तानी होती है, पहाड़ में उसकी खूबी कुछ और ही ढङ्ग की दिखाई देती है और जङ्गल में उसकी छटा कुछ निराली ही होती है। आज इन्द्रदेव के इस अनूठे स्थान में इसकी खूबी सबसे चढ़ी बढ़ी है, क्योंकि यहाँ जंगल भी है, पहाड़ भी, अनूठा बाग तथा सुन्दर बँगला या कोठी भी है, फिर यहाँ के आनन्द का पूछना ही क्या! इसीलिए हमारे महाराज, कुँअर साहब और ऐयार लोग भी यहां घूम घूम कर सुबह के सोहावने समय का पूरा आनन्द ले रहे हैं, खास करके इसलिए कि आज ये लोग यहां से डेरा कूच करने वाले हैं।

बहुत देर तक घूमने फिरने के बाद सब कोई बाग में आकर बैठे और इधर उधर की बातें होने लगीं।

जीत०। (इन्द्रदेव से) भरतसिंह वगैरह तथा औरतों को आपने चुनार रवाना कर दिया?

इन्द्र०। जी हां, बड़े सवेरे ही उन लोगों को बाहर की राह से रवाना कर दिया और औरतों के लिये सवारी का इन्तजाम कर देने के अतिरिक्त अपने दस पन्द्रह मातबिर आदमी भी साथ कर दिए हैं।

जीत०। तो अब हमलोग भी कुछ भोजन करके यहां से रवाना हुआ चाहते हैं।

इन्द्रदेव० । जैसी मर्जी ।

जीत० । भैरो और तारा तो आपके साथ यहाँ आए थे कहां चले गये ? दिखाई नहीं पड़ते ।

इन्द्रदेव० । अब भी मैं उन्हें अपने साथ ही ले जाने की आज्ञा चाहता हूँ क्योंकि उनके मदद की मुझे जरूरत है ।

जीत० । तो क्या आप हम लोगों के साथ न चलेंगे ?

इन्द्र० । जी हां उस बाग तक तो जरूर साथ चलूँगा जहां से मैं आप लोगों को यहां तक ले आया हूँ, पर उसके बाद गुप्त हो जाऊँगा क्योंकि मैं आपको कुछ तिलिस्मी तमाशे दिखाया चाहता हूँ और इसके अतिरिक्त उन चीजों को भी तिलिस्म के अन्दर से निकलवा कर चुनार पहुँचाना है जिनके लिए आज्ञा मिल चुकी है ।

सुरेन्द्र० । नहीं नहीं, गुप्त रीति पर हम तिलिस्म का तमाशा नहीं देखा चाहते, हमारे साथ रह कर जो कुछ दिखा सको दिखा दो, बाकी रहा उन चीजों को निकलवा कर चुनार पहुँचाना, सो यह काम दो दिन के बाद भी होगा तो कोई हर्ज नहीं है ।

इन्द्र० । जैसी आज्ञा ।

इतना कह कर इन्द्रदेव थोड़ी देर के लिये कहीं चले गए और तब भैरोसिंह तथा तारासिंह को साथ लिए आकर बोला, "भोजन तैयार है ।"

सब कोई वहां से उठे और भोजन इत्यादि से छुट्टी पा कर तिलिस्म की तरफ रवाना हुए । जिस तरह इन्द्रदेव इन लोगों को अपने स्थान में ले आये थे उसी तरह पुनः उस तिलिस्मी बाग में ले गये जिसमें से लाये थे ।

जब महाराज सुरेन्द्रसिंह वगैरह उस बारहदरी में पहुँचे जिसमें पहिले दिन आराम किया था और जहां बाजे की आवाज सुनी थी तब दिन पहर भर से कुछ ज्यादे बाकी था । जीतसिंह ने इन्द्रदेव से पूछा—"अब क्या करना चाहिये ?"

इन्द्रदेव० । यदि महाराज आज की रात यहां रहना पसन्द करें तो एक दूसरे बाग में चल कर वहां की कुछ कैफियत दिखाऊँगा ?

जीत० । बहुत अच्छी बात है, चलिये ।

इतना सुन कर इन्द्रदेव ने उस बारहदरी की कई आलमारियों में से एक

आलमारी खोली और उसके अन्दर जाकर सभों को अपने पीछे आने का इशारा किया। यहां एक गली की तौर पर रास्ता बना हुआ था जिसमें सब कोई इन्द्रदेव की इच्छानुसार बेखौफ चले गए और थोड़ी दूर जाने बाद जब इन्द्रदेव ने दूसरा दर्वाजा खोला तब उसके बाहर होकर सभों ने अपने को एक छोटे बाग में पाया जिसकी बनावट कुछ विचित्र ही ढङ्ग की थी। यह बाग जङ्गली पौधों की सब्जी से हरा भरा था और पानी का चश्मा भी बह रहा था मगर चारदीवारी के अतिरिक्त और किसी तरह की बड़ी इमारत इसमें न थी, हां बीच में एक बहुत बड़ा चबूतरा जरूर था जिस पर धूप और बरसाती पानी के बचाव के लिये सिर्फ मोटे मोटे बारह खम्भों के सहारे पर छत बनी हुई थी और चबूतरे पर चढ़ने के लिए चारो तरफ सीढ़ियां थीं।

यह चबूतरा कुछ अजीब ढंग का बना हुआ था। लगभग चालीस हाथ के चौड़ा और इतना ही लम्बा होगा। इसके फर्श में लोहे की बारीक नालियां जाल की तरह जड़ी हुई थीं और बीच में एक चौखूटा स्याह पत्थर इस अन्दाज का जड़ा हुआ था जिस पर चार आदमी बैठ सकते थे। बस इसके अतिरिक्त इस चबूतरे में और कुछ भी न था।

थोड़ी देर तक सब कोई उस चबूतरे की बनावट देखते रहे, इसके बाद इन्द्रदेव ने महाराज से कहा, "तिलिस्म बनाने वालों ने यह बगीचा केवल तमाशा देखने के लिए बनाया था। यहां की कैफियत आपके साथ रह कर मैं नहीं दिखा सकता, हां यदि आप मुझे दो तीन पहर की छुट्टी दें तो.....

इन्द्रदेव की बात महाराज ने मञ्जूर कर ली और तब वह (इन्द्रदेव) सभों के देखते देखते चौखूटे पत्थर के ऊपर चले गये जो चबूतरों के बीच में जड़ा हुआ था। सवार होने के साथ ही वह पत्थर हिला और इन्द्रदेव को लिए हुए जमीन के अन्दर चला गया मगर थोड़ी देर में पुनः ऊपर चला आया और अपने ठिकाने पर ज्यों का त्यों बैठ गया लेकिन इस समय इन्द्रदेव उस पर न थे।

इन्द्रदेव के चले जाने बाद थोड़ी देर तक तो सब कोई उस चबूतरे पर खड़े रहे, इसके बाद धीरे धीरे वह चबूतरा गरम होने लगा और वह गर्मी यहां तक बढ़ी कि लाचार उन सभों को चबूतरा छोड़ देना पड़ा, अर्थात् सब कोई चबूतरे के नीचे उतर आए और बाग में टहलने लगे। इस समय दिन घण्टे

भर से कुछ कम बाकी था।

इस खयाल से कि देखें इस बाग की दीवार किस ढंग की बनी हुई है, सब कोई घूमते हुए पूरब तरफ वाली दीवार के पास जा पहुँचे और गौर से देखने लगे मगर कोई अनूठी बात दिखाई न दी। इसके बाद उत्तर तरफ वाली और फिर पश्चिम तरफ वाली दीवार को देखते हुए सब कोई दक्खिन तरफ गए और उधर की दीवार को आश्चर्य के साथ देखने लगे क्योंकि इसमें कुछ विचित्रता जरूर थी।

यह दीवार शीशे की मालूम होती थी और इसमें महाभारत की तस्वीरें बनी हुई थीं। ये तस्वीरें उस ढंग की थीं जैसी उस तिलिस्मी बंगले में चलती फिरती तस्वीरें इन लोगों ने देखी थीं। ये लोग इन तस्वीरों को बड़ी देर तक देखते रहे और सभों को विश्वास हो गया कि जिस तरह उस बँगले वाली तस्वीरों को चलते फिरते और काम करते हमलोग देख चुके हैं उसी तरह इन तस्वीरों को भी देखेंगे क्योंकि दीवार पर हाथ फेरने से साफ मालूम होता था कि तस्वीरें शीशे के अन्दर हैं।

इन तस्वीरों को देखने से महाभारत की लड़ाई का जमाना आंखों के सामने फिर जाता था। कौरवों और पाण्डवों की फौज, बड़े बड़े सेनापति, तथा रथ हाथी घोड़े इत्यादि जो कुछ बने थे सभी अच्छे और दिल पर असर पैदा करने वाले थे। 'इस लड़ाई की नकल अपनी आंखों से देखेंगे।' इस विचार से सब कोई प्रसन्न थे। बड़ी दिलचस्पी के साथ उन तस्वीरों को देख रहे थे, यहां तक कि सूर्य अस्त हो गया और धीरे धीरे अन्धकार ने चारों तरफ अपना दखल जमा लिया। उस समय यकायक दीवार चमकने लगी और तस्वीरों में हरकत पैदा हुई जिससे सभों ने समझा कि नकली लड़ाई हुआ ही चाहती है मगर कुछ ही देर बाद लोगों का यह विश्वास ताज्जुब के साथ बदल गया जब यह देखा कि उसमें की तस्वीरें एक एक करके गायब हो रही हैं यहां तक कि घड़ी भर के अन्दर ही सब तस्वीरें गायब हो गईं और दीवार साफ दिखाई देने लगी। इसके बाद दीवार की चमक भी बन्द हो गई और फिर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देने लगा।

थोड़ी देर बाद उस चबूतरे की तरफ रोशनी मालूम हुई। यह देख कर

सब कोई उसी तरफ रवाना हुए और जब उसके पास पहुँचे तो देखा कि उस चबूतरे की छत में जड़े हुए शीशे के दस बारह टुकड़े इस तेजी के साथ चमक रहे हैं कि जिसमें केवल चबूतरा ही नहीं बल्कि तमाम बाग उजाला हो रहा है। इसके अतिरिक्त सैकड़ों मूरतें भी उस चबूतरे पर इधर उधर चलती फिरती दिखाई दीं। गौर करने से मालूम हुआ कि ये मूरतें (या तस्वीरें) बेशक वे ही हैं जिन्हें उस दीवार के अन्दर देख चुके हैं। ताज्जुब नहीं कि वह दीवार इन सभों का खजाना हो और वही यहां इस चबूतरे पर आ कर तमाशा दिखाती हो।

इस समय जितनी मूरतें उस चबूतरे पर थीं सब अर्जुन के पुत्र अभिमन्यु की लड़ाई से सम्बन्ध रखती थीं। जब उन मूरतों ने अपना काम शुरू किया तो ठीक अभिमन्यु की लड़ाई का तमाशा आंखों के सामने दिखाई देने लगा। जिस तरह कौरवों के रचे हुए व्यूह के अन्दर फँस कर कुमार अभिमन्यु ने वीरता दिखाई थी और अन्त में अधर्म के साथ जिस तरह वह मारा गया था उसी को आज नाटक स्वरूप में देख कर सब कोई बड़े प्रसन्न हुए और सभों के दिलों पर बहुत देर तक इसका असर रहा।

इस तमाशे का हाल खुलासे तौर पर हम इसलिसे नहीं लिखते कि इसकी कथा बहुत प्रसिद्ध है। और महाभारत में विस्तार के साथ लिखी है।

यह तमाशा थोड़ी ही देर में खतम नहीं हुआ बल्कि देखते देखते तमाम रात बीत गई। सवेरा होने के कुछ देर पहिले अन्धकार हो गया और उसी अन्धकार में सब मूरतें गायब हो गईं। उजाला होने और आंखें ठहरने पर जब सभों ने देखा तो उस चबूतरे पर सिवाय इन्द्रदेव के और कुछ भी दिखाई न दिया।

इन्द्रदेव को देख कर सब कोई प्रसन्न हुए और साहब सलामत के बाद इस तरह बात चीत होने लगी :—

इन्द्रदेव०। (चबूतरे से नीचे उतर कर और महाराज के पास आ कर) मैं उम्मीद करता हूँ कि इस तमाशे को देख कर महाराज प्रसन्न हुए होंगे।

महाराज०। बेशक! क्या इसके सिवाय और भी कोई तमाशा यहाँ दिखाई दे सकता है?

इन्द्रदेव०। जी हां यहां पूरा महाभारत दिखाई दे सकता है, अर्थात् महा-

भारत ग्रन्थ में जो कुछ लिखा है वह सब इसी ढंग पर और इसी चबूतरे पर आप देख सकते हैं मगर दो चार दिन में नहीं बल्कि महीनों में, इसके साथ ही साथ बनाने वालों ने इसकी तर्कीब रक्खी है कि चाहे शुरू ही से वह तमाशा दिखलाया जाय या बीच ही से कोई टुकड़ा दिखा दिया जाय अर्थात् महाभारत के अन्तर्गत जो कुछ चाहें देख सकते हैं।

महाराज०। इच्छा तो बहुत कुछ देखने की थी मगर इस समय हम लोग यहां ज्यादे रुक नहीं सकते अस्तु फिर कभी जरूर देखेंगे। हां हमें इस तमाशे के विषय में कुछ समझाओ तो सही कि यह काम क्यों कर हो सकता है और तुमने यहां से कहां जा कर क्या किया?

इन्द्रदेव ने इस तमाशे का पूरा पूरा भेद सभों को समझाया और कहा कि ऐसे ऐसे कई तमाशे इस तिलिस्म में भरे पड़े हैं, अगर आप चाहें तो इस काम में वर्षों बिता सकते हैं, इसके अतिरिक्त यहां की दौलत का भी यही हाल है कि वर्षों तक ढोते रहिये फिर भी कमी न हो, सोने चांदी का तो कहना ही क्या है, जवाहिरात भी आप जितने चाहें ले सकते हैं, सच तो यों है कि जितनी दौलत यहां है उसके रखने का ठिकाना भी यहीं हो सकता है। इस बागीचे के पास ही पास और भी चार बाग हैं, शायद उन सभों में घूमना और वहाँ के तमाशों को देखना इस समय आप पसन्द न करें.....

महा०। बेशक इस समय हम इन सब तमाशों में समय बिताना पसन्द नहीं करते। सब से पहिले शादी व्याह के काम से छुट्टी पाने की इच्छा लगी हुई है मगर इसके बाद पुनः एक दफे इस तिलिस्म में आ कर यहाँ की सैर जरूर करेंगे।

कुछ देर तक इसी किस्म की बातें होती रहीं, इसके बाद इन्द्रदेव सभों को पुनः उसी बाग में ले आये जिसमें उनसे मुलाकात हुई थी या जहाँ से इन्द्रदेव के स्थान में जाने का रास्ता था।

दसवाँ बयान

इस बाग में पहिले दिन जिस बारहदरी में बैठ कर सभों ने भोजन किया था, आज पुनः उसी बारहदरी में बैठने और भोजन करने का मौका मिला।

खाने की चीजें ऐयार लोग अपने साथ ले आये थे और जल की वहाँ कमी ही न थी, अस्तु स्नान सन्ध्योपासन और भोजन इत्यादि से छुट्टी पा कर सब कोई उसी बारहदरी में सो रहे क्योंकि रात के जागे हुए थे और बिना कुछ आराम किये आगे बढ़ने की इच्छा न थी।

जब दिन पहर भर से कुछ कम बाकी रह गया तब सब कोई उठे और चश्मे के जल से हाथ मुँह धोकर आगे की तरफ बढ़ने के लिए तैयार हुए।

हम ऊपर किसी बयान में लिख आये हैं कि यहाँ तीनों तरफ की दीवारों में कई आलमारियाँ भी थीं अस्तु इस समय कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने उन्हीं आलमारियों में से एक आलमारी खोली और महाराज की तरफ देख कर कहा, "चुनार के तिलिस्म में जाने का यही रास्ता है और हम दोनों भाई इसी रास्ते से वहाँ तक गये थे।"

रास्ता बिल्कुल अन्धेरा था इसलिये इन्द्रजीतसिंह तिलिस्मी खंजर की रोशनी करते हुए आगे आगे रवाना हुए और उनके पीछे महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा बीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रदेव वगैरह और ऐयार लोग रवाना हुए। सबसे पीछे कुँअर आनन्दसिंह तिलिस्मी खञ्जर की रोशनी करते हुए जाने लगे क्योंकि सुरंग पतली थी और केवल आगे की एक रोशनी से काम नहीं चल सकता था।

ये लोग उस सुरंग में कई घण्टे तक बराबर चले गये और इस बात का पता न लगा कि कब सन्ध्या हुई या अब कितनी रात बीत चुकी है। जब सुरंग का दूसरा दर्वाजा इन लोगों को मिला और उसे खोल कर सब कोई बाहर निकले तो अपने को एक लम्बी चौड़ी कोठड़ी में पाया जिसमें इस दर्वाजे के अतिरिक्त तीनों तरफ की दीवारों में और भी तीन दर्वाजे थे जिनकी तरफ इशारा करके कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "अब हम लोग उस चबूतरे वाले तिलिस्म के नीचे आ पहुँचे हैं। इस जगह एक दूसरे से मिली हुई सैकड़ों कोठड़ियाँ हैं जो भूलभूलैये की तरह चक्कर खिलाती हैं और जिनमें फँसा हुआ अनजान आदमी जल्दी निकल ही नहीं सकता। जब पहिले पहिले हम दोनों भाई यहां आये थे तो सब कोठड़ियों के दर्वाजे बन्द थे जो तिलिस्मी किताब की सहायता से खोले गये और जिसका खुलासा हाल आप को तिलिस्मी किताब के

पढ़ने से मालूम होगा मगर इनके खोलने में कई दिन लगे और तकलीफ भी बहुत हुई। इन कोठड़ियों के मध्य में एक चौखूटा कमरा आप देखेंगे जो ठीक उस चबूतरे के नीचे है और उसी में से बाहर निकलने का रास्ता है, बाकी सब कोठड़ियों में असबाब और खजाना भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त छत के ऊपर ही ऊपर एक और रास्ता उस चबूतरे में से बाहर निकलने के लिये बना हुआ है जिसका हाल मुझे पहिले मालूम न था, जिस दिन हम दोनों भाई उस चबूतरे की राह निकले हैं उस दिन देखा कि इसके अतिरिक्त एक रास्ता और भी है।"

इन्द्र०। जी हाँ दूसरा रास्ता भी जरूर है मगर वह तिलिस्मी दारोगा के लिये बनाया गया था, तिलिस्म तोड़ने वाले के लिए नहीं। मुझे उस रास्ते का हाल बखूबी मालूम है।

गोपाल०। मुझे भी उस रास्ते का हाल (इन्द्रदेव की तरफ इशारा करके) इन्हीं की जुबानी मालूम हुआ है। इसके पहले मैं कुछ भी नहीं जानता था और न यही मालूम था कि इस तिलिस्म के दारोगा यही हैं।

इसके बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह ने सभों को उस तहखाने अथवा कोठड़ियों और कमरों की सैर कराई जिसमें लाजवाब और हद्द दरजे की फजूल खर्ची को भी मात करने वाली दौलत भरी हुई थी और एक से एक बढ़ कर अनूठी चीजें लोगों के दिल अपनी तरफ खैंच रही थीं! साथ ही इसके यह भी समझाया कि इन कोठड़ियों को हम लोगों ने कैसे खोला और इस काम में कैसी कैसी कठिनाइयां उठानी पड़ीं।

घूमते फिरते और सैर करते हुए सब कोई उस मध्य वाले कमरे में पहुँचे जो ठीक तिलिस्मी चबूतरे के नीचे था। वास्तव में यह कमरा कल पुरजों से बिल्कुल भरा हुआ था। जमीन से छत तक बहुत सी तारें लगी हुई थीं, बड़े बड़े नादों में मसाले भरे रक्खे थे जिनसे उन तारों और कल पुर्जों का सम्बन्ध था और दीवार के अन्दर से ऊपर चढ़ जाने के लिए सीढ़ियां दिखाई दे रही थीं।

दोनों कुमारों ने महाराज को समझाया कि तिलिस्म टूटने के पहिले वे कल पुरजे किस ढङ्ग पर लगे हुए थे और तोड़ते समय उनके साथ कैसी कार्रवाई की गई। इसके बाद इन्द्रजीतसिंह ने सीढ़ियों की तरफ इशारा करके कहा,

"अब भी इन सीढ़ियों का तिलिस्म कायम है, हर एक की मजाल नहीं कि इन पर पैर रख सके।"

बीरे०। यह सब कुछ है मगर असल तिलिस्मी बुनियाद वही खोह वाला बँगला जान पड़ता है जिसमें चलती फिरती तस्वीरों का तमाशा देखा था और जहां से तिलिस्म के अन्दर घुसे थे।

सुरे०। इसमें क्या शक है! वही चुनार जमानिया और रोहतासगढ़ वगैरह के तिलिस्मों की नकेल है और वहां रहने वाला तरह तरह के तमाशे देख दिखा सकता है और सब से बढ़ कर आनन्द ले सकता है।

जीत०। वहां की पूरी पूरी कैफियत अभी देखने में नहीं आई।

इन्द्र०। दो चार दिन में वहां की कैफियत देख भी नहीं सकते। जो कुछ आप लोगों ने देखा वह रुपये में एक आना भी न था। मुझे भी अभी पुनः वहाँ जा कर बहुत कुछ देखना बाकी है।

सुरे०। इस समय तो जल्दी में थोड़ा बहुत देख लिया है मगर कामों से निश्चिन्त हो कर पुनः हम लोग वहां चलेंगे और उसी जगह से रोहतासगढ़ के तहखाने की भी सैर करेंगे। अच्छा अब यहां से बाहर होना चाहिये।

आगे आगे कुँअर इन्द्रजीतसिंह रवाना हुए। पाँच सात सीढ़ियां चढ़ जाने के बाद एक छोटा सा लोहे का दर्वाजा मिला जिसे उसी हीरे वाली तिलिस्मी ताली से खोला और तब सभों को लिए हुए दोनों कुमार तिलिस्मी चबूतरे के बाहर हुए। उस समय रात नाम मात्र को बाकी थी।

ग्यारहवाँ बयान

सब कोई तिलिस्म की सैर करके लौट आये और अपने अपने काम धन्धे में लगे। कैदियों के मुकद्दमे को थोड़े दिन तक मुलतवी रख कर कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी पर सभों ने ध्यान दिया और इसी के इन्तजाम की फिक्र करने लगे। महाराज सुरेन्द्रसिंह ने जो काम जिसके लायक समझा उसके सुपुर्द करके कुल कैदियों को चुनारगढ़ भेजने का हुक्म दिया और यह भी निश्चय कर लिया कि दो तीन दिन के बाद हम लोग भी चुनारगढ़ चले जायँगे क्योंकि बारात चुनारगढ़ ही से निकल कर यहां आवेगी।

भरतसिंह और दलीपशाह वगैरह का डेरा बलभद्रसिंह के पड़ोस ही में पड़ा और दूसरे मेहमानों के साथ ही साथ इनकी खातिरदारी का बोझ भी भूतनाथ के ऊपर डाला गया। इस जगह संक्षेप में हम यह भी लिख देना उचित समझते हैं कि कौन काम किसके सुपुर्द किया गया।

(१) इस तिलिस्मी इमारत के इर्द गिर्द जिन मेहमानों के डेरे पड़े हैं उन्हें किसी बात की तकलीफ तो नहीं होती, इस बात को बराबर मालूम करते रहने का काम भूतनाथ के सुपुर्द किया गया।

(२) मोदी, बनिये और हलवाई वगैरह किसी से किसी चीज का दाम तो नहीं लेते, इस बात की तहकीकात के लिए रामनारायण ऐयार मुकर्रर किये गये।

(३) रसद वगैरह के काम में कहीं किसी तरह की बेईमानी तो नहीं होती, या चोरी का नाम तो किसी की जुबान से नहीं सुनाई देता, इसको जानने और शिकायतों के दूर करने पर चुन्नीलाल ऐयार तैनात किये गये।

(४) इस तिलिस्मी इमारत से ले कर चुनारगढ़ तक की सड़क और उसकी सजावट का काम पन्नालाल और पण्डित बद्रीनाथ के जिम्मे किया गया।

(५) चुनारगढ़ में बाहर से न्योते में आये हुए पण्डितों की खातिरदारी और पूजा पाठ इत्यादि के सामान की दुरुस्ती का बोझ जगन्नाथ ज्योतिषी के ऊपर डाला गया।

(६) बारात और महफिल वगैरह की सजावट तथा उसके सम्बन्ध में जो कुछ काम हो उसके जिम्मेवार तेजसिंह बनाये गये।

(७) आतशबाजी और अजायबातों के तमाशे तैयार करने के साथ ही साथ उसी ढंग की एक इमारत के बनवाने का हुक्म इन्द्रदेव को दिया गया जैसी इमारत के अन्दर हँसते हँसते इन्द्रजीतसिंह वगैरह एक दफे कूद गये थे और जिसका भेद अभी तक खोला नहीं गया है। *

(८) पन्नालाल वगैरह के बदले में रणधीरसिंहजी के डेरे की हिफाजत तथा किशोरी कामिनी वगैरह की निगरानी के जिम्मेवार देवीसिंह बनाये गये।

(९) ब्याह सम्बन्धी खर्च की तहवील (रोकड़) राजा गोपालसिंह के हवाले की गई।

* देखिये सन्तति पाँचवाँ हिस्सा चौथा बयान।

(१०) कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के साथ रह कर उनके विवाह सम्बन्धी शानशौकत और जरूरतों को कायदे के साथ निबाहने के लिये भैरोसिंह और तारासिंह छोड़ दिये गए।

(११) हरनामसिंह को अपने मातहत में ले कर जीतसिंहजी ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया कि हर एक के कामों की जांच और निगरानी रखने के अतिरिक्त कुछ कैदियों को भी किसी उचित ढङ्ग से इस विवाहोत्सव के तमाशे दिखा देंगे जिसमें वे लोग देख लें कि जिस शुभ दिन के हम बाधक थे वह आज किस खुशी और खूबी के साथ बीत रहा है और सर्वसाधारण भी देख लें कि धन दौलत और ऐश आराम के फेर में पड़ कर अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मारने वाले, छोटे हो कर बड़ों के साथ बैर बाँध के नतीजा भोगने वाले मालिक के साथ में नमकहरामी और उग्र पाप करने का कुछ फल इस जन्म में भी भोग लेने वाले, और बदनीयत तथा पाप के साथ ऊँचे दर्जे पर पहुँच कर यकायक रसातल में पहुँच जाने वाले, धर्म्म और ईश्वर से विमुख ये ही प्रायश्चित्ती लोग हैं।

इन सभों के साथ मातहती में काम करने के लिए आदमी भी काफी तौर पर दिये गये।

इनके अतिरिक्त और लोगों को भी तरह तरह के काम सुपुर्द किए गये और सब कोई बड़ी खूबी के साथ अपना अपना काम करने लगे।

अब हम थोड़ा सा हाल कुँअर इन्द्रजीतसिंह का बयान करेंगे जिन्हें इस बात का बहुत ही रञ्ज है कि कमलिनी की शादी किसी दूसरे के साथ हो गई और ये उम्मीद ही में बैठे रह गये।

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी है और कुँअर इन्द्रजीतसिंह अपने कमरे में बैठे भैरोंसिंह से धीरे धीरे बातें कर रहे हैं। इन दोनों के सिवाय कोई तीसरा आदमी इस कमरे में नहीं है और कमरे का दर्वाजा भी भिड़काया हुआ है।

भैरो०। तो आप साफ साफ कहते क्यों नहीं कि आपकी उदासी का सबब क्या है? आपको तो आज खुश होना चाहिये कि जिस काम के लिये बरसों परेशान रहे, जिसकी उम्मीद में तरह तरह की तकलीफें उठाईं, जिसके लिए हथेली पर जान रख के बड़े बड़े दुश्मनों से मुकाबिला करना पड़ा और जिसके

होने या मिलने ही पर तमाम दुनिया की खुशी समझी जाती थी, आज वही काम आपकी इच्छानुसार हो रहा है और उसी किशोरी के साथ अपनी शादी का इन्तजाम अपनी आँखों से देख रहे हैं, फिर भी ऐसी अवस्था में आपको उदास देख कर कौन ऐसा है जो ताज्जुब न करेगा ?

इन्द्रजीत० । बेशक मेरे लिए आज बड़ी खुशी का दिन है और मैं खुश हूँ भी मगर कमलिनी की तरफ से जो रञ्ज मुझे हुआ है उसे हजार कोशिश करने पर भी मेरा दिल बरदाश्त नहीं करता ।

भैरो० । (ताज्जुब का चेहरा बना कर) हैं ! कमलिनी की तरफ से और आपको रञ्ज ! जिसके अहसानों के बोझ से आप दबे हुये हैं उसी कमलिनी से रञ्ज ! यह आप क्या कह रहे हैं ?

इन्द्रजीत० । इस बात को तो मैं खुद कह रहा हूँ कि उसके अहसानों के बोझ से मैं जिन्दगी भर हलका नहीं हो सकता और अब तक उसके जी में मेरी भलाई का ध्यान बँधा ही हुआ है मगर रञ्ज इस बात का है कि अब मैं उसे उस मोहब्बत की निगाह से नहीं देख सकता जिससे कि पहले देखता था ।

भैरो० । सो क्यों, क्या इसलिए कि अब वह अपने ससुराल चली जायगी और फिर उसे आप पर अहसान करने का मौका न मिलेगा ?

इन्द्रजीत० । हां करीब करीब यही बात है ।

भैरो० । मगर अब आपको उसके मदद की जरूरत भी तो नहीं है । हाँ इस बात का खयाल बेशक हो सकता है कि अब आप उसके तिलिस्मी मकान पर कब्जा न कर सकेंगे ।

इन्द्रजीत० । नहीं नहीं, मुझे इस बात की कुछ जरूरत नहीं है और न इसका कुछ खयाल ही है !

भैरो० । तो क्या इस बात का खयाल है कि उसने अपनी शादी में आपको न्योता नहीं दिया ? मगर वह एक हिन्दू लड़की की हैसियत से ऐसा कर भी तो नहीं सकती थी ! हाँ इस बात की शिकायत आप गोपालसिंह से जरूर कर सकते हैं क्योंकि उस काम के कर्ता धर्ता वे ही रहे हैं ।

इन्द्रजीत० । उनसे तो मुझे बहुत ही शिकायत है मगर मैं शर्म के मारे कुछ कह नहीं सकता ।

भैरो० । (चौंक कर) शर्म ! शर्म तो तब होती जब आप इस बात की शिकायत करते कि मैं खुद उससे शादी किया चाहता था !

इन्द्रजीत० । हां, बात ऐसी ही है । (मुस्कुरा कर) मगर तुम तो पागलों की सी बातें करते हो ।

भैरो० । (हँस कर) यह कहिये न ! आप दोनों हाथ लड्डू चाहते थे !! तो इस चोर का आप इतने दिनों तक छिपाये क्यों रहे ?

इन्द्रजीत० । तो यही कब उम्मीद हो सकती थी कि इस तरह यकायक और गुमसुम शादी हो जायगी !

भैरो० । खैर अब तो जो कुछ होना था सो हो गया, मगर आपको इस बात का ख्याल न करना चाहिये । इसके अतिरिक्त क्या आप समझते हैं कि किशोरी इस बात को पसन्द करती ? कभी नहीं, बल्कि आये दिन का झगड़ा पैदा हो जाता ।

इन्द्रजीत० । नहीं, किशोरी से मुझे ऐसी उम्मीद नहीं हो सकती । खैर अब इस विषय पर बहस करना व्यर्थ है, मगर मुझे इसका रञ्ज जरूर है । अच्छा यह तो बताओ तुमने उन्हें देखा है जिसके साथ कमलिनी की शादी हुई है ?

भैरो० । कई दफे, बातें भी अच्छी तरह कर चुका हूँ ।

इन्द्रजीत० । कैसे हैं ?

भैरो० । बड़े लायक, पढ़े लिखे, पण्डित, बहादुर, दिलेर, हँसमुख और सुन्दर ! इस अवसर पर आवेंगे ही, देख लीजियेगा । आपने कमलिनी से इस बारे में बातचीत नहीं की ?

इन्द्रजीत० । इधर तो नहीं मगर तिलिस्म की सैर को जाने के पहिले मुलाकात हुई थी, उसने खुद मुझे बुलाया था बल्कि उसी की जुबानी उसकी शादी का हाल मुझे मालूम हुआ था । मगर उसने मेरे साथ विचित्र ढङ्ग का बर्ताव किया !

भैरो० । सो क्या ?

इन्द्रजीत० । (जो कुछ कैफियत हो चुकी थी उसे बयान करने के बाद) तुम इस बर्ताव को कैसा समझते हो ?

भैरो० । बहुत अच्छा और उचित ।

इस तरह की बातें हो ही रही थीं कि पहिले दिन की तरह बगल वाले कमरे का दर्वाजा खुला और एक लौंडी ने आ कर सलाम करने बाद कहा, "कमलिनीजी आप से मिला चाहती हैं, आज्ञा हो तो....."

इन्द्रजीत० । अच्छा मैं चलता हूँ, तू दर्वाजा बन्द कर दे ।

भैरो० । तो अब मै भी जाकर आराम करता हूँ ।

इन्द्रजीत० । अच्छा जाओ, फिर कल देखा जायगा ।

लौंडी० । इनसे (भैरोसिंह से) भी उन्हें कुछ कहना है ।

यह कहती हुई लौंडी ने दर्वाजा बन्द कर दिया, तब तक स्वयं कमलिनी उस कमरे में आ पहुँची और भैरोसिंह की तरफ देख के बोली, (जो उठ कर बाहर जाने के लिये तैयार थे) "आप कहाँ चले ? आप ही से तो मुझे बहुत सी शिकायत करनी है ।"

भैरो० । सो क्या ?

कमलिनी० । अब उसी कमरे में चलिये वहीं बातचीत होगी ।

इतना कह कर कमलिनी ने कुमार का हाथ पकड़ लिया और अपने कमरे की तरफ ले चली पीछे पीछे भैरोसिंह भी गये । लौंडी दर्वाजा बन्द करके दूसरी राह से बाहर चली गई और कमलिनी ने इन दोनों को उचित स्थान पर बैठा कर पानदान आगे रख दिया और भैरोसिंह से कहा, "आप लोग तिलिस्म की सैर कर आए और मुझे पूछा भी नहीं !"

भैरो० । महाराज खुद कह चुके हैं कि शादी के बाद औरतों को भी तिलिस्म की सैर करा दी जाय और फिर तुम्हारे लिए तो कहना ही क्या है, तुम जब चाहो तिलिस्म की सैर कर सकती हो ।

कम० । ठीक है मानो यह मेरे हाथ की बात है !

भैरो० । हई है !

कम० । (हँस कर) टालने के लिए यह अच्छा ढंग है ! खैर जाने दीजिये, मुझे कुछ ऐसा शौक भी नहीं है, हाँ यह बताइये कि वहां क्या क्या कैफियत देखने में आई ? मैने सुना कि भूतनाथ वहां बड़े चक्कर में पड़ गया था और उसकी पहिली स्त्री भी वहीं दिखाई पड़ गई ।

भैरो० । बेशक ऐसा ही हुआ ।

इतना कह कर भैरोसिंह ने कुल हाल खुलासा बयान किया और इसके बाद कमलिनी ने इन्द्रजीतसिंह से कहा, "खैर आप यह बताइये कि शादी की खुशी में मुझे क्या इनाम मिलेगा ?

इन्द्रजीत० । (हँस कर) गालियों के सिवाय और किसी चीज की तुम्हें कमी ही क्या है जो मैं दूँ ?

कमलिनी० । (भैरो से) सुन लीजिये, मेरे लिए कैसा अच्छा इनाम सोचा गया है ! (कुमार से, हँस कर) याद रखियेगा, इस जवाब के बदले में मैं आपको ऐसा छकाऊँगी कि खुश हो जाइएगा !!

भैरो० । इन्हें तो तुम छका ही चुकी हो, अब इससे बढ़ के क्या होगा कि चुपचाप दूसरे के साथ शादी कर ली और इन्हें अँगूठा दिखा दिया !! अब तुम्हें ये गालियां न दें तो क्या करें ?

कमलिनी० । (मुस्कुराती हुई) आपकी भी यही राय है ?

भैरो० । बेशक !!

कमलिनी० । तो बेचारी किशोरी के साथ आप अच्छा सलूक करते हैं !

भैरो० । इसका इलजाम तो कुमार के ऊपर हो सकता है !

कमलिनी० । हां साहब, मर्दों की मुरौवत जो कुछ कर दिखाए थोड़ा है, मैं किशोरी बहिन से इसका जिक्र जरूर करूँगी !

भैरो० । तब तो अहसान पर अहसान करोगी ।

इन्द्र० । (भैरो से) तुम भी व्यर्थ की छेड़छाड़ मचा रहे हो भला इन बातों से क्या फायदा ?

भैरो० । व्याह शादी में ऐसी ही बातें हुआ करती हैं ।

इन्द्रजीत० । तुम्हारा सिर हुआ करता है ! (कमलिनी से) अच्छा यह बताओ कि इस समय तुमने मुझे क्यों याद किया ?

कमलिनी० । हरे राम ! अब क्या मैं ऐसी भारी हो गई कि मुझसे मिलना भी बुरा मालूम होता है ?

इन्द्रजीत० । नहीं नहीं, अगर मिलना बुरा मालूम होता तो मैं यहां आता ही क्यों ? पूछता हूँ कि आखिर कोई काम भी था ?

कमलिनी० । हाँ है तो सही ।

इन्द्रजीत० । कहो ।

कमलिनी० । आपको शायद मालूम होगा कि मेरे पिता जब से यहाँ आये हैं उन्होंने अपने खाने पीने का इन्तजाम अलग रक्खा है अर्थात् आपके यहां का अन्न नहीं खाते और न कुछ अपने लिए खर्च कराते हैं।

इन्द्रजीत० । हां मुझे मालूम है ।

कमलिनी० । अब उन्होंने इस मकान में रहने से भी इन्कार किया है। उनके एक मित्र ने खेमे वगैरह का इन्तजाम कर दिया है और वे उसी में अपना डेरा उठा ले जाने वाले हैं ।

इन्द्रजीत० । यह भी मालूम है ।

कमलिनी० । मेरी इच्छा है कि यदि आप आज्ञा दें तो लाडिली को साथ लेकर मैं भी उसी डेरे में चली जाऊँ ।

इन्द्रजीत० । क्यों ? तुम्हें यहां रहने में परहेज ही क्या हो सकता है ?

कमलिनी० । नहीं नहीं, मुझे किस बात का परहेज होगा ! मगर यों ही जी चाहता है कि मै दो चार दिन अपने बाप के साथ ही रह कर उनकी खिदमत करूँ।

इन्द्रजीत० । यह दूसरी बात है, इसकी इजाजत तुम्हें अपने मालिक से लेनी चाहिये, मैं कौन हूँ जो इजाजत दूँ ?

कमलिनी० । इस समय वे तो यहां हैं नहीं अस्तु उनके बदले में मैं आपही को अपना मालिक समझती हूँ ।

इन्द्रजीत० । (मुस्कुरा कर) फिर तुमने वही रास्ता पकड़ा ? खैर मैं इस बात की इजाजत न दूँगा ।

कमलिनी० । तो मैं आज्ञा के विरुद्ध कुछ न करूँगी ।

इन्द्रजीत० । (भैरो से) इनकी बातचीत का ढङ्ग देखते हो ?

भैरो० । (हँस कर) शादी हो जाने पर भी ये आपको नहीं छोड़ा चाहतीं तो मैं क्या करूँ ?

कमलिनी० । अच्छा मुझे एक बात की इजाजत तो जरूर दीजिये ।

इन्द्र० । वह क्या ?

कम० । आपकी शादी में मैं आपसे एक विचित्र दिल्लगी किया चाहती हूँ ।

इन्द्रजीत० । वह कौन सी दिल्लगी होगी ?

कमलिनी०। यही बता दूँगी तो उसमें मजा ही क्या रह जायगा ? बस आप इतना कह दीजिये कि उस दिल्लगी से रंज न होंगे चाहे वह कैसी ही गहरी दिल्लगी क्यों न हो।

इन्द्रजीत०। (कुछ सोच कर) खैर मैं रंज न होऊँगा।

इसके बाद थोड़ी देर तक हंसी की बातें होती रहीं और फिर सब कोई उठ कर अपने अपने ठिकाने चले गये।

बारहवाँ बयान

ब्याह की तैयारी और हँसी खुशी में ही कई सप्ताह बीत गये और किसी को कुछ मालूम न हुआ। हां कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह को खुशी के साथ ही रंज और उदासी से भी मुकाबला करना पड़ा। यह रंज और उदासी क्यों ? शायद कमलिनी और लाडिली के सबब से हो। जिस तरह कुँअर इन्द्रजीतसिंह कमलिनी से मिल कर और उसकी जुबानी उसके ब्याह का हो जाना सुन कर दुःखी हुए, उसी तरह आनन्दसिंह को भी लाडिली से मिल कर दुःखी होना पड़ा या नहीं सो हम नहीं कह सकते क्योंकि लाडिली से और आनन्दसिंह से जो बातें हुईं उससे और कमलिनी की बातों से बड़ा फर्क है। कमलिनी ने तो खुद इन्द्रजीतसिंह को अपने कमरे में बुलाया था मगर लाडिली ने ऐसा नहीं किया। लाडिली का कमरा भी आनन्दसिंह के कमरे के बगल ही में था। जिस रात कमलिनी से और इन्द्रजीतसिंह से दूसरी मुलाकात हुई थी, उसी रात को आनन्दसिंह ने भी अपने बगल वाले कमरे में लाडिली को देखा था मगर दूसरे ढंग से। आनन्दसिंह अपने कमरे में मसहरी पर लेटे हुए तरह तरह की बातें सोच रहे थे कि उसी समय बगल वाले कमरे में से कुछ खटके की आवाज आई जिससे आनन्दसिंह चौंके और उन्होंने घूम कर देखा तो उस कमरे का दर्वाजा कुछ खुला हुआ नजर आया। इन्हें यह जरूर मालूम था कि हमारे बगल ही में लाडिली का कमरा है और उससे मिलने की नीयत से इन्होंने कई दफे दर्वाजा खोलना भी चाहा था मगर बन्द पाकर लाचार रह गये थे। आज दर्वाजा खुला पाकर बहुत खुश हुए और मसहरी पर से उठ धीरे धीरे दर्वाजे के पास गये। हाथ के सहारे दर्वाजा कुछ विशेष खोला और अन्दर की तरफ झांक कर देखा।

लाडिली पर निगाह पड़ी जो एक शमादान के आगे बैठी हुई कुछ लिख रही थी। शायद उसे इस बात की कुछ खबर ही न थी कि मुझे कोई देख रहा है।

भीतर सन्नाटा पाकर अर्थात् किसी गैर को न देख कर आनन्दसिंह बेधड़क कमरे के अन्दर चले गये। पैर की आहट पाते ही लाडिली चौंकी और आनन्दसिंह को अपनी तरफ आते देख उठ खड़ी हुई और बोली, "आपने दर्वाजा कैसे खोल लिया?"

आनन्द०। (मुस्कुराते हुए) किसी हिकमत से !

लाडिली०। क्या आज के पहिले वह हिकमत मालूम न थी? शायद सफाई के लिये किसी लौंडी ने दर्वाजा खोला हो और बन्द करना भूल गई हो।

आनन्द०। अगर ऐसा ही हो तो क्या कुछ हर्ज है ?

लाडिली०। नहीं हर्ज काहे का है, मैं तो खुद ही आप से मिला चाहती थी मगर लाचारी.....

आनन्द०। लाचारी कैसी ? क्या किसी ने मना कर दिया था ?

लाडिली०। मना ही समझना चाहिये जब कि मेरी बहिन कमलिनी ने जोर देकर कह दिया कि 'या तो तू मेरी इच्छानुसार शादी कर ले या इस बात की कसम खा जा कि किसी गैर मर्द से कभी बातचीत न करेगी।' जिस समय उनकी (कमलिनी की) शादी होने लगी थी उस समय भी लोगों ने मुझ पर शादी कर लेने के लिये दबाव डाला था मगर मैं इस समय जैसी हूँ वैसी ही रहने के लिये कसम खा चुकी हूँ। मतलब यह है कि इसी बखेड़े में मुझसे और उनसे कुछ तकरार भी हो गई है।

आनन्द०। (घबराहट और ताज्जुब के साथ) क्या कमलिनी की शादी हो गई?

लाडिली०। जी हां।

आनन्द०। किसके साथ ?

लाडिली०। सो तो मैं नहीं कह सकती, आप को खुद मालूम हो जायगा।

आनन्द०। यह बहुत बुरा हुआ।

लाडिली०। बेशक बुरा हुआ मगर क्या किया जाय, जीजाजी (गोपालसिंह) की मर्जी ही ऐसी थी क्योंकि किशोरी ने ऐसा करने के लिये उन पर बहुत जोर डाला था अस्तु कमलिनी बहिन दबाव में पड़ गईं, मगर मैंने साफ

इन्कार कर दिया कि जैसी हूँ वैसी ही रहूँगी।

आनन्द०। तुमने बहुत अच्छा किया।

लाडिली०। और मैं ऐसा करने के लिये सख्त कसम खा चुकी हूँ।

आनन्द०। (ताज्जुब से) क्या तुम्हारे इस कहने का यह मतलब लगाया जाय कि अब तुम शादी करोगी ही नहीं?

लाडिली०। बेशक!

आनन्द०। यह तो कोई अच्छी बात नहीं है!

लाडिली०। जो हो, अब तो मैं कसम खा चुकी हूँ और बहुत जल्द यहाँ से चली जाने वाली भी हूँ, सिर्फ कामिनी बहिन की शादी हो जाने का इन्तजार कर रही हूँ।

आनन्द०। (कुछ सोच कर) कहां जाओगी?

लाडिली०। आप लोगों की कृपा से अब तो मेरा बाप भी प्रगट हो गया है, अब इसकी चिन्ता ही क्या है?

आनन्द०। मगर जहां तक मैं समझता हूँ तुम्हारे बाप तुम्हें शादी करने के लिए जरूर जोर देंगे।

लाडिली०। इस बिषय में उनकी कुछ न चलेगी।

लाडिली की बातों से आनन्दसिंह को ताज्जुब के साथ ही साथ रञ्ज भी हुआ और ज्यादे रञ्ज तो इस बात का था कि अब तक लाडिली ने खड़े ही खड़े बातचीत की और कुमार को बैठने तक के लिये नहीं कहा। शायद इसका यह मतलब हो कि 'मैं ज्यादे देर तक आपसे बात नहीं कर सकती।' अस्तु आनन्दसिंह को क्रोध और दुःख के साथ लज्जा ने भी धर दबाया और वे यह कह कर कि 'अच्छा मैं जाता हूँ' अपने कमरे की तरफ लौट चले।

आनन्दसिंह के दिल में जो बातें घूम रही थीं उसका अन्दाजा शायद लाडिली को भी मिल गया और जब वे लौट कर जाने लगे तब उसने पुनः इस ढंग पर कहा मानों उसकी आखिरी बात अभी पूरी नहीं हुई थी, "क्योंकि जिनकी मुझ पर कृपा रहती थी अब वे और ही ढंग के हो गए!!"

इस बात ने कुमार को तरद्दुद में डाल दिया। उन्होंने घूम कर एक तिरछी निगाह लाडिली पर डाली और कहा, "इसका क्या मतलब?"

लाडिली० । सो कहने की सामर्थ्य मुझ में नहीं है । हाँ जब आपकी शादी हो जायगी तब मैं साफ साफ आपसे कह दूँगी, उस समय जो कुछ आप राय देंगे उसे मैं कबूल भी कर लूँगी ।

इस आखिरी बात से कुमार को कुछ हिम्मत बँध गई मगर बैठने की या और कुछ कहने की हिम्मत न पड़ी और 'अच्छा, कह कर वे अपने कमरे में चले आये ।

तेरहवाँ बयान

विवाह का सब सामान ठीक हो गया मगर हर तरह की तैयारी हो जाने पर भी लोगों की मेहनत में कमी नहीं हुई । सब कोई उसी तरह दौड़ धूप और काम काज में लगे हुये दिखाई दे रहे हैं । महाराज सुरेन्द्रसिंह सभों को लिये हुए चुनारगढ़ चले गये । अब इस तिलिस्मी मकान में सिर्फ जरूरत की चीजों के ढेर और इन्तजामकार लोगों के डेरे भर ही दिखाई दे रहे हैं । इसी मकान में से उन लोगों के लिए भी रास्ता बनाया गया है जो हँसते हँसते उस तिलिस्मी इमारत में कूदा करेंगे जिसके बनाने की आज्ञा इन्द्रदेव को दी गई थी और जो इस समय बन कर तैयार हो गई है ।

यह इमारत बीस गज लम्बी और इतनी ही चौड़ी थी । ऊँचाई इसकी लगभग चालीस हाथ से कुछ ज्यादे होगी । चारो तरफ की दीवार साफ और चिकनी थी तथा किसी तरफ कोई दरवाजे का निशान दिखाई नहीं देता था । पूरब तरफ ऊपर चढ़ जाने के लिये छोटी छोटी सीढ़ियाँ बनी हुई थीं जिनके दोनों तरफ हिफाजत के लिये लोहे के सींखचे लगा दिये गये थे । उसी पूरब तरफ वाली दीवार पर बड़े बड़े हरफों में यह भी लिखा हुआ था :—

"जो आदमी इन सीढ़ियों की राह ऊपर जायगा और एक नजर अन्दर की तरफ झाँक वहाँ की कैफियत देख कर इन्हीं सीढ़ियों की राह नीचे उतर आवेगा उसे एक लाख रुपये इनाम में दिये जायँगे ।"

इस इमारत ने चारों तरफ एक अनूठा रंग पैदा कर दिया था । हजारों आदमी उस इमारत के ऊपर चढ़ जाने के लिये तैयार थे और हर एक आदमी अपनी लालसा पूरी करने के लिए जल्दी मचा रहा था, मगर सीढ़ी का दर्वाजा बन्द था । पहरेदार लोग किसी को ऊपर जाने की इजाजत नहीं देते थे और यह

कह कर सभों को सन्तोष करा देते थे कि बारात वाले दिन दर्वाजा खुलेगा और पन्द्रह दिन तक बन्द न होगा।'

यहाँ से चुनारगढ़ की सड़क के दोनों तरफ जो सजावट की गई थी उसमें भी एक अनूठापन था। दोनों तरफ रोशनी के लिये जाफरी बनी हुई थीं और उसमें अच्छे अच्छे नीति के श्लोक दरसाए गये थे जो रोशनी होने पर बहुत साफ तौर पर पढ़े जा सकते थे। बीच बीच में थोड़ी थोड़ी दूर पर नौबतखाने के बगल में एक एक मचान था जिस पर एक या दो कैदियों के बैठने के लिये जगह बनी हुई थी। जाफरी के दोनों तरफ दस दस हाथ चौड़ी जमीन में बाग का नमूना तैयार किया गया था और उसके बाद आतशबाजी लगाई गई थी। आध आध कोस की दूरी पर सर्वसाधारण और गरीब तमाशबीनों के लिये महफिल तैयार की गई थी और उसके लिये अच्छी अच्छी गाने वाली रण्डियाँ और भाँड़ मुकर्रर किये गये थे। रात अन्धेरी होने के कारण रोशनी का सामान ज्यादे तैयार किया गया था और वह तिलिस्मी चन्द्रमा जो दोनों राजकुमारों को तिलिस्म के अन्दर से मिला था † चुनारगढ़ किले के ऊँचे कगूरे पर लगा दिया गया था जिसकी रोशनी इस तिलिस्मी मकान तक बड़ी खूबी और सफाई के साथ पड़ रही थी।

पाठक! दोनों कुमारों के बारात की सजावट, महफिलों की तैयारी, रोशनी और आतिशबाजी की खूबी, मेहमानदारी की तारीफ, और खैरात की बहुतायत इत्यादि का हाल विस्तार पूर्वक लिख कर पढ़ने वालो का समय नष्ट करना हमारी आत्मा और आदत के विरुद्ध है। आप खुद समझ सकते हैं कि दोनों कुमारों की शादी का इन्तजाम किस खूबी के साथ किया गया होगा। नुमायश की चीजें कैसी अच्छी होंगी, बड़प्पन का कितना बड़ा खयाल किया गया होगा, और बारात किस धूमधाम से निकली होगी!! हम आज तक जिस तरह संक्षेप में लिखते आये हैं अब भी उसी तरह लिखेंगे, तथापि हमारी उन लिखावटों से जो ब्याह के सम्बन्ध में ऊपर कई दफे मौके मौके पर लिखी जा चुकी हैं आपको अन्दाज के साथ साथ अनुमान करने का हौसला भी मिल जायगा और विशेष सोच विचार की जरूरत न रहेगी। हम इस जगह पर केवल इतना

† देखिये इक्कीसवाँ हिस्सा आठवां बयान।

ही लिखेंगे कि—

बारात बड़े धूमधाम से चुनारगढ़ के बाहर हुई। आगे आगे नौबत निशान और उसके बाद सिलसिलेवार फौजी सवार, पैदल और तोपखाने वगैरह थे, जिसके बाद ऐसी फुलवारियाँ थीं जिनके देखने से खुशी और लूटने से दौलत हासिल हो। इसके बाद बड़े सजे हुए अंबारीदार हाथी पर दोनों कुमार हाथी ही पर सवार अपने बड़े बुजुर्गों रिश्तेदारों और मेहमानों से घिरे हुए धीरे धीरे दोतर्फी बहार लूटते और दुश्मनों के कलेजों को जलाते हुए जा रहे थे और उनके बाद तरह तरह की सवारियाँ और घोड़ों पर बैठे हुए बड़े बड़े सर्दार लोग दिखाई दे रहे थे। अन्त में फिर कुछ फौजी सिपाहियों का सिलसिला था। आगे वाले नौबत निशान से लेकर कुमारों के हाथी तक कई तरह के बाजे वाले अपने अपने मौके से अपना अपना इल्म और हुनर दिखा रहे थे।

कुशल पूर्वक बारात ठिकाने पहुँची और शास्त्रानुसार कर्म तथा रीति होने के बाद कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का विवाह किशोरी और कामिनी के साथ हो गया और इस काम में रणधीरसिंह ने भी बित्त के अनुसार दिल खोल कर खर्च किया। दूसरे रोज पहर भर दिन चढ़ने के पहिले ही दोनों बहुओं की रुखसती करा कर महाराज चुनार की तरफ लौट पड़े।

चुनारगढ़ पहुँचने पर जो कुछ रसोंमें थीं वे पूरी होने लगीं और मेहमान तथा तमाशबीन लोग तरह तरह के तमाशों और महफिलों का आनन्द लूटने लगे। उधर तिलिस्मी मकान की सीढ़ियों पर लाख रुपया इनाम पाने की लालसा से लोगों ने चढ़ना आरम्भ किया। जो कोई दीवार के ऊपर पहुँच कर अन्दर की तरफ झांकता वह अपने दिल को किसी तरह न सम्हाल सकता और एक दफे खिलखिला कर हँसने के बाद अन्दर की तरफ कूद पड़ता तथा कई घण्टे के बाद उस चबूतरे वाली बहुत बड़ी तिलिस्मी इमारत की राह से बाहर निकाला जाता।

बस, विवाह का इतना ही हाल संक्षेप में लिख कर हम इस बयान को पूरा करते हैं और इसके बाद सोहाग रात की एक अनूठी घटना का उल्लेख करके इस बाईसवें हिस्से को समाप्त करेंगे क्योंकि हम दिलचस्प घटनाओं ही का लिखना पसन्द करते हैं।

चौदहवां बयान

आज कुँअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की खुशी का कोई ठिकाना नहीं है क्योंकि तरह तरह की तकलीफें उठा कर एक मुद्दत के बाद इन दोनों की दिली मुरादें हासिल हुई हैं।

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी है और एक सुन्दर सजे हुए कमरे में ऊँची और मुलायम गद्दी पर किशोरी और कुँअर इन्द्रजीतसिंह बैठे हुए दिखाई देते हैं। यद्यपि कुँअर इन्द्रजीतसिंह की तरह किशोरी के दिल में भी तरह तरह की उमंगें भरी हुई हैं और वह आज इस ढंग पर कुँअर इन्द्रजीतसिंह की पहिली मुलाकात को सौभाग्य का कारण समझती है मगर उस अनोखी लज्जा के पाले में पड़ी किशोरी का चेहरा घूँघट की ओट से बाहर नहीं होता जिसे प्रकृति अपने हाथों से औरतों की बुद्धि में जन्म ही से दे देती है। यद्यपि आज से पहिले कुँअर इन्द्रजीतसिंह को कई दफे किशोरी देख चुकी है और उनसे बातें भी कर चुकी है तथापि आज पूरी स्वतन्त्रता मिलने पर भी यकायक सूरत दिखाने की हिम्मत नहीं पड़ती। कुमार तरह तरह की बातें कह कर और समझा कर उसकी लज्जा दूर किया चाहते हैं मगर कृतकार्य नहीं होते। बहुत कुछ कहने सुनने पर कभी कभी किशोरी दो एक शब्द बोल देती है मगर वह भी धड़कते हुए कलेजे के साथ। कुमार ने सोच लिया कि—यह स्त्रियों की प्रकृति है अतएव उसके विरुद्ध जोर न देना चाहिये। यदि इस समय इसकी हिम्मत नहीं खुलती तो क्या हुआ, घण्टे दो घण्टे, पहर दो पहर या एक दो दिन में खुल ही जायगी। आखिर ऐसा ही हुआ।

इसके बाद कैसे छेड़छाड़ शुरू हुई या क्या हुआ सो हम नहीं लिख सकते, हां उस समय का हाल जरूर लिखेंगे जब धीरे धीरे सुबह की सुफेदी आसमान पर फैलने लग गई थी और नियमानुसार प्रातःकाल बजने वाली नफीरी की आवाज ने किशोरी को जो कुँअर इन्द्रजीतसिंह के बगल में सोई हुई थी घबड़ा कर उठ बैठी और मुँह धोने तथा बिखरे हुए बालों को सुधारने की नीयत से उस सोनहरी चौकी की तरफ बढ़ी जिस पर सोने के बर्तन में गङ्गा जल भरा हुआ था और जिसके पास ही जल गिराने के लिए एक बड़ा सा चाँदी का

आफताबा भी रक्खा हुआ था। हाथ में जल लेकर चेहरे पर लगाने और पुनः अपना हाथ देखने के साथ ही किशोरी चौंक पड़ी और घबड़ा कर बोली, "हैं !! यह क्या मामला है ?"

इन शब्दों ने इन्द्रजीतसिंह को चौंका दिया। वे घबड़ा कर किशोरी के पास चले गये और पूछा, "क्यों क्या हुआ ?"

किशोरी०। मेरे साथ यह क्या दिल्लगी की ?

इन्द्र०। कुछ कहो भी तो क्या हुआ ?

किशोरी०। (हाथ दिखा कर) देखिये यह रंग कैसा है जो चेहरे पर से पानी लगाने के साथ ही छूट रहा है।

इन्द्र०। (हाथ देख कर) हां है तो सही ! मगर मैंने तो कुछ भी नहीं किया, तुम खुद सोच सकती हो कि मैं भला तुम्हारे चेहरे पर रङ्ग क्यों लगाने लगा। मगर तुम्हारे चेहरे पर यह रंग आया ही कहाँ से !

किशोरी०। (पुनः चेहरे पर जल लगा के) यह देखिये है या नहीं।

इन्द्र०। सो तो मैं खुद ही कह रहा हूँ कि रङ्ग जरूर है, मगर जरा मेरी तरफ देखो तो सही !!

किशोरी ने जो अब समयानुकूल लज्जा के हाथों से छूट कर ढिठाई का पल्ला पकड़ चुकी थी और जो कई घण्टों की कशमकश और चलनचाल की बदौलत बातचीत करने लायक समझी जाती थी, कुमार की तरफ देखा और फिर कहा, 'देखिए और कहिये यह किसकी करतूत है ?'

इन्द्र०। (और भी हैरान हो कर) बड़े ताज्जुब की बात है ! और इस रंग के छूटने से तुम्हारा चेहरा भी कुछ बदला हुआ सा मालूम पड़ता है ! अच्छा जरा अच्छी तरह मुँह धो डालो !

किशोरी ने "अच्छा" कह कर मुँह धो डाला और रुमाल से पोंछने के बाद कुमार की तरफ देख कर बोली, "बताइये अब कैसा मालूम पड़ता है रंग अब छूट गया या अभी भी नहीं ?"

इन्द्र०। (घबड़ा कर) हैं ! अब तो तुम साफ कमलिनी मालूम पड़ती हो ! यह क्या मामला है ?

किशोरी०। मैं कमलिनी तो हई हूँ, क्या पहिले कोई दूसरी मालूम पड़ती थी ?

इन्द्र० । बेशक ! पहिले तुम किशोरी मालूम पड़ती थीं, कम रोशनी और कुछ लज्जा के कारण यद्यपि बहुत अच्छी तरह तुम्हारी सूरत रात को देखने में नहीं आई तथापि मौके मौके पर कई दफे निगाह पड़ ही गई थी अस्तु किशोरी के सिवाय दूसरी औरत होने का गुमान भी नहीं हो सकता था! मगर...सच तो यों है कि तुमने मुझे बड़ा धोखा दिया !

कम० । (जिसे अब इसी नाम से लिखना उचित है) मैंने धोखा नहीं दिया बल्कि आप मुझे इस बात का जवाब तो दीजिए कि अगर आपने मुझे किशोरी समझा था तो इतनी ढिठाई करने की हिम्मत कैसे पड़ी ? क्योंकि किशोरी आपकी स्त्री नहीं थी !

इन्द्र० । क्या पागलपने की सी बातें कर रही हो ! अगर किशोरी मेरी स्त्री नहीं थी तो क्या तुम मेरी स्त्री थीं !

कम० । अगर आपने मुझे किशोरी समझा था तो आप को मेरे पास से उठ जाना चाहिए था । जब कि आप जानते हैं कि किशोरी कुमार के साथ ब्याही गई है तो आप को उसके पास बैठने या उससे बातचीत करने का क्या हक था ?

इन्द्र० । तो क्या मैं इन्द्रजीतसिंह नहीं हूँ ? बल्कि उचित तो यह था कि तुम मेरे पास से उठ जातीं ! जब तुम कमलिनी थीं तो तुम्हें पराये मर्द के पास बैठना भी न चाहिये था !!

कम० । (ताज्जुब और कुछ क्रोध का चेहरा बना कर) फिर आप वही बातें कहे जाते हैं ? आप अपने को समझ ही क्या रहे हैं ? पहिले आप आइने में अपनी सूरत देखिये और तब कहिये कि आप किशोरी के पति हैं या कमलिनी के ! (आले पर से आईना उठा और कुमार को दिखाकर) बताईये आप कौन हैं ? और मैं क्यों आपके पास से उठ जाती ?

अब तो कुमार के ताज्जुब का कोई हद न रहा, क्योंकि आइने पर उन्होंने अपनी सूरत में फर्क पाया । यह तो नहीं कह सकते थे कि किस आदमी की सूरत मालूम पड़ती है क्योंकि ऐसे आदमी को कभी देखा भी न था, मगर इतना जरूर कह सकते थे कि सूरत बदल गई है और अब वे इन्द्रजीतसिंह नहीं मालूम पड़ते । इन्द्रजीतसिंह समझ गये कि किसी ने मेरे और कमलिनी के साथ चाल-

बाजी करके दोनों का धर्म नष्ट किया और इसमें बेचारी कमलिनी का कोई कसूर नहीं है मगर फिर भी कमलिनी को आज का सामान देखकर चौंकना चाहिये था। हां ताज्जुब की बात तो यह है कि इस घर में आने के पहिले मुझे किसी ने टोका भी नहीं! तो क्या इस घर में आने के बाद मेरी सूरत बदली गई? मगर ऐसा भी क्योंकर हो सकता है? इत्यादि बातें सोचते हुए कुमार कमलिनी का मुँह देखने लगे। कमलिनी ने आइना हाथ से रख दिया और पूछा, "अब बताइये आप कौन हैं?" इस जवाब में इन्द्रजीतसिंह ने कहा, "अब मै भी अपना मुँह धो डालूँ तो कहूँ।"

इतना कह कर कुमार ने भी जल से अपना चेहरा साफ किया और रूमाल से पोंछने के बाद कमलिनी की तरफ देख के कहा—"अब तुम ही बताओ कि मैं कौन हूँ?"

कम०। अरे! यह क्या हुआ! तुम तो बेशक बड़े कुमार हो? मगर तुमने मेरे साथ ऐसा क्यो किया? तुम्हें जरा भी धर्म का विचार न हुआ? बताओ, अब मैं किस लायक रह गई और क्या कर सकती हूँ? लोगों को कैसे अपना मुँह दिखाऊँगी और इस दुनिया में क्यों कर रहूँगी?

इन्द्रजीत०। जिसने ऐसा किया वह बेशक मारे जाने के लायक है। मैं उसे कभी जीता न छोड़ूँगा क्योंकि ऐसा होने से मेरा धर्म नष्ट हुआ और इस बदनामी को मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता मगर यह तो बताओ कि आज का सामना देख कर तुम्हारे दिल में किसी तरह का शक पैदा न हुआ?

कमलिनी०। क्यों कर शक पैदा हो सकता था जब कि आप ही कि तरह मेरे लिए भी 'सोहागरात' आज ही तै की गई थी! मैं नहीं कह सकती कि दूसरी तरफ का क्या हाल है! ताज्जुब नहीं कि जिस तरह मैं धोखे में डाली गई उसी तरह किशोरी के साथ भी बेईमानी की गई हो और आपके बदले में किशोरी मेरे पति के पास पहुँच गई हो!!

ओ हो! कमलिनी की इस बात ने तो कुमार की रही सही अक्ल भी खो दी! जिस बात का अब तक कुमार के दिल में ध्यान भी न था उसे समझा कर तो कमलिनी ने अनर्थ कर दिया। व्याह हो जाने पर भी किशोरी किसी दूसरे मर्द के पास भेजी जाय, क्या इस बात को कुमार बर्दाश्त कर सकते थे? कभी

नहीं ! सुनने के साथ ही मारे क्रोध के उनका शरीर कांपने लगा और वे घबड़ा कर कमलिनी से बोले, "यह तो तुमने ठीक कहा ! ताज्जुब नहीं कि ऐसा हुआ हो ! लेकिन अगर ऐसा हुआ होगा तो मैं उन दोनों को इस दुनिया से उठा दूँगा !!"

इतना कह कर कुमार ने अपनी तलवार उठा ली जो गद्दी पर पड़ी हुई थी और कमरे के बाहर जाने लगे। उस समय कमलिनी ने कुमार का हाथ पकड़ लिया और कहा, "कृपानिधान ! जरा मेरी एक बात का जवाब दे दीजिये तो यहां से जाइये !"

इन्द्रजीत०। कहो।

कमलिनी०। आपका धर्म नष्ट हुआ, खैर कोई चिन्ता नहीं, क्योंकि धर्म-शास्त्र में मर्दों के लिये कोई कड़ी पाबन्दी नहीं लगाई गई है, मगर औरतों को तो किसी लायक नहीं छोड़ा है। आपके लिये तो प्रायश्चित्त भी है मगर मेरे लिये तो कोई प्रायश्चित्त भी नहीं जिसे कर मैं सुधर जाऊँगी। इतना जान कर भी मेरा धर्म नष्ट होने पर आपको उतना रंज और क्रोध नहीं हुआ जितना यह सोच कर हुआ कि किशोरी की भी ऐसी ही दशा हुई होगी ! ऐसा क्यों ? क्या मेरा पति कमजोर और नामर्द है ? क्या वह भी आपकी ही तरह क्रोध में न आया होगा ? क्या इसी तरह वह भी तलवार लेकर मेरी और आपकी खोज में न निकला होगा आप जल्दी क्यों करते हैं, वह खुद यहाँ आता होगा क्योंकि वह आपसे ज्यादे क्रोधी है, मैं तो खुद उसके सामने अपनी गर्दन झुका दूँगी !!

कुमार को क्रोध पर क्रोध रञ्ज पर रञ्ज और अफसोस पर अफसोस होता ही जाता था। कमलिनी की इस आखिरी बात ने कुमार के दिल में दूसरा ही रंग पैदा कर दिया। उन्होंने घबड़ा कर एक लम्बी साँस ली और ऊपर की तरफ मुँह करके कहा, "विधाता ! तूने यह क्या किया ? मैंने कौन सा ऐसा पाप किया था जिसके बदले में इस खुशी को ऐसे रञ्ज के साथ तूने बदल दिया ! अब मैं क्या करूँ ? क्या अपने हाथ से अपना गला काट कर निश्चिन्त हो जाऊँ ? मुझपर आत्मघात का दोष तो नहीं लगाया जायगा !"

इन्द्रजीतसिंह ने इतना ही कहा था कि कमरे का दूसरा दर्वाजा जिसे कुमार बन्द समझते थे खुला और किशोरी तथा कमला अन्दर आती हुई दिखाई पड़ीं। कुमार ने समझा कि बेशक किशोरी इसी ढंग का उराहना लेकर आई

होगी, मगर उन दोनों के चेहरों पर हँसी देख कर कुमार को ताज्जुब हुआ और यह देखकर उनका ताज्जुब और भी बढ़ गया कि किशोरी और कमला को देख कर कमलिनी खिलखिला कर हँस पड़ी और किशोरी से बोली—"लो बहिन! आज मैंने तुम्हारे पति को अपना बना लिया!" इसके जवाब में किशोरी बोली, "तुमने पहिले ही अपना बना लिया था, आज की बात ही क्या है!!"

* बाईसवाँ हिस्सा समाप्त *

स्वर्ग-पुरी

श्री दुर्गाप्रसाद खत्री रचित। वही वैज्ञानिक, जिसे समुद्र के पानी से सोना निकालने की तर्कीब मिल गई थी, इस उपन्यास का भी नायक है। जब दुनिया भर के अमीर और चालाक उसके पीछे पड़ गए तब अपनी जान बचाने की नीयत से उसने समुद्र के भीतर एक मकान बनवाया और उसके अन्दर रहने लगा। धीरे धीरे वह मकान बढ़ कर एक महल और महल से बढ़ कर एक नगर हो गया इस नगर का नाम उसने स्वर्ग-पुरी रक्खा और इसमें रहने के लिये एक से एक बुद्धिमान, विचारवान और पढ़े लिखे विद्वानों को बुलाने लगा। जो अपनी मर्जी से न आवे उसे रुपये की लालच दे कर बुलाने लगा—रुपै की तो उसके पास कुछ कमी थी ही नहीं। इन विद्वानों की मदद से अपनी स्वर्गपुरी को उसने सचमुच स्वर्गपुरी बना डाला। सब काम वहाँ बिजली के जोर से हुआ करते थे। परिश्रम तो किसी को कुछ करना ही नहीं पड़ता था। वहां चलने फिरने तक की जरूरत नहीं पड़ती थी। पर ऐसी स्वर्गपुरी में भी नर्क के कीड़े आखिर पहुँच ही गए। कुछ बाहरी आदमियों को इस स्वर्गपुरी की सुनगुन लग गई और वे उसके अन्दर घुसने की कोशिश करने लगे। उनकी मदद करी समुद्र के कुछ भयानक जीव जन्तुओं ने जो उस स्वर्गपुरी के निवासियों को मार मार कर खा जाने लगे। अब तो उस वैज्ञानिक की जान अजीब आफत में पड़ गई। इस दोतरफी हमले से बचना उसके लिये कठिन हो गया। स्वर्गपुरी नर्कपुरी होने लगी। तब उसने क्या किया सो इस उपन्यास में पढ़िये। अद्भुत और रोचक किस्सा है।

* श्रीः *

चन्द्रकान्ता सन्तति

तेईसवां हिस्सा

—०—

पहिला बयान

सोहागरात के दिन कुंअर इन्द्रजीतसिंह जैसे तरद्दुद और फेर में पड़ गये थे वैसा तो नहीं मगर करीब करीब उसी ढंग का बखेड़ा कुंअर आनन्दसिंह के साथ भी मचा अर्थात् उसी दिन रात के समय जब आनन्दसिंह और कामिनी का एक कमरे में मेल हुआ तो आनन्दसिंह छेड़छाड़ करके कामिनी की शर्म को तोड़ने और कुछ बातचीत करने के लिये उद्योग करने लगे मगर लज्जा और संकोच के बोझ से कामिनी हर तरह दबी जाती थी। आखिर थोड़ी देर की मेहनत और चालाकी तथा बुद्धिमानी की बदौलत आनन्दसिंह ने अपना मतलब निकाल ही लिया और कामिनी भी जो बहुत दिनों से दिल के खजाने में आनन्दसिंह की मुहब्बत को हिफाजत के साथ छिपाये हुए थी, लज्जा और डर को बिदाई का बीड़ा दे कुमार से बातचीत करने लगी।

जब रात लगभग दो घण्टे के बाकी रह गई तो कामिनी जाग पड़ी और घबराहट के साथ चारो तरफ देख के सोचने लगी कि कहीं सवेरा तो नहीं हो गया क्योंकि कमरे के सभी दर्वाजे बन्द रहने के कारण आसमान दिखाई नहीं

देता था। उस समय आनन्दसिंह गहरी नींद में सो रहे थे और उनके खुर्राटों की आवाज से मालूम होता था कि ये अभी दो तीन घण्टे तक बिना जगाये नहीं जाग सकते अस्तु कामिनी अपनी जगह से उठी और कमरे की छोटी छोटी कई खिड़कियों (छोटे दर्वाजों) में से जो मकान के पिछली तरफ पड़ती थीं एक खिड़की खोल कर आस्मान की तरफ देखने लगी। इस तरफ से पति-तपावनी भगवती जान्हवी के तरल तरंगों की सुन्दर छटा दिखाई देती थी जो उदास से उदास और बुझे हुए दिल को भी एक दफे प्रसन्न करने की सामर्थ्य रखती थी परन्तु इस समय अन्धकार के कारण कामिनी उस छटा को नहीं देख सकती थी और इसी सबब से आसमान की तरह देख कर भी वह इस बात का पता न लगा सकी कि अब रात कितनी बाकी है, मगर सवेरा होने में अभी देर है इतना जान कर उसके दिल का कुछ भरोसा जरूर हुआ। उसी समय सरकारी पहरे वाले ने घड़ी बजाई जिसे सुन कर कामिनी ने निश्चय कर लिया कि रात अभी दो घण्टे से कम बाकी नहीं है। उसने उसी तरफ की एक और खिड़की भी खोल दी और तब उस जगह चली गई जहां चौकी के ऊपर गंगा जमनी लोटे में जल रक्खा हुआ था। उसी चौकी पर से एक रूमाल उठा लिया और उसे गीला करके अपना मुंह अच्छी तरह पोंछने अथवा धोने के बाद रूमाल खिड़की के बाहर फेंक दिया और तब उस जगह चली आई जहां आनन्दसिंह गहरी नींद में सो रहे थे।

कामिनी ने आंचल के कपड़े से एक मामूली बत्ती बनाई और नाक में डाल कर उसके जरिये से दो तीन छींक मारी जिसकी आवाज से आनन्दसिंह की आंख खुल गई और उन्होंने अपने पास कामिनी को बैठे हुए देख कर ताज्जुब से कहा, "हैं, तुम बैठी क्यों हो ? खैरियत तो है ?"

कामिनी०। जी हां मेरी तबियत तो अच्छी है मगर तरद्दुद और सोच के मारे नींद नहीं आती, बहुत देर से जाग रही हूँ।

आनन्द०। (उठ कर) इस समय कौन से तरद्दुद और सोच ने तुम्हें आ घेरा है ?

कामिनी०। क्या कहूँ, कहते हुए भी शर्म मालूम पड़ती है ?

आनन्द०। आखिर कुछ कहो तो सही, शर्म कहां तक करोगी ?

कामिनी० । खैर मैं कहती हूँ मगर आप बुरा तो न मानेंगे ?

आनन्द० । मैं कुछ भी बुरा न मानूंगा, तुम्हें जो कुछ कहना है कहो ।

कामिनी० । बात केवल इतनी ही है कि मैं छोटे कुमार से एक दिल्लगी कर बैठी हूँ मगर आज उस दिल्लगी का भेद जरूर खुल गया होगा इसलिये सोच रही हूँ कि अब क्या करूं ? इस समय कामिनी बहिन से भी मुलाकात नहीं हो सकती जो उसको कुछ समझा बुझा देती ।

आनन्द० । (ताज्जुब में आकर) तुमने कोई भयानक सपना तो नहीं देखा जिसका असर अभी तक तुम्हारे दिमाग में घुसा हुआ है ? यह मामला क्या है ? तुम कैसी बातें कर रही हो ?

कामिनी० । जी नहीं कोई विशेष बात नहीं है और मैंने कोई भयानक सपना भी नहीं देखा, बात केवल इतनी ही है कि मैं हंसी हंसी में छोटे कुमार से कह चुकी हूँ कि 'मेरी शादी अभी तक नहीं हुई है और मैं प्रतिज्ञा कर चुकी हूँ कि ब्याह कदापि न करूंगी ।' बस आज ताज्जुब नहीं कि कामिनी बहिन ने मेरा सच्चा भेद खोल दिया हो और कह दिया हो कि 'लाडिली की शादी तो कमलिनी की शादी के साथ ही साथ अर्थात् दोनों की एक ही दिन हो चुकी है, और आज उसकी भी सोहागरात है ।' अगर ऐसा हुआ तो मुझे बड़ी शर्म.....

आनन्द० । (ताज्जुब और घबड़ाहट से) तुम तो पागलों की सी बातें कर रही हो, आखिर तुमने अपने को और मुझको समझा ही क्या है ? जरा घूंघट हटा कर बातें करो ! तुम्हारा मुंह तो दिखता ही नहीं !!

कामिनी० । नहीं मुझे इसी तरह बैठे रहने दीजिये। आपने क्या कहा मैं कुछ भी नहीं समझी, इसमें पागलपने की कौन सी बात है ?

आनन्द० । तुमने जरूर कोई ऐसा सपना देखा है जिसका असर अभी तक तुम्हारे दिमाग में बना हुआ है और तुम अपने को लाडिली समझती हो । ताज्जुब नहीं कि लाडिली ने तुमसे वे बातें कही हों जो उसने मुझसे दिल्लगी के ढंग पर की थीं ।

कामिनी० । मुझे आपकी बातों पर ताज्जुब मालूम पड़ता है । मैं समझती हूँ कि आप ही ने कोई अनूठा स्वप्न देखा है और यह भी देखा है कि कामिनी आपके बगल में पड़ी हुई है जिसका खयाल अभी तक बना हुआ है और मुझे

आप कामिनी समझ रहे हैं। भला सोचिये तो सही कि छोटे कुमार (आनन्दसिंह) को छोड़कर कामिनी आपके पास आने ही क्यों लगी ? कहीं आप मुझसे दिल्लगी तो नहीं कर रहे हैं ?

कामिनी की आखिरी बात को सुन कर आनन्दसिंह बहुत ही बेचैन हो गये और उन्होंने घबड़ा कर कामिनी के मुंह पर से घूंघट हटा दिया शमादान की रोशनी में उसका खूबसूरत चेहरा देखते ही वे चौंक पड़े और बोले—"हैं ! यह मामला क्या है, लाडिली को मेरे पास आने की क्या जरूरत थी ? बेशक तुम लाडिली मालूम पड़ती हो ! कहीं तुमने अपना चेहरा रंगा तो नहीं है ?"

कामिनी०। (घबराहट के ढंग पर) आपकी बातें तो मेरे दिल में हौल पैदा करती हैं ! न मालूम आप क्या कह रहे हैं और इस बात को क्यों नहीं सोचते कि कामिनी को आपके पास आने की जरूरत ही क्या थी ?

आनन्द०। (बेचैनी के साथ) पहिले तुम अपना चेहरा धो डालो तो मैं तुमसे बातें करूं ! तुम मुझे जरूर धोखा देती हो ! अपनी सूरत लाडिली की सी बना कर मेरी जान सांसत में डाल रही हो, मैं अभी तक तुम्हें कामिनी समझ रहा था और समझता हूँ।

कामिनी०। (ताज्जुब से आनन्दसिंह की सूरत देखकर) आपकी बातें तो कुछ विचित्र ढंग की हो रही हैं ! जब आप मुझे कामिनी समझते हैं तो अपने को भी जरूर आनन्दसिंह समझते होंगे ?

आनन्द०। इसमें शक ही क्या है ? क्या मैं आनन्द नहीं हूँ ?

कामिनी०। (अफसोस से हाथ मल कर) हे परमेश्वर ! आज इनको क्या हो गया है ?

आनन्द०। बस तुम अपना चेहरा पहिले धो डालो तो मुझसे बातें करो ! तुम नहीं जानतीं कि इस समय मेरे दिल की कैसी अवस्था है।

कामिनी०। ठहरिये ठहरिये, मैं बाहर जा कर सभों को इस बात की खबर देती हूँ कि आपको कुछ हो गया है। मुझे आपके पास बैठते डर लगता है ! हे परमेश्वर !!

आनन्द०। तुम तो नाहक मेरी जान को दुःख दे रही हो ! पास ही तो पानी पड़ा है, अपना चेहरा क्यों नहीं धो डालतीं ? मुझे ऐसी दिल्लगी अच्छी

नहीं मालूम होती ! खैर अब बहुत हो गया, तुम उठो !

कामिनी० । मेरे चेहरे में क्या लगा है जो धो डालूं ? आप ही क्यों नहीं अपना चेहरा धो डालते ! क्या मुंह में पानी लगा कर मैं लाडिली से कोई दूसरी ही औरत बन जाऊंगी ? या आप मुंह धोकर छोटे कुमार बन जायेंगे ?

आनन्द० । (बेचैनी से, बिगड़ कर) बस बस, अब मैं बर्दाश्त नहीं कर सकता और न ज्यादे देर तक ऐसी दिल्लगी सह सकता हूँ ! मैं हुक्म देता हूँ कि तुम अपना चेहरा धो डालो, नहीं तो तुम्हारे साथ जबर्दस्ती की जायगी, फिर पीछे दोष न देना !

यह सुनते ही कामिनी घबड़ा कर उठ खड़ी हुई और यह कहती हुई कि 'आज भोर ही भोर ऐसा दुर्दशा में फंसी हूँ, न मालूम दिन कैसा बीतेगा।' उस चौकी के पास चली गई जिस पर गंगाजमनी लोटा जल से भरा हुआ रक्खा था और पास ही में एक बड़ा सा आफताबा भी था। पानी से अपना चेहरा साफ किया और दो चार कुल्ली करने के बाद रुमाल से मुंह पोंछ आनन्दसिंह से बोली, "कहिये मैं वही हूँ कि बदल गई ?"

कामिनी के साथ ही साथ आनन्दसिंह भी बिछावन पर से उठ कर वहां तक चले आये थे जहां पानी और आफताबा रक्खा हुआ था। जब कामिनी ने मुंह धा कर उनकी तरफ देखा तो कुमार के ताज्जुब का कोई हद्द न रहा और वह पत्थर की मूरत बन कर एक टक उसकी तरफ देखते खड़े रह गये। इस समय खिड़कियों में से आसमान पर सुबह की सुफेदी फैली हुई दिखाई दे रही थी और कमरे में रोशनी की भी कमी न थी।

कामिनी० । (कुछ चिढ़ी हुई आवाज से) कहिये कहिये, क्या मैं मुंह धोने से कुछ बदल गई ? आप बोलते क्यों नहीं ?

आनन्द० । (एक लम्बी सांस लेकर) अफसोस ! तुम्हारे घूंघट ने मुझे धोखा दिया ! अगर मिलाप के पहिले तुम्हारी सूरत देख लेता तो धर्म नष्ट क्यों होता !!

कामिनी० । (जिसे अब हम लाडिली लिखेंगे क्योंकि वह वास्तव में लाडिली ही है) फिर भी आप उसी ढंग की बातें कर रहे हैं और अभी तक अपने को छोटे कुमार समझते हैं ! इतना हिलने डोलने पर भी आपके दिमाग से स्वप्न

का गुब्बार न निकला (कमरे में लटकते हुए एक बड़े आइने की तरफ उंगली से इशारा करके) अब आप उसमें अपना चेहरा देख लीजिये तो मुझसे बातें कीजिये !

कुंअर आनन्दसिंह भी यही चाहते थे, अस्तु वे उस आइने के सामने चले गये और बड़े गौर से अपनी सूरत देखने लगे। लाडिली भी उनके साथ ही साथ उस आइने के पास चली गई और जब वे ताज्जुब के साथ आईने में अपना चेहरा देख रहे थे तो बोली, "कहिये अब भी आप अपने को छोटे कुमार ही समझते हैं या कोई और ?

क्रोध के साथ ही साथ शर्मिन्दगी ने भी आनन्दसिंह पर अपना कब्जा कर लिया और वे घबड़ा कर अपनी पौशाक पर ध्यान देने लगे मगर उसमें किसी तरह की खराबी न पा कर उन्होंने पुनः लाडिली की तरह देखा और कहा, "यह क्या मामला है ? मेरी सूरत किसने बदली ?"

लाडिली०। (ताज्जुब और घबराहट के ढंग पर) क्या आप अपनी सूरत बदली हुई समझते हैं ?

आनन्द०। बेशक !!

लाडिली०। (अफसोस के साथ हाथ मल कर) अफसोस! अगर यह बात ठीक है तो बड़ा ही गजब हुआ !!

आनन्द०। जरूर ऐसा ही है, मैं अभी अपना चेहरा धोता हूँ !

इतना कह कर कुंअर आनन्दसिंह उस चौकी के पास चले गये जिस पर पानी रक्खा हुआ था और अपना चेहरा धोने लगे। पानी पड़ते ही हाथ पर रंग उतर आया जिस पर निगाह पड़ते ही लाडिली चौंकी और रंज के साथ बोली, "बेशक चेहरा रंगा हुआ है ! हाय, बड़ा ही गजब हो गया ! मैं बे मौत मारी गई ! मेरा धर्म नष्ट हुआ ! अब मैं अपने पति के सामने किस मुंह से जाऊंगी और अपनी हमजोलियों की बातों का क्या जवाब दूँगी ! औरतों के लिये यह बड़े शर्म की बात है ! नहीं नहीं—बल्कि औरतों के लिये यह घोरपातक है कि पराये मर्द का संग करें !' सच तो यों है कि पराये मर्द का शरीर छू जाने से भी प्रायश्चित लगता है और बात का तो कहना ही क्या है ! हाय ! मैं बर्बाद हो गई और कहीं की भी न रही ! इसमें कोई सन्देह नहीं कि आपने

जान बूझकर मुझे मिट्टी में मिला दिया !!

आनन्द० । [अच्छी तरह चेहरा धोने के बाद रूमाल से मुंह पोछ कर] क्या कहा ? क्या जान बूझ कर मैंने तुम्हारा धर्म नष्ट किया ?

लाडिली० । बेशक ऐसा ही है, मैं इस बात की दुहाई दूंगी और लोगों से इन्साफ चाहूँगी ।

आनन्द० । क्या मेरा धर्म नष्ट नहीं हुआ ?

लाडिली० । मर्दों के धर्म का क्या कहना है और उनका बिगड़ता ही क्या है जो दस दस पन्द्रह पन्द्रह ब्याह से भी ज्यादे कर सकते हैं ! बर्बादी तो औरतों के लिये है । इसमें कोई शक नहीं कि आपने जान बूझ कर मेरा धर्म नष्ट किया ! जब आप छोटे कुमार ही थे तो आपको मेरे पास से उठ जाना चाहिये था या मेरे पास बैठना ही मुनासिब न था ।

आनन्द० । मैं कसम खाकर कहता हूँ कि मैंने तुम्हारी सूरत घूंघट के सबब से अच्छी तरह नहीं देखी, एक दफे ऐंचातानी में निगाह पड़ भी गई थी तो तुम्हें कामिनी ही समझा था और इसके लिये भी मैं कसम खाता हूँ कि मैंने तुम्हें धोखा देने के लिये जानबूझ कर अपनी सूरत नहीं रंगी है बल्कि मुझे इस बात की खबर भी नहीं है कि मेरी सूरत किसने रंगी या क्या हुआ !

लाडिली० । अगर आपका यह कहना ठीक है तो समझ लीजिये कि और भी गजब हो गया ! मेरे साथ ही साथ कामिनी भी बर्बाद हो गई होगी । जिस धर्मात्मा ने धोखा दे कर मेरा संग आपके साथ करा दिया है, उसने कामिनी को भी जो आपके साथ ब्याही गई है, जरूर धोखा देकर मेरे पति के पलंग पर सुला दिया होगा !

यह एक ऐसी बात थी जिसे सुनते ही आनन्दसिंह का रंग बदल गया । रंज और अफसोस की जगह क्रोध ने अपना दखल जमा लिया और कुछ सुस्त तथा ठण्डी रगों में बेमौके हरारत पैदा हो गई जिससे बदन कांपने लगा । उन्होंने लाल आंखें करके लाडिली की तरफ देखा और कहा—"क्या कहा ? तुम्हारे पति के पलंग पर कामिनी ! यह किसकी मजाल है कि..."

लाडिली० । ठहरिये ठहरिए, आप गुस्से में न आ जाइये । जिस तरह आप अपनी और कामिनी की इज्जत को समझते हैं उसी तरह मेरी और मेरे पति

की इज्जत पर भी आपको ध्यान देना चाहिये। मेरी बर्बादी पर तो आपको गुस्सा न आया और कामिनी का भी मेरा ही सा हाल सुन कर आप जोश में आकर उछल पड़े, अपने आपे से बाहर हो गये और आपको बदला लेने की धुन सवार हो गई! सच है, दुनिया में किसी बिरले ही महात्मा को हमदर्दी और इन्साफ का ध्यान रहता है। दूसरे पर जो कुछ बीती या बीतती है उसका अन्दाजा किसी को तब तक नहीं लग सकता जब तक उस पर भी वैसी ही न बीते। भूख का दुःख भूखा और प्यास का दुःख प्यासा ही समझ सकता है। जिसने कभी एक उपवास भी नहीं किया है, वह अकाल के मारे भूखे गरीबों पर उचित और सच्ची हमदर्दी नहीं कर सकता यों उनके उपकार के लिये भले ही बहुत कुछ जोश दिखावे और कुछ कर भी बैठे। ताज्जुब नहीं कि हमारे बुजुर्ग और बड़े लोग इसी खयाल से बहुत से व्रत चला गये हों और इससे उनका मतलब यह भी हो कि 'स्वयं भूखे रह कर देख लो तब भूखों की कदर कर सकोगे।' दूसरे के गले पर छुरी चला देना कोई बड़ी बात नहीं है मगर अपने गले पर सुई से भी एक निशान नहीं किया जाता। जो दूसरों की बहू बेटियों को झांका करते हैं वे अपनी बहू बेटियों का झांका जाना सहन नहीं कर सकते। बस इसी से समझ लीजिये कि मेरी बर्बादी पर अपको अगर कुछ खयाल हुआ तो केवल इतना ही कि बस कसम खा कर अफसोस करने लगे और चाहने लगे कि मेरे दिल से किसी तरह इस बात का रंज निकल जाय मगर कामिनी का भी मेरे ही ऐसा हाल सुन कर ध्यान से बाहर हो गये! बस यही इन्साफ है और यही हमदर्दी! इसी दिल को लेकर आप राजा बनेंगे और राज काज करेंगे!!

लाडिली की जोश भरी बातें सुन कर आनन्दसिंह सहम गये और शर्म ने उनकी गर्दन झुका दी। वह सोचने लगे कि क्या करूं और इसकी बातों का क्या जवाब दूं? उसी समय कमरे का एक दर्वाजा खुला (जो शायद धोखे में खुला रह गया होगा) और इन्द्रदेव की लड़की इन्दिरा को साथ लिये हुए कामिनी आती हुई दिखाई पड़ी।

लाडिली०। लीजिये! कामिनी बहिन भी आ पहुँचीं! ताज्जुब नहीं कि ये भी अपना हाल कहने के लिये आई हों, (कामिनी से) लो बहिन! आज हम तुम्हारे बराबर हो गये!!

कामिनी० । बराबर नहीं बल्कि बढ़ के !!

दूसरा बयान

रात पहर भर से ज्यादे जा चुकी है । महल के अन्दर एक सजे हुए कमरे में एक तरफ रानी चन्द्रकान्ता चपला और चम्पा बैठी हुई हैं और उनके पास ही थोड़ी दूर पर राजा बीरेन्द्रसिंह गोपालसिंह और भैरोसिंह बैठे आपुस में कुछ बातचीत कर रहे हैं ।

चन्द्र० । (बीरेन्द्रसिंह से) सच्चा सच्चा हाल मालूम होना तो दूर रहा मुझे इस बात का किसी तरह कुछ गुमान भी न हुआ । इस समय मैं दुलहिनों की सोहागरात का इन्तजाम देख सुन कर यहां आई और दिन भर की थकावट से सुस्त होकर पड़ रही, जी में आया कि घण्टे दो घण्टे सो रहूँ मगर इसी बीच में चपला बहिन आ पहुँचीं और बोलीं, 'लो बहिन, मैं तुम्हें एक अनूठा हाल सुनाती हूँ जिसकी अब तक हम लोगों को कुछ भी खबर न थी !!" बस इतना कह कर बैठ गईं और फिर कहने लगीं कि 'कमलिनी और लाडिली की शादी तिलिस्म के अन्दर ही इन्द्रजीत और आनन्द के साथ हो चुकी है जिसके बारे में अब तक हम लोगों को किसी ने कुछ भी नहीं कहा था, इस समय लड़के (भैरोसिंह) ने मुझसे कहा है । सुनते ही मैं धक्क हो गई कि या राम ! यह कौन सी बात थी जिसे अभी तक सब कोई छिपाये बैठे रहे !!

चपला० । (भैरोसिंह की तरफ इशारा करके) सामने तो बैठा हुआ है, पूछिये इससे इस समय के पहिले कभी कुछ कहा था ! यद्यपि दोनों की शादियां इसके सामने ही तिलिस्म के अन्दर हुई थीं ।

बीरेन्द्र० । मुझे भी इस विषय में किसी ने कुछ भी नहीं कहा था, अभी थोड़ी देर हुई कि गोपालसिंह ने यह हाल पिताजी से बयान किया तब मालूम हुआ ।

चन्द्र० । यही सुन के तो मैंने आपको तकलीफ दी क्योंकि आप की जुबानी सुने बिना मेरी दिलजमई नहीं हो सकती थी ।

बीरेन्द्र० । जो कुछ तुमने सुना सब ठीक है ।

चन्द्र० । मजा तो यह है कि लड़कों ने भी मुझसे इस बात की कुछ चर्चा नहीं की !

बीरेन्द्र०। लड़कों को तो खुद ही इस बात की खबर नहीं है कि उनकी शादी कमलिनी और लाडिली के साथ हुई थी।

चन्द्र०। यह तो आप और भी ताज्जुब की बात करते हैं? भला यह कैसे हो सकता है कि जिनकी शादी हो उन्हीं को पता न लगे कि मेरी शादी हो गई है। इस पर कौन विश्वास करेगा?

बीरेन्द्र०। बात ही ऐसी हो गई थी और यह शादी जान बूझ कर किसी मतलब से छिपाई गई थी! (गोपालसिंह की तरफ इशारा कर के) अब ये खुलासा हाल तुमसे बयान करेंगे तब तुम समझ जाओगी कि ऐसा क्यों हुआ।

गोपाल०। मैं सब हाल आपसे खुलासा बयान करता हूँ और आशा करता हूँ कि आप मेरा कसूर माफ करेंगे क्योंकि यह सब मेरी ही करतूत है और मैं ही ने यह शादी कराई है।

चन्द्र०। अगर तुमने ऐसा किया तो छिपाने की क्या जरूरत थी? क्या हम लोग तुमसे रंज हो जाते? या हम लोग इस बात को नहीं समझते कि जो कुछ तुम करोगे अच्छा ही समझ के करोगे!

गोपाल०। ठीक है मगर किया क्या जाय, इस बात को छिपाये बिना काम नहीं चलता था, यही तो सबब हुआ कि खुद दोनों कुमारों को भी इस बात का पता न लगा कि उनकी शादी फलाने के साथ हो गई है।

चन्द्र०। आखिर ऐसा किया क्यों गया सो तो कहिये?

गोपाल०। इसका सबब यह है कि एक दिन कमला मेरे पास आई और बोली कि 'मैं आपसे एक जरूरी बात कहा चाहती हूँ जिस पर आपको विशेष ध्यान देना होगा।' मैंने पूछा—"क्या?" इस पर उसने जवाब दिया कि कमलिनी ने जो कुछ अहसान हम लोगों पर, खास करके दोनों कुमारों तथा किशोरी और कामिनी पर किये हैं वह किसी से छिपा नहीं है। किशोरी का खयाल है कि 'इसका बदला किसी तरह अदा हो ही नहीं सकता, और बात भी ऐसी ही है, अस्तु किशोरी ने बात ही बात में अपने दिल का हाल मुझसे कह दिया और इस बारे में जो कुछ उसने सोच रक्खा था वह भी बयान किया। किशोरी कहती है कि अगर मैं शादी न करूं या शादी होने के पहिले ही इस दुनिया से उठ जाऊं तो उसके अहसान और ताने से कुछ बच सकती हूँ। इस विषय

पर जब मैंने बहुत कुछ किशोरी को समझाया तो बोली कि 'खैर अगर मेरी शादी के पहिले कमलिनी की शादी कुंअर इन्द्रजीतसिंह के साथ हो जायगी तब मैं सुख से अपनी जिन्दगी बिता सकूंगी और उसके अहसान से भी हलकी हो जाऊंगी क्योंकि ऐसा होने से कमलिनी को पटरानी की पदवी मिलेगी और उसी का लड़का गद्दी का मालिक समझा जायगा। मैं छोटी रानी और कमलिनी की लौंडी हो कर रहूँगी तब मेरे दिल को तस्कीन होगी और मैं समझूंगी कि कमलिनी के अहसान का बोझ मेरे सिर से उतर गया।'

चन्द्र०। शाबाश! शाबाश!!

बीरेन्द्र०। बेशक किशोरी ने बड़े हौसले की और लासानी बात सोची!

चपला०। बेशक बेशक, यह साधारण काम नहीं है, यह बड़े कलेजे वाली औरतों का काम है, और इससे बढ़ कर किशोरी कुछ कर ही नहीं सकती थी।

गोपाल०। मैंने जब कमला की जुबानी यह बात सुनी तो दंग हो गया और मन में किशोरी की तारीफ करने लगा। सच तो यों है कि यह बात मेरे दिल में भी जम गई। अस्तु मैंने कमला से वादा तो कर दिया कि 'ऐसा ही होगा' मगर तरद्दुद में पड़ गया कि यह काम क्यों कर किशोरी की इच्छानुसार पूरा होगा क्योंकि यह बात बड़ी ही कठिन बल्कि असम्भव थी कि इन्द्रजीतसिंह और कमलिनी इस राय को मंजूर करें। इसके अतिरिक्त यह भी उम्मीद नहीं हो सकती थी कि हमारे महाराज इस बात को स्वीकार कर लेंगे।

भैरो०। बेशक यह कठिन काम था, इन्द्रजीतसिंह इस बात को कभी मंजूर न करते।

गोपाल०। खैर कई दिन के सोच विचार में मैंने और भैरोसिंह ने मिल कर तर्कीब निकाल ली और किसी न किसी तरह कमलिनी और लाडिली को इन्द्रानी और आनन्दी बना कर दोनों की शादी इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह के साथ करा दी। उन दिनों कमलिनी के पिता बलभद्रसिंह भूतनाथ की मदद से छूट कर यहां (अथवा बगुले वाले तिलिस्मी मकान में) आ चुके थे अस्तु मैं तिलिस्म के अन्दर ही अन्दर यहा आया और बलभद्रसिंह को कन्यादान करने के लिये समझा बुझा कर जमानिया ले गया। * उस दिन भूतनाथ बहुत ही

* देखिये अट्ठारहवां हिस्सा, आठवाँ बयान।

परेशान हुआ था। मैं कृष्णाजिन्न की सूरत बना हुआ था और भैरोसिंह मेरे साथ था। हम लोग पहले दिन जब इस मकान में आये थे तो भूतनाथ और बलभद्रसिंह के नाम की एक एक चीठी दोनों की चारपाई पर रख के चले गये थे। बलभद्रसिंहजी की चीठी में उनकी दिलजमई के लिये एक अंगूठी भी रक्खी थी जो उन्होंने ब्याह के पहिले मुझे बतौर शगून के दी थी। इसके बाद दूसरे दिन फिर पहुँचे और भूतनाथ को अपना पूरा पूरा परिचय देकर बलभद्रसिंह जी को ले गये। उनके ले जाने का सबब भूतनाथ को ठीक ठीक कह दिया मगर साथ ही इसके इस बात की भी ताकीद कर दी थी कि यह हाल किसी को मालूम न होवे।

इतना कहते कहते गोपालसिंह कुछ देर के लिये रुके और फिर इस तरह कहने लगे :—

"पहिले तो मुझे इस बात की चिन्ता थी कि बलभद्रसिंह मेरा कहना मानेंगे या नहीं मगर उन्होंने इस बात को बड़ी खुशी से मंजूर कर लिया। अपनी लड़कियों से मिल कर वे बहुत ही प्रसन्न हुए और हम लोगों पर जो कुछ आफतें बीत चुकी थी उसे सुन सुना कर अफसोस करते रहे, फिर अपनी बीती सुना कर प्रसन्नता पूर्वक हम लोगों के काम में शरीक हुए अर्थात् इसी खुशी के साथ उन्होंने कमलिनी और लाडिली का कन्यादान कर दिया * इस काम में भैरोसिंह को भी कम तरद्दुद नहीं उठाना पड़ा बल्कि दोनों कुमार इनसे रंज भी हो गये थे क्योंकि इनको जुबानी असल बातों का उन्हें पता नहीं लगता था, अस्तु शादी हो जाने के बाद इस बात का बन्दोबस्त किया गया कि इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह इस अनूठे ब्याह का भूल जायं तथा इन्द्रानी और आनन्दी से मिलने की उम्मीद जाती रहे।

इसके बाद राजा गोपालसिंह ने और भी बहुत सा हाल बयान किया जो हम सन्तति के अट्ठारहवें हिस्से में लिख आये हैं और सब बातें सुन कर अन्त में चन्द्रकान्ता ने कहा, "खैर जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ, हम लोगों के लिये तो जैसी किशोरी और कामिनी हैं वैसी ही कमलिनी और लाडिली हैं, मगर किशोरी के नाना को इस बात का कुछ रंज हो तो ताज्जुब नहीं।"

*दे खिये अट्ठारहवां हिस्सा बारहवां बयान।

बीरेन्द्र०। पिताजी भी यही कहते थे। इसमें कोई शक नहीं कि किशोरी ने परले सिरे की हिम्मत दिखाई!

गोपाल०। साथ ही इसके यह भी समझ लीजिये कि कमलिनी ने इस बात को सहज ही में स्वीकार नहीं कर लिया, इसके लिये हम लोगों को बहुत कुछ उद्योग करना पड़ा। बात यह है कि कमलिनी भी किशोरी को जान से ज्यादे चाहती और मानती है।

चन्द्र०। मगर मुझे इस बात का अफसोस जरूर है कि इन दोनों की शादी में किसी तरह की तैयारी नहीं की गई और न कुछ धूमधाम ही हुई।

इसके बाद बहुत देर तक इस सभों में बातचीत होती रही।

तीसरा बयान

अब हम कुंअर इन्द्रजीतसिंह की तरफ चलते हैं और देखते हैं कि उधर क्या हो रहा है।

किशोरी और कमलिनी की बातचीत सुन कर कुंअर इन्द्रजीतसिंह से रहा न गया और उन्होंने बेचैनी के साथ उन दोनों की तरफ देख के कहा, "क्या तुम लोगों ने मुझे सताने और दुःख देने के लिये कसम खा ली है? क्यों मेरे दिल में हौल पैदा कर रही हो? असल असल बात क्यों नहीं बताती?"

किशोरी०। (मुस्कुराती हुई) यद्यपि मुझे आपसे शर्म करनी चाहिये मगर कमला और कमलिनी बहिन ने मुझे बेहया बना दिया तिस पर आज की दिल्लगी मुझे हंसाते हंसाते बेहाल कर रही है! आप बिगड़े क्यों जाते हैं! ठहरिये ठहरिये, जल्दी न कीजिये, और समझ लीजिये की मेरी शादी आपके साथ नहीं हुई। बल्कि कमलिनी की शादी आपके साथ हुई।

कुमार०। सो कैसे हो सकता है? और मैं क्यों कर ऐसी अनहोनी बात मान लूं!

कमलिनी०। अब आपकी हालत बहुत ही खराब हो गई! क्या कहूँ, मैं तो आपको अभी और छकाती मगर दया आती है इसलिये छोड़ देती हूँ। इसमें कोई शक नहीं कि मैंने आप से दिल्लगी की है मगर इसके लिये मैं आपसे इजाजत ले चुकी हूँ! अपनी (तर्जनी उंगल की अंगूठी दिखा कर) आप इसे

पहिचानते हैं ?

कुमार० । हां हां, मैं इस अंगूठी को खूब पहिचानता हूँ, तिलिस्म के अन्दर यह अंगूठी मैंने इन्द्रानी को दी थी मगर अफसोस !!

कमलिनी० । अफसोस न कीजिये, आपकी इन्द्रानी मरी नहीं बल्कि जीती जागती आपके सामने खड़ी है !

कमलिनी की इस आखिरी बात ने कुमार के दिल से आश्चर्य और दुःख को धो कर साफ कर दिया और उन्होंने खुशी खुशी कमलिनी और किशोरी का हाथ पकड़ लिया और कहा—"क्या यह सच है ?"

किशोरी० । जी हां सच है ।

कुमार० । और जिन दोनों को मैंने मरी हुई देखा था वे कौन थीं ?

किशोरी० । वे वास्तव में माधवी और मायारानी थीं जो तिलिस्म के अन्दर ही अपनी बदकारियों का फल भोग कर मर चुकी थीं ! आपके दिल से उस शादी का खयाल उठा देने के लिये वे दोनों लाशें इन्द्रानी और आनन्दी बना कर दिखा दी गई थीं, मगर वास्तव में इन्द्रानी यहीं मौजूद है और आनन्दी लाडिली थी जो आनन्दसिंह के साथ ब्याही गई थी । इस समय उधर भी ऐसा ही रंग मचा हुआ है ।

कुमार० । तुम्हारी बातों ने इस समय मुझे प्रसन्न कर दिया । विशेष प्रसन्नता तो इस बात से होती है कि तुम खुले दिल से इन बातों को बयान कर रही हो और कमलिनी में तथा तुममें पूरे दर्जे की मुहब्बत मालूम होती है । ईश्वर इस मुहब्बत को बराबर इसी तरह बनाये रहे (कमलिनी से) मगर तुमने मुझे बड़ा ही धोखा दिया ! ऐसी दिल्लगी भी कभी किसी ने नहीं सुनी होगी ! आखिर ऐसा किया ही क्यों ?

कमलिनी० । अब क्या सब बातें खड़े खड़े ही खतम होंगी और बैठने की इजाजत न दी जायगी ?

कुमार० । क्यों नहीं, अब बैठ कर हंसी दिल्लगी करने और खुशी मनाने के सिवाय हमलोगों को करना ही क्या है?

इतना कह कर कुंअर इन्द्रजीतसिंह गद्दी पर बैठ गये और हाथ पकड़ कर किशोरी और कमलिनी को अपने दोनों बगल में बैठा लिया । कमला आज्ञा

पाकर बैठा ही चाहती थी कि दर्वाजे पर ताली बजाने की आवाज आई जिसे सुनते ही कमला बाहर चली गई और तुरत लौट आकर बोली, "पहरे वाली लौंडी कहती है कि भैरोसिंह बाहर खड़े हैं।"

कुमार०। (खुश होकर) हां हां, उन्हें जल्द ले आओ, इन हजरत ने मेरे साथ क्या कम दिल्लगी की है? अब तो मैं सब बातें समझ गया। भला आज उन्हें इत्तला करा के मेरे पास आने का दिन तो नसीब हुआ!

कुमार की बात सुन कर कमला पुनः बाहर चली गई और कमलिनी तथा किशोरी कुमार के बगल से कुछ हट कर बैठ गईं। इतने ही में भैरोसिंह भी आ पहुँचे।

भैरोसिंह०। (कुमार से) मुबारक हो!!

कुमार०। आइये आइये, आपने भी मुझे बहुत छकाया है! क्या चिन्ता है, समय मिलने पर समझ लूंगा!

भैरो०। (हंस कर) जो कुछ किया (किशोरी की तरफ बता कर) इन्होंने किया, मेरा कोई कसूर नहीं!!

कुमार०। खैर जो कुछ हुआ सो हुआ, अब मुझे सच्चा सच्चा हाल तो सुना दो कि तिलिस्म के अन्दर इस तरह की रूखी फीकी शादी क्यों कराई गई और इस काम के अगुआ कौन महापुरुष थे?

भैरो०। (किशोरी की तरफ इशारा करके) जो कुछ किया सब इन्होंने किया यही इस काम में अगुआ थीं और राजा गोपालसिंह इस काम में इनकी मदद कर रहे थे। इन्हीं की आज्ञानुसार मुझे भी मजबूर होकर इन लोगों का साथ देना पड़ा था। इसका खुलासा हाल आप कमला से पूछिये, यही ठीक ठीक बतावेगी।

कुमार०। (कमला से) खैर तुम्हीं बताओ कि क्या क्या हुआ?

कमला०। (किशोरी से) कहो बहिन! अब तो मैं साफ साफ कह दूं?

किशोरी०। अब छिपाने की जरूरत क्या है!!

कमला ने इस तरह कहना शुरू किया, "किशोरी बहिन ने मुझसे कई दफे कहा कि 'तू इस बात का बन्दोबस्त कर कि किसी तरह मेरी शादी के पहिले ही कमलिनी की शादी कुमार के साथ हो जाय' मगर मेरे किये इसका कुछ भी,

बन्दोबस्त न हो सका और कमलिनी रानी भी इस बात पर राजी होती दिखाई न दी अस्तु मैं बात टाल कर चुपकी हो बैठी मगर मुझे इस काम में सुस्त देख कर किशोरी ने फिर मुझसे कहा, "देख कमला तू मेरी बात पर ध्यान नहीं देती मगर इसे खूब समझ रखियो कि अगर मेरा इरादा पूरा न हुआ अर्थात् मेरी शादी के पहिले ही कमलिनी की शादी कुमार के साथ न हो गई तो मैं कदापि ब्याह न करूंगी बल्कि अपने गले में फांसी लगा कर जान दे दूंगी। कमलिनी ने जो कुछ मुझ पर एहसान किये हैं उनका बदला मैं किसी तरह नहीं चुका सकती, अगर कुछ चुका सकती हूँ तो इसी तरह कि कमलिनी को पटरानी बनाऊं और आप उसकी लौंडी हाकर रहूँ, मगर अफसोस है कि तू मेरी बातों पर कुछ भी ध्यान नहीं देती जिसका नतीजा यह होगा कि एक दिन तू रोवेगी और पछतावेगी !"

किशोरी की इस आखिरी बात से मेरे कलेजे पर एक चोट सी लगी मैंने सोचा कि जो कुछ यह कहती है बहुत ठीक है, ऐसा ही होना चाहिये। आखिर मैंने राजा गोपालसिंह से यह सब हाल कहा और उन्हें अपनी तरफ से भी बहुत कुछ समझाया जिसका नतीजा यह निकला कि वे दिलोजान से इस काम के लिये तैयार हो गये। जब वे खुद तैयार हो गये तो फिर क्या था ? सब काम खूबी के साथ होने लगा।

राजा गोपालसिंह ने इस विषय में कमलिनी से कहा और इन्हें, बहुत समझाया मगर ये राजी न हुईं और बोलीं कि आपकी आज्ञानुसार मैं कुमार से ब्याह कर लेने के लिए तैयार हूँ मगर यह नहीं हो सकता कि किशोरी से पहिले ही अपनी शादी करके उसका हक मार दूं, हां किशोरी की शादी हो जाने के बाद जो कुछ आप आज्ञा देंगे मैं करूँगी। यह जवाब सुनकर गोपालसिंह जी ने फिर कमलिनी को समझाया और कहा कि अगर तुम किशोरी की इच्छा पूरी न करोगी तो वह अपनी जान दे देगी, फिर तुम ही सोच लो कि उसके मर जाने से कुमार की क्या हालत होगी और तुम्हारी इस जिद्द का क्या नतीजा निकलेगा ?

गोपालसिंह जी की इस बात ने (कमलिनी की तरफ बता के) इन्हें लाजवाब कर दिया और ये लाचार हो शादी करने पर राजी हो गईं। तब राजा

साहब ने भैरोसिंह को मिलाया और ये भी इस बात पर राजी हो गये। इसके बाद यह सोचा गया कि कुमार इस बात को स्वीकार न करेंगे, अस्तु उन्हें धोखा देकर और जहाँ तक जल्द हो तिलिस्म के अन्दर ही कमलिनी के साथ उनकी शादी कर देनी चाहिये क्योंकि तिलिस्म के बाहर हो जाने पर हम लोग स्वाधीन न रहेंगे और अगर बड़े महाराज इस बात को सुन कर स्वीकार न करेंगे तो फिर हम लोग कुछ भी न कर सकेंगे, इत्यादि।

बस यही सबब हुआ कि तिलिस्म के अन्दर आपसे तरह तरह की चाल-बाजियां खेली गईं और भैरोसिंह ने भी आपसे भेद छिपा रखा। खुद राजा गोपालसिंह जी तिलिस्म के अन्दर आये और बुड्ढे दारोगा बन कर इस काम में उद्योग करते रहे।

कुमार०। (बात रोक कर ताज्जुब के साथ) क्या खुद राजा गोपालसिंह बुड्ढे दारोगा बने थे ?

कमला०। जी हां, और वह बुड्ढी मैं बनी थी तथा किशोरी और इन्दिरा आदि ने लड़कों का रूप धरा था।

कमलिनी०। (हंस कर) यह बुड्ढी भैरोसिंह की जोरू बनी थी ! अब इस बात को भी सच कर दिखाना चाहिये अर्थात् इस बुड्ढी को भैरोसिंह के गले मढ़ना चाहिये !

कुमार०। जरूर ! (कमला से) तब तो मैं समझाता हूँ कि 'मकरन्द' इत्यादि के बारे में जो कुछ भैरोसिंह ने बयान किया था वह सब झूठ था ?

कमला०। बेशक उसमें बारह आने से ज्यादे झूठा था।

कुमार०। खैर तब क्या हुआ ? तुम आगे बयान करो।

कमला ने फिर इस तरह बयान करना शुरू किया:—

"भैरोसिंह जान बूझकर इस लिये पागल बना कर आपको दिखाये गये थे कि जिससे एक तो आप धोखे में पड़ जायं और समझें कि हमारे विपक्षी लोग भी वहां रहते हैं, दूसरे आप से मिलाप हो जाने पर यदि भैरोसिंह से कुछ भूल भी हो जाय तो आप यही समझें कि अभी तक इनके दिमाग में पागलपन का कुछ धूंआं बचा हुआ है। जिस समय हम लोग तिलिस्म के अन्दर पहुँचाये गये थे उस समय राजा गोपालसिंह जी ने अपनी खास तिलिस्मी किताब

कमलिनी जी को दे दी थी जिससे तिलिस्म का बहुत कुछ हाल इन्हें मालूम हो गया था और इनकी मदद से हम लोग जो चाहते थे करते थे तथा किसी बात की तकलीफ भी नहीं होती थी और खाने पीने की सभी चीजें राजा गोपालसिंह जी पहुँचा दिया करते थे।

"भैरोसिंह जब पागल बनने के बाद आप से मिले थे तो अपना ऐयारी का बटुवा जान बूझ कर कमलिनी जी के पास रख गये थे। फिर जब भैरोसिंह को बुलाने की इच्छा हुई तो उन्हीं का बटुवा और पीले मकरन्द की लड़ाई दिखाकर वे आपसे अलग कर दिये गये। कमलिनी पीछे मकरन्द की सूरत में थीं और मैं उनका मुकाबला कर रही थी। कही बदी और मेल की लड़ाई थी इसलिये आपने समझा होगा कि हम दोनों बहादुर और लड़ाके हैं, अस्तु इस मामले के बाद जब इन्द्रानी और आनन्दी वाले बाग में भैरोसिंह आपसे मिले तब इन्होंने बहुत सी झूठी बातें बना कर आपसे कहीं और जब आप उनसे रंज हुए तो आपका संग छोड़ कर फिर हम लोगों की तरफ आ गये * आप दोनों भाई उस समय इन्कार करते थे मगर मजबूरी और लाचारी ने आपका पीछा न छोड़ा और इसके अतिरिक्त खुद इन्द्रानी और आनन्दी ने भी आप दोनों को किशोरी और कामिनी की चिट्ठी दिखा कर खुश कर लिया था। यहां आकर आपने सुना ही है कि कमलिनी जी के पिता बलभद्रसिंह जी जिन्हे भूतनाथ छुड़ा लाया था यकायक गायब हो गये और कई दिनों के बाद लौट आये!

कुमार०। हां सुना था।

कमला०। बस उन्हें राजा गोपालसिंह ही यहां आकर ले गये थे और खुद बलभद्रसिंह जी ने ही अपनी दोनों लड़कियों का कन्यादान किया था।

कुमार०। (हंसते हुए) ठीक है, अब मैं सब बातें समझ गया और मुझे यह भी मालूम हो गया कि केवल धोखा देने ही के लिये माधवी और माया-रानी जो पहिले ही मर चुकी थीं इन्द्रानी और आनन्दी बनाकर दिखाई गई थीं।

भैरोसिंह०। जी हां।

* देखिये अट्ठारहवां हिस्सा ग्यारहवां बयान।

कुमार०। मगर नानक वहां पर क्योंकर पहुँचा था ?

भैरोसिंह०। आप सुन चुके हैं कि तारासिंह ने नानक को कैसा छकाया था, अस्तु वह हम लोगों से बदला लेने की नियत करके वहां गया और मायारानी से मिल गया था। कमलिनी जी ने वहां का रास्ता उसे बता दिया था। उसी का यह नतीजा निकला। जब मायारानी राजा गोपालसिंह के कब्जे में पड़ गई तब राजा साहब ने नानक को बहुत कुछ बुरा भला कहा, यहां तक कि नानक उनके पैरों पर गिर पड़ा और उसने अपने कसूर की माफी मांगी। उस समय राजा साहब ने उसका कसूर माफ करके उसे अपने साथ रख लिया। तब से वह उन्हीं के कब्जे में रहा और उन्हीं की आज्ञानुसार आपको धोखे में डालने की नीयत से मायारानी और माधवी की लाश के पास दिखाई पड़ा था। वे दोनों पहिले ही मारी जा चुकी थीं मगर आपको भुलावा देने की नीयत से उनकी लाश इन्द्रानी और आनन्दी बना कर दिखाई गई थी। इसके अतिरिक्त और जो कुछ हाल है वह आपको राजा गोपालसिंह जी की जुबानी मालूम होगा।

कुमार०। ठीक है, मैं ईश्वर को धन्यवाद देता हूँ कि मायारानी तथा माधवी की लाश को इन्द्रानी और आनन्दी की सूरत में देख कर जो कुछ मुझे रंज हुआ था और आज तक इस घटना का असर जो कुछ मेरे दिल में था वह जाता रहा। अब मैं अपने को खुशनसीब समझने लगा (कमलिनी से) अच्छा यह बताओ कि रात की दिल्लगी तुमने किस तौर पर की ? मेरी समझ में कुछ न आया और न इस बात का पता लगा कि मेरी सूरत क्यों कर बदली गई।

कमलिनी०। इस बात का जवाब आपको कमला से मिलेगा।

कमला०। यह तो एक मामूली बात है ! समझ लीजिये कि जब आप सो गये तो इन्हीं (कमलिनी) ने आपको बेहोश करके आपकी सूरत बदल दी। *

कुमार०। ठीक है मगर ऐसा क्यों किया ?

कमला०। एक तो दिल्लगी के लिये और दूसरे किशोरी के इस खयाल से कि जिसकी शादी पहिले हुई है उसी की सोहागरात भी पहिले होनी चाहिये।

* यही काम उधर लाडिली ने किया था। खुद तो पहिले ही से कामिनी बनी हुई थी मगर जब कुमार सो गये तो उन्हें बेहोश करके उनकी सूरत बदल दी और सुबह को उनके जागने के पहिले ही अपना चेहरा साफ कर लिया।

कुमार०। (हंस कर और किशोरी की तरफ देख कर) यह सब आपकी बहादुरी है। खैर आज आपकी पारी होगी, समझ लूंगा !!

किशोरी ने शर्मा कर सिर नीचा कर लिया और कुमार की बात का कुछ भी जवाब न दिया।

इसके बाद वे लोग कुछ देर तक हंसी खुशी की बातें करते रहे और फिर अपने अपने ठिकाने चले गये।

कुंअर इन्द्रीजीतसिंह और आनन्दसिंह की शादी के बाद भी कई दिनों तक हंसी खुशी का जलसा बराबर बना रहा क्योंकि इस शादी के आठवें ही दिन कमला की शादी भैरोसिंह के साथ और तारासिंह की शादी इन्दिरा के साथ हो गई और इस नाते को भूतनाथ तथा इन्द्रदेव ने बड़ी खुशी के साथ मंजूर कर लिया।

इन सब कामों से छुट्टी पाकर महाराज ने निश्चय किया कि अब पुनः उसी बगुले वाले तिलिस्मी मकान में चल कर कैदियों का मुकदमा सुना जाय अस्तु उनकी आज्ञानुसार बाहर के आये हुए मेहमान लोग हंसी खुशी के साथ बिदा किए गये और फिर कई दिनों तक तैयारी करने के बाद सभों का डेरा कूच हुआ और पहिले की तरह पुनः वह तिलिस्मी मकान हरा भरा दिखाई देने लगा। कैदी सब भी उसी मकान के तहखानों में पहुँचाये गये और सब का मुकदमा सुनने को तैयारी होने लगी।

चौथा बयान

अब हम थोड़ा सा हाल नानक और उसकी मां का बयान करते हैं जो हर तरह से कसूरवार होने पर भी महाराज की आज्ञानुसार कैद किये जाने से बच गये और उन्हें केवल देश निकाले का दण्ड दिया गया।

यद्यपि महाराजा ने उन दोनों पर दया की और छोड़ दिया मगर यह बात सर्वसाधारण को पसन्द न आई। लोग यही कहते रहे कि यह काम महाराज ने अच्छा नहीं किया और इसका नतीजा बहुत बुरा निकलेगा। आखिर ऐसा ही हुआ अर्थात् नानक ने इस अहसान को भूल कर फसाद करने और लोगों की जान लेने पर कमर बांधी।

जब नानक की मां और नानक को देश निकाले का हुक्म हो गया और इन्द्रदेव के आदमी उन दोनों को सरहद के पार करके अपने घर लौट गए तब वे दोनों बहुत दुःखी और उदास एक पेड़ के नीचे बैठ कर सोचने लगे कि अब क्या करना चाहिये। उस समय सबेरा हो चुका था और सूर्य्य की लालिमा पूरब तरफ आसमान पर फैल रही थी।

रामदेई०। कहो अब क्या इरादा है? हम लोग तो बड़ी मुसीबत में फंस गए!

नानक०। बेशक मुसीबत में फंस गये और बिल्कुल कंगाल कर दिये गए। तुम्हारे जेवरों के साथ ही साथ मेरा हर्बा भी छीन लिया गया और अब इस लायक भी न रहे कि किसी ठिकाने पहुँच कर रोजी के लिये कुछ उद्योग करते।

रामदेई०। ठीक है मगर मैं समझती हूँ कि अगर हम लोग किसी तरह नन्हों के यहां पहुँच जायंगे तो कुछ खाने पीने का ठिकना हो जायगा, और उससे किसी तरह की मदद भी ले सकेंगे।

नानक०। नन्हों के यहां जाने से क्या फायदा होगा? वह तो खुद गिरफ्तार होकर कैदखाने की हवा खा रही होगी! हां उसका भतीजा बेशक बचा हुआ है जिसे उन लोगों ने छोड़ दिया और जो नन्हों की जायदाद का मालिक बन बैठा होगा मगर उससे किसी तरह की उम्मीद मुझको नहीं हो सकती।

रामदेई०। ठीक है मगर नन्हों की लौंडियों में से दो एक ऐसी है जिनसे मुझे मदद मिल सकती है।

नानक०। मुझे इस बात की भी उम्मीद नहीं है, इसके अतिरिक्त वहां तक पहुँचने के लिये भी तो समय चाहिये, यहां तो एक शाम की भूख बुझाने के लिये भी पल्ले में कुछ नहीं है

रामदेई०। ठीक है मगर क्या तुम अपने घर भी मुझे नहीं ले जा सकते? वहां तो तुम्हारे पास रुपये पैसे की कमी नहीं है!!

नानक०। हां यह हो सकता है, वहां पहुँचने पर मुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं रह सकती मगर इस समय तो वहां तक पहुँचना भी कठिन हो रहा है। (लम्बी सांस लेकर) अफसोस! हमारा ऐयारी का बटुआ भी छीन लिया गया और हम लोग इस लायक भी न रह गये कि किसी तरह सूरत बदल कर

अपने को लोगों की आंखों से छिपा लेते।

रामदेई०। खैर जो होना था सो हो गया अब इस समय अफसोस करने से काम न चलेगा। सब जेवर छिन जाने पर भी मेरे पास थोड़ा सा सोना बचा हुआ है अगर इससे कुछ काम चले तो...

नानक०। (चौंक कर) क्या कुछ है ?

रामदेई०। हां।

इतना कह कर रामदेई ने धोती के अन्दर छिपी हुई सोने की एक करधनी निकाली और नानक के आगे रख दी।

नानक०। (करधनी को हाथ में ले कर) बहुत है, हम लोगों को घर तक पहुँचा देने के लिये काफी है, वहां पहुँचने पर किसी तरह की तकलीफ न रहेगी क्योंकि वहां मेरे पास खाने पीने की कमी नहीं है।

रामदेई०। तो क्या वहां चल कर इन बातों को भूल.....

नानक०। (बात काट कर) नहीं नहीं, यह न समझना कि वहां पहुँच कर हम इन बातों को भूल जायंगे और बेकार बैठे टुकड़ा तोड़ेंगे बल्कि वहां पहुँच कर इस बात का बन्दोबस्त करेंगे कि अपने दुश्मनों से बदल लिया जाय।

रामदेई०। हां मेरा भी यही इरादा है क्योंकि मुझे तुम्हारे बाप की बेमुरौती का बड़ा रंज है जिसने हम लोगों को दूध की मक्खी की तरह एक दम निकाल कर फेंक दिया और पिछली मुहब्बत का कुछ ख्याल न किया। शान्ता और हरनाम को पाकर ऐंठ गया और इस बात का कुछ खयाल न किया कि आखिर नानक भी तो मेरा लड़का है और वह भी ऐयारी जानता है !

नानक०। (जोश के साथ) बेशक यह उनकी बेईमानी और हरमजदगी है ! अगर वह चाहता तो हम लोगों को बचा सकता था !!

रामदेई०। बचा लेना क्या, यह जो कुछ किया सब उसी ने किया ! महाराज ने तो हुक्म दे ही दिया था कि 'भूतनाथ की इच्छानुसार इन दोनों के साथ बर्ताव किया जाय।'

नानक०। बेशक ऐसा ही है। उस कम्बख्त ने ही हम दोनों के साथ ऐसा सलूक किया ! मगर क्या चिन्ता है इसका बदला लिये बिना मैं कभी न छोड़ूंगा।

रामदेई०। (आंसू बहा कर) तेरी बातों पर विश्वास नहीं होता क्योंकि

तेरा जोश थोड़ी ही देर का होता है.....

नानक०। (क्रोध के साथ रामदेई के पैरों पर हाथ रख के) मैं तुम्हारे चरणों की कसम खाकर कहता हूँ कि इसका बदला लिये बिना कभी न रहूँगा।

रामदेई०। भला मैं यह भी तो सुनूं कि तुम क्या बदला लोगे ? मेरे खयाल से तो वह जान से मार देने के लायक है।

नानक०। ऐसा ही होगा, ऐसा ही होगा ! जो तुम कहती हो वही करूंगा और उसके लड़के हरनामसिंह को भी यमलोक पहुँचाऊंगा !!

रामदेई०। शाबाश ! मगर मेरा चित्त तब तक प्रसन्न न होगा जब तक शान्त का सिर अपने तलवों से न रगड़ने पाऊँगी !

नानक०। मैं उसका सिर भी काट कर तुम्हारे सामने लाऊँगा और तब तुमसे आशीर्वाद लूंगा।

रामदेई०। शाबाश ! ईश्वर तेरा भला करे। मगर मैं चाहती हूँ कि इन बातों के लिए तू एक दफे फिर सकम खा जिसमें मेरी पूरी पूरी दिलजमई हो जाय।

नानक०। (सूर्य्य की तरह हाथ उठा कर) मैं त्रिलोकी नाथ के सामने हाथ उठा कर कसम खाता हूँ कि अपनी मां की इच्छा पूरी करूंगा और जब तक ऐसा न कर लूंगा अन्न न खाऊंगा।

रामदेई०। (नानक की पीठ पर हाथ फेर कर) सब सब, अब मैं प्रसन्न हो गई और मेरा आधा दुःख जाता रहा !

नानक०। अच्छा तो अब यहां से उठो (हाथ का इशारा कर के) किसी तरह उस गांव में पहुँचना चाहिये फिर सब बन्दोबस्त हो रहेगा।

दोनों उठे और एक गांव की तरफ रवाना हुए जो वहां से दिखाई दे रहा था।

पाँचवाँ बयान

पाठक ! आपने सुना कि नानक ने क्या प्रण किया ? अस्तु अब यहां पर हम यह कह देना उचित समझते हैं कि नानक अपनी मां को लिए हुये जब घर पहुँचा तो वहां उसने एक दिन के लिए भी आराम न किया। ऐयारी का

बटुआ तैयार करने के बाद हर तरह का इन्तजाम करके और चार पांच शागिर्दों और नौकरों को साथ ले के उसी दिन घर के बाहर निकला और चुनार की तरफ रवाना हुआ। जिस दिन कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह की बारात निकलने वाली थी उस दिन वह चुनार की सरहद में मौजूद था। बारात की कैफियत उसने अपनी आंखों से देखी थी और इस बात की फिक्र में भी लगा हुआ था कि किसी तरह दो चार कैदियों को भी कैद से छुड़ा कर अपना साथी बना लेना चाहिये और मौका मिलने पर राजा गोपालसिंह को भी इस दुनिया से उठा देना चाहिये।

अब हम कुंअर इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह का हाल बयान करते हैं।

दो पहर दिन का समय है और सब कोई भोजन इत्यादि से निश्चिन्त हो चुके हैं। एक सजे हुए कमरे में राजा गोपालसिंह, भरतसिंह, कुंअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, भैरोसिंह और तारासिंह बैठे हुए हंसी खुशी की बातें कर रहे हैं।

गोपाल०। (भरतसिंह से) क्या मुझे स्वप्न में भी इस बात की उम्मीद हो सकती थी कि आपसे किसी दिन मुलाकात होगी ? कदापि नहीं, क्योंकि लोगा के कहने पर मुझे भी विश्वास हो गया था कि आप जंगल में डाकुओं के हाथ से मारे गये.....

भरत०। और इसका बहुत बड़ा सबब तो यह था कि तब तक दारोगा की बेईमानी का आपको पता न लगा था, उसे आप ईमानदार समझते थे और उसी ने मुझे कैद किया था।

गोपाल०। बेशक यही बात है, मगर खैर, ईश्वर जिसका सहायक रहता है वह बिगाड़े नहीं बिगड़ सकता। देखिये मायारानी ने मेरे साथ क्या कुछ न किया ! मगर ईश्वर ने मुझे बचा लिया और साथ ही इसके बिछुड़े हुओं को भी मिला दिया।

भरत०। ठीक है, मगर मेरे प्यारे दोस्त ! मैं कह नहीं सकता कि कम्बख्त दारोगा ने मुझे कैसी कैसी तकलीफें दी हैं, और मजा तो यह है कि इतना करने पर भी अपने को निर्दोष बताता रहा ! अस्तु जब मैं अपना हाल बयान करूंगा तब आपको मालूम होगा कि दुनिया में कैसे कैसे नमकहराम और संगदिल लोग होते हैं और बदों के साथ नेकी करने का नतीजा कैसा बुरा होता है।

गोपाल०। ठीक है ठीक है, इन्हीं बातों को सोच कर भैरोसिंह बार बार मुझसे कहते हैं "आपने नानक को सूखा छोड़ दिया सो अच्छा नहीं किया। वह बद है और बदों के साथ नेकी करना वैसा ही है जैसा नेकों के साथ बदी करना।"

भरत०। भैरोसिंह का कहना वाजिब है, मैं उसका समर्थन करता हूँ।

भैरो०। कृपानिधान! सच तो यों है कि नानक की तरफ से मुझे किसी तरह बेफिक्री होती ही नहीं। मैं अपने दिल को कितना ही समझाता हूँ मगर यह नहीं मानता। ताज्जुब नहीं कि.....!

भैरोसिंह इतना कही रहे थे कि सामने से भूतनाथ आता हुआ दिखाई पड़ा।

गोपाल०। अजी वाह जी भूतनाथ! चार चार दफे बुलाने पर भी आपके दर्शन नहीं होते।

भूत०। (मुस्कुराता हुआ) अभी क्या हुआ है, दो चार दिन में मेरे दर्शन और भी दुर्लभ हो जायगे!

गोपाल०। (ताज्जुब से) सो क्या?

भूतनाथ०। यही कि मेरा सपूत लड़का नानक इस शहर में आ पहुँचा है और मेरी अन्त्येष्टि क्रिया करके बहुत जल्द अपने सिर का बोझ हलका करने की फिक्र में लगा है। (बैठ कर) कृपा कर आप भी जरा होशियार रहियेगा।

गोपाल०। तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि वह बदनियती के साथ यहां आ गया है।

भूत०। मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया है। इसीसे तो यहां आने में देर हो गई क्योंकि मैं यह हाल कहने और तीन चार दिन की छुट्टी लेने के लिये महाराज के पास चला गया था। वहा से लौटा हुआ आपके पास आ रहा हूँ।

गोपाल०। तो क्या महाराज से छुट्टी ले आये?

भूत०। जी हां, अब आपसे यह पूछना है कि आप अपने लिए क्या बन्दोबस्त करेंगे।

गोपाल०। तुम तो इस तरह की बातें करते हो जैसे उसकी तरफ से बहुत

बड़ा तरद्दुद हो गया हो ! वह बेचारा कल का लौंडा हम लोगों के साथ क्या कर सकता है ?

भूत० । सो ठीक है मगर दुश्मन को छोटा और कमजोर न समझना चाहिये ।

गोपाल० । तुम्हें ऐसा ही उसका डर है तो कहो बैठे ही बैठे चौबीस घन्टे के अन्दर उसे गिरफ्तार कराके तुम्हारे हवाले कर दूं ?

भूत० । यह मुझे विश्वास है और आप ऐसा कर सकते हैं मगर मुझे मंजूर नहीं है, क्योंकि मैं जरा दूसरे ही ढग से उसका मुकाबला किया चाहता हूँ । आप जरा बाप बेटे की लड़ाई देखिये । हां अगर आप की तरफ वह झुके तो जैसा मौका देखिये कीजियेगा ।

गोपाल० । ऐसा ही सही, मगर तुमने क्या सोचा है, जरा अपना मनसूबा तो सुनाओ ?

इसके बाद उन लोगों में देर तक बातें होती रहीं और दो घण्टे के बाद भूतनाथ उठ कर अपने डेरे की तरफ चला गया ।

छठवाँ बयान

नानक जब चुनारगढ़ की सरहद पर पहुँचा तब उसने सोचा कि दुश्मनों से क्योंकर बदला लेना चाहिये वह पांच आदमियों को अपना शिकार समझे हुए था और उन्हीं पांचों की जान लेने का विचार करता था । एक राजा गोपालसिंह और दूसरा इन्द्रदेव, तीसरा भूतनाथ, चौथा हरनामसिंह और पांचवी शान्ता । बस येही पांच उसकी आंख में खटक रहे थे मगर इनमें से दो अर्थात् राजा गोपालसिंह और इन्द्रदेव के पास फटकने की तो उसकी हिम्मत नहीं पड़ती थी और वह समझता था कि ये दोनों तिलिस्मी आदमी हैं इनके काम जादू की तरह हुआ करते हैं और इनमें लोगों के दिल की बात समझ जाने की कुदरत है मगर बाकी तीनों को वह निरा शिकार ही समझता था और विश्वास करता था कि इन तीनों को किसी न किसी तरह फंसा लेंगे । अस्तु चुनारगढ़ की सरहद में आ पहुँचने के बाद उसने गोपालसिंह और इन्द्रदेव का खयाल तो छोड़ दिया और भूतनाथ, उसकी स्त्री और उसके

लड़के हरनामसिंह की जान लेने के फेर में पड़ा। साथ ही इसके यह समझ लेना चाहिये कि नानक वहां अकेला नहीं आया था बल्कि समय पर मदद पहुँचाने लायक सात आठ आदमी और भी अपने साथ लाया था जिनमें से चार पांच तो उसके शागिर्द ही थे।

दोनों कुमारों की शादी में से जिस तरह दूर दूर के मेहमान और तमाशबीन लोग आये थे उसी तरह से साधू महात्मा तथा साधू वेशधारी पाखण्डी लोग भी बहुत से इकट्ठे हो गये थे जिन्हें सरकार की तरफ से खाने पीने को भरपूर मिलता था और इस लालच में पड़े हुए उन लोगों ने अभी तक चुनारगढ़ का पीछा नहीं छोड़ा था और तिलिस्मी मकान के चारो तरफ आस पास के जंगलों में डेरा डाले पड़े हुए थे। नानक और उसके साथी लोग भी साधुओं ही के भेष में वहां पहुंचे और उसी मण्डली में मिल जुल कर रहने लगे।

नानक को यह बात मालूम थी कि भूतनाथ का डेरा तिलिस्मी इमारत के अन्दर है और वह वहां बड़ी हिफाजत के साथ रहता है। इसलिये वह कभी कभी यह भी सोचता था कि मेरा काम सहज ही में नहीं हो जायगा बल्कि उसके लिये बहुत बड़ी मेहनत करनी पड़ेगी। मगर वहाँ पहुचने के कुछ ही दिन बाद (जब शादी व्याह के काम से सब कोई निश्चन्त होकर तिलिस्मी इमारत में आ गये) उसने सुना और देखा कि महाराज की आज्ञानुसार भूतनाथ ने स्त्री और लड़के सहित तिलिस्मी इमारत के बाहर एक बहुत बड़े और खूबसूरत खेमे में डेरा डाला है, अतएव वह बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे विश्वास हो गया कि अब हम अपना काम शीघ्र और सुभीते के साथ निकाल लेंगे।

नानक ने और भी दो तीन रोज तक इन्तजार किया और इस बीच में यह भी जान लिया कि भूतनाथ के खेमे की कुछ विशेष हिफाजत नहीं होती और पहरे वगैरह का इन्तजाम भी साधारण ही है। तथा उसके शागिर्द लोग भी आज कल यहां मौजूद नहीं हैं।

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी थी, यद्यपि चन्द्रदेव के दर्शन नहीं होते थे मगर आस्मान साफ होने के कारण टुटपुंजिये तारागण अपनी नामवरी पैदा करने का उद्योग कर रहे थे और नानक ऐसे बुद्धिमान लोगों से पूछ रहे थे कि यदि हम लोग इकट्ठे हो जायं तो क्या चन्द्रमा से चौगुनी और पंचगुनी

चमक दमक नहीं दिखा सकते ? तथा जवाब में यह भी सुना चाहते थे कि निःसन्देह। इसी समय एक आदमी स्याह लबादा ओढ़े रहने पर भी लोगों की निगाहों से अपने को बचाता हुआ भूतनाथ के खेमे की तरफ जा रहा है। पाठक समझ ही गये होंगे कि यह नानक है। अस्तु जब वह खेमे के पास पहुँचा तो अपने मतलब का सन्नाटा देख कर खड़ा हो गया और किसी के आने का इन्तजार करने लगा। थोड़ी ही देर में एक दूसरा आदमी भी उसके पास आया और दो चार सायत तक बातें करके चला गया। उस समय नानक जमीन पर लेट गया और धीरे धीरे खिसकता हुआ खेमे की कनात के पास जा पहुँचा, और उसे धीरे से उठाकर अन्दर चला गया और तब उसने अपने को गुलाम गर्दिश में पाया मगर यहाँ बिल्कुल ही अन्धकार था, हां यह मालूम होता था कि आगे वाली कनात के अन्दर अर्थात् खेमे में कुछ रोशनी हो रही है। नानक फिर वहां लेट गया और पहिले की तरह यह दूसरी कनात भी उठा कर खेमे के अन्दर जाने का विचार कर ही रहा था कि दाहिनी तरफ से कुछ खड़खड़ाहट की आवाज मालूम पड़ी। नानक चौंका और उसी अन्धेरे में तीन चार कदम बाईं तरफ हट गया और पुनः खटके की आवाज सुनने और उसे जानने की नीयत से ठहर गया। जब थोड़ी देर तक किसी तरह की आहट नहीं मालूम हुई तो पहिले की तरह फिर जमीन पर लेट गया और कनात उठाकर अन्दर जाया ही चाहता था कि दाहिनी तरफ फिर किसी के पैर पटक पटक कर चलने की आहट मालूम हुई। वह खड़ा हो गया और पुनः चार पाच कदम पीछे की तरफ (बाईं तरफ) हट गया मगर इसके बाद फिर किसी तरह की आहट मालूम न हुई और वह कुछ देर तक इन्तजार करने के बाद जमीन पर लेट गया और कनात के अन्दर सिर डालकर देखने लगा। कोने की तरफ एक मामूली शमादान जल रहा था जिसकी मद्धिम रोशनी में दो चारपाई बिछी हुई दिखाई पड़ी। कुछ देर तक गौर करने पर नानक को निश्चय हो गया कि इन दोनों चारपाइयों पर भूतनाथ तथा उसकी स्त्री शान्ता सोई हुई हैं। परन्तु उसका लड़का हरनामसिंह खेमे के अन्दर दिखाई न दिया और उसके लिये नानक को कुछ चिन्ता हुई, तथापि वह साहस करके खेमे के अन्दर चला ही गया।

वह धीरे धीरे डरता काँपता चारपाई के पास पहुँच गया और चाहा कि खंजर से इन दोनों का गला काट डालूं मगर फिर वह सोचने लगा कि पहिले किस पर वार करूं, भूतनाथ पर या शान्ता पर ! वे दोनों सिर से पैर तक चादर ताने पड़े हुए थे इससे यह मालूम करने की जरूरत थी कि किसी चारपाई पर कौन सो रहा है साथ ही इसके नानक इस बात पर भी गौर करने लगा कि रोशनी बुझा दी जाय या नहीं। यद्यपि वह वार करने के लिये खंजर हाथ में ले चुका था मगर उसकी दिली कमजोरी ने उसका पीछा नहीं छोड़ा था अर्थात् उसका हाथ कांप रहा था।

सातवां बयान

किशोरी, कामिनी, कमलिनी और लाडिली ये चारों बड़ी मुहब्बत के साथ अपना दिन बिताने लगीं। इनकी मुहब्बत दिखावा न थी बल्कि दिली और सचाई के साथ थी। ये चारों जमाने के ऊंच नीच को अच्छी तरह समझ चुकी थीं और खुद भी जानती थीं कि दुनिया में हर एक के साथ दुःख और सुख का चर्खा लगा ही रहता है, खुशी तो मुश्किल से मिलती है मगर रंज और दुःख के लिये किसी तरह का उद्योग नहीं करना पड़ता, वह आप से आप आ पहुँचता है और एक के साथ दस का लपेट लेने पर भी जल्दी पीछा नहीं छोड़ता, इस लिये बुद्धिमानों का काम यही है कि जहां तक हो सके खुशी का पल्ला न छोड़ें और कोई काम ऐसा न करें जिसमें दिल को किसी तरह का रञ्ज पहुंचे। इन चारों औरतों का दिल उन नादान और कमीनी औरतों का सा नहीं था जो दूसरों को खुश देखते ही जलभुन कर कोयला हो जाती हैं और दिन रात कुप्पे की तरह मुंह फुलाए आंखों से पाखण्ड का आंसू बहाया करती हैं और घर की औरतों के साथ मिलजुल कर रहना अपनी बेइज्जती समझती हैं।

इन चारों का दिल आइने की तरह साफ था। नहीं नहीं हम भूल गये, हमें दिलके साथ आईने की उपमा पसन्द नहीं ! न मालूम लोगों ने इस उपमा को किस लिये पसन्द कर रक्खा है ! उपमा में उसी वस्तु का व्यवहार करना चाहिये जिसकी प्रकृति में किसी तरह का फर्क न पड़े, मगर आइने (शीशे में) यह बात पाई नहीं जाती, हर एक आइना बेऐब साफ और बिना धब्बे के नहीं

होता और वह हर एक की सूरत एकसा भी नहीं दिखाता बल्कि जिसकी जैसी सूरत होती है उसके मुकाबले में वैसा ही बन जाता है। इस लिये आइना उन लोगों के दिल का कहना चाहिये जो नीति कुशल हैं या जिन्होंने यह व्रत ठान लिया है कि जो जैसा करे उसके साथ वैसा ही करना चाहिये, चाहे वह अपना हो या पराया, छोटा हो या बड़ा। मगर इन चारो में यह बात न थी, ये बड़ों को झिड़की को आशीर्वाद और छोटों की ऐंठन को उनकी नादानी समझती थीं। जब कोई हमजोली या आपुस वाली क्रोध में भरी हुई अपना मुंह बिगाड़े इनके सामने आती तो यदि मौका होता तो हंस कर कह देती कि "वाह, ईश्वर ने क्या अच्छी सूरत बनाई है!" या "बहिन! हमने तो तुम्हारा जो कुछ बिगाड़ा सो बिगाड़ा मगर तुम्हारी सूरत ने तुम्हारा क्या कसूर किया है जो तुम उसे बिगाड़ रही हो?" बस इतने ही में उसका रंग बदल जाता इत्यादि बातों को विचार कर हम इनके दिल को आईने के साथ मिलान करना पसन्द नहीं करते बल्कि यह कहना मुनासिब समझते हैं कि 'इनका दिल समुद्र की तरह गम्भीर था।'

इन चारों को इस बात का ख्याल ही न था कि हम अमीर हैं, हाथ पैर हिलाना या घर का कामकाज करना हमारे लिये पाप है। वे खुशी से घर का काम जो उनके लायक होता करतीं और खाने पीने की चीजों पर विशेष ध्यान रखतीं। सबसे बड़ा ख्याल उन्हें इस बात का रहता था कि उनके पति उनसे किसी तरह रंज न होने पायें और घर के किसी बड़े बुजुर्ग को उन्हें बे अदब कहने का मौका न मिले। महारानी चन्द्रकान्ता की तो बात ही दूसरी है, ये चपला और चम्पा को भी सास की तरह समझती और इज्जत करती थीं। घर की लौंडियां तक इनसे प्रसन्न रहतीं और जब किसी लौंडी से कोई कसूर हो जाता तो झिड़की और गालियों के बदले नसीहत के साथ उसे समझा कर कायल और शर्मिन्दा कर देतीं और उसके मुंह से कहला लेतीं कि 'बेशक मुझसे भूल हुई। आइन्दे कभी ऐसा न होगा!!" सब से विचित्र बात तो यह थी कि उनके चेहरे पर रञ्ज क्रोध या उदासी कभी दिखाई देती ही न थी और जब कभी ऐसा होता तो किसी भारी घटना का अनुमान किया जाता था। हां उस समय इनके दुःख और चिन्ता का कोई ठिकाना नहीं रहता जब वे अपने पति

को किसी कारण दुखी देखतीं। ऐसी अवस्था में इनकी सच्ची भक्ति के कारण इनके पति को अपनी उदासी छिपानी पड़ती या इन्हें प्रसन्न करने और हंसाने के लिये और किसी तरह का उद्योग करना पड़ता। मतलब यह कि इन्होंने घर भर का दिल अपने हाथ में कर रक्खा था और ये घर की प्रसन्नता का कारण समझी जाती थीं।

भूतनाथ की स्त्री शान्ता का इन्हें बहुत बड़ा खयाल रहता और ये उसकी पिछली घटनाओं को याद कर कर के उसकी पति भक्ति की सराहना किया करती थीं!

इसमें कोई सन्देह नहीं कि इन्हें अपनी जिन्दगी में दुःखों के बड़े बड़े समुद्र पार करने पड़े थे परन्तु ईश्वर की कृपा से जब ये किनारे लगीं तब इन्हें कल्पवृक्ष की छाया मिली और फिर किसी बात की परवाह न रही।

इस समय सन्ध्या होने में घण्टे भर की देर है। सूर्य्य भगवान् अस्ताचल की तरफ तेजी के साथ झुके चले जा रहे हैं और उनकी लाल लाल पिछली किरणों से बड़ी बड़ी अटारियों तथा ऊंचे ऊंचे वृक्षों के ऊपरी हिस्सों पर ठहरा हुआ सुनहरा रंग बड़ा ही सोहावना मालूम पड़ता है और ऐसा जान पड़ता है कि प्रकृति ने अपना गौरव बढ़ाने के लिये अपने सहचरियों और सहायकों को प्रसन्न होकर सुनहरा ताज पहिरा दिया है।

ऐसे समय में किशोरी, कामिनी, कमलिनी, लाडिली और कमला अटारी पर एक सजे हुए बंगले के अन्दर बैठी जालीदार खिड़कियों से उस जंगल की शोभा देख रही है जो इस तिलिस्मी मकान से थोड़ी ही दूर पर है और साथ ही इसके मीठी मीठी बातें भी करती जाती हैं।

कमलिनी०। (किशोरी से) बहिन! एक दिन वह था कि हमें ऐसे ऐसे बल्कि इससे भी बढ़ कर भयानक जंगलों में अपनी इच्छा के विरुद्ध घूमना पड़ता था और उस समय यह सोच कर डर मालूम पड़ता था कि कोई शेर इधर उधर से निकल कर हम पर हमला न करे और एक आज का दिन है कि इस जंगल की शोभा भली मालूम पड़ती है और इसमें घूमने को जी चाहता है।

किशोरी०। ठीक है, जो काम लाचारी के साथ करना पड़ता है वह चाहे अच्छा ही क्यों न हो परन्तु चित्त को बुरा ही लगता है और भयानक तथा

कठिन कामों का तो कहना ही क्या है ! मुझे तो जगल में शेर और भेड़िये का इतना खयाल न था जितना दुश्मनों का, मगर वह समय और ही था जो ईश्वर न करे किसी दुश्मन को भी दिखाये। उस समय हम लोगों की किस्मत बिगड़ी हुई थी और अपने साथी लोग ही दुश्मन बनकर सताने के लिये तैयार हो जाते थे। (कमला की तरफ देख कर) भला तुम्हीं बताओ कि उस "चमेला" छोकरी का मैंने क्या बिगाड़ा था जिसने मुझे हर तरह से तबाह कर दिया ? अगर वह मेरी मुहब्बत का हाल मेरे पिता से न कह देती तो मुझ पर यकायक वैसी मुसीबत क्यो आती ?

कमला०। बेशक ऐसा ही है, मगर जैसी ही निमकहरामी की वैसी ही उसने सजा भी पाई। मेरे हाथ के कोड़े * वह जनम भर न भूलेगी !

किशोरी०। मगर इतना होने पर भी उसने मेरे पिता का ठीक ठीक भेद न बताया !

कमला०। बेशक वह बड़ी जिद्दी निकली मगर तुमने भी यह बड़ी लायकी दिखलाई कि अन्त में उसे छोड़ देने का हुक्म दे दिया। अब भी वह जहा जायगी दुःख ही भोगेगी।

किशोरी०। इसके अतिरिक्त उस जमाने में धनपति के भाई ने क्या मुझे कम तकलीफ दी थी जब मैं नागर के यहां कैद थी ! उस कम्बख्त की सूरत देखने से मेरा खून खुश्क होता था †

लाडिली०। हां जिसे भूतनाथ ने जहन्नुम में पहुँचा दिया ! नागर इस मामले को बिल्कुल छिपा गई, मायारानी से उसने कुछ भी न कहा और इसी में उसका भला भी था।

किशोरी०। (लाडिली से) बहिन ! तुम तो बड़ी नेक हो और तुम्हारा ध्यान भी धर्म विषय के कामों में विशेष रहता है मगर उन दिनों तुम्हें क्या हो गया था जो मायारानी के साथ बुरे कामों में अपना दिन बिताती थीं और हम लोगों की जान लेने के लिये तैयार थीं ?

लाडिली०। (लज्जा और उदासी के साथ) फिर तुमने वही चरचा छेड़ी !

* देखिये पहिला हिस्सा ग्यारहवें बयान का अन्त।

† देखिये हिस्सा आठ बयान नौवां।

मैं कई दफे हाथ जोड़ कर तुमसे कह चुकी हूँ कि उन बातों की याद दिला कर मुझे शर्मिन्दा न करो, दुःख न दो, मेरे मुंह में बार बार स्याही न लगाओ, उन दिनों मैं पराधीन थी, मेरा कोई सहायक न था मेरे लिये कोई और ठिकाना न था और उस दुष्टा के साथ रह कर मैं अपने को कहीं छिपा भी नहीं सकती थी और डरती थी कि यहां से निकल भागने पर कहीं मेरी इज्जत पर न आ बने! मगर बहिन! तुम जान बूझ कर बार बार उन बातों की याद दिला कर मुझे सताती हो, कहो बैठू या यहां से उठ जाऊं?

किशोरी०। अच्छा अच्छा जाने दो माफ करो, मुझसे भूल हो गई, मगर मेरा मतलब यह न था जो तुमने समझा है, मैं दो चार बातें नानक के विषय में पूछा चाहती थी जिसका पता अभी तक नहीं लगा और भेद की तरह हम लोगों...

लाडिली०। (बात काट कर) वे बातें भी मेरे लिये वैसी ही दुःखदाई हैं!!

किशोरी०। नहीं नहीं मैं यह न पूछूंगी कि तुमने नानक के साथ राम-भोली बन कर क्या क्या किया बल्कि यह पूछूंगी कि उस टीन के डब्बे में क्या था जो नानक ने चुरा ला कर तुम्हें बजरे में दिया था? कुएं में से हाथ कैसा निकला था? नहर के किनारे वाले बंगले में पहुँच कर वह क्यों कर फंसा लिया गया? उस बंगले में वह तस्वीरें कैसी थीं? असली रामभोली कहां गई और क्या हुई? रोहतासगढ़ तहखाने के अन्दर तुम्हारी तस्वीर किसने लटकाई और तुम्हें वहां का हाल कैसे मालूम हुआ था? इत्यादि ये सब बातें मैं कई दफे कई तरह से सुन चुकी हूँ मगर उसका असल भेद अभी तक कुछ मालूम न हुआ *।

लाडिली०। हां इन सब बातों का जवाब देने के लिये मैं तैयार हूँ मगर तुम जानती हो और अच्छी तरह सुन तथा समझ चुकी हो कि वह तिलिस्मी बाग तरह तरह की अजायबातों से भरा हुआ है, विशेष नहीं तो भी वहां का बहुत कुछ हाल मायारानी और दारोगा को मालूम था, वहां अथवा उसकी सरहद में ले जा कर किसी को डराने धमकाने या तकलीफ देने के लिये कोई ताज्जुब का तमाशा दिखाना कौन बड़ी बात है।

* देखिये सन्तति चौथा हिस्सा नानक का बयान।

किशोरी०। हां सो तो ठीक ही है।

लाडिली०। और फिर नानक जान बूझ कर काम निकालने के लिये तो गिरफ्तार किया ही गया था। इसके अतिरिक्त तुम यह भी सुन चुकी हो कि दारोगा के बंगले या अजायबघर से खास बाग तक नीचे नीचे रास्ता बना ही हुआ है, ऐसी अवस्था में नानक के साथ वैसा बर्ताव करना कौन बड़ी बात थी!

किशोरी०। बेशक ऐसा ही है अच्छा उस डिब्बे वगैरह वाला भेद तो बताओ?

लाडिली०। उस गठरी में जो कलमदान था वह हमारे विशेष काम का न था मगर उस डिब्बे में वही इन्दिरा वाला कलमदान था जिसके लिये दारोगा साहब बेताब हो रहे थे और चाहते थे कि वह किसी तरह से पुनः मेरे कब्जे में आ जाय। असल में उसी कलमदान के लिये मुझे रामभोली बनना पड़ा था। दारोगा ने असली रामभोली को गिरफ्तार करवा के इस तरह मरवा डाला कि किसी को कानोंकान खबर भी न हुई और मुझे रामभोली बन कर वह काम निकालने की आज्ञा दी। लाचार मैं रामभोली बनकर नानक से मिली और उसे अपने बस में करने के बाद इन्द्रदेवजी के मकान में से वह कलमदान तथा उसके साथ और भी कई तरह के कागजात नानक की मार्फत चुरवा मंगवाए थे। मुझे तो उस कलमदान की सूरत देखने से डर मालूम होता था क्योंकि मैं जानती थी कि वह कलमदान हमलोगों के खून का प्यासा और दारोगा के बड़े बड़े भेदों से भरा हुआ है। इसके अतिरिक्त उस पर इन्दिरा की बचपन की तस्वीर भी बनी हुई थी और सुन्दर अक्षरों में इन्दिरा का नाम लिखा हुआ था, जिसके विषय में मैं उन दिनों यह जानती थी कि वे मां बेटी बड़ी बेदर्दी के साथ मारी गईं। यही सबब था कि कलमदान की सूरत देखते ही मुझे तरह तरह की बातें याद आ गईं मेरा कलेजा दहल गया, और मैं डर के मारे कांपने लगी। खैर, जब मैं नानक को लिये हुए खास बाग की सरहद में पहुँची तो उसे धनपति के हवाले करके खास बाग में चली गई, अपना दुपट्टा नहर में फेंकती गई, दूसरी राह से उस तिलिस्मी कुंए के नीचे पहुँच कर पानी का प्याला और बनावटी हाथ निकालने के बाद मायारानी से जा मिली और फिर बचा हुआ काम धनपति और दारोगा ने पूरा किया। दारोगा वाले बंगले में

जो तस्वीर रक्खी गई थी वह केवल नानक को धोखा देने के लिये थी, उसका और कोई मतलब न था, और रोहतासगढ़ के तहखाने में जो मेरी तस्वीर* लोगों ने देखी थी वह वास्तव में दिग्विजयसिंह की बूआ ने मेरे सुबीते के लिये लटकाई थी और तहखाने की बहुत सी बातें समझा कर बता दिया था कि जहां तू अपनी तस्वीर देखियो समझ लीजियो कि उसके फलानी तरफ फलानी बात है, इत्यादि। बस वह तस्वीर इतने ही काम के लिये लटकाई गई थी। वह बुढ़िया बड़ी ही नेक थी और उस तहखाने का हाल बनिस्बत दिग्विजयसिंह के बहुत ज्यादे जानती थी, मैं पहले भी महाराज के सामने बयान कर चुकी हूँ कि उसने मेरी मदद की थी। वह कई दफे मेरे डेरे पर आई थी और तरह तरह की बातें समझा गई थी। मगर दिग्विजयसिंह को इन सब बातों की कुछ भी खबर न थी क्योंकि न तो दिग्विजयसिंह उसकी कदर करता था और न वह दिग्विजयसिंह का चाहती थी। इसके अतिरिक्त यहां पर यह भी कह देना आवश्यक है कि मैं उस बुढ़िया की मदद से तहखाने के अन्दर चली गई थी मगर कुन्दन अर्थात् धनपति ने वहां जो कुछ किया था वह मायारानी के दारोगा की बदौलत था। घर लौटने पर मुझे मालूम हुआ कि दारोगा वहां कई दफे छिप कर गया और कुन्दन से मिला था मगर उसे मेरे बारे में कुछ खबर न थी, अगर खबर होती तो मेरे और कुन्दन में जुदाई न रहती, मगर मुझे इस बात का ताज्जुब जरूर है कि घर पहुंचने पर भी धनपति ने वहां की बहुत सी बातें मुझसे छिपा रक्खीं।

किशोरी०। अच्छा यह तो बताओ कि रोहतासगढ़ में जो तस्वीर तुमने कुन्दन को दिखाने के लिये मुझे दी थी वह तुम्हें कहां से मिली थी और तुम्हें तथा कुन्दन को उसका असली हाल क्योंकर मालूम हुआ था?

लाडिली०। उन दिनों मैं यह जानने के लिये बेताब हो रही थी कि कुन्दन असल में कौन है! मुझे इस बात का भी शक हुआ कि यह राजा साहब (बीरेन्द्रसिंह) की कोई एयारा होगी और यही शक मिटाने के लिये मैंने वह तस्वीर खुद बना कर उसे दिखाने के लिए तुम्हें दी थी। असल में उस तस्वीर का भेद हम लोगों को मनोरमा की जुबानी मालूम हुआ था और मनो-

* देखिये सन्तति चौथा हिस्सा दसवां बयान।

रमा ने इन्दिरा से उस समय सुना था जब वह मनोरमा को मां समझ के उसके फेर में पड़ गई थी। *

किशोरी०। ठीक है! मगर इसमें भी कोई शक नहीं कि सब बखेड़ों की जड़ वही कम्बख्त दारोगा थी। यदि जमानिया के राज्य में दारोगा न होता तो इन सब बातों में से एक भी न सुनाई देती और न हम लोगों की दुःखमय कहानी का कोई अंश लोगों में कहने सुनने के लिये पैदा होता (कमलिनी से) मगर बहिन? यह तो बताओ कि इस हरामी के पिल्ले (दारोगा) का कोई वली वारिस या रिश्तेदार भी दुनिया में है या नहीं?

कमलिनी०। सिवाय एक के और कोई नहीं! दुनिया का कायदा है कि जब आदमी भलाई बुराई कुछ सीखता है तो पहिले अपने घर ही से आरम्भ करता है। मा बाप के अनुचित लाड़ प्यार और उनकी असावधानी से बुरी राह पर चलने वाले लड़के घर ही में श्री गणेश करते हैं और तब कुछ दिन के बाद दुनिया में मशहूर होने योग्य होते हैं। यही बात इस हरामखोर की भी थी! इसने पहिले अपने ही नाते रिश्तेदारों पर सफाई का हाथ फेरा और उन्हें जहन्नुम से मिला कर समय के पहिले घर का मालिक बन बैठा। साधू का भेष धरना इसने लड़कपन ही से सीखा है और विशेष करके इसके इसी भेष की बदौलत लोग धोखे में भी पड़े। हमारे राजा गोपालसिंह जी ने भी (मुस्कुरात हुई) इसे बसिष्ट ऋषि ही समझ कर अपने यहां रक्खा था। हां इसका एक चचेरा भाई जरूर बच गया था जो इसके हत्थे नहीं चढ़ा था क्योंकि वह भी परले ही सिरे का बदमाश था, और इसकी करतूतों को खूब ही समझता था, लाचार होकर आखिर इसे उसकी खुशामद करनी ही पड़ी और उसे अपना साथी बनाना ही पड़ा!

किशोरी०। क्या वह मर गया? उसका नाम क्या था?

कमलिनी०। नहीं वह मरा नहीं मगर मरने के बराबर ही है, क्योंकि वह हमारे यहां कैद है। उसने अपना नाम शिखण्डी रख लिया था। तुम जानती ही हो कि जब मैं जमानिया के खास बाग के तहखानों और सुरंगों की राह से दोनों कुमारों तथा बाकी कैदियों को लेकर बाहर निकल रही थी तो हाथी वाले

* देखिये हिस्सा ३ बयान १० और हिस्सा १९ बयान ६।

दरवाजे पर उसने उनके * (इन्द्रजीतसिंह) के ऊपर वार किया था।

किशोरी०। हां हां हां, तो क्या वह वही कम्बख्त था ?

कमलिनी०। हां वही था, उसे मैं अपना पक्षपाती समझती थी मगर बेईमान ने मुझे धोखा दिया। ईश्वर की कृपा थी कि पहिली ही बार में वह उसी जगह गिरफ्तार हो गया नहीं तो शायद मुझे धोखे में पड़ कर बहुत बड़ी तकलीफ उठानी पड़ती और.....

कमलिनी ने इतना कहा ही था कि उसका ध्यान सामने के जंगल की तरफ जा पड़ा, देखा कि कुंअर आनन्दसिंह एक सब्जे घोड़े पर सवार सामने की तरफ से आ रहे हैं साथ में केवल तारासिंह एक छोटे टट्टू पर सवार बातें करते आते हैं और कोई आदमी नहीं है। साथ ही इसके कमलिनी को कोई और भी कोई अनूठा दृश्य दिखाई दिया जिससे वह यकायक चौंक पड़ी और इस लिये उसका तथा और सभों का ध्यान भी उसी तरफ जा पड़ा।

उसने देखा कि आनन्दसिंह और तारासिंह जंगल में से निकल कर कुछ ही दूर मैदान में आये थे कि यकायक रुक कर पुनः पीछे की तरफ घूमे और गौर के साथ कुछ देखने लगे। कुछ ही देर के बाद और भी दस बारह आदमी नकाबपोश हाथ में तीर कमान लिये दिखाई पड़े जो जंगल से बाहर निकलते ही इन दोनों पर फुर्ती के साथ तीर चलाने लगे और ये दोनों भी म्यान से तलवार निकाल कर उन लोगों की तरफ झपटे और देखते ही देखते सब के सब लड़ते भिड़ते पुनः जंगल में घुस कर देखने वालों की नजरों से गायब हो गये। कमलिनी किशोरी और कामिनी वगैरह इस तमाशे को देखकर घबरा गईं, और सभों की इच्छानुसार कमला दौड़ी हुई नीचे आई और एक लौंडी को इस मामले की खबर करने के लिये कुंअर इन्द्रजीतसिंह के पास भेजा।

आठवां बयान

नानक इस बात को सोच रहा था कि मैं पहिले किस पर वार करूं ? अगर पहिले शान्ता पर वार करूंगा तो आहट पाकर भूतनाथ जाग जायगा और मुझे गिरफ्तार कर लेगा क्योंकि मैं अकेला किसी तरह उसका मुकाबला नहीं कर

* देखिये आठवां हिस्सा दूसरा बयान।

सकता, अतएव पहिले भूतनाथ ही का काम तमाम करना चाहिये, अगर उसकी आहट पा कर शान्ता जाग भी जायगी तो कोई चिन्ता नहीं मैं उसे सांस लेने की भी मोहलत न दूँगा, वह औरत की जात मेरे मुकाबले में क्या कर सकती है ? अस्तु ऐसा करने के लिये यह जानने की सख्त जरूरत है कि इन दोनों में शान्ता कौन है और भूतनाथ कौन है।

थोड़ी ही देर में ऐसी बहुत सी बातें नानक के दिमाग में दौड़ गईं और "इन दोनों में भूतनाथ कौन है" इसका पता न लगा सकने के कारण लाचार होकर उसने यह निश्चय किया कि इन दोनों को बेहोश करके यहां से ले चलना चाहिये। ऐसा करने से मेरी मा बहुत ही प्रसन्न होगी।

नानक ने अपने बटुए में से बहुत ही तेज बेहोशी की दवा निकाली और उन दोनों के मुंह पर चादर के ऊपर ही छिड़क दी और उन दोनों के बेहोश होने का इन्तजार करने लगा।

थोड़ी ही देर में उन दोनों ने हाथ पैर हिलाये जिससे नानक समझ गया कि अब इन पर बेहोशी का असर हो गया अस्तु उसने दोनों के ऊपर से चादर हटा दी और तब देखा कि उन दोनों में भूतनाथ नहीं है बल्कि ये दोनों औरतें ही हैं जिनमें एक तो भूतनाथ की स्त्री शान्ता है, दूसरी औरत को नानक पहिचानता न था।

नानक ने फिर एक दफे बेहोशी की दवा सुंघा कर शान्ता को अच्छी तरह बेहोश किया और चारपाई पर से उठा कर बहुत हिफाजत और हुशियारी के साथ खेमे के बाहर निकाल लाया और वहां अपने एक साथी को मौजूद पाया। दोनों ने मिल कर उसकी गठड़ी बांधी और फुर्ती से लश्कर के बाहर निकाल ले गये।

शान्ता का पा जाने से नानक बहुत ही खुश था और सोचता जाता था कि इसे पा कर मेरी मा बहुत ही प्रसन्न होगी और हद्द से ज्यादे मेरी तारीफ करेगी। मै इसे सीधे अपने घर ले जाऊंगा और जब दूसरी दफे लौटूंगा तो भूतनाथ पर कब्जा कर लूंगा। इसी तरह धीरे धीरे अपने सब दुश्मनों को जहन्नुम में मिला डालूंगा।

कोस भर निकल जाने के बाद जब नानक एक संकेत पर पहुँचा तो उसके

और साथियों से भी मुलाकात हुई जो कसे कसाये कई घोड़ों के साथ उसका इन्तजार कर रहे थे।

एक घोड़े पर सवार होने के बाद नानक ने शान्ता को अपने आगे रख लिया, उसके साथी लोग भी घोड़े पर सवार हुए और सभों ने पूरब का रास्ता लिया।

दूसरे दिन सन्ध्या के समय नानक अपने घर पहुँचा। रास्ते में उसने और उसके साथियों ने कई दफे भोजन किया मगर शान्ता की कुछ खबर न ली गई बल्कि जब जब इस बात का ख्याल हुआ कि अब इसकी बेहोशी उतरा चाहती है तब पुनः पुनः दवा सुंघा कर उसकी बेहोशी मजबूत कर दी गई।

नानक को देख कर उसकी मां बहुत ही प्रसन्न हुई और जब उसे यह मालूम हुआ कि उसका सपूत शान्ता को गिरफ्तार कर लाया है तब तो उसकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा। उसने नानक की बहुत ही आओ भगत की और बहुत तारीफ करने बाद बोली, "इससे बदला लेने में अब क्षण भर की भी देर न करनी चाहिये, इसे तुरत खम्भे के साथ बांध कर होश में लाओ और पहिले जूतियों से खूब अच्छी तरह खबर ले फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। मगर इसके मुंह में खूब अच्छी तरह कपड़ा ठूंस दो जिसमें कुछ बोल न सके और हम लोगों को गालियां न दे।"

नानक को भी यह बात पसन्द आई और उसने ऐसा ही किया। शान्ता के मुंह में कपड़ा ठूंसा गया और वह दालान के एक खम्भे के साथ बांध कर होश में लाई गई। होश में आने के बाद अपने को ऐसी अवस्था में देख कर वह बहुत ही घबराई और जब उद्योग करने पर भी कुछ बोल न सकी तो आंखों से आंसू की धारा बहाने लगी।

नानक ने उसकी दशा पर कुछ भी ध्यान न दिया और अपनी मां की आज्ञा पा कर उसने शान्ता को जूते से मारना शुरू किया और यहां तक मारा कि अन्त में वह बेहोश होकर झुक गई। उस समय नानक की मां कागज का एक लपेटा हुआ पुर्जा नानक के आगे फेंक कर यह कहती घर के बाहर निकल गई कि 'इसे अच्छी तरह पढ़ तब तक मैं लौट आती हूँ।'

उसकी इस कारवाई ने नानक को ताज्जुब में डाल दिया, उसने जमीन

पर से पुर्जा उठा लिया और चिराग के सामने ले जा कर पढ़ा, यह लिखा हुआ था :—

"भूतनाथ के साथ दियारी करना या उसका मुकाबला करना नानक ऐसे नौसिखे लौंडों का काम नहीं है, तैं समझता होगा कि मैं शान्ता को गिरफ्तार कर लाया मगर खूब समझ रख कि वह कभी तेरे पंजे में नहीं आ सकती। जिस औरत को तू जूतियों से मार रहा है वह शान्ता नहीं है, पानी से उसका चेहरा धो डाल और भूतनाथ की कारीगरी का तमाशा देख! अब अगर अपनी जान तुझे प्यारी है तो खबरदार भूतनाथ का पीछा कभी न कीजिये।'

पुर्जा पढ़ते ही नानक के हाश उड़ गये। झटपट पानी का लोटा उठा लिया और मुंह में ठूंसा हुआ लत्ता निकालकर शान्ता का चेहरा धोने लगा, तब तक वह भी होश में आ गई। चेहरा साफ होने पर नानक ने देखा कि यह तो उसकी असली मा "रामदेई" है। उसने होश में आते ही नानक से कहा, "क्यों बेटा? तुमने मेरे ही साथ ऐसा सलूक किया?"

नानक के ताज्जुब का कोई हद्द न रहा। वह घबराहट के साथ अपनी मा का मुंह देखने लगा और ऐसा परेशान हुआ कि आधी घड़ी तक उसमें कुछ बोलने की शक्ति न रही। इस बीच में रामदेई ने उसे तरह तरह की बेतुकी बातें सुनाईं जिसे वह सिर नीचा किये हुए चुपचाप सुनता रहा। जब उसकी तबीयत कुछ ठिकाने हुई तब उसने सोचा कि पहिले उस रामदेई की पकड़ना चाहिये जो मेरे सामने चोटी फेंक कर मकान के बाहर निकल गई है, परन्तु यह उसकी सामर्थ्य के बाहर था क्योंकि उसे घर से बाहर गये हुए देर हो चुकी थी अस्तु नानक ने सोचा कि अब वह किसी तरह नहीं पकड़ी जा सकती है।

नानक ने अपनी मां के हाथ पैर खोल डाले और कहा, "मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता कि यह क्या हुआ! तुम वहां कैसे जा पहुँची और यहां रहने वाली रामदेई कौन थी और क्योंकर आई?"

रामदेई०। मैं इसका जवाब कुछ भी नहीं दे सकती और न मुझे कुछ मालूम ही है। मैं तुम्हारे चले जाने बाद भी इसी घर में थी, इसी घर में बेहोश हुई और होश आने पर अपने को इसी घर में देखती हूँ। तुम बयान करो कि क्या हुआ और तुमने मेरे साथ ऐसा सलूक क्यों किया?

नानक ने ताज्जुब के साथ अपना किस्सा बयान किया और अन्त में कहा, "अब तुम ही बताओ कि मैंने इसमें क्या भूल की ?"

नौवाँ बयान

दिन का समय है और दोपहर ढल चुकी है। महाराज सुरेन्द्रसिंह अभी अभी भोजन करके आये हैं और अपने कमरे में पलंग पर लेटे हुए पान चबा रहे हैं और अपने दोस्तों तथा लड़कों से हंसी खुशी की बातें कर रहे हैं जो कि महाराज से घण्टे भर पहिले ही भोजन इत्यादि से छुट्टी पा चुके हैं।

महाराज के अतिरिक्त इस समय कमरे में राजा बीरेन्द्रसिंह, कुअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, राजा गोपालसिंह, जीतसिंह, तेजसिंह, देवीसिंह, पन्नालाल, रामनारायण, पण्डित बद्रीनाथ, चुन्नीलाल, जगन्नाथ ज्योतिषी, भैरोसिंह, इन्द्रदेव और गोपालसिंह के दोस्त भरतसिंह भी बैठे हुए हैं।

बीरेन्द्र०। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो तिलिस्म मेरे तोड़ा था वह इस तिलिस्म के सामने रुपये में एक पैसा भी नहीं है, साथ ही इसके जमानिया राज्य में जैसे जैसे महापुरुष (दारोगा की तरह) रह चुके हैं तथा वहां जैसी जैसी घटनाएं हो गई हैं उसका नजीर भी कभी सुनने में न आवेगी।

गोपाल०। इन बखेड़ों का सबब भी उसी तिलिस्म को समझना चाहिये, उसी का आनन्द लूटने के लिये लोगों ने ऐसे बखेड़े मचाये और उसी के बदौलत लोगों की ताकत और हैसियत भी बढ़ी।

जीत०। बेशक यही बात है जैसे जैसे तिलिस्म के भेद खुलते गये तैसे तैसे पाप और लोगों की बदकिस्मती का जमाना तरक्की करता गया।

सुरेन्द्र०। हमें तो कम्बख्त दारोगा के कामों पर आश्चर्य होता है, न मालूम किस सुख के लिये उस कम्बख्त ने ऐसे ऐसे कुकर्म किये !!

भरत०! (हाथ जोड़ के) मैं समझता हूँ कि दारोगा के कुकर्मों का हाल महाराज ने अभी बिल्कुल नहीं सुना है, उसकी कुछ पूर्ती तब ही होगी जब हमलोग अपना किस्सा बयान कर चुकेंगे।

सुरेन्द्र०। ठीक है हमने भी आज आप ही का किस्सा सुनने की नीयत से आराम नहीं किया।

भरत० । मैं अपनी दुर्दशा बयान करने के लिये तैयार हूँ ।

जीत० । अच्छा तो अब आप शुरू करें ।

भरत० । जो आज्ञा ।

इतना कह कर भरतसिंह ने इस तरह अपना हाल बयान करना शुरू किया :—

मैं जमानिया का रहने वाला और एक जमीदार का लड़का हूँ, मुझे इस बात का सौभाग्य प्राप्त था कि राजा गोपालसिंह जी मुझे अपना मित्र समझते थे यहां तक कि भरी मजलिस में भी मित्र कह कर मुझे सम्बोधन करते थे और घर में किसी तरह का पर्दा नहीं रखते थे यही सबब था कि वहां के कर्मचारी लोग तथा अच्छे अच्छे रईस मुझसे डरते और मेरी इज्जत करते थे परन्तु दारोगा को यह बात पसन्द न थी ।

केवल राजा गोपालसिंह ही नहीं इनके पिता भी मुझे अपने लड़के की तरह मानते और प्यार करते थे, विशेष करके इसलिये कि हम दोनों मित्रों की चाल चलन में किसी तरह की बुराई दिखाई नहीं देती थी ।

जमानिया में जो बेईमान और दुष्ट लोगों की एक गुप्त कमेटी थी उसका हाल आप लोग जान ही चुके हैं अतएव उसके विषय में विस्तार के साथ कुछ कहना ही वृथा है, हां जरूरत पड़ने पर उसके विषय में इशारा ही कर देने से काम चल जायगा ।

रियासतों में मामूली तौर पर तरह तरह की घटनाएं हुआ ही करती हैं इसलिये राजा गोपालसिंह को गद्दी मिलने के पहिले जो कुछ मुझ पर बीत चुकी है उसे मामूली समझ कर मैं छोड़ देता हूँ और उस समय से अपना हाल बयान करता हूँ जब इनकी शादी हो चुकी थी । शादी में जो कुछ चालबाजी हुई थी उसका हाल आप सुन ही चुके हैं ।

जमानिया की वह गुप्त कमेटी यद्यपि भूतनाथ की बदौलत टूट चुकी थी मगर उसकी जड़ नहीं गई थी क्योंकि कम्बख्त दारोगा हर तरह से साफ साफ बच रहा था और उसका कमजोर दफ्तर उसके कब्जे में था ।

गोपालसिंह जी की शादी हो जाने के बहुत दिन बाद एक दिन मेरे एक नौकर ने रात के समय जब कि वह मेरे पैरों में तेल लगा रहा था कहा कि राजा

गोपालसिंह की शादी असली लक्ष्मीदेवी के साथ नहीं हुई बल्कि किसी दूसरी ही औरत के साथ हुई है और यह काम दारोगा ने रिश्वत लेकर किया है और इस काम में सुबीता होने के लिये गोपालसिंह जी के पिता को भी दारोगा ही ने मार डाला है।

सुनने के साथ ही मैं चौंक पड़ा, मेरे ताज्जुब का कोई ठिकाना न रहा, मैंने उससे तरह तरह के सवाल किये जिसका जवाब उसने ऐसा तो न दिया जिससे मेरी दिलजमयी हो जाती मगर इस बात पर बहुत जोर दिया कि—जो कुछ मैं कह चुका हूँ वह बहुत ठीक है।

मेरे जी में तो यही आया कि इसी समय उठ कर राजा गोपालसिंह के पास जाऊं और सब हाल कह दूं, परन्तु यह सोच कर कि किसी काम में जल्दी न करनी चाहिये मैं चुप रह गया और सोचने लगा कि यह कार्रवाई क्योंकर हुई और इसका ठीक ठीक पता किस तरह लग सकता है।

रात भर मुझे नींद न आई और इन्हीं बातों को सोचता रह गया, सवेरा होने पर स्नान सन्ध्या इत्यादि से छुट्टी पाकर मैं राजा साहब से मिलने के लिये गया, मालूम हुआ कि राजा साहब अभी महल से बाहर नहीं निकले हैं, मैं सीधे महल में चला गया। उस समय गोपालसिंह जी सन्ध्या कर रहे थे और इनसे थोड़ी ही दूर पर सामने बैठी हुई मायारानी फूलों का गजरा तैयार कर रही थी। उसने मुझे देखते ही कहा, "अहा! आज क्या है? मालूम होता है मेरे लिये आप कोई अनूठी चीज लाये हैं।"

इसके जवाब में मैं हंस कर चुप हो रहा और इशारा पा कर गोपालसिंह जी के पास एक आसन पर बैठ गया। जब वे सन्ध्यासन से छुट्टी पा चुके तब मुझसे बातचीत होने लगी। मैं चाहता था कि मायारानी यहां से उठ जाय तब मैं अपना मतलब बयान करूं और वह वहां से उठती ही न थी और चाहती थी कि ये जो कुछ बयान करें उसे मैं भी सुन लूं! सम्भव था कि मैं मामूली बात करके मौका टाल देता और वहां से उठ खड़ा होता क्योंकि उन दोनों को इस बात का विश्वास हो गया था कि ये जरूर कोई अनूठी बात कहने के लिए आये हैं। लाचार मुझे गोपालसिंहजी से इशारे ही में कह देना पड़ा कि मैं एकान्त में केवल आपही से कुछ कहा चाहता हूँ! जब गोपालसिंह जी ने किसी

काम के बहाने से उसे अपने सामने से उठाया तब वह भी मेरा मतलब समझ गई और कुछ मुंह बना कर उठ खड़ी हुई।

हम दोनों यही समझते थे कि मायारानी वहां से चली गई मगर उस कम्बख्त ने हम दोनों की बातें जरूर सुन लीं क्योंकि उसी दिन से मेरी कम्बख्ती का जमाना शुरू हो गया। मैं ठीक नहीं कह सकता कि किस ढग से उसने हमारी बातें सुन लीं। जिस जगह हम दोनों बैठे थे उसके पास ही की दीवार में एक छोटी खिड़की पड़ती थी, शायद उसी जगह पिछवाड़े की तरफ खड़ी होकर उसने मेरी बातें सुन ली हों तो कोई ताज्जुब नहीं।

मैंने जो कुछ अपने नौकर से सुना था सब तो नहीं कहा केवल इतना कहा कि 'आपके पिता का दारोगा ही ने मारा है और इस लक्ष्मीदेवी की शादी में भी उसने कुछ गड़बड़ किया है, गुप्तरीति पर इसकी जांच करनी चाहिये। मगर अपने नौकर का नाम नहीं बताया क्योंकि मैं जैसा उसे बहुत चाहता था वैसा ही उसकी हिफाजत का भी खयाल रखता था। इसमें कोई शक नहीं कि मेरा वह नौकर बहुत ही होशियार और बुद्धिमान था बल्कि इस योग्य था कि राज्य का कोई भारी काम उसके सपुर्द किया जाता परन्तु वह जात का कहार था इस लिये किसी बड़े मर्तबे पर नहीं पहुच सका।

गोपालसिंह जी ने मेरी बातें ध्यान देकर सुनी मगर उन बातों का विश्वास न हुआ क्योंकि ये मायारानी को पतिव्रता की नाक और दारोगा को सचाई तथा ईमानदारी का पुतला समझते थे। मैंने इन्हें अपनी तरफ से बहुत समझाया और कहा कि यह बात चाहे झूठ ही हो मगर आप दारोगा से हरदम होशियार रहा कीजिये और उसके कामों को जांच की निगाह से देखा कीजिये मगर अफसोस इन्होंने मेरी बातों पर कुछ भी ध्यान दिया और मेरे साथ ही साथ अपने को भी बर्बाद कर दिया।

उसके बाद भी कई दिनों तक मैं इन्हें समझाता रहा और ये भी हां में हां मिलते रहे जिससे विश्वास होता था कि कुछ और उद्योग करने से ये समझ जायगे मगर ऐसा न हुआ। एक दिन मेरे उसी नौकर ने जिसका नाम हरदीन था मुझसे फिर एकान्त में कहा कि अब आप राजा साहब को समझना बुझाना छोड़ दीजिये, मुझे निश्चय हो गया है कि उनकी बदकिस्मती के दिन आ गये

हैं, वे आपकी बातों पर कुछ भी ध्यान न देंगे। उन्होंने बहुत ही बुरा किया कि आपकी बातें मायारानी और दारोगा पर प्रगट कर दीं। अब उनको समझाने के बदले आप अपनी जान बचाने की फिक्र कीजिये और अपने को हर वक्त आफत से घिरा हुआ समझिये। शुक्र है कि आपने सब बातें नहीं कह दीं नहीं तो और भी गजब हो जाता.....

औरों को चाहे कैसा ही कुछ खयाल हो मगर मैं अपने खिदमतगार हरदीन की बातों पर विश्वास करता था और उसे अपना खैरख्वाह समझता था। उसकी बातें सुन कर मुझे गोपालसिंह पर बहिसाब क्रोध चढ़ आया और उसी दिन से मैंने इन्हें समझाना बुझाना छोड़ दिया मगर इनकी मुहब्बत ने मेरा साथ न छोड़ा।

मैंने हरदीन से पूछा कि ये सब बातें तुझे क्योंकर मालूम हुईं और होती हैं? मगर उसने ठीक ठीक न बताया, बहुत जिद्द करने पर कहा कि कुछ दिन और सब्र कीजिये, मैं इसका भेद भी आपको बता दूंगा।

दूसरे दिन जब कि सूरज अस्त होने में दो घण्टे की देर थी मैं अकेला अपने नजरबाग में टहल रहा था और इस सोच में पड़ा हुआ था कि राजा गोपालसिंह का भ्रम मिटाने के लिये अब क्या बन्दोबस्त करना चाहिये, उसी समय रघुबरसिंह मेरे पास आया और साहब सलामत करने के बाद इधर उधर की बातें करने लगा, बात ही बात में उसने कहा कि आज मैंने एक घोड़ा निहायत उम्दा खरीद किया मगर अभी तक उसे दाम नहीं दिया गया है, आप उस पर सवारी करके देखिये, आप भी उसे पसन्द करें तो मैं उसका दाम चुका दूं, इस समय मैं उसे अपने साथ लेता आया हूँ आप उस पर सवार हो लें और मैं अपने पुराने घोड़े पर सवार हो कर आपके साथ चलता हूँ, चलिये दो चार कोस का चक्कर लगा आवें।

मुझे घोड़े का बहुत ही शौक था, रघुबर की बातें सुन कर मैं खुश हो गया और यह सोच कर कि 'अगर जानवर उम्दा होगा तो मैं खुद उसका दाम देकर अपने लिए रख लूंगा' मैंने जवाब दिया कि चलो देखें कैसा घोड़ा है, एक घोड़े की जरूरत तो मुझे भी थी। इसके जवाब में रघुबर ने कहा कि अच्छी बात है अगर आपके पसन्द आवे तो आप ही रख लीजिगा।

उन दिनो मैं रघुबरसिंह को भला आदमी अशराफ और अपना दोस्त समझता था, मुझे इस बात की कुछ भी खबर न थी कि यह परले सिरे का बेईमान और शैतान का भाई है, इसी तरह दारोगा को भी मैं इतना बुरा नहीं समझता था और राजा गोपालसिंह की तरह मुझे भी विश्वास था कि जमानिया की उस गुप्त कुमेटी से इन दोनों का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है, मगर हरदीन ने मेरी आंखें खोल दीं और साबित कर दिया कि जो कुछ हम लोग सोचे हुए थे वह हमारी भूल थी।

खैर मैं रघुबरसिंह के साथ ही साथ बाग के बाहर निकला और दर्वाजे पर आया जहां कसे कसाये दो घोड़े दिखाई दिये जिनमें एक तो खास रघुबरसिंह का घोड़ा था और दूसरा नया बहुत ही शानदार घोड़ा था जिसकी रघुबरसिंह ने तारीफ की थी।

मैं उस घोड़े पर सवार होनेवाला ही था कि हरदीन दौड़ा हुआ बदहवास मेरे पास आया और बोला, "घर में बहूजी (मेरी स्त्री) को न मालूम क्या हो गया है कि गिर कर बेहोश हो गई हैं और मुंह से खून निकल रहा है, जरा चल कर देख लीजिये।"

हरदीन की बात सुन कर मैं तरद्दुद में पड़ गया और उसे साथ ले कर घर के अन्दर गया क्योंकि हरदीन बराबर जनाने में आया जाया करता था और उसके लिये किसी तरह का परदा न था। जब घर की दूसरी ड्योढ़ी मैंने लांघी तब वहां एकांत देख कर हरदीन ने मुझे रोका और कहा, "जो कुछ मैंने आपको खबर दी थी वह बिल्कुल झूठ थी, बहूजी बहुत अच्छी तरह हैं।"

मैं०। तो तुमने ऐसा क्यों किया?

हरदीन०। इसलिये कि रघुबरसिंह के साथ जाने से आपको रोकूं।

मैं०। क्यों?

हरदीन०। इसलिये कि वह आपको धोखा देकर ले जा रहा है और आपकी जान लिया चाहता है, मैं उसके सामने आपको रोक नहीं सकता था, अगर रोकता तो उसे मेरी तरफदारी मालूम हो जाती और मैं जान से मारा जाता और फिर आपको इन दुष्टों की चालबाजी से बचाने वाला कोई न रहता, यद्यपि मुझे अपनी जान आप से बढ़ कर प्यारी नहीं है तथापि आपकी रक्षा

करना मेरा कर्तव्य है और यह बात आपके आधीन है, यदि आप मेरा भेद खोल देंगे तो फिर मेरा इस दुनिया में रहना मुश्किल है!

मैं०। (ताज्जुब के साथ) तुम क्या कह रहे हो? रघुबर तो हमारा दोस्त है!!

हर०। इस दोस्ती पर आप भरोसा न करें और इस समय इस मौके को टाल जांय, रात को मैं सब बातें आपको अच्छी तरह समझा दूँगा। यदि आपको मेरी बातों पर विश्वास न हो तो जाइये मगर एक तमञ्चा कमर में छिपा के लेते जाइये और पश्चिम तरफ कदापि न जाकर पूरब तरफ जाइये तथा हर तरह होशियार रहिये। इतनी होशियारी करने पर भी आपको मालूम हो जायगा कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह सच है या झूठ।

हरदीन की बातों ने मुझे चक्कर में डाल दिया, कुछ सोचने के बाद मैंने कहा, "शाबाश हरदीन! तुमने बेशक इस समय मेरी जान बचाई, मगर खैर तुम चिन्ता न करो और मुझे इस दुष्ट के साथ जाने दो, अब मैं इसके पंजे में न फसूंगा और जैसा तुमने कहा वैसा ही करूँगा।"

इसके बाद मैं चुपचाप अपने कमरे में चला गया और एक छोटा सा तमञ्चा भर कर अपने कमर में छिपा लेने के बाद बाहर निकला। मुझे देखते ही रघुबीरसिंह ने पूछा, "कहिये क्या हाल है?" मैंने जवाब दिया, "अब तो होश में आ गई है, वैद्यजी को बुला लाने के लिए कह दिया है, तब तक हम लोग भी घूम आवेंगे।"

इतना कह कर मैं उस घोड़े पर सवार हो गया, रघुबीरसिंह भी अपने घोड़े पर सवार हुआ और मेरे साथ चला। शहर के बाहर निकलने के बाद मैंने पूरब तरफ घोड़े को घुमाया, उसी समय रघुबरसिंह ने टोका और कहा, "उधर नहीं पश्चिम तरफ चलिये इधर का मैदान बहुत अच्छा और सुहावना है।"

मैं०। इधर भी तो कुछ बुरा नहीं है, मैं इधर ही चलूंगा।

रघु०। नहीं नहीं पश्चिम तरफ ही चलिये, उधर एक काम और निकलेगा। दारोगा साहब भी इस घोड़े की चाल देखा चाहते थे, मैंने कह दिया था आप अपने घोड़े पर सवार होकर जाइये फलानी जगह ठहरियेगा, हम लोग घूमते फिरते उसी तरफ आवेंगे, वे जरूर वहां गये होंगे और हम लोगों का

इन्तजार कर रहे होंगे।

मै०। ऐसा ही शौक था तो दारोगा साहब भी हमारे यहां आ जाते और हम लोगों के साथ चलते।

रघु०। खैर अब तो जो हो गया सो हो गया अब उनका खयाल जरूर करना चाहिये।

मै०। मुझे भी पूरब तरफ जाना बहुत जरूरी है क्योंकि एक आदमी से मिलने का वादा कर चुका हूँ।

इसी तौर पर मेरे उसके बहुत देर तक हुज्जत होती रही। मैं पूरब तरफ जाना चाहता था और वह पश्चिम तरफ जाने के लिये जोर देता रहा, नतीजा यह निकला कि न पूरब ही गये न पश्चिम ही गये, लौट कर सीधे घर चले आये और यह बात रघुबरसिंह को बहुत ही बुरी मालूम हुई, उसने मुझसे मुंह फुला लिया और कुढ़ा हुआ अपने घर चला गया।

मेरा रहा सहा शक भी जाता रहा और हरदीन की बातों पर मुझे पूरा पूरा विश्वास हो गया मगर मेरे दिल में इस बात की उलझन हद से ज्यादे पैदा हुई कि हरदीन को इन सब बातों की खबर क्यों कर लग जाती है। आखिर रात के समय जब एकान्त हुआ तब मुझसे और हरदीन से इस तरह की बातें होने लगीं।

मै०। हरदीन! तुम्हारी बात ठीक निकली, उसने पश्चिम तरफ ले जाने के लिये जोर मारा मगर उसकी मैंने एक न सुनी।

हरदीन०। आपने बहुत ही अच्छा किया, नहीं तो इस समय बड़ा अन्धेर हो गया होता।

मै०। खैर यह तो बताओ कि यकायक वह मेरी जान का दुश्मन क्यों बन बैठा? वह तो मेरी दोस्ती का दम भरता था!!

हर०। इसका सबब वही लक्ष्मीदेवी वाला भेद है, मैं अपनी भूल पर अफसोस करता हूँ, मुझसे चूक हो गई जो मैंने वह भेद आपसे खोल दिया, मैंने तो राजा गोपालसिंह का भला करना चाहा था मगर उन्होंने नादानी करके मामला ही बिगाड़ दिया। उन्होंने जो कुछ आपसे सुना था लक्ष्मीदेवी से कहकर दारोगा और रघुबीरसिंह का दुश्मन आपको बना दिया, क्योंकि इन्हीं

दोनों की बदौलत वह इस दर्जे को पहुँची, इन्हीं दोनों की बदौलत हमारे महाराज (गोपालसिंह पिता) मारे गये और इन्हीं दोनों ने लक्ष्मीदेवी ही को नहीं बल्कि उसके घर भर को बर्बाद कर दिया !

मैं० । इस समय तो तुम बड़े ही ताज्जुब की बातें सुना रहे हो !

हर० । मगर इन बातों को आप अपने ही दिल में रख कर जमाने की चाल के साथ काम करें नहीं तो आपको पछताना पड़ेगा । मैं यह कदापि न कहूँगा कि आप राजा गोपालसिंह का ध्यान छोड़ दें और उन्हें डूबने दें क्योंकि वे आपके दोस्त हैं ।

मैं० । जैसा तुम चाहते हो मैं वैसा ही करूँगा ! अच्छा यह तो बताओ कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह पर क्या बीती ?

हर० । उन दोनों को दारोगा ने अपने कब्जे में फंसा कर कहीं कैद कर दिया था, इतना तो मुझे मालूम है मगर इसके बाद का हाल मैं कुछ भी नहीं जानता, न मालूम वे मार डाले गये या अभी तक कहीं कैद हैं । हां उस गदाधरसिंह को इसका हाल शायद मालूम होगा जो रणधीरसिंह का एयार है और जिसने नानक की मा को धोखा देने के लिये कुछ दिन तक अपना नाम रघुबरसिंह रख लिया था तथा जिसकी बदौलत यहां की गुप्त कमेटी का भण्डा फूटा है । उसने इस रघुबरसिंह और दारोगा को खूब ही छकाया है । लक्ष्मीदेवी की जगह सुन्दर की शादी करा देने की बाबत जो इनके और हेलासिंह के बीच में पत्र व्यवहार हुआ था उसकी नकल भी गदाधरसिंह रणधीरसिंह के ऐयार के पास मौजूद है जो कि उसने समय पर काम देने के लिये अपने हाथ से असल चिट्ठियों से नकल की थी । मगर अफसोस ! उसने रुपये की लालच में पड़ कर रघुबरसिंह और दारोगा को छोड़ दिया और इस बात को छिपा रक्खा कि यही दोनों उस गुप्त कमेटी के मुखिया हैं । इस पाप का फल गदाधरसिंह को जरूर भोगना पड़ेगा, ताज्जुब नहीं कि एक दिन उन चिट्ठियों की नकल से उसी को दुःख भोगना पड़े और वे चीठियां उसी के लिये काल बन जायं ।

इस समय मुझे हरदीन की वे बातें अच्छी तरह याद पड़ रही हैं, मैं देखता हूँ कि जो कुछ उसने कहा था सब सच उतरा, उन चीठियों की नकल ने खुद भूतनाथ का गला दबा दिया जो उन दिनों गदाधरसिंह के नाम से मशहूर हो

रहा था। भूतनाथ का हाल मुझे अच्छी तरह मालूम है और इधर जो कुछ हो चुका है वह सब भी मैं सुन चुका हूँ मगर इतना जरूर कहूँगा कि भूतनाथ के मुकद्दमे में तेजसिंह जी ने बहुत बड़ी गलती की। गलती तो सभों ने की मगर तेजसिंह जी को ऐयारों का सर्दार मान कर मैं सब के पहिले इन्हीं का नाम लूंगा। इन्होंने जब लक्ष्मीदेवी कमलिनी और लाडिली इत्यादि के सामने वह कागज का मुट्ठा खोला था और चीठियों का पढ़ कर भूतनाथ पर इलजाम लगाया था कि 'बशक ये चीठिया भूतनाथ के हाथ की लिखी हुई हैं' तो इतना क्यों नहीं सोचा कि भूतनाथ की चिठियों के जबाब में हेलासिंह ने जो चीठियां भेजी हैं वे भी तो भूतनाथ ही के हाथ की लिखी हुई मालूम पड़ती हैं! तो क्या अपनी चीठी का जवाब भी भूतनाथ ही अपने हाथ से लिखा करता था?'

यहां तक कहकर भरतसिंह चुप हो रहे और तेजसिंह की तरफ देखने लगे। तेजसिंह ने कहा, "आपका कहना बहुत ठीक है!! बेशक उस समय मुझसे बहुत बड़ी भूल होगई। उसमें की एक ही चीठी पढ़कर क्रोध के मारे हमलोग ऐसे पागल हो गये कि इस बात पर कुछ भी ध्यान न दे सके। बहुत दिनों के बाद देवीसिंह ने यह बात सुझाई, तब हमलोगों को बहुत अफसोस हुआ और तब से हमलोगों का खयाल भी बदल गया।"

भरतसिंह ने कहा, "तेजसिंह जी! इस दुनिया में बड़े बड़े चालाकों और होशियारों से यहां तक कि स्वयं विधाता ही से भूल होगई है तो हमलोगों की क्या बात है? मगर मजा तो यह है कि बड़ों की भूल कहने सुनने में नहीं आती इसीलिये आपकी भूल पर भी किसी ने ध्यान नहीं दिया। किसी कवि ने बहुतही ठीक कहा है—

"को कहिसके बड़ेन सों, लखे बड़ेई भूल।
दीन्हें दई गुलाब के, इन डारिन ये फूल॥

अस्तु अब मैं पुनः अपनी कहानी शुरू करता हूँ।

इसके बाद भरतसिंह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया:—

मैंने हरदीन से कहा कि 'अगर यह बात है तो गदाधरसिंह से मुलाकात करनी चाहिये, मगर वह मुझसे अपने भेद की बातें क्यों कहने लगा? इसके अतिरिक्त वह यहां रहता भी नहीं है कभी कभी आ जाता है, साथ ही इसके यह

जानना भी कठिन है कि वह कब आया और कब चला गया।"

हर०। ठीक है मगर मैं आपसे उसकी मुलाकात करा सकता हूँ, आशा है कि वह मेरी बात भी मान लेगा और आपको असल असल हाल भी बता देगा। कल वह जमानिया में आनेवाला है।

मैं०। मगर मुझसे और उससे तो किसी तरह की मुलाकात नहीं है वह मुझपर क्यों भरोसा करेगा?

हर०। कोई चिन्ता नहीं, मैं आपके उसके मुलाकात भी करा दूँगा।

हरदीन की इस बात ने मुझे और भी ताज्जुब में डाल दिया, मैं सोचने लगा कि इससे और गदाधरसिंह (भूतनाथ) से ऐसी गहरी जान पहिचान क्यों कर हो गई और वह इस पर क्यों भरोसा करता है?

भरतसिंह ने अपना किस्सा यहां तक बयान किया था कि उनके काम में विघ्न पड़ गया अर्थात् उसी समय एक चोबदार ने आकर इत्तला दी कि 'भूतनाथ हाजिर है।' इस खबर का सुनते ही सब कोई खुश होगये और भरतसिंह ने भी कहा कि 'अब हमारे किस्से में विशेष आनन्द आवेगा।'

महाराज ने भूतनाथ का हाजिर करने की आज्ञा दी और भूतनाथ ने कमरे के अन्दर पहुंच कर सभों का सलाम किया।

तेज०। (भूतनाथ से) कहो भूतनाथ! कुशल तो है? आज कई दिनों पर तुम्हारी सूरत दिखाई दी है।

भूत०। जी हां ईश्वर की कृपा से सब कुशल है, जितने दिन की छुट्टी लेकर गया था उसके पहिले ही हाजिर हो गया हूँ।

तेज०। सो तो ठीक है मगर अपने सपूत लड़के का तो कुछ हाल कहो, कैसी निपटी?

भूत०। निपटी क्या आपकी आज्ञापालन की, नानक को मैंने किसी तरह की तकलीफ नहीं दी मगर सजा बहुत ही मजेदार और चटपटी दे दी गई!

देवी०। (हसते हुए) सो क्या?

भूत०। मैंने उससे एक ऐसी दिल्लगी की कि वह भी खुश हो गया होगा, अगर बिल्कुल जानवर न होगा तो अब हमलोगों की तरफ कभी मुंह भी न करेगा। बात बिल्कुल मामूली थी, जब वह यहां आकर मेरी फिक्र

में डूबा तो घर की हिफाजत का बन्दोबस्त करने बाद दो शागिर्दों को साथ लेकर मैं उसके मकान पर पहुँचा और उसकी मां को उड़ा लाया मगर उसकी जगह अपने एक शागिर्द को रामदेई बना कर छोड़ आया। यहां उसे शान्ता बना कर अपने खेमे में जो इसी काम के लिये खड़ा किया गया था एक लौंड़ी के साथ सुला दिया और खुद तमाशा देखने लगा। आखिर नानक उसी को शान्ता समझ के उठा ले गया और खुशी खुशी अपनी नकली मां के सामने पहुँच कर डींग हांकने लगा और उसकी आज्ञानुसार नकली शान्ता को खम्भे के साथ बांधकर जूते से पूजा करने लगा। जब खूब दुर्गति कर चुका तब नकली रामदेई उसके सामने एक पुर्जा फेंक कर घर से बाहर निकल गई। उस पुर्जे के पढ़ने से जब उसे मालूम हुआ कि मैंने जो कुछ किया अपनी ही मां के साथ किया तब वह बहुतही शर्मिन्दा हुआ, उस समय उन दो की जैसी कैफियत हुई मैं क्या बयान करूं आपलोग खुद सोच समझ लीजिये!

भूतनाथ की बात सुनकर सब कोई हंस पड़े, महाराज ने उसे अपने पास बुला कर बैठाया और कहा, "भूतनाथ! जरा एक दफे तुम इस किस्से को फिर बयान कर जाओ मगर जरा खुलासे तौर पर कहो।"

भूतनाथ ने इस हाल को विस्तार के साथ ऐसे ढङ्ग पर दोहराया कि हंसते हंसते सभों का दम फूलने लगा। इसके बाद जब भूतनाथ को मालूम हुआ कि भरतसिंह अपना किस्सा बयान कर रहे हैं तब उसने भरतसिंह की तरफ देखा और कहा, "मुझे भी तो आपके किस्से से कुछ सम्बन्ध है।"

भरत०। बेशक, वहां हाल तो मैं इस समय बयान कर रहा था।

भूत०। (गोपालसिंह से) क्षमा कीजियेगा—मैंने आपसे उस समय जब आप कृष्णाजिन्न बने हुए थे यह झूठ बयान किया था कि 'राजा गोपालसिंह के छूटने के बाद मैंने उन कागजों का पता लगाया है जो इस समय मेरे ही साथ दुश्मनी कर रहे हैं इत्यादि' असल में वे कागज मेरे पास उसी जमाने में मौजूद थे जब जमानिया में मुझसे और भरतसिंहजी से मुलाकात हुई थी। आप यह हाल इनकी जुबानी सुन चुके होंगे।

भरत०। हां भूतनाथ, इस समय मैं वही हाल बयान कर रहा हूँ अभी कह नहीं चुका।

भूत० । खैर तो अभी श्रीगणेश ही है, अच्छा आप बयान कीजिये।

भरतसिंह ने फिर इस तरह बयान करना शुरू किया :—

भरत० । दूसरे दिन आधी रात के समय जब मै गहरी नींद मे सोया हुआ था हरदीन ने आकर मुझे जगाया और कहा, "लीजिये मै गदाधरसिंह को ले आया हूँ, उठिये और इनसे मुलाकात कीजिये, ये बड़े ही लायक और बात के धनी आदमी है" मै खुशी खुशी उठ बैठा और बड़ी नर्मी के साथ भूतनाथ से मिला। इसके बाद मुझसे और भूतनाथ (गदाधरसिंह) से इस तरह बातचीत होने लगी :—

भूतनाथ० । साहब आपका हरदीन बड़ा ही नेक और दिलावर है। ऐसे जीवट का आदमी दुनिया मे कम दिखाई देगा। मैं तो इसे अपना परम हितैषी और मित्र समझता हूँ, इसने मेरे साथ जो कुछ भलाइयां की है उसका बदला मैं किसी तरह चुका ही नही सकता। मुझसे आपसे कभी की जान पहिचान नहीं, मुलाकात नहीं, ऐसी अवस्था मे मै पहले पहल बिना मतलब के आपके घर कदापि न आता, परन्तु इनकी इच्छा के विरुद्ध मे नहीं चल सकता, इन्होंने यहा आने के लिये कहा और मै चढ़ दौड़ा चला आया। इनकी जुबानी मैं सुन भी चुका हूँ कि आज कल आप किस फेर मे पड़े हुए हैं और मुझसे मिलने की जरूरत आपको क्यो पड़ी अस्तु हरदीन की आज्ञानुसार मैं वह कागज का मुट्ठा भी आपको दिखाने के लिये लेता आया हूँ जिससे आपको दारोगा और रघुवरसिंह की हरमजदगी और राजा गोपालसिंह की शादी का पूरा पूरा हाल मालूम हो जायगा मगर खूब याद रखिये कि इस कागज को पढ़ कर आप बेताब हो जायेंगे, आपको बेहिसाब गुस्सा चढ़ आवेगा और आपका दिल बेचैनी के साथ तमाम भण्डा फोड़ देने के लिये तैयार हो जायगा। मगर नहीं, आपको बहुत बर्दाश्त करना पड़ेगा, दिल को सम्हालना और इन बातों को हर तरह से छिपाना पड़ेगा। मुझ हरदीन ने आपका बहुत ज्यादे विश्वास दिलाया है तब मैं यहां आया हूँ और यह अनूठी चीज दिखाने के लिये तैयार हुआ हूँ नहीं तो कदापि न आता।

मै० । आपने बड़ी मेहरबानी की जो मुझ पर भरोसा किया और यहां तक चले आये, मेरी जुबान से आपका रत्ती भर भेद भी किसी को नहीं मालूम

हो सकता इसका आप विश्वास रखिये। यद्यपि मैं इस बात का निश्चय कर चुका हूँ कि गोपालसिंह के मामिले में मैं अब कुछ भी दखल न दूँगा मगर इस बात का अफसोस जरूर है कि वह मेरा मित्र है और दुश्मनों ने उसे बेतरह फंसा रक्खा है।

भूत०। केवल आप ही को नहीं इस बात का अफसोस मुझको भी है और मैं खुद गोपालसिंह को इस आफत से छुड़ाने का इरादा कर रहा हूँ मगर लाचार हूँ कि बलभद्रसिंह का और लक्ष्मीदेवी का कुछ भी पता नहीं लगता और जब तक उन दोनों का पता न लग जाय तब तक इस मामले को उठाना बड़ी भूल है।

मैं०। मगर यह तो आपको निश्चय है न कि इसका कर्ता धर्ता कम्बख्त दारोगा ही है?

भूत०। भला इसमें भी कुछ शक है? लीजिये इस कागज के मुट्ठे को पढ़ जाइये तब आपका भी विश्वास हो जायगा।

इतना कह कर भूतनाथ ने कागज का एक मुट्ठा निकाला और मेरे आगे रख दिया। मैंने भी उसे पढ़ना शुरू किया। मैं आपसे नहीं कह सकता कि उन कागजों को पढ़ कर मेरे दिल का कैसी बुरी अवस्था हो गई और दारोगा तथा रघुबरसिंह पर मुझे कितना क्रोध चढ़ आया। आप लोग तो उसे पढ़ सुन चुके हैं अतएव इस बात का खुद समझ सकते हैं। मैंने भूतनाथ से कहा कि यदि तुम मेरा साथ दो तो मैं आज ही दारोगा और रघुबरसिंह को इस दुनिया से उठा दूँ।

भूत०। इससे फायदा ही क्या होगा? और यह काम ही कितना बड़ा है? मुझे खुद इस बात का खयाल है और मैं लक्ष्मीदेवी का पता लगाने के लिये दिल से कोशिश कर रहा हूँ। आपका हरदीन भी पता लगा रहा है। इस तरह समय के पहिले छेड़छाड़ करने से खुद अपने को झूठा बनना पड़ेगा और लक्ष्मीदेवी भी जहां की तहां पड़ी रहेगी या मर जायगी।

मैं०। ठीक है, अच्छा यह तो बताइये कि आप हरदीन की इतनी इज्जत क्यों करते हैं?

भूतनाथ०। इसलिये कि यह सब कुछ इन्हीं की बदौलत है, इन्हींने मुझे उस कुमेटी का पता बताया और उसका असल असल भेद समझाया और

इन्हीं की मदद से मैंने उस कमेटी का सत्यानाश किया।

मैं०। (हरदीन से) और तुम्हें इस कुमेटी का भेद क्योंकर मालूम हुआ?

हर०। (हाथ जोड़ के) माफ कीजियेगा कि मैं खुद उस कुमेटी का मेम्बर था और अभी तक उन लोगों के खयाल से उन सभों का पक्षपाती बना हुआ हूँ मगर मैं ईमानदार मेम्बर था इसलिये ऐसी बातें मुझे पसन्द न आईं। मैं गुप्त रीति से उन लोगों का दुश्मन बन बैठा, मगर इतना करने पर भी अभी तक मेरी जान इस लिये बची हुई है कि आपके घर में मेरे सिवाय और कोई उन लोगों का साथी नहीं।

मैं०। तो क्या अभी तक तुम उन लोगों के साथी बने हुए हो? और वे लोग अपने दिल का हाल तुमसे कहते हैं?

हर०। जी हां, तभी तो मैंने आपको रघुबरसिंह के पंजे से बचाया था जब वह आपको घोड़े पर सवार करा के ले चला था।

मैं०। अगर ऐसा है तो तुम्हें यह भी मालूम हो गया होगा कि उस दिन घात न लगने के कारण रघुबरसिंह ने अब कौन कार्रवाई सोची है?

हर०। जी हां, पहिले तो उसने मुझसे पूछा कि भरतसिंह ने ऐसा क्यों किया, क्या उसको मेरी नियत का कुछ पता लग गया? जिसके जवाब में मैंने कहा कि नहीं किसी दूसरे सबब से ऐसा हुआ होगा। इसके बाद दारोगा साहब ने मुझ पर हुक्म लगाया कि 'तुम भरतसिंह को जिस तरह हो सके जहर दे दो।' मैंने कहा, "बहुत अच्छा ऐसा ही करूंगा, मगर इस काम में पांच सात दिन जरूर लग जायंगे।"

इतना कह कर हरदीन ने भूतनाथ से पूछा कि कहिये अब क्या करना चाहिये? इसके जवाब में भूतनाथ ने कहा कि अब पांच सात दिन के बाद भरतसिंह को झूठमूठ हल्ला मचा देना चाहिये कि मुझको किसी ने जहर दे दिया, बल्कि कुछ बीमारों की सी नकल भी करके दिखा देनी चाहिये।

इसके बाद थोड़ी देर तक और भी भूतनाथ से बातचीत होती रही और दूसरे दिन फिर मिलने का वादा करके भूतनाथ बिदा हुआ।

इस घटना के बाद कई दफे भूतनाथ से मुलाकात हुई बल्कि यों कहना चा-

हिये कि इनके और मेरे बीच में एक प्रकार की मित्रता हो गई और इन्होंने कई कामों में मेरी सहायता भी की।

जैसी कि आपुस में सलाह हो चुकी थी मुझे यह मशहूर करना पड़ा कि मुझे किसी ने जहर दे दिया। साथ ही इसके कुछ बीमारी की नकल भी की गई जिसमें मेरे नौकर पर कम्बख्त दारोगा को शक न हो जाय, मगर इससे कोई अच्छा नतीजा न निकला अर्थात् दारोगा को मालूम हो गया कि हरदीन उसका सच्चा साथी और भेदिया नहीं है।

एक दिन रात के समय एकान्त में हरदीन ने मुझसे कहा, "लीजिये अब दारोगा साहब को निश्चय हो गया कि मैं उसका सच्चा साथी नहीं हूँ। आज उसने मुझे अपने पास बुलाया था मगर मैं गया नहीं क्योंकि मुझे यह निश्चय हो गया कि जाने के साथ ही मैं उसके कब्जे में आ जाऊंगा और फिर किसी तरह जान न बचेगी, यों तो छिपके रहने से लड़ते झगड़ते जैसा होगा देखा जायगा, अस्तु इस समय मुझे आपसे यह कहना है कि आज से मैं आपके यहां रहना छोड़ दूंगा और तब तक आपके पास न आऊंगा जब तक मै दारोगा की तरफ से बेफिक्र न हो जाऊंगा, देखा चाहिये मेरे उसके क्यों कर निपटती है, वह मुझे मार कर निश्चिन्त होता है या मैं उसे जहन्नुम में पहुंचा कर कलेजा ठंढा करता हूँ। मुझे अपने मरने का रंज कुछ भी नहीं है मगर इस बात का अफसोस जरूर है कि मेरे जाने के बाद आपका मददगार यहां कोई भी नहीं है और कम्बख्त दारोगा आपको फसाने में किसी तरह की कसर न करेगा। खैर लाचारी है क्योंकि मेरे यहां रहने से भी आपका कल्याण नहीं हो सकता, यों तो मैं छिपे छिपे कुछ न कुछ आपकी मदद जरूर करूंगा परन्तु आप जहां तक हो सके खूब होशियारी के साथ काम कीजियेगा।

मैं०। अगर यही बात है तो तुम्हारे भागने की कोई जरूरत नहीं मालूम होती। हम लोग दारोगा के भेदों को खोल कर खुल्लमखुल्ला उसका मुकाबला कर सकते हैं।

हर०। इससे कोई फायदा नहीं हो सकता क्योंकि हम लोगों के पास दारोगा के खिलाफ कोई सबूत नहीं है और न उसके बराबर ताकत है।

मैं०। क्या इन भेदों को हम गोपालसिंह से नहीं खोल सकते और ऐसा

करने से भी कोई काम नहीं चलेगा ?

हर० । नहीं ऐसा करने से जो कुछ बरस दो बरस गोपालसिंहजी की जिन्दगी है वह भी न रहेगी अर्थात् हम लोगों के साथ ही साथ वे भी मारे डाले जायंगे । आप नहीं समझ सकते और नहीं जानते कि दारोगा की असली सूरत क्या है, उसकी ताकत कैसी है, और उसके मजबूत जाल किस कारीगरी के साथ फैले हुए हैं । गोपालसिंह अपने को राजा और शक्तिमान समझते होंगे मगर मैं सच कहता हूँ कि दारोगा के सामने उनकी कुछ भी हकीकत नहीं है, हां यदि राजा गोपालसिंह किसी का किसी तरह की खबर किये बिना ही यकायक दारोगा को गिरफ्तार कराके मार डालें तो बेशक वे राजा कहला सकते हैं मगर ऐसा अवस्था में मायारानी उन्हें जाता न छोड़ेगी और लक्ष्मीदेवी वाला भेद ज्यों का त्यों बन्द रह जायगा, वह भी किसी तहखाने में पड़ा पड़ा भूखी प्यासी मर जायगी ।

इसी तरह की मेरे और हरदीन के बीच में देर तक बातें होती रहीं और वह मेरी हर एक बातों का जवाब देता रहा । अन्त में वह मुझे समझा बुझा कर घर से बाहर निकल गया और फिर उसका पता न लगा ।

रात भर मुझे नींद न आई और मैं तरह तरह की बातें सोचता रह गया । सुबह को चारपाई से उठ कर हाथ मुंह धोने के बाद दर्बारी कपड़े पहिर हर्बे लगाये और राजा साहब की तरफ रवाना हुआ । जब मैं उस तिमुहानी पर पहुँचा जहा से एक रास्ता राजा साहब के दीवानखाने की तरफ और दूसरा खास बाग की तरफ गया है तब उस जगह पर दारोगा साहब से मुलाकात हुई जो दीवानखाने की तरफ से लौटे हुए आ रहे थे ।

प्रगट में मुझसे और दारोगा साहब से बहुत अच्छी तरह साहब सलामत हुई और उन्होंने उदासीनता के साथ मुझसे कहा, "आप दीवानखाने की तरफ कहां जा रहे हैं, राजा साहब तो खास बाग में चले गये, मेरे साथ चलिये, मैं भी उन्हीं से मिलने के लिये जा रहा हूँ, सुना है कि रात से उनकी तबीयत बहुत खराब हो रही है ।"

मैं० । (ताज्जुब के साथ) क्यों क्यों, कुशल तो है ?

दारोगा० । अभी अभी पता लगा है कि आधी रात के बाद से उन्हें बेहि-

साब दस्त और कै आ रहे हैं, आप कृपा करके यदि मोहनजी वैद्य को अपने साथ लेते आवें तो बड़ा काम हो मैं खुद उनकी तरफ जाने का इरादा कर रहा था।

दारोगा की बातें सुन कर मैं घबड़ा गया, राजा साहब की बीमारी का हाल सुनते ही मेरी तबियत उदास हो गई और मैं "बहुत अच्छा" कह कर उल्टे पैर लौटा और मोहन जी वैद्य की तरफ रवाना हुआ।

यहां तक अपना हाल कह कर कुछ देर के लिए भरतसिंह चुप हो गये और दम लेने लगे। उसी समय जीतसिंह ने महाराज की तरफ देखा और कहा, "भरतसिंह का किस्सा भी दर्बार आम में कैदियों के सामने ही सुनने लायक है।"

महाराज०। बेशक ऐसा ही है (गोपालसिंह से) आपकी क्या राय है?

गोपाल०। महाराज की इच्छा के विरुद्ध मैं कुछ बोल नहीं सकता नहीं तो मैं भी यही चाहता था कि और नकाबपोशों की तरह इनका किस्सा भी कैदियों के सामने ही सुना जाय।

और सभों ने भी यही राय दी, आखिर महाराज ने हुक्म दिया कि 'कल दर्बार आम किया जाय और कैदी लोग दरबार में लाये जांय।'

दिन पहर भर से कुछ कम बाकी था जब यह छोटा सा दर्बार बर्खास्त हुआ और सब कोई अपने अपने ठिकाने चले गये। कुंअर आनन्दसिंह शिकारी कपड़े पहिर कर तारासिंह को साथ लिए हुये महल के बाहर आये और दोनों दोस्त घोड़े पर सवार हो जंगल की तरफ रवाना हो गये।

दसवां बयान

घोड़े पर सवार तारासिंह को साथ लिए हुए कुंअर आनन्दसिंह जंगल ही जंगल घूमते और साधारण ढंग पर शिकार खेलते हुये बहुत दूर निकल गये और जब दिन बहुत कम बाकी रह गया तब धीरे धीरे घर की तरफ लौटे।

हम ऊपर के किसी बयान में लिख आये हैं कि 'अटारी पर एक सजे हुये बंगले में बैठी किशोरी कामिनी और कमलिनी वगैरह ने जंगल से निकल कर घर की तरफ आते हुये कुंअर आनन्दसिंह और तारासिंह को देखा, तथा यह भी देखा कि दस बारह नकाबपोशों ने जंगल में से निकल इन दोनों पर तीर चलाये और ये दोनों उनका पीछा करते हुए पुनः जंगल के अन्दर घुस गये'

इत्यादि।

अस्तु यह वही मौका है जिसका हम जिक्र कर रहे हैं। उस समय कमला ने एक लौंडी की जुबानी इन्द्रजीतसिंह को इस बात की खबर दिलवा दी थी, अस्तु खबर पाते ही कुंअर इन्द्रजीतसिंह भैरोसिंह तथा और भी बहुत से आदमी आनन्दसिंह की मदद के लिये चले गये थे।

असल बात यह थी कि भूतनाथ की चालाकी से शर्मिन्दगी उठा कर भी नानक ने सब्र नहीं किया बल्कि पुनः इन लोगों का पीछा किया और अबकी दफे इस ढंग से जाहिर हुआ। वह बहुत देर से और दूर से इसी घात में लगा हुआ था कि मौका मिले तो आनन्दसिंह को तीर का निशाना बनावे और इसी तरह बारी बारी से अपने दुश्मनों की जान लेकर कलेजा ठण्ढा करे मगर उसकी यह चालाकी भी काम न आई, आनन्दसिंह और तारासिंह की चालाकी और उनके घोड़ों की चञ्चलता के कारण उसका निशाना कारगर न हुआ और उन्होंने तेजी से उसके सर पर पहुंच कर उसका को हर तरह से मजबूर कर दिया। तब तक मदद लिये हुये कुअर इन्द्रजीतसिंह भी जा पहुंचे और आठ साथियों के सहित बेईमान नानक को गिरफ्तार कर लिया। यद्यपि उसी समय यह मालूम हो गया कि इसके साथियों में से कई आदमी निकल गये मगर इस बात की कुछ परवाह न की गई और जो कुछ गिरफ्तार हो गये थे उन्हीं को ले कर सब कोई घर की तरफ रवाना हो गये।

कम्बख्त नानक पर हर तरह की रियायत की गई, बहुत कड़ी सजा पाने के योग्य होने पर भी उसे किसी तरह की सजा न दी गई, वह इस खयाल से बिल्कुल साफ छोड़ दिया गया कि शायद फिर भी सुधर जाय, मगर नहीं :—

भूयाति सिक्ता पयसा घृतेन
न निम्ब वृक्षा मधुरत्वमेति

अर्थात् "नीम न मीठी होय सींच गुड़ घीव से।"

आखिर नानक को वह दुःख भोगना ही पड़ा जो उसकी किस्मत में बदा हुआ था।

जिस समय नानक गिरफ्तार कर के लाया गया और लोगों ने उसका हाल सुना उस समय सभों को उसकी नादानी पर बहुत ही रंज हुआ। महाराज

की आज्ञानुसार वह कैदखाने में पहुँचाया गया और सभों को निश्चय हो गया कि अब इसे किसी तरह छुटकारा नहीं मिल सकता।

दूसरे दिन दर्बारे आम का बन्दोबस्त किया गया। कैदियों का मुकदमा सुनने के लिये बड़े शौक से लोग इकट्ठा होने लगे। हथकड़ियों और बेड़ियों से जकड़े हुए कैदी लोग हाजिर किये गये और आपस वाला तथा ऐयारों को साथ लिये हुए महाराज भी दर्बार में आ कर एक ऊंची गद्दी पर बैठ गये। आज के दर्बार में भीड़ भी मामूली से बहुत ज्यादे थी और कैदियों का मुकदमा सुनने के लिये सभी उतावले हो रहे थे। भरतसिंह, दलीपसिंह, अर्जुन तथा उनके और भी दो साथी जो तिलिस्म के बाहर होने बाद अपने अपने घर चले गये थे और अब लौट आये हैं अपने अपने चेहरे पर नकाब डाल कर दर्बार में राजा गोपालसिंह के पास बैठ गये और महाराज के हुक्म का इन्तजार करने लगे।

महाराज का इशारा पा कर भरतसिंह खड़े हो गये और उन्होंने दारोगा तथा जैपाल की तरफ देख कर कहा :—

"दारोगा साहब! जरा मेरी तरफ देखिये और पहिचानिये कि मैं कौन हूँ। जैपाल तू भी इधर निगाह कर!"

इतना कह कर भरतसिंह ने अपने चेहरे पर से नकाब उलट दी और एक दफे चारों तरफ देख कर सभों का ध्यान अपनी तरफ खेंच लिया। सूरत देखते ही दारोगा और जैपाल थर थर कांपने लगे। दारोगा ने लड़खड़ाई हुई आवाज से कहा, "कौन? ओफ भरतसिंह!! नहीं नहीं, भरतसिंह कहां? उसे मरे बहुत दिन हो गये, यह तो कोई ऐयार है!!"

भरत०। नहीं नहीं दारोगा साहब! मैं ऐयार नहीं हूँ मैं वही भरतसिंह हूँ जिसे आपने हद से ज्यादा सताया था, मैं वही भरतसिंह हूँ, जिसके मुंह पर आपने मिर्चों का तोबड़ा चढ़ाया था, मैं वही भरतसिंह हूँ जिसे तुमने अंधेरे कूंए में लटका दिया था। सुनिये मैं अपना किस्सा बयान करता हूँ और यह भी कहता हूँ कि आखिर मेरी जान क्यों कर बची। जयपालसिंह! आप भी सुनिये और हुंकारी भरते चलिये।

इतना कह कर भरतसिंह ने अपना किस्सा आदि से कहना आरम्भ किया

जैसा कि हम ऊपर बयान कर आये हैं और उसके बाद यों कहने लगे :—

भरत०। दारोगा की बातों ने मुझे घबड़ा दिया और मैं उलटे पैर मोहनजी वैद्य को बुलाने के लिये रवाना हुआ। मुझे इस बात का रत्ती भर शक न था कि मोहनजी वैद्य और दारोगा साहब एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं अथवा इन दोनों में मेरे लिये कुछ बातें तै पा चुकी हैं। मैं बेधड़क उनके मकान पर जा पहुँचा और इत्तला कराने के बाद उनके एकान्त वाले कमरे में जा पहुँचा जहां उन्होंने मुझे बुला भेजा था। उस समय वे अकेले बैठे माला जप रहे थे। नौकर मुझे वहां तक पहुँचा कर बिदा हो गया और मैंने उनके पास बैठ कर राजा साहब का हाल बयान किया और खास बाग में चलने के लिये कहा। जवाब में वैद्यजी यह कह कर कि मैं दवाओं का बन्दोबस्त करके अभी आपके साथ चलता हूँ, उठ खड़े हुए और आलमारी में से कई तरह की शीशियां निकाल निकाल जमीन पर रखने लगे। उसी बीच में उन्होंने एक छोटी सी शीशी निकाल कर मेरे हाथ में दी और कहा, "देखिये यह मैंने एक नये ढंग की ताकत की दवा तैयार की है, खाना तो दूर रहे इसके सूंघने ही से तुरन्त मालूम होता है कि बदन में एक तरह की ताकत आ रही है। लीजिये जरा सूंघ के अन्दाज तो कीजिये।"

मैं वैद्यजी के फेर में पड़ गया और शीशी का मुंह खोल कर सूंघने लगा। इतना तो मालूम हुआ कि इसमें कोई खुशबूदार चीज है मगर फिर तनोबदन की सुध न रही। जब मैं होश में आया तो अपने को हथकड़ी बेड़ी से मजबूर एक अन्धेरी कोठड़ी में कैद पाया। नहीं कह सकता कि वह दिन का समय था या रात का। कोठड़ी के एक कोने में चिराग जल रहा था और दारोगा तथा जयपाल हाथ में नंगी तलवार लिये सामने बैठे हुए थे।

मैं०। (दारोगा से) अब मालूम हुआ कि आपने इसी काम के लिये मुझे वैद्यजी के पास भेजा था।

दारोगा०। बेशक इसी लिये, क्योंकि तुम मेरी जड़ काटने के लिये तैयार हो चुके थे।

मैं०। तो फिर मुझे कैद कर रखने से क्या फायदा? मार कर बखेड़ा निपटाइये और फिर बेखटके आनन्द कीजिये।

दारोगा०। हां अगर तुम मेरी बात न मानोगे तो बेशक मुझे ऐसाही करना पड़ेगा।

मैं०। मानने की कौन सी बात है? मैंने तो अभी तक कोई ऐसा काम नहीं किया जिससे आपको किसी तरह का नुकसान पहुंचे।

दारोगा०। ये सब बातें तो रहने दो क्योंकि तुम और हरदीन मिलकर जो कुछ कर चुके थे और जो किया चाहते थे उसे मैं खूब जानता हूँ मगर यह बात है कि अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें इस कैद से छुट्टी दे सकता हूँ नहीं तो मौत तो तुम्हारे लिये रक्खी ही हुई है!

मैं०। खैर बताइये तो सही कि वह कौन सा काम है जिसके करने से मुझे छुट्टी मिल सकती है?

दारोगा०। यही कि तुम एक चीठी इस रघुबरसिंह अर्थात् जयपाल के नाम की लिख दो जिसमें यह बात हो कि 'लक्ष्मीदेवी के बदले में मुन्दर को महारानी बना देने में जो कुछ मेहनत की गई है वह हम तुम दोनों ने मिल कर की है अतएव उचित है कि इस काम में जो कुछ तुमने फायदा उठाया है उसमें से आधा मुझे बांट दो नहीं तो तुम्हारे लिए अच्छा न होगा।'

मैं०। ठीक है, मैं आपका मतलब समझ गया, खैर आज तो नहीं कल जैसा आप कहते हैं वैसा ही कर दूंगा।

दारोगा०। आखिर एक दिन की देर करने में तुमने फायदा ही क्या सोच लिया है?

मैं०। सो भी कल ही बतलाऊंगा।

दारोगा०। अच्छा क्या हर्ज है कल ही सही।

इतना कह कर दारोगा चला गया और मैं भूखा प्यासा उसी कोठड़ी में पड़ा हुआ तरह तरह की बातें सोचने लगा। क्योंकि उस दिन दारोगा ने मेरे खाने पीने के लिये कुछ भी प्रबन्ध न किया। मुझे निश्चय हो गया कि इस ढंग की चीठी लिखाने के बाद दारोगा मुझे जान से मार डालेगा और मेरे मरने बाद यही चीठी मेरी बदनामी का सबब बनेगी, मेरे दोस्त गोपालसिंह मुझको बेईमान समझेंगे और तमाम दुनिया मुझे कमीना खयाल करेगी, अस्तु मैंने दिल में ठान ली कि चाहे जान जाय या रहे मगर इस तरह की चीठी मैं

कदापि न लिखूंगा। आखिर मरना जरूर है फिर कलंक का टीका जान बूझ कर अपने माथे क्यों लगाऊं ?

दूसरे दिन रघुबर को साथ लिए हुये दारोगा पुनः मेरे पास आया।

भरतसिंह ने अपना हाल यहां तक बयान किया था कि राजा गोपालसिंह ने बीच ही में टोका और पूछा, "क्या रघुबरसिंह भी इसी जैपाल का नाम है ?"

भरत०। जी हां इसीका नाम रघुबरसिंह भी है, कुछ दिन के लिए इसने अपना नाम भूतनाथ भी रख लिया था।

गोपाल०। ठीक है, मुझे इस बारे में धोखा हुआ—नहीं, बल्कि मेरे खजानची ही ने मुझे धोखा दिया, खैर तब क्या हुआ ?

भरत०। हां तो दूसरे दिन जैपाल को साथ लिये हुये दारोगा पुनः मेरे पास आया और बोला, "कहो चीठी लिख देने के लिए तैयार हो या नहीं ?" इसके जवाब में मैंने कहा कि 'नहीं मर जाना मंजूर है मगर झूठ ही कलंक का टीका अपने माथे पर लगाना मुझे मंजूर नहीं ?'

दारोगा ने मुझे कई तरह से समझाया बुझाया और धोखे में डालना चाहा मैंने उसकी एक न सुनी। आखिर दोनो ने मिलकर मुझे मारना शुरू किया, यहां तक मारा कि मैं बेहोश हो गया, जब होश में आया तो फिर उसी तरह अपने को कैद पाया। भूख और प्यास के मारे मेरा बुरा हाल हो रहा था और मार के सबब से तमाम बदन चूर चूर हो रहा था। तीसरे दिन दोनों शैतान पुनः मेरे पास आये और जब मैंने दारोगा की बात न मानी तो उसने घोड़ों के दाना खाने वाले तोबड़े में चूर किया हुआ मिरचा भर कर मेरे मुंह पर चढ़ा दिया। हाय हाय, उस तकलीफ को मैं कभी नहीं भूल सकता.....

यहां तक कह कर भरतसिंह चुप हो गये और दारोगा तथा जयपाल की तरफ देखने लगे। वे दोनों सर नीचा किये हुये जमीन की तरफ देख रहे थे और डर के मारे दोनों का बदन कांप रहा था। भरतसिंह ने पुकार कर कहा, "कहिये दारोगा साहब ! जो कुछ मैं कह रहा हूँ वह सच है या झूठ ?" दारोगा ने इसका कुछ भी जवाब न दिया। उस समय दरबार में जितने आदमी बैठे थे क्रोध के मारे सभों का बुरा हाल था और सब कोई दारोगा की तरफ जलती हुई निगाहों से देख रहे थे। भरतसिंह ने फिर इस तरह कहना शुरू किया:—

दारोगा के सम्बन्ध में मेरा किस्सा वैसा दिलचस्प नहीं है जैसा दलीपशाह और अर्जुनसिंह का आप लोग सुनेंगे, क्योंकि उनके साथ बड़ी बड़ी विचित्र घटनायें हो चुकी हैं, बल्कि यों कहना चाहिये कि मेरा तमाम किस्सा उनके एक दिन की घटना का मुकाबला भी नहीं कर सकता परन्तु साथ ही इसके यह बात भी जरूर है कि मैं ने न तो कभी किसी के साथ किसी तरह की बुराई की और न किसी से विशेष मेल जोल या हसी दिल्लगी रखता था, फिर भी उन दिनों जमानिया की यह दशा थी कि सादे ढंग पर जिन्दगी बिताने वाला मैं भी सुख की नींद न सो सका और राजा साहब की दोस्ती की बदौलत मुझे हर तरह का दुःख भोगना पड़ा। इस हरामखोर दारोगा ने ऐसे ऐसे कुकर्म किये हैं कि जिनका पूरा पूरा बयान हो नहीं सकता और न यही मेरी समझ में आता है कि दुनिया में कौन सी सजा है जो इसके योग्य समझी जाय। अस्तु अब मैं संक्षेप में अपना हाल समाप्त करता हूँ।

अपने मन के माफिक चीठी लिखाने की नीयत से आठ दिन तक कम्बख्त दारोगा ने मुझे बेहिसाब तकलीफें दीं, मिर्च का तोबड़ा मेरे मुंह पर चढ़ाया, जहरीली राई का लेप मेरे बदन पर किया, कूंए में लटकाया, गन्दी कोठड़ी में बन्द किया, जो जो सूझा सब किया और इतने दिनों तक बराबर भूखा रक्खा मगर न मालूम क्या सबब है कि मेरी जान न निकली। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता था कि किसी तरह मौत दे जिसमें इस दुःख से छुट्टी मिले। मैं इतना कमजोर हो गया था कि मुझमें बात करने की भी ताकत न थी।

एक दिन आधी रात के समय मैं उसी कोठड़ी में पड़ा पड़ा मौत का इन्तजार कर रहा था कि यकायक कोठड़ी का दर्वाजा खुला और एक नकाबपोश दाहिने हाथ में नंगी तलवार और बाएं हाथ में एक छोटी सी गठड़ी लिये हुए कोठड़ी के अन्दर आता हुआ दिखाई पड़ा। हाथ में जो तलवार लिये हुये था उसके अतिरिक्त उसकी कमर में एक तलवार और भी थी। कोठड़ी के अन्दर आते ही उसने भीतर से दर्वाजा बन्द कर दिया और मेरे पास चला आया। हाथ की गठड़ी और तलवार ज़मीन पर रख मुझसे चिमट गया और रोने लगा। उसकी ऐसी मुहब्बत देख मैं चौंक पड़ा और मुझे तुरन्त मालूम हो गया कि यह मेरा पुराना खैरखाह 'हरदीन' है। उसके चेहरे से नकाब हटाकर

मैं ने उसकी सूरत देखी और रोने में मैं ने भी उसका साथ दिया।

थोड़ी ही देर बाद हरदीन मुझसे अलग हुआ और बोला, "मैं किसी न किसी तरह यहां तक पहुँच तो गया मगर यहां से निकल भागना जरा कठिन है, तथापि आप घबड़ाएं नहीं, मैं एक दफे दुश्मन को सताये बिना नहीं रहता। अब आप शीघ्र उठें और जो कुछ मैं खाने पीने के लिए लाया हूँ, उसे भोजन करके चैतन्य हो जायं।"

जो गठड़ी हरदीन लाया था उसमें खाने पीने का सामान था। उसने मुझे भोजन कराया, पानी पिलाया, और इसके बाद मेरे हाथ में एक तलवार देकर बोला, "बस अब आप उठिये और मेरे पीछे पीछे चले आइये, इतना समय नहीं है कि मैं आपसे विशेष बातें करूँ, इसके अतिरिक्त जिस जगह पर आप कैद हैं यह तिलिस्म का एक हिस्सा है, यहां से निकलने के लिये भी बहुत उद्योग करना होगा।"

भोजन करने से कुछ ताकत तो मुझमें हो ही गई थी मगर कैद से छुटकारा मिलने की उम्मीद ने उससे भी ज्यादे ताकत पैदा कर दी। मैं उठ खड़ा हुआ और हरदीन के पीछे पीछे रवाना हुआ। कोठड़ी का दर्वाजा खोलने के बाद जब मैं बाहर निकला तब मुझे मालूम हुआ कि मैं खास बाग के तीसरे दर्जे में हूँ जिसमें कई दफे राजा गोपालसिंह के साथ जा चुका था, मगर मुझे इस बात से बहुत ही ताज्जुब हुआ और सोचने लगा कि देखो राजा साहब के खास बाग ही में दारोगा लोगों पर इतना जुल्म करता है और राजा साहब को खबर तक नहीं होती? क्या यहां कई स्थान ऐसे भी हैं जिनका हाल दारोगा जानता है और राजा साहब नहीं जानते?

खैर मैं कोठरी के बाहर निकल कर एक बरामदे में पहुँचा जहां से बाएं और दाहिने सिर्फ दो ही तरफ जाने का रास्ता था। दाहिने तरफ इशारा करके हरदीन ने मुझसे कहा, "इसी तरफ से मैं आया हूँ, दारोगा जैपाल तथा और भी बहुत से आदमी इस तरफ बैठे हैं इसलिये इधर तो अब जा नहीं सकते। हां बाईं तरफ चलिये कहीं न कहीं तो रास्ता मिल ही जायगा।"

रात चांदनी थी और ऊपर से खुला रहने के सबब उधर की हर एक चीज साफ साफ दिखाई देती थी। हम दोनों आदमी बाईं तरफ रवाना हुये, लगभग

पचीस कदम जाने के बाद नीचे उतरने के लिये दस बारह सीढ़ियां मिलीं जिन्हें तै करने के बाद हम दोनों एक दालान में पहुँचे जो बहुत लम्बा चौड़ा तो न था मगर निहायत खूबसूरत और स्याह पत्थर का बना हुआ था। उस दालान में पहुँचे ही थे कि पीछे से दारोगा और जैपाल तेजी के साथ आते हुए दिखाई पड़े। हरदीन ने इसकी कुछ भी परवाह न की और कहा, "इन दोनों के लिये तो मैं अकेला ही काफी हूँ!"

हरदीन मुझे अपने पीछे करने के बाद अड़ कर खड़ा हो गया। उसने दारोगा को सैकड़ों गालियां दीं और मुकाबला करने के लिये ललकारा मगर उन दोनों की हिम्मत न पड़ी कि आगे बढ़ें और हरदीन का मुकाबला करें। कुछ देर तक खड़े खड़े देखने और सोचने के बाद दारोगा ने अपने जेब में से एक छोटा सा गोला निकाला और हम दोनों की तरफ फेंका। हरदीन समझ गया कि जमीन पर गिरने के साथ ही इसमें से बेहोशी का धूआं निकलेगा। उसने अपने साथ मुझे भी भागने का इशारा किया। गोला जमीन पर गिर कर फटा और उसमें से बहुत सा धूआं निकला मगर हम दोनों वहां से हट गये थे इसीलिये इसका कुछ असर न हुआ। उस समय दारोगा ने हम लोगों की तरफ फेंकने के लिये दूसरा गोला निकला।

इस दालान के बीचो बीच में एक छोटा सा चबूतरा लाल पत्थर का बना हुआ था मगर हम दोनों यह नहीं जानते थे कि इसमें क्या गुण है। दारोगा को दूसरा गोला निकालते देख हम दोनों उस चबूतरे पर चढ़ गये मगर उस पर से उतर कर भाग न सके। चढ़ने के साथ ही चबूतरा हिला और हम दोनों को लिये जमीन के अन्दर धस गया। साथ ही न मालूम किस चीज के असर से हम दोनों बेहोश भी हो गये। जब होश में आये तो चारो तरफ अन्धकार ही अन्धकार दिखाई दिया, नहीं कह सकते कि हम दोनों कितनी देर तक बेहोश रहे।

कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहने के बाद सामने की तरफ कुछ उजाला मालूम हुआ और वह उजाला धीरे धीरे बढ़ने लगा जिससे हमने समझा कि सामने कोई दर्वाजा है और उसमें से सुबह की सुफेदी दिखाई दे रही है, हम दोनों उठकर खड़े हुये और उसी उजाले की तरफ रवाना हुए। वास्तव में वैसा

ही था जैसा हम लोगों ने सोचा था। कई कदम चलने के बाद दर्वाजा मिला जिसे लांघ कर हम दोनों उसी बुर्ज वाले बाग में जा पहुँचे जहां दोनों कुमारों से मुलाकात हुई थी। इसके बाद बाहर का हाल बहुत दिनों तक कुछ भी मालूम न हुआ कि क्या हो रहा है और क्या हुआ, बहुत दिनों तक वहां से बाहर निकलने के लिये उद्योग करते रहे परन्तु सब व्यर्थ हुआ। अन्त में वहां से छुट्टी तभी मिली जब दोनों कुमारों के दर्शन हुए।* कुछ दिनों बाद दलीपशाह से भी उसी बाग में मुलाकात हुई जिसका हाल उनका किस्सा सुनने से आप लोगों को मालूम होगा। बस इतना ही तो मेरा किस्सा है। जब आप लोग दलीपशाह की कहानी सुनेंगे तब बेशक कुछ आनन्द मिलेगा और दारोगा तथा जैपाल वगैरह की बदमाशी का पता लगेगा। (एक नकाबपोश की तरफ बता कर) मेरा पुराना खैरख्वाह हरदीन यही है जो इतने दिनों तक मेरे दुःख सुख का साथी बना रहा और अन्त में मेरे साथ ही कैद से छूटा।

भरतसिंह की कथा समाप्त होने के बाद दरबार बर्खास्त किया गया और महाराज ने हुक्म दिया कि कल दरबार में दलीपशाह अपना किस्सा बयान करेंगे।

ग्यारहवां बयान

दूसरे दिन पुनः उसी ढंग का दरबार लगा और सब कोई अपने अपने ठिकाने पर बैठ गये।

इशारा पा कर दलीपशाह उठ खड़ा हुआ और उसने अपने चेहरे पर से नकाब हटा कर दारोगा, जयपाल, बेगम और नागर वगैरह की तरफ देखा और कहा, "आप लोगों की खुश किस्मती का जमाना तो बीत गया, अब वह जमाना आ गया है कि आप लोग अपने किये का फल भोगें और देखें कि आपने जिन लोगों को जहन्नुम में पहुँचाने का बीड़ा उठाया था आज ईश्वर की कृपा से वही लोग आपको हंसते खेलते दिखाई देते हैं। खैर मुझे इन बातों से कोई मतलब नहीं, इसका निपटारा तो महाराज के हुक्म से होगा, मुझे अपना किस्सा बयान करने का हुक्म हुआ है सो बयान करता हूँ। (और लोगों की

* देखिये बीसवां हिस्सा चौथा बयान।

तरफ देख कर) मेरे किस्से से भूतनाथ को भी बहुत बड़ा सम्बन्ध है मगर इस खयाल से कि महाराज ने भूतनाथ का कसूर माफ करके उसे अपना ऐयार बना लिया है मैं अपने किस्से में उन बातों का जिक्र छोड़ता जाऊंगा जिनसे भूतनाथ की बदनामी होती है इसके अतिरिक्त भूतनाथ प्रतिज्ञानुसार महाराज के आगे पेश करने के लिये स्वयम् अपनी जीवनी लिख रहा है जिससे महाराज को उसका पूरा पूरा हाल मालूम हो जायगा मुझे कुछ कहने की जरूरत नहीं है।

मैं मिर्जापुर का रहने वाला दीनदयालसिंह ऐयार का लड़का हूँ। मेरा बाप महाराज धौलपुर के यहा रहता था और वहां उसकी बहुत इज्जत और कदर थी। उसने मुझे ऐयारी सिखाने में किसी तरह की त्रुटि नहीं की। जहा तक हो सका उसने दिल लगा कर मुझे ऐयारी सिखाई और मैं भी इस फन में खूब होशियार हो गया, परन्तु पिता के मरने बाद मैंने किसी रेयासत में नौकरी नहीं की। मुझे अपने बाप की जगह मिलती थी और महाराज मुझे बहुत चाहते भी थे, मगर मैंने पिता के मरने के बाद ही रेयासत छोड़ दी और अपने जन्म-स्थान मिर्जापुर में चला आया, क्योंकि मेरा बाप मेरे लिये बहुत दौलत छोड़ गया था और मुझे खाने पीने की कुछ परवाह न थी। पिता के देहान्त के साल भर पहिले ही मेरी मां मर चुकी थी अतएव केवल मैं और मेरी स्त्री दो ही आदमी अपने घर के मालिक थे।

जमानिया की रेयासत से मुझे किसी तरह का सम्बन्ध नहीं था परन्तु इस-लिये कि मैं एक नामी ऐयार का लड़का और खुद भी ऐयार था तथा बहुत से ऐयारों से गहरी जान पहिचान रखता था मुझे चारो तरफ की खबरें बराबर मिला करती थीं, इसी तरह जमानिया में जो कुछ चालबाजियां हुआ करती थीं वह भी मुझसे छिपी हुई न थीं। भूतनाथ की स्त्री और मेरी स्त्री आपुस में मौसेरी बहिनें होती हैं और भूतनाथ का जमानिया से बहुत घना सम्बन्ध हो गया था इसलिये जमानिया का हाल जानने के लिये मैं उद्योग भी किया करता, मगर उसमें किसी तरह का दखल नही देता था। (दारोगा की तरफ इशारा करके) इस हरामखोर दारोगा ने रेयासत पर अपना दबाव डालने की नीयत से विचित्र ढोंग रच लिया था, शादी नहीं की थी और बाबाजी तथा ब्रह्मचारी के नाम से अपने को प्रसिद्ध कर रक्खा था और मौके मौके पर लोगों का कहा करता था कि 'मैं

तो साधू आदमी हूँ मुझे रुपये पैसे की जरूरत ही क्या है, मैं तो रेयासत की भलाई और परोपकार में अपना समय बिताना चाहता हूँ, इत्यादि।' परन्तु वास्तव में यह परले सिरे का ऐयाश और लालची था जिसके विषय में कुछ कहना मैं पसन्द नहीं करता।

मेरे पिता और इन्द्रदेव के पिता दोनों ही दोस्त और ऐयारी में एक ही गुरु के शिष्य थे अतएव मुझमें और इन्द्रदेव में भी उसी प्रकार की दोस्ती और मुहब्बत थी। इसलिये मैं प्रायः इन्द्रदेव से मिलने के लिये उनके घर जाया करता और कभी कभी वे भी मेरे घर आया करते। जरूरत पड़ने पर इन्द्रदेव की इच्छानुसार मैं उनका कुछ काम भी कर दिया करता और उन्हीं के यहाँ कभी कभी इस कम्बख्त दारोगा से भी मुलाकात हो जाया करती थी। बल्कि यों कहना चाहिये कि इन्द्रदेव ही के सबब से दारोगा, जैपाल, राजा गोपालसिंह और भरतसिंह तथा जमनिया के और भी कई नामी आदमियों से मेरी मुलाकात और साहब सलामत हो गई थी।

जब भूतनाथ के हाथ से बेचारा दयाराम मारा गया तब से मुझमें और भूतनाथ में एक प्रकार की खिंचाखिंची हो गई थी और वह खिंचाखिंची दिनों दिन बढ़ती ही गई यहाँ तक कि कुछ दिनों बाद हम दोनों की साहब सलामत तक भी छूट गई।

एक दिन मैं इन्द्रदेव के यहां बैठा हुआ भूतनाथ के विषय में बातचीत कर रहा था क्योंकि उनदिनों यह खबर बड़ी तेजी के साथ मशहूर हो रही थी "गदाधरसिंह (भूतनाथ) मर गया।" परन्तु उस समय इन्द्रदेव इस बात पर जोर दे रहे थे कि भूतनाथ मरा नहीं, कहीं छिप कर बैठ गया है, कभी न कभी यकायक प्रगट हो जायगा। उसी समय दारोगा के आने की इत्तला मिली—जो बड़े शान शौकत के साथ इन्द्रदेव से मिलने के लिये आया था। इन्द्रदेव बाहर निकले और बड़ी खातिर के साथ उसे घर के अन्दर ले गये और अपने आदमियों को हुक्म दे गये कि दारोगा के साथ जितने आदमी आये हैं उनके खाने पीने और रहने का उचित प्रबन्ध किया जाय।

दारोगा को साथ लिये हुए इन्द्रदेव उसी कमरे में आये जिसमें मैं पहिले ही से बैठा हुआ था क्योंकि इन्द्रदेव की तरह मैं दारोगा को लेने के लिये

मकान के बाहर नहीं गया था और न दारोगा के आ पहुँचने पर मैंने उठ कर इसकी इज्जत ही बढ़ाई, हां साहब सलामत जरूर हुई। यह बात दारोगा को बहुत बुरी मालूम हुई मगर इन्द्रदेव को नहीं क्योंकि इन्द्रदेव गुरुभाई का नाता निबाहते थे दिल से दारोगा की खातिर नहीं करते थे।

इन्द्रदेव से और दारोगा से देर तक तरह तरह की बातें होती रहीं, जिसमें मौके मौके पर दारोगा अपनी होशियारी और बुद्धिमानी की तस्वीर खैंचता रहा। जब ऐयारों की कहानी छिड़ी तो यकायक मेरी तरफ पलटा और बोला, "आप इतने बड़े ऐयार के लड़के होकर घर में बेकार क्यों बैठे हुए हैं? और नहीं तो मेरी ही रियासत में काम कीजिये, वहां आपको बहुत अराम मिलेगा, देखिये विहारीसिंह और हरनामसिंह कैसी इज्जत और खुशी के साथ रहते हैं, आप तो उनसे बहुत ज्यादे इज्जत के लायक हैं।'

मैं०। बेकार तो बैठा रहता हूँ मगर अभी तक अपने को महाराज-धौलपुर का नौकर समझता हूँ क्योंकि रियासत का काम छोड़ देने पर भी वहां से मुझे खाने को बराबर मिल रहा है।

दारोगा०। (मुंह बना कर) अजी मिलता भी होगा तो क्या, एक छोटी सी रकम से आपका क्या काम चल सकता है, आखिर अपने पल्ले की जमा खर्च करते ही होंगे।

मैं०। वह भी तो महाराज ही का दिया हुआ है।

दारोगा०। नहीं, वह आपके बाप का दिया हुआ है। खैर मतलब यह है कि वहां से अगर कुछ मिलता है तो उसे भी आप रखिये और मेरी रियासत से भी फायदा उठाइये।

मैं०। ऐसा करना बेईमानी और नमकहरामी कहा जायगा! यह मुझसे न हो सकेगा।

दारोगा०। (हंस कर) वाह वाह!! ऐयार लोग दिन रात ईमानदारी की हंड़िया ही तो चढ़ाये रहते हैं!!

मैं०। (तेजी के साथ) बेशक! अगर ऐसा न हो तो ऐयार नहीं रियासत का कोई ओहदेदार कहा जायगा।

दारोगा०। (तन कर) ठीक है, गदाधरसिंह आप ही का नातेदार तो है,

जरा उसकी तस्वीर तो खैंचिये !!

मैं० । गदाधरसिंह किसी रेयासत का ऐयार नहीं है और न मैं उसे ऐयार समझता हूँ, इतना होने पर भी आप यह नहीं साबित कर सकते कि उसने अपने मालिक के साथ किसी तरह की बेईमानी की ।

दारोगा० । (और भी तनक के) बस बस बस, रहने दीजिये, हमारे यहा भी तो बिहारीसिंह और हरनामसिंह ऐयार ही तो हैं ।

मैं० । इसी से तो मैं आपकी रियासत में जाना बेइज्जती समझता हूँ ।

दारोगा० । (भौं सिकोड़ कर) तो इसका यह मतलब कि हम लोग बेईमान और नमकहराम हैं ?

मैं० । (मुस्कुरा कर) इस बात को तो आप ही सोचिये !

दारोगा० । देखिये जरा जुबान सम्हाल कर बातें कीजिये नहीं तो समझ रखिये कि मैं मामूली आदमी नहीं हूँ ।

मैं० । (क्रोध से) यह तो मैं खुद कहता हूँ कि आप मामूली आदमी नहीं हैं क्योंकि आदमी में शर्म होती है और वह जानता है कि ईश्वर कोई चीज है।

दारोगा० । (क्रोध भरी आखें दिखा कर) फिर वही बात !!

मैं० । हां वही बात ! गोपालसिंह के पिता वाली बात ! गुप्त कुमेटी वाली बात ! गदाधरसिंह की दोस्ती वाली बात ! लक्ष्मीदेवी की शादी वाली बात ! और जो बात तुम्हारे गुरुभाई को नहीं मालूम है वह बात !!

दारोगा० । (दांत पीस कर) और कुछ देर तक मेरी तरफ देख कर खैर अब इस बहुत सी 'बात' का जवाब लात ही से दिया जायगा।

मैं० । बेशक, साथ ही इसके यह भी समझ रखिये कि जवाब देने वाले भी एक दो नहीं हैं । लातों कि गिनती भी आप न सम्हाल सकेंगे । दारोगा साहब जरा आप होश में आइये और सोच विचार के बातें कीजिये । अपने को आप ईश्वर न समझिये बल्कि यह समझ कर बातें कीजिये कि आप आदमी हैं और रेयासत धौलपूर के किसी ऐयार से बातें कर रहे हैं !

दारोगा० । (इन्द्रदेव की तरफ गुरेर कर) क्या आप चुपचाप बैठे तमाशा देखेंगे और अपने मकान में मुझे बेइज्जत करावेंगे ?

इन्द्रदेव० । आप खुद अपनी अनोखी मिलनसारी से अपने को बेइज्जत

करा रहे हैं, इनसे बात बढ़ाने की आपको जरूरत ही क्या थी ? मैं आप दोनों के बीच में नहीं बोल सकता क्योंकि आप की तरह दलीपशाह को भी अपना भाई समझता और इज्जत की निगाह से देखता हूँ।

दारोगा०। तो फिर जैसा बने हम इनसे निपट लें ?

इन्द्र०। हां हां।

दारोगा०। पीछे उराहना न देना क्योंकि आप इन्हें अपना भाई समझते हैं!

इन्द्रदेव०। मैं कभी उराहना न दूँगा।

दारोगा०। अच्छा तो अब मैं जाता हूँ फिर कभी मिलूंगा तो बातें करूंगा।

इन्द्रदेव ने इस बात का कुछ जवाब न दिया, हां जब दारोगा साहब बिदा हुए तो उन्हें दर्वाजे तक पहुँचा आये। जब लौट कर कमरे में मेरे पास आये तो मुस्कुराते हुए बोले, 'आज तुमने इनकी खूब खबर ली, 'जो बात कि तुम्हारे गुरुभाई साहब को नहीं मालूम है वह बात!' इन शब्दों ने तो उसका कलेजा छेद दिया होगा। मगर तुमसे बेतरह रंज हो कर गया है इस बात का खूब ख्याल रखना!

मैं०। आप इस बात की चिन्ता न कीजिये, देखिये मैं इसे कैसा छकाता हूँ। मगर वाह रे आपका कलेजा ? इतना कुछ हो जाने पर भी आपने अपनी जुबानी से कुछ न कहा बल्कि पुराने बर्ताव में बल तक न पड़ने दिया!!

इन्द्रदेव०। मैंने तो अपना मामला ईश्वर के हवाले कर दिया है।

मैं०। खैर ईश्वर भी इन्साफ ही करेगा। अच्छा तो अब मुझे भी बिदा कीजिये क्योंकि अब इसके मुकाबले का बन्दोबस्त शीघ्र करना पड़ेगा।

इन्द्र०। हां यह तो मैं भी कहूँगा कि अब आप बेफिक्र न रहिये।

थोड़ी देर तक और बातचीत करने के बाद मैं इन्द्रदेव से बिदा हो कर अपने घर अया और उसी समय से दारोगा के मुकाबिले का ध्यान मेरे दिमाग में चक्कर लगाने लगा।

घर पहुँच कर मैंने सब हाल अपनी स्त्री से बयान किया और ताकीद की कि हरदम होशियार रहा करना। उन दिनों मेरे यहां कई शागिर्द रहा करते थे जिन्हे मैं ऐयारी सिखाया करता था, उनसे भी यह सब हाल और होशियार रहने की ताकीद की। उन शागिर्दों में गिरिजाकुमार नाम का एक लड़का बड़ा

ही तेज और चंचल था, लोगों को धोखे में डाल देना तो उसके लिये एक मामूली बात थी। बातचीत के समय वह अपना चेहरा ऐसा बना लेता कि अच्छे अच्छे उसकी बातों में फंस कर बेवकूफ बन जाते थे। यह गुण उसे ईश्वर ने दिया हुआ था जो ऐयारों में बहुत कम पाया जाता है। अस्तु इस गिरिजाकुमार ने मुझसे कहा, "गुरुजी! यदि दारोगा वाला मामला आप मेरे सुपुर्द कर दीजिये तो मैं बहुत ही प्रसन्न होऊं और उसे ऐसा छकाऊं कि वह भी याद करे, जमानिया में मुझे कोई पहिचानता भी नहीं है, अतएव अपना काम मैं बड़े मजे में निकाल लूंगा।"

मैंने उसे बहुत समझाया और कहा कि कुछ दिन सब्र करो जल्दी क्यों करते हो, फिर जैसा मौका होगा किया जायगा! मगर उसने एक न मानी, हाथ जोड़ के, खुशामद करके, गिड़गिड़ा के, जिस तरह हो सका उसने मुझसे आज्ञा ले ही ली और उसी दिन सब सामान दुरुस्त करके मेरे यहां से चला गया।

अब मैं थोड़ा सा हाल गिरिजाकुमार का बयान करूंगा कि उसने दारोगा के साथ क्या क्या किया।

आपलोगों को यह सुन कर ताज्जुब होगा कि मनोरमा असल में दारोगा साहब की रण्डी है, इन्हीं की बदौलत मायारानी के दरबार में उसकी इज्जत बढ़ी और इन्हीं की बदौलत उसने मायारानी को अपने फंदे में फंसा कर बेहिसाब दौलत पैदा की। पहिले पहिल गिरिजाकुमार ने इसी मनोरमा के मकान ही पर दारोगा साहब से मुलाकात की।

दारोगा साहब मनोरमा से प्रेम रखते थे सही मगर इसमें कोई शक नहीं कि इस प्रेम और ऐयाशी को इन्होंने बहुत अच्छे ढंग से छिपाया और बहुत आदमियों को मालूम होने न दिया तथा लोगों की निगाह में साधू और ब्रह्मचारी ही बने रहे। स्वयम् तो जमानिया में रहते थे मगर मनोरमा के लिये इन्होंने काशी में मकान बनवा दिया था, दसवें बारहवें दिन अथवा जब समय मिलता तेज घोड़े पर वा रथ पर सवार होकर काशी चले जाते और दस बीस घण्टे मनोरमा के मेहमान रह कर लौट आते।

एक दिन दारोगा साहब आधी रात के समय मनोरमा के खास कमरे में बैठे हुए उसके साथ शराब पी रहे थे और साथ ही साथ हँसी दिल्लगी का

आनन्द लूट रहे थे। उस समय इन दोनों में नीचे लिखी बातें हो रही थीं:—

दारोगा०। जो कुछ मेरे पास है सब तुम्हारा है, रुपये पैसे के बारे में तुम्हें कभी तकलीफ न होने दूंगा, तुम बेशक अमीराना ठाठ के साथ रहो और खुशी से जिन्दगी बिताओ! गोपालसिंह अगर तिलिस्म का राजा है तो क्या हुआ, मैं भी तिलिस्म का दारोगा हूँ, उसमें दो चार स्थान ऐसे हैं कि जिनकी खबर राजा साहब को भी नहीं मगर मैं वहां बखूबी जा सकता हूँ और वहां की दौलत को खास अपनी मिलकियत समझता हूँ। इसके अतिरिक्त मायारानी से भी मैंने तुम्हारी मुलाकात करा ही दी है और वह भी हर तरह से तुम्हारी खातिर करती ही है, फिर तुम्हें परवाह ही किस बात की है?

मनोरमा०। बेशक मुझे किसी बात की परवाह नहीं और आपकी बदौलत मैं बहुत खुश रहती हूँ, मगर मै यह चाहती हूँ कि मायारानी के पास खुल्लम-खुल्ला मेरी आमदरफ्त हो जाय, अभी गोपालसिंह के डर से बहुत छिप छुप कर और नखरे तिल्ले के साथ जाना पड़ता है।

दारोगा०। फिर यह तो जरा मुश्किल बात है!

मनोरमा०। मुश्किल क्या है? लक्ष्मीदेवी की जगह दूसरी औरत को राजरानी बना देना क्या साधारण काम था! सो तो आपने सहज ही में कर दिखाया और इस एक सहज काम के लिये कहते हैं कि 'मुश्किल है!!'

दारोगा०। (मुस्कुरा कर) सो तो ठीक है, गोपालसिंह को मैं सहज ही में बैकुण्ठ पहुँचा सकता हूँ मगर यह काम मेरे किये न हो सकेगा, उसके ऊपर मेरा हाथ न उठेगा।

मनोरमा०। (तनक कर) अब इतनी नेकदिली से तो काम न चलेगा! उनके मौजूद रहने से बहुत बड़ा हर्ज हो रहा है, अगर वे न रहे तो बेशक आप खुद जमानिया और तिलिस्म का राज्य कर सकते हैं, मायारानी तो अपने को आपका ताबेदार समझती है।

दारोगा०। बेशक ऐसा ही है मगर.....

मनोरमा०। और इसमें आपको कुछ करना भी न पड़ेगा, सब काम माया-रानी ठीक कर लेगी।

दारोगा०। (चौंक कर) क्या मायारानी का भी ऐसा इरादा है?

मनोरमा० । जी हां, वह इस काम के लिये तैयार है मगर आपसे डरती है, आप आज्ञा दे दें तो बस सब कुछ ठीक हो जाय ।

दारोगा० । तो तुम उसी की तरफ से इस बात की कोशिश कर रही हो ?

मनोरमा० । बेशक ! मगर साथ ही इसके आपका और अपना फायदा समझती हूँ तब ऐसा कहती हूँ, (दारोगा के गले में हाथ डाल कर) बस अब आप आज्ञा दे दीजिये ।

दारोगा० । (मुस्कुरा कर) खैर तुम्हारी खातिर मुझे मंजूर है, मगर एक काम करना कि मायारानी से और मुझसे इस बारे में बातचीत न कराना जिसमें कभी मौका पड़े तो मैं यह कहने लायक रह जाऊं कि मुझे इसकी कुछ खबर नहीं ! तुम मायारानी की दिलजमयी कर दो कि दारोगा साहब इस बारे में कुछ भी न बोलेंगे, तुम जो कुछ चाहो कर गुजरो, मगर साथ ही इसके इस बात का खयाल रक्खो कि सर्वसाधारण को किसी तरह का शक न होने पावे और लोग यही समझें कि गोपालसिंह अपनी मौत से मरा है । मैं भी जहाँ तक हो सकेगा छिपाने की कोशिश करूँगा ।

मनोरमा० । (खुश होकर) बस अब मुझे विश्वास हो गया कि तुम मुझसे प्रेम रखते हो !!

इसके बाद इन दोनों में बहुत ही धीरे धीरे बातें होने लगीं जिन्हें गिरिजा कुमार न सुन सका । गिरिजाकुमार चोरों की तरह उस मकान में घुस गया था और छिप कर ये बातें सुन रहा था । जब मनोरमा ने कमरे का दर्वाजा बन्द कर लिया तब वह कमन्द लगा कर मकान के पीछे की तरफ उतर गया और धीरे धीरे मनोरमा के अस्तबल में जा पहुँचा । अबकी दफे दारोगा यहां रथ पर सवार होकर आया था । वह रथ अस्तबल में था, घोड़ा बंधा हुआ था और सारथी रथ के अन्दर सो रहा था । उससे कुछ दूर पर मनोरमा के और सब साईस तथा घसियारे वगैरह पड़े खुर्राटे ले रहे थे ।

बहुत होशियारी से गिरिजाकुमार ने दारोगा के सारथी को बेहोशी की दवा सुंघा के बेहोश किया और उसे उठा के एक कोने में घनी झाड़ी के अन्दर छिपा कर रख आया, उसके कपड़े आप पहिर लिये और चुपचाप रथ के अन्दर घुस कर सो रहा ।

जब रात घन्टा भर के लगभग बाकी रह गई तब दारोगा साहब जमनिया जाने के लिये बिदा हुए और एक लौंडी ने अस्तबल में आकर रथ जोतने की आज्ञा सुनाई। नये सारथी अर्थात् गिरजाकुमार ने रथ जोत कर तैयार किया और फाटक पर लाकर दारोगा साहब का इन्तजार करने लगा। शराब के नशे में चूर झूमते और एक लौंडी का हाथ थामे हुए दारोगा साहब भी आ पहुँचे, उनके रथ पर सवार होने के साथ ही रथ तेजी के साथ रवाना हुआ। सुबह की ठण्डी हवा ने दारागा साहब के दिमाग में खुनकी पैदा कर दी और वे रथ के अन्दर लेट कर बेखबर सो गये। गिरिजाकुमार ने जिधर चाहा घोड़े का मुह फेर दिया और दारोगा साहब को लेकर रवाना हुआ। इस तौर पर उसे सूरत बदलने की भी जरूरत न पड़ी।

नहीं कह सकते कि मनोरना के बाग में दारोगा का असली सारथी जब होश में आया होगा तो वहां कैसी खलबली मची होगी मगर गिरिजाकुमार को इस बात की परवाह न थी, उसने रोहतासगढ़ की सड़क पर रथ रवाना किया और चलते चलते अपने बटुए में से मसाला निकाल कर अपनी सूरत साधारण ढंग पर बदल ली जिसमें होश आने पर दारोगा उसकी असली सूरत से जानकार न हो सके, इसके बाद उसने दवा सुंघा कर दारोगा को और भी बेहोश कर दिया।

जब रथ एक घने जंगल में पहुँचा और सुबह की सुफेदी भी निकल आई तब गिरिजाकुमार रथ को सड़क पर से हटा कर जङ्गल में ले गया जहां सड़क पर चलने वाले मुसाफिरों की नजर न पड़े। घोड़ा खोल एक लम्बी बागडोर के सहारे एक पेड़ के साथ बांध दिया और दारोगा को पीठ पर लाद वहां से थोड़ी दूर पर एक घनी झाड़ी के अन्दर ले गया जिसके पास ही पानी का एक चश्मा भी बह रहा था। घोड़े की रास से दारोगा साहब को एक पेड़ के साथ बांध दिया और बेहोशी दूर करने की दवा सुंघाने के बाद थोड़ा सा पानी भी चेहरे पर डाला जिसमें शराब का नशा ठण्डा होजाय, और तब हाथ में कोड़ा लेकर सामने खड़ा होगया।

दारोगा साहब जब होश में आए तो बड़ी परेशानी के साथ चारो तरफ निगाह दौड़ाने लगे। अपने को मजबूर और एक अनजान आदमी को हाथ में

कोड़ा लिये सामने खड़ा देख कांप उठे और बोले, "भाई तुम कौन हो और मुझे इस तरह क्यों सता रक्खा है ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?"

गिरिजा० । क्या करूं लाचार हूँ, मालिक का हुक्म ही ऐसा है !

दारोगा० । तुम्हारा मालिक कौन है और उसने ऐसी आज्ञा तुम्हें क्यों दी ?

गिरिजा० । मैं मनोरमाजी का नौकर हूँ और उन्होंने अपना काम ठीक करने के लिये मुझे ऐसी आज्ञा दी है ।

दारोगा० । (ताज्जुब से) तुम मनोरमा के नौकर हो ! नहीं नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, मैं उसके सब नौकरों को अच्छी तरह पहिचानता हूँ ।

गिरिजा० । मगर आप मुझे नहीं पहिचानते क्योंकि मैं गुप्त रीति पर उनका काम किया करता हूँ और उनके मकान पर बराबर नहीं रहता ।

दारोगा० । शायद ऐसा हो, मगर मुझे विश्वास नहीं होता, खैर यह बताओ कि उन्होंने किस काम के लिये ऐसा करने को कहा है ।

गिरिजा० । आपको विश्वास हो चाहे न हो इसके लिये मैं लाचार हूँ हां उनके हुक्म की तामीली किये बिना नहीं रह सकता । उन्होंने मुझे यह कहा है कि दारोगा साहब मायारानी के लिये इस बात की इजाजत दे गये हैं कि वह जिस तरह हो सके राजा गोपालसिंह को मार डाले हम इस मामले में कुछ दखल न देंगे, मगर यह बात वह नशे में कह गये हैं, कहीं ऐसा न हो कि भूल जायं अस्तु जिस तरह हो सके तुम इस बात की एक चीठी उनसे लिखा कर मेरे पास ले आओ जिससे उन्हें अपना वादा अच्छी तरह याद रहे । अब आप कृपा कर इस मजमून की एक चीठी लिख दीजिये कि मैं गोपालसिंह को मार डालने के लिये मायारानी को इजाजत देता हूँ ।

दारोगा० । (ताज्जुब का चेहरा बना कर) न मालूम तुम क्या कह रहे हो ! मैंने मनोरमा से ऐसा वादा नहीं किया है !!

गिरिजा० । तो शायद उन्हों ने मुझसे झूठ कहा होगा, मैं इस बात को नहीं जानता, हां उन्होंने जो आज्ञा दी है सो आप से कह रहा हूँ ।

इतना सुन दारोगा सोच में पड़ गया । मालूम होता था कि उसे गिरिजा-कुमार की बातों पर विश्वास हो रहा है फिर भी बात को टाला चाहता है ।

दारोगा० । मगर ताज्जुब है कि मनोरमा ने मेरे साथ ऐसा बुरा बर्ताव

क्यों किया और उसे जो कुछ कहना था स्वयम् मुझसे क्यों नहीं कहा ?

गिरिजा० । मैं इस बात का जवाब क्योंकर दे सकता हूँ !

दारोगा० । अगर मैं तुम्हारे कहे मुताबिक चीठी लिख कर न दूं तो ?

गिरिजा० । तब इसी कोड़े से आपकी खबर ली जायगी और जिस तरह हो सकेगा आपसे चीठी लिखाई जायगी । आप खुद समझ सकते हैं कि यहां आपका कोई मददगार भी नहीं पहुँच सकता ।

दारोगा० । क्या तुमको या मनोरमा को इस बात का कुछ भी खयाल नहीं है कि मैं लिख कर भी छूट जाने के बाद क्या कर सकता हूँ !

गिरजा० । अब ये सब बातें तो आप उन्हीं से पूछियेगा मुझे जवाब देने की कोई जरूरत नहीं, मैं सिर्फ उनके हुक्म की तामीली करना चाहता हूँ । आप जल्द चीठी लिख देते हैं या नहीं ? मैं ज्यादे देर तक इन्तजार नहीं कर सकता !

दारोगा० । (झुंझला कर और यह समझ कर कि यह मुझ पर हाथ न उठावेगा केवल धमकाता ही है) अबे ! मैं चीठी किस बात की लिख दूं ? व्यर्थ की बकबक लगा रक्खी है !!

इतना सुनते ही गिरिजाकुमार ने कोड़े जमाने शुरू किये, पांच ही सात कोड़े खाकर दारोगा बिलबिला उठा और हाथ जोड़ कर बोला, "बस बस माफ करो, जो कुछ कहो लिख देने के लिये तैयार हूँ ।"

गिरिजाकुमार ने झट कलम दावात और कागज अपने बटुए में से निकाल कर दारोगा साहब के सामने रख दिया और उसके हाथ की रस्सी ढीली कर दी । दारोगा ने उसकी इच्छानुसार चीठी लिख दी । चीठी अपने कब्जे में कर लेने के बाद उसने दारोगा की तलाशी ली, कमर में एक खंजर और कुछ अशर्फियां निकलीं वह भी ले लेने बाद दारोगा के हाथ पैर खोल दिये और बता दिया कि फलानी जगह आपका रथ और घोड़ा खड़ा है, जाइये कस कसा कर अपने घर का रास्ता लीजिये ।

इतना कह गिरजाकुमार चला गया और फिर दारोगा को मालूम न हुआ कि वह कहां गया और क्या हुआ ।

बारहवाँ बयान

इतना किस्सा कह कर दलीपशाह ने कुछ दम लिया और फिर इस तरह कहना शुरू किया :—

गिरिजाकुमार ने अपना काम करके दारोगा का पीछा छोड़ा नहीं बल्कि उसे यह जानने का शोक पैदा हुआ कि देखें अब दारोगा साहब क्या करते हैं, जमानिया की तरफ विदा होते हैं या पुनः मनोरमा के घर जाते हैं। अगर मनोरमा के घर जाते हैं तो देखना चाहिये कि किस ढंग की बातें होती हैं और कैसी रंगत निकलती है।

यद्यपि दारोगा का चित्त द्विविधा में पड़ा हुआ था परन्तु उसे इस बात का कुछ कुछ विश्वास जरूर हो गया था कि मेरे साथ ऐसा खोटा बर्ताव मनोरमा ही ने किया है, दूसरे को क्या मालूम कि मुझसे उससे किस समय क्या क्या बातें हुईं। मगर साथ ही इसके वह इस बात को भी सोचता था कि मनोरमा ने ऐसा क्यों किया? मैं तो कभी उसकी बात से किसी तरह इनकार नहीं करता था? जो कुछ उसने कहा उस बात की इजाजत भी दे दी, अगर वह चीठी लिख देने के लिये कहती तो चीठी भी लिख देता, फिर उसने ऐसा क्यों किया? इत्यादि.....

जो कुछ हो दारोगा साहब अपने हाथ से रथ जोत कर सवार हुए और मनोरमा के पास न जाकर सीधे जमानिया की तरफ रवाना हो गये। यह देख कर गिरिजाकुमार ने उस समय उनका पीछा छोड़ दिया और मेरे पास चला आया। जो कुछ मामला हुआ था खुलासा बयान करने बाद दारोगा साहब की लिखी हुई चीठी मुझे दे दी और फिर मुझसे विदा हो कर जमानिया की तरफ चला गया।

मुझे यह जान कर एक हौल सा पैदा हो गया कि बेचारे गोपालसिंह की जान मुफ्त में जाया चाहती है, और मैं सोचने लगा कि अब क्या करना चाहिये जिसमें गोपालसिंह की जान बचे। एक दिन और रात तो इसी सोच में पड़ा रह गया, अन्त में यह निश्चय किया कि इन्द्रदेव से मिल कर सब हाल कहना चाहिये। दूसरा दिन मुझे घर के इन्तजाम के लग गया क्योंकि दारोगा की

दुश्मनी के खयाल से मुझे घर की हिफाजत का पूरा पूरा इन्तजाम करके बाहर जाना जरूरी था, अस्तु मैंने अपनी स्त्री और बच्चे को तो गुप्त रीति से अपने सुसराल अर्थात् स्त्री के मां के घर पहुँचा दिया और उन लोगों को जो कुछ समझाना था समझा भी दिया और इसके बाद घर का इन्तजाम करके इन्द्रदेव की तरफ रवाना हुआ।

जब इन्द्रदेव के मकान पर पहुँचा तो देखा कि वे भी सफर की तैयारी कर रहे हैं। पूछने पर जवाब मिला कि राजा गोपालसिंह बीमार हो गये हैं उन्हें देखने के लिए जाते हैं सुनने के साथ ही मेरा दिल धड़क उठा और मेरे मुंह से ये शब्द निकल पड़े—"हाय अफसोस! कम्बख्त दुश्मन लोग अपना काम कर ही गये!!"

मेरी बात सुनकर इन्द्रदेव चौंक पड़े और उन्होंने पूछा "आपने यह क्या कहा?", जो दो चार खिदमतगार वहां मौजूद थे उन्हें बिदा करके मैंने गिरिजाकुमार का सब हाल इन्द्रदेव से बयान किया और दारोगा साहब की लिखी हुई वह चीठी उनके हाथ पर रख दी। उसे देख कर और सब हाल सुन कर इन्द्रदेव बेचैन हो गये, आधे घण्टे तक तो ऐसा मालूम होता था कि उन्हें तनोबदन का सुध नहीं है, इसके बाद उन्होंने अपने को सम्हाला और मुझसे कहा—"बेशक दुश्मन लोग अपना काम कर गये मगर तुमने भी बहुत बड़ी भूल की कि दो दिन की देर कर दी और आज मेरे पास खबर करने के लिए आए! अभी दो ही घड़ी बीती है कि मुझे उनके बीमार होने की खबर मिली है ईश्वर ही कुशल करे!"

इसके जवाब में चुप रह जाने के सिवाय मैं कुछ भी न कह सका और अपनी भूल स्वीकार कर ली। कुछ और बातचीत होने के बाद इन्द्रदेव ने मुझसे कहा, "खैर जो कुछ होना था सो हो गया, अब तुम भी मेरे साथ जमानिया चलो, वहां पहुचने तक अगर ईश्वर ने कुशल रक्खा तो जिस तरह बन पड़ेगा उनकी जान बचावेंगे!!"

अस्तु हम दोनों आदमी तेज घोड़ों पर सवार हो कर जमानिया की तरफ रवाना हो गये और साथियों को पीछे से आने की ताकीद कर गये।

जब हम लोग जमानिया के करीब पहुँचे और जमानिया सिर्फ दो कोस

की दूरी पर रह गया तो सामने से कई देहाती आदमी रोते और चिल्लाते हुए आते दिखाई पड़े। हम लोगों ने घबड़ा कर उनसे रोने का सबब पूछा तो उन्होंने हिचकियां ले ले कर कहा कि हमारे राजा गोपालसिंह हम लोगों को छोड़ कर बैकुण्ठ चले गये।

सुनने के साथ ही हम लोगों का कलेजा धक्क हो गया। आगे बढ़ने की हिम्मत न पड़ी और सड़क के किनारे एक घने पेड़ के नीचे जा कर घोड़ों पर से उतर पड़े। दोनों घोड़ों को पेड़ के साथ बांध दिया और जीनपोश बिछा कर बैठ गये, आंखों से आंसू की धार बहने लगी। घण्टे भर तक हम दोनों में किसी तरह की बातचीत न हुई क्योंकि चित्त बड़ा ही दुःखी हो गया था। उस समय दिन अनुमान तीन घण्टे के बाकी था। हम दोनों आदमी पेड़ के नीचे बैठे आंसू बहा रहे थे कि यकायक जमानिया से लौटता हुआ गिरिजा कुमार भी उसी जगह आ पहुँचा। उस समय उसकी सूरत बदली हुई थी इसलिये हम लोगों ने तो उसे नहीं पहिचाना परन्तु वह स्वयम् हम लोगों को देख कर पास चला आया और अपना गुप्त परिचय दे कर बोला, "मैं गिरिजा-कुमार हूँ।"

इन्द्रदेव०। (आंसू पोंछ कर) अच्छे मौके पर तुम आ पहुँचे, यह बताओ कि क्या वास्तव में राजा गोपालसिंह मर गये?

गिरजा०। जी हां, उनकी चिता मेरे सामने लगाई गई और मेरे देखते ही देखते उनकी लाश पञ्चतत्व में मिल गई, परन्तु अभी तक मेरे दिल को विश्वास नहीं होता कि राजा साहब मर गये।

इन्द्रदेव०। (चौंक कर) सो क्या? यह कैसी बात?

गिरिजा०। हर तरह का रंग ढंग देख कर मेरा दिल कबूल नहीं करता कि वे मर गये।

मैं०। क्या तुम्हारी तरह वहां भी और किसी को इस बात का शक है?

गिरिजा०। नहीं ऐसा तो नहीं मालूम होता बल्कि मैं तो समझता हूँ कि खास दारोगा साहब को भी उनके मरने का विश्वास है मगर क्या किया जाय, मुझे विश्वास नहीं होता और दिल बार बार यही कहता है कि राजा साहब मरे नहीं।

इन्द्रदेव० । आखिर तुम क्या सोचते हो और इस बात का तुम्हारे पास क्या सबूत है ? तुमने कौन सी ऐसी बात देखी जिससे तुम्हारे दिल को अभी तक उनके मरने का विश्वास नहीं होता ?

गिरिजा० । और बातों के अतिरिक्त दो बातें तो बहुत ही ज्यादे शक पैदा करती हैं । एक तो यह कि कल दो घण्टे रात रहते रहते मैंने हरनामसिंह और बिहारीसिंह को एक कंगले की लाश उठाये हुए चोरदर्वाजे की राह से महल के अन्दर जाते हुए देखा, फिर बहुत टोह लेने पर भी उस लाश का कुछ पता न लगा और न वह लाश लौटा कर महल के बाहर निकाली गई, तो क्या वह महल ही में हजम हो गई ? उसके बाद केवल राजा साहब की लाश बाहर निकली ।

इन्द्रदेव० । जरूर यह शक करने की जगह है !

गिरिजा० । इसके अतिरिक्त राजा गोपालसिंह की लाश को बाहर निकालने और जलाने में हद्द दर्जे की फुर्ती और जल्दबाजी की गई, यहां तक कि रियासत के उमरा लोगों के भी इकट्ठा होने का इन्तजार नहीं किया गया । एक साधारण आदमी के लिये भी इतनी जल्दी नहीं की जाती, ये तो राजा ही ठहरे ! हां एक बात और भी सोचने के लायक है, चिता पर की क्रिया नियम के विरुद्ध लाश का मुंह खोले बिना ही कर दी गई और इस बारे में बिहारीसिंह और हरनामसिंह तथा लौंडियों ने यह बहाना किया कि राजा साहब की सूरत देख कर मायारानी बहुत बेहाल हो जायंगी इसलिये मुर्दे का मुंह खोलने की कोई जरूरत नहीं है । और लोगों ने इन बातों पर खयाल किया हो चाहे न किया हो, मगर मेरे दिल पर तो इन बातों ने बहुत बड़ा असर किया । यही सबब है कि मुझे राजा साहब के मरने का विश्वास नहीं होता ।

इन्द्रदेव० । (कुछ सोच कर) शक तो तुम्हारा बहुत ठीक है, अच्छा यह बताओ कि तुम इस समय कहां जा रहे थे ?

गिरिजा० । (मेरी तरफ इशारा करके) गुरुजी के पास यहां का सब हाल कहने के लिये जा रहा था ।

मैं० । इस समय मनोरमा कहां है सो बताओ ?

गिरिजा० । जमानिया में मायारानी के पास ।

मैं० । तुम्हारे हाथ से छूटने के बाद दारोगा और मनोरमा में कैसी निपटी इसका हाल कुछ मालूम हुआ ?

गिरिजा० । जी हां मालूम हुआ, उस बारे में बहुत बड़ी दिल्लगी हुई जो मैं निश्चिन्ती के समय बयान करूंगा ।

इन्द्रदेव० । अच्छा यह बताओ कि गोपालसिंह के बारे में तुम्हारी क्या राय है ? अब हम लोगों को क्या करना चाहिये ?

गिरिजा० । इस बारे में मैं एक अदना और नादान आदमी आपको क्या राय दे सकता हूँ ! हां मुझे जो कुछ आज्ञा हो सो करने के लिये तैयार हूँ ।

इतनी बातें हो ही रही थीं कि सामने जमानिया की तरफ से दारोगा और जैपाल घोड़ों पर सवार आते हुए दिखाई पड़े जिन्हें देखते ही गिरिजाकुमार ने कहा, "देखिये ये दोनों शैतान कहीं जा रहे हैं, इसमें भी कोई भेद जरूर है, यदि आज्ञा हो तो मैं इनके पीछे जाऊं !"

दारोगा और जैपाल को देखकर हम दोनों पेड़ की तरफ घूम गये जिसमें वे पहिचान न सकें । जब वे आगे निकल गये तब मैंने अपना घोड़ा गिरिजाकुमार को दे कर कहा, "तुम जल्द सवार होके इन दोनों का पीछा करो ।" और गिरिजाकुमार ने भी ऐसा ही किया ।

* तेईसवाँ हिस्सा समाप्त *

* श्रीः *

चन्द्रकान्ता सन्तति

चौबीसवाँ हिस्सा

—०—

पहिला बयान

दिन घण्टे भर से कुछ ज्यादे चढ़ चुका है। महाराज सुरेन्द्रसिंह सुनहरी चौकी पर बैठे दातून कर रहे हैं और जीतसिंह, तेजसिंह, इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, देवीसिंह, भूतनाथ और राजा गोपालसिंह उनके सामने की तरफ बैठे हुए इधर उधर की बातें कर रहे हैं। रात महाराज की तबीयत कुछ खराब थी, इसलिये आज स्नान सन्ध्या में देर हो गई है।

सुरेन्द्र०। (गोपालसिंह से) गोपाल! इतना तो हम जरूर कहेंगे कि गद्दी पर बैठने के बाद तुमने कोई बुद्धिमानी का काम नहीं किया बल्कि हर एक मामले में तुमसे भूल ही होती गई !!

गोपाल०। निःसन्देह ऐसा ही है और लापरवाही का नतीजा भी मुझे वैसा ही भोगना पड़ा।

बीरे०। धोखा खाये बिना कोई होशियार नहीं होता। कैद से छूटने के बाद तुमने बहुत से अनूठे काम भी किये हैं। हाँ यह तो बताओ कि दारोगा और जयपाल के लिये तुमने क्या सजा तजबीज की है?

गोपाल०। इस बारे में मैं दिन रात सोचा ही करता हूँ मगर कोई सजा ऐसी नहीं सूझती जो उन लोगों के लायक हो और जिससे मेरा गुस्सा शान्त हो।

सुरेन्द्र०। (मुस्कुरा कर) मैं तो यह समझता हूँ कि यह काम भूतनाथ के हवाले किया जाय, यही उन शैतानों के लिए कोई मजेदार सजा तजवीज करेगा। (भूतनाथ की तरफ देख के) क्योंजी, तुम कुछ बता सकते हो ?

भूत०। (हाथ जोड़ के) उनके योग्य क्या सजा है इसका बताना बड़ा ही कठिन है मगर एक छोटी सी सजा मैं जरूर बता सकता हूँ।

गोपाल०। वह क्या ?

भूत०। पहिले तो उन्हें कच्चा पारा खिलाना चाहिये जिसकी गरमी से उन्हें सख्त तकलीफ हो और तमाम बदन फूट जाय, जब जख्म खूब मजेदार हो जाय तो नित्य लाल मिर्च और नमक का लेप चढ़ाया जाय। जब तक वे दोनों जीते रहें तब तक ऐसा ही होता रहे।

सुरेन्द्र०। सजा हलकी तो नहीं है मगर किसी की आत्मा.....

गोपाल०। (बात काट कर) खैर इन कम्बख्तों के लिये आप कुछ न सोचिये, इन्हें मैं जमानिया ले जाऊँगा और उसी जगह इनकी मरम्मत करूँगा।

बीरेन्द्र। इन सब रञ्ज देने वाली बातों का जिक्र जाने दो यह बताओ कि अगर हमलोग जमानिया के तिलिस्म की सैर किया चाहें तो कैसे कर सकते हैं ?

गोपाल०। यह तो मैं आप ही निश्चय कर चुका हूँ कि आप लोगों को वहां की सैर जरूर कराऊँगा।

इन्द्र०। (गोपाल से) हां खूब याद आया, वहां के बारे में मुझे दो एक बातों का शक बना हुआ है।

गोपाल०। वह क्या ?

इन्द्र०। एक तो यह बताइये कि तिलिस्म के अन्दर जिस मकान में पहिले पहल आनन्दसिंह फँसे थे, उस मकान में सिंहासन पर बैठी हुई लाडिली की मूरत कहाँ से आई ? * और उस आइने (शीशे) वाले मकान में जिसमें कमलिनी लाडिली तथा हमारे ऐयारों की सी मूरतों ने हमें धोखा दिया था, क्या था ? जब हम दोनों उसके अन्दर गये तो उन मूरतों को देखा जो नालियों

* देखिये नौवां हिस्सा दूसरा बयान।

पर चला करती थीं † मगर ताज्जुब है कि.....

गोपाल०। (बात काट कर) वह सब कार्रवाई मेरी थी, एक तौर पर मैं आप लोगों को कुछ कुछ तमाशा भी दिखाता जाता था। वे सब मूरतें बहुत पुराने जमाने की बनी हुई हैं मगर मैंने उन पर ताजा रङ्ग रोगन चढ़ा कर कमलिनी लाडिली वगैरह की सूरतें बना दी थीं।

इन्द्र०। ठीक है, मेरा भी यही खयाल था। अच्छा एक बात और बताइये?

गोपाल०। पूछिये।

इन्द्र०। जिस तिलिस्मी मकान में हम लोग हँसते हँसते कूद पड़े थे उसमें कमलिनी के कई सिपाही भी जा फँसे थे और.....

गोपाल०। जी हां, ईश्वर की कृपा से वे लोग कैदखाने में जीते जागते पाये गये और इस समय जामानिया में मौजूद हैं, उसी में के एक आदमी को दारोगा ने गठड़ी बांध कर रोहतासगढ़ के किले में छोड़ा था जब मैं कृष्णाजिन्न बन कर पहिले पहिल वहां गया था। †

इन्द्रजीत०। बहुत अच्छा हुआ, उन बेचारों की तरफ से मुझे बहुत ही खुटका था।

बीरे०। (गोपालसिंह से) आज दलीपशाह की जुबानी जो कुछ उसका किस्सा सुनने में आया उससे हमें बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उद्यपि उसका किस्सा अभी तक समाप्त नहीं हुआ है और समाप्त होने तक शायद और भी बहुत सी बातें मालूम हों परन्तु इस बात का ठीक ठीक जवाब तो तुम्हारे सिवाय दूसरा कोई शायद नहीं दे सकता कि तुम्हें कैद करने में मायारानी ने कौन सी ऐसी कार्रवाई की कि पता न लगा और सभी लोग धोखे में पड़ गये, यहां तक कि तुम्हारी समझ में भी कुछ न आया और तुम चारपाई पर से उठा कर कैदखाने में डाल दिये गये।

गोपाल०। इसका ठीक ठीक जवाब तो मैं नहीं दे सकता। कई बातों का पता मुझे भी नहीं लगा क्योंकि मैं ज्यादे देर तक बीमारी की अवस्था में पड़ा नहीं रहा बहुत जल्द बेहोश कर दिया गया। मैं क्योंकर जान सकता था कि कम्बख्त मायारानी दवा के बदले मुझे जहर पिला रही है। मगर मुझे विश्वास

† देखिये सोलहवाँ हिस्सा छठवां बयान।

है कि दलीपशाह को इसका हाल बहुत ज्यादे मालूम हुआ होगा।

जीत०। खैर आज के दर्बार में और भी जो कुछ है मालूम हो जायगा।

कुछ देर तक इसी तरह की बातें होती रहीं। जब महाराज उठ गये तब सब कोई अपने अपने ठिकाने चले गये और कारिन्दे लोग दर्बार की तैयारी करने लगे।

भोजन इत्यादि से छुट्टी पाने बाद दोपहर होते होते महाराज दर्बार में पधारे आज का दर्बार भी कल की तरह रौनकदार था और आदमियों की गिनती बनिस्बत कल के आज बहुत ज्यादे थी।

महाराजकी आज्ञानुसार दलीपशाहने इस तरह अपना किस्सा बयान करना शुरू किया:—

"मैं बयान कर चुका हूँ कि मैंने अपना घोड़ा गिरजाकुमार को देकर दारोगा का पीछा करने के लिए कहा, अस्तु जब वह दारोगा के पीछे चला गया तब हम दोनों में सलाह होने लगी कि अब क्या करना चाहिये, अन्त में यह निश्चय हुआ कि इस समय जमानिया न जाना चाहिये, बल्कि घर लौट चलना चाहिये।

"उसी समय इन्द्रदेव के साथी लोग भी वहां आ पहुँचे। उनमें में एक का घोड़ा मैंने ले लिया और फिर हम लोग इन्द्रदेव के मकान की तरफ रवाना हुये। मकान पर पहुँच कर इन्द्रदेव ने अपने कई जासूसों और ऐयारों को हर एक बातों पता लगाने के लिए जमानिया कर तरफ रवाना किया। मैं भी अपने घर जाने को तैयार हुआ मगर इन्द्रदेव ने मुझे रोक लिया।

"यद्यपि मैं कह चुका हूँ कि अपने किस्से में भूतनाथ का हाल बयान न करूँगा तथापि मौक पड़ने पर कहीं कहीं लाचारी से उसका जिक्र करना ही पड़ेगा अस्तु इस जगह यह कह देना जरूरी जान पड़ता है कि इन्द्रदेव के मकान ही पर मुझे इस बात की खबर लगी कि भूतनाथ की स्त्री बहुत बीमार है। मेरे एक शागिर्द ने आकर यह सन्देशा दिया और साथ ही इसके यह भी कहा कि आपकी स्त्री उसे देखने के लिए जाने की आज्ञा माँगती हैं।

"भूतनाथ की स्त्री शान्ता बड़ी नेक और स्वभाव की बहुत अच्छी है, मैं भी उसे बहिन की तरह मानता था इस लिए उसकी बिमारी का हाल सुन कर मुझे तरद्दुद हुआ और मैंने अपनी स्त्री को उसके पास जाने की आज्ञा दे दी

तथा उसकी हिफाजत का पूरा पूरा इन्तजाम भी कर दिया। इसके कई दिन बाद खबर लगी कि मेरी स्त्री शान्ता को ले कर अपने घर आ गई।

"आठ दस दिन बीत जाने पर भी न तो जमानिया से कुछ खबर आई न गिरजाकुमार लौटा। हां रेयासत की तरफ से एक चीठी न्यौते की जरूरी आई थी जिसके जवाब में इन्द्रदेव ने लिख दिया कि गोपालसिंह से और मुझसे दोस्ती थी सो वह तो चल बसे, अब उनकी क्रिया मैं अपनी आँखों से देखना पसन्द नहीं करता।

"मेरी इच्छा तो हुई कि गिरिजाकुमार का पता लगाने के लिए मैं खुद जाऊँ मगर इन्द्रदेव ने कहा कि नहीं दो चार दिन और राह देख लो, कहीं ऐसा न हो कि तुम उसकी खोज में जाओ और वह यहां आ जाय। अस्तु मैंने भी ऐसा ही किया।

"बारहवें दिन गिरजाकुमार हम लोगों के पास आ पहुँचा। उसके साथ अर्जुनसिंह भी थे जो हम लोगों की मण्डली में एक अच्छे ऐयार गिने जाते थे, मगर भूतनाथ से और इनसे खूब ही चखाचखी चली आती थी। (महाराज और जीतसिंह की तरफ देख कर) आपने सुना ही होगा कि इन्होंने एक दिन भूतनाथ को धोखा देकर कूएँ में ढकेल दिया था और इनके बटुये में से कई चीजें निकाल ली थी।"

जीत०। हाँ मालूम है मगर इस बात का पता नहीं लगा कि अर्जुनसिंह ने भूतनाथ के बटुए में से क्या निकाला था।

इतना कह कर जीतसिंह ने भूतनाथ की तरफ देखा।

भूत०। (महाराज को देख कर) मैंने जिस दिन अपना किस्सा सरकार को सुनाया था उस दिन अर्ज किया था कि जब कागज का मुट्ठा मेरे पास से चोरी गया तो मुझे बड़ा ही तरद्दुद हुआ। उसके बहुत दिनों के बाद राजा गोपालसिंह के मरने की खबर उड़ी * इत्यादि। यह वही कागज का मुट्ठा था जो अर्जुनसिंह ने मेरे बटुए में से निकाल लिया था तथा इसके साथ और भी कई कागज थे। असल बात यह कि उन चिठियों की नकल के मैंने दो मुट्ठे तैयार किये थे एक तो हिफाजत के लिए अपने मकान में रख छोड़ा था और

* देखिये इक्कीसवां हिस्सा दूसरा बयान।

दूसरा मुट्ठा समय पर काम देने के लिए हरदम अपने बटुए में रखता था। मुझे गुमान था कि अर्जुनसिंह ने जो मुट्ठा ले लिया था उसी से मुझे नुक्सान पहुँचा किन्तु नहीं, हाल में जो दूसरा मुट्ठा जयपाल ने मेरे घर से चुरवा लिया था उसने तमाम बखेड़ा मचाया।

जीत०। ठीक है, (दलीप की तरफ देख के) अच्छा तब क्या हुआ ? दलीप ने फिर इस तरह कहना शुरू किया :—

"गिरजाकुमार और अर्जुनसिंह में एक तरह की नातेदारी भी है परन्तु उसका खयाल न करके ये दोनों आपुस में दोस्ती का बर्ताव रखते थे। खैर, उस समय इन दोनों के आ जाने से हम लोगों को खुशी हुई और फिर इस तरह बातें होने लगीं :—

मैं०। गिरिजाकुमार, तुमने तो बहुत दिन लगा दिये ?

गिरजा०। जी हां मुझे तो और भी कई दिन लग जाते मगर इत्तफाक से अर्जुनसिंह से मुलाकात हो गई और इनकी मदद से मेरा काम बहुत जल्द हो गया।

मैं०। खैर यह बताओ कि तुमने किन किन बातों का पता लगाया और मुझसे बिदा होकर तुम दारोगा के पीछे कहाँ तक गये ?

गिरजा०। जयपाल को साथ लिये हुए दारोगा सीधे मनोरमा के मकान पर चला गया। उस समय मनोरमा वहां न थी, वह दारोगा के आने के तीन पहर बाद रात के समय अपने मकान पर पहुँची। मैं भी छिप कर किसी न किसी तरह उस मकान में दाखिल हो गया। रात को दारोगा और मनोरमा में खूब हुज्जत हुई मगर अन्त में मनोरमा ने उसे विश्वास दिला दिया कि राजा गोपालसिंह को मारने के विषय में तुमसे जबरदस्ती पुर्जा लिखा लेने वाला मेरा आदमी न था बल्कि वह कोई और था जिसे मैं नहीं जानती। दारोगा ने बहुत सोच विचार कर विश्वास कर लिया कि यह काम भूतनाथ का है। इसके बाद उन दोनो में जो कुछ बातें हुईं उससे यही मालूम हुआ कि गोपालसिंह जरूर मर गये और दारोगा को भी यही विश्वास है मगर मेरे दिल में यह बात नहीं बैठती, खैर जो कुछ हो उसके दूसरे दिन मनोरमा के मकान में से एक कैदी निकाला गया जिसे बेहोश कर के जयपाल ने बेगम के मकान में पहुँचा दिया। मैंने उसे पहि-

चानने के लिए बहुत कुछ उद्योग किया मगर पहिचान न सका क्योंकि उसे गुप्त रखने में उन्होंने बहुत कोशिश की थी मगर मुझे गुमान होता है कि वह जरूर बलभद्रसिंह होगा। अगर वह दो दिन भी बेगम के मकान में रहता तो मैं जरूर निश्चय कर लेता मगर न मालूम किस वक्त और कहां बेगम ने उसे पहुँचवा दिया कि मुझे इस बात का कुछ भी पता न लगा, हां इतना जरूर मालूम हो गया कि दारोगा भूतनाथ को फँसाने के फेर में पड़ा हुआ है और चाहता है कि किसी तरह भूतनाथ मार डाला जाय।

"इन कामों से छुट्टी पाकर दारोगा अकेला अर्जुनसिंह के मकान पर गया, इनसे बड़ी नरमी और खुशामद के साथ मुलाकात की और देर तक मीठी मीठी बातें करता रहा जिसका तत्व यह था कि तुम दलीपशाह को साथ लेकर मेरी मदद करो और जिस तरह हो सके भूतनाथ को गिरफ्तार करा दो। अगर तुम दोनों की मदद से भूतनाथ गिरफ्तार हो जायेगा तो मैं इसके बदले में दो लाख रुपया तुम दोनों को इनाम दूँगा इसके अतिरिक्त वह आपके नाम का एक पत्र भी अर्जुनसिंह को दे गया।

"अर्जुनसिंह ने दारोगा का वह पत्र निकाल कर मुझे दिया, मैंने पढ़ कर इन्द्रदेव के हाथ में दिया और कहा, "इसका मतलब भी वही है जो गिरजा-कुमार ने अभी बयान किया है परन्तु यह कदापि नहीं हो सकता कि मैं भूतनाथ के साथ किसी तरह की बुराई करूँ, हां दारोगा के साथ दिल्लगी अवश्य करूँगा और इस चीठी का जवाब जरूर लिखूँगा।"

"इसके बाद कुछ देर तक और भी बातचीत होती रही अन्त में गिरजा-कुमार ने कहा कि मेरे इस सफर का नतीजा कुछ भी न निकला और न मेरी तबीयत ही भरी, आप कृपा कर मुझे जमानिया जाने को इजाजत दीजिये।

"गिरजाकुमार की दरखास्त मैंने मंजूर कर ली। उस दिन रात भर हम लोग इन्द्रदेव के यहां रहे, दूसरे दिन गिरजाकुमार जमानिया की तरफ रवाना हुआ और मैं अर्जुनसिंह को साथ ले कर अपने घर मिर्जापुर चला आया।"

"घर पहुँच कर मैंने भूतनाथ की स्त्री शान्ता को देखा जो बीमार तथा बहुत ही कमजोर और दुबली हो रही थी, मगर उसकी सब बीमारी भूतनाथ की नादानी के सबब से थी और वह चाहती थी कि जिस तरह भूतनाथ ने अपने को

मरा हुआ मशहूर किया था उसी तरह वह भी अपने और अपने छोटे बच्चे के बारे में मशहूर करे। उसकी अवस्था पर मैं बड़ा ही दुःखी हुआ और जो कुछ वह चाहती थी उसका प्रबन्ध मैंने कर दिया, यही सबब था कि भूतनाथ ने अपने छोटे बच्चे के विषय में धोखा खाया जिसका हाल महाराज तथा राजकुमारों को मालूम है मगर सर्वसाधारण के लिये मैं इस समय उसका जिक्र न करूँगा। इसका खुलासा हाल भूतनाथ अपनी जीवनी में बयान करेगा। खैर—

"घर पहुँच कर मैंने दिलगी के तौर पर भूतनाथ के विषय में दारोगा से लिखा पढ़ी शुरू कर दी मगर ऐसा करने से मेरा असल मतलब यह था कि मुलाकात होने पर मैं वह सब पत्र जो इस समय हरनामसिंह के पास मौजूद हैं भूतनाथ को दिखाऊँ और उसे होशियार कर दूँ, अस्तु अन्त में मैंने उसे (दारोगा को) साफ साफ जवाब दे दिया।"

यहां तक अपना किस्सा कह कर दलीपशाह ने हरनामसिंह की तरफ देखा और हरनामसिंह ने सब पत्र जो एक छोटी सी सन्दूकड़ी में बन्द थे महाराज के आगे पेश किये, जिसे मामूली तौर पर सभों ने देखा। इन चीठियों से दारोगा की बेईमानी के साथ ही साथ यह भी साबित होता था कि भूतनाथ ने दलीप शाह पर व्यर्थ ही कलंक लगाया। महाराज की आज्ञानुसार वे चीठिया कम्बख्त दारोगा के आगे फेंक दी गईं और इसके बाद दलीपशाह ने फिर इस तरह बयान करना शुरू किया:—

"मेरे और दारोगा के बीच में जो कुछ लिखा पढ़ी हुई थी उसका हाल किसी तरह भूतनाथ को मालूम हो गया या शायद वह स्वयं दारोगा से जाकर मिला और दारोगा ने मेरी चीठियां दिखाकर इसे मेरा दुश्मन बना दिया और खुद भी मेरी बर्बादी के लिये तैयार हो गया इस तरह दारोगा की दुश्मनी का वह पौधा जो कुछ दिन के लिये मुरझा गया था फिर से लहलहा उठा और हरा भरा हो गया, और साथ ही इसके मैं भी हर तरह से दारोगा का मुकाबिला करने के लिए तैयार हो गया।

"कई दिन के बाद जब गिरजाकुमार जमानिया से लौटा तो उसकी जुबानी मालूम हुआ कि मायारानी का दिन बड़ी खुशी और चहल पहल के साथ गुजरा करता है। मनोरमा और नागर के अतिरिक्त धनपति नामी एक औरत

और भी है जिससे मायारानी बहुत प्यार करती है मगर उस पर मर्द होने का शक होता है। इसके अतिरिक्त यह भी मालूम हुआ कि दारोगा ने मेरी गिरफ्तारी के लिए तरह तरह के बन्दोबस्त कर रक्खे हैं और भूतनाथ भी दो तीन दफे उसके पास आता जाता दिखाई दिया है मगर यह बात निश्चय रूप से मैं नहीं कह सकता कि वह जरूर भूतनाथ ही था।

एक दिन सन्ध्या के समय जब दारोगा अपने बाग में टहल रहा था तो भेष बदले हुए गिरजाकुमार पिछली दीवार लांघ के उसके पास जा पहुँचा और बेखौफ सामने खड़ा हो कर बोला, "दारोगा साहब! इस समय आप मुझे गिरफ्तार करने का ख्याल भी न कीजिएगा क्योंकि मैं आपके कब्जे में नहीं आ सकता, साथ ही इसके यह भी समझ रखिये कि मैं आपकी जान लेने के लिए नहीं आया हूँ बल्कि आपसे दो चार बातें करने के लिए आया हूँ!"

"दारोगा घबड़ा गया और उसकी बातों का कुछ विशेष जवाब न देकर बोला, "खैर कहो क्या कहते हो?"

गिरजा०। मनोरमा और मायारानी के फेर में पड़ कर तुमने राजा गोपालसिंह को मरवा डाला। इसका नतीजा एक न एक दिन तुम्हें भोगना ही पड़ेगा, मगर अब मैं यह पूछता हूँ कि जिनके डर से तुमने लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह को कैद कर रक्खा था वे तो मर ही गये अब अगर तुम उन दोनों को छोड़ भी दोगे तो तुम्हारा क्या बिगड़ेगा?

दारोगा०। (ताज्जुब में आ कर) मेरी समझ में नहीं आता कि तुम कौन हो और क्या कह रहे हो!

गिरजा०। मैं कौन हूँ इसके जानने की तुम्हें कोई जरूरत नहीं मगर क्या तुम कह सकते हो कि जो कुछ मैंने कहा है वह सब झूठ है?

दारोगा०। बेशक झूठ है! तुम्हारे पास इन बातों का क्या सबूत है?

गिरजा०। जयपाल और हेलासिंह के बीच में जो कुछ लिखा पढ़ी हुई है उसके अतिरिक्त वह चीठी इस समय भी मेरे पास मौजूद है जो राजा गोपालसिंह को मार डालने के लिए तुमने मनोरमा को लिख दी थी।

दारोगा०। मैंने कोई चीठी नहीं लिखी थी, मालूम होता है कि दलीपशाह और भूतनाथ वगैरह मिलजुल कर मुझ पर जाल बांधा चाहते हैं और तुम उन्हीं

में से किसी के नौकर हो।

गिरजा०। भूतनाथ तो मर गया अब तुम भूतनाथ को क्यों बदनाम करते हो?

दारोगा०। भूतनाथ जैसा मरा है सो मैं खूब जानता हूँ अगर खुद मुझसे मुलाकात न हुई होती तो शायद मैं धोखे में आ भी जाता।

गिरजा०। भूतनाथ तुम्हारे पास न आया होगा, किसी दूसरे आदमी ने सूरत बदल कर तुम्हें धोखा दिया होगा, वह बेशक मर गया!

दारोगा०। (सिर हिला कर) हां ठीक है, शायद ऐसा ही हो, मगर उन सब बातों से तुम्हें मतलब ही क्या है और तुम मेरे पास किस लिए आये हो सो कहो।

गिरजा०। मैं केवल इसी लिए आया हूँ कि लक्ष्मीदेवी और बलभद्रसिंह को छोड़ देने के लिए तुमसे प्रार्थना करूँ।

दारोगा०। पहिले तुम अपना ठीक ठीक परिचय दो तब मैं तुम्हारी बातों का जवाब दूँगा।

गिरजा०। अपना ठीक परिचय तो मैं नहीं दे सकता।

दारोगा०। तब तुम्हारी बातों का जवाब भी नहीं मिल सकता।

'इतना कह कर दारोगा पीछे की तरफ हटा और उसने अपने आदमियों को आवाज दी मगर गिरजाकुमार झपट कर एक मुक्का दारोगा की गर्दन पर मारने के बाद तेजी के साथ बाग के बाहर निकल गया।

"उसके दूसरे दिन गिरजाकुमार ने उसी तरह मायारानी से भी मिलने की कोशिश की मगर उसके खास बाग के अन्दर न जा सका। लाचार उसने माया-रानी के ऐयार बिहारीसिंह और हरनामसिंह का पीछा किया और दो ही तीन दिन की मेहनत में धोखा देकर बिहारीसिंह को गिरफ्तार कर लिया और उसे अर्जुनसिंह के यहाँ पहुँचा कर मेरे पास चला आया।

"ऊपर लिखी बातें बयान कर के गिरजाकुमार चुप हो गया और तब मैंने उससे कहा, "बिहारीसिंह को तुमने गिरफ्तार कर लिया यह बहुत बड़ा काम हुआ और जब कि तुम बिहारीसिंह बन कर वहां जाओगे और चालाकी से उन लोगों में मिल जुल कर अपने को छिपा सकोगे तो बेशक बहुत सी बातों का पता लग जायगा और हम लोगों के लिए जो कुछ दारोगा किया चाहता है वह भी मालूम हो जायगा।"

गिरजा० । बेशक ऐसा ही है । मैं आपसे बिदा हो कर अर्जुनसिंह के यहाँ जाऊँगा और फिर बिहारीसिंह बन कर जमानिया पहुँचूँगा । मेरे जी में तो यही आया था कि मैं कम्बख्त दारोगा को सीधे यमलोक पहुँचा दूँ मगर यह काम आपकी आज्ञा के बिना नहीं कर सकता था ।

मैं० । नहीं नहीं, इन्द्रदेव की आज्ञा बिना यह काम कदापि न करना चाहिये, पहिले वहां का असल हाल चाल तो मालूम कर लो फिर इस बारे में इन्द्रदेव से बातचीत करेंगे ।

गिरजा० । जो आज्ञा ।

"इसके बाद और भी तरह तरह की बातचीत होती रही । उस दिन गिरजाकुमार मेरे घर ही पर रहा और दूसरे दिन मुझसे बिदा हो अर्जुनसिंह के पास चला गया ।

"इसके बाद आठ दिन तक मुझे किसी बात का पता नहीं लगा, आखिर जब गिरजाकुमार का पत्र आया तब मालूम हुआ कि वह बिहारीसिंह बन कर बड़ी खूबी के साथ उन लोगों में मिल गया है उन लोगों की गुप्त कमेटी में भी बैठ कर हर एक बातों में राय दिया करता है जिससे बहुत जल्द कुछ भेदों के पता लग जाने की आशा होती है। गिरजाकुमार ने यह भी लिखा कि दारोगा को उस चीठी की बड़ी ही चिन्ता लगी हुई है जो मनोरमा के नाम से राजा गोपालसिंह को मार डालने के लिए मैंने (गिरजाकुमार ने) जबरदस्ती उससे लिखवा ली थी । वह चाहता है कि जिस तरह हो वह चीठी उसके हाथ लग जाय और इस काम के लिये लाखों रुपया खर्च करने को तैयार है । वह कहता है और वास्तव में ठीक कहता है कि उस चीठी का हाल अगर लोगों को मालूम हो जायगा तो दूसरों की कौन कहे जमानिया की रिआया ही मुझे बुरी तरह से मारने के लिए तैयार हो जयगी। एक दिन हरनामसिंह ने उसे राय दी की दलीपशाह को मार डालना चाहिये । इस पर वह बहुत ही झुँझलाया और बोला कि जब तक वह चीठी मेरे हाथ न लग जाय तब तक दलीपशाह और उसके साथियों को मार डालने से मुझे क्या फायदा होगा ? बल्कि मैं और भी बहुत जल्द बर्बाद हो जाऊँगा क्योंकि दलीपशाह के मारे जाने से उसके दोस्त लोग जरूर उस चीठी को मशहूर कर देंगे, इसलिये जब तक वह चीठी अपने कब्जे में न आ

जाय तब तक किसी के मारने का ध्यान भी न लाना चाहिये हां दलीपशाह को गिरफ्तार करने से बेशक फायदा पहुँच सकता है। अगर वह कब्जे में आ जायगा तो उसे तरह तरह की तकलीफ पहुँचा कर किसी न किसी तरह चीठी का पता जरूर लगा लूँगा, इत्यादि।

"वास्तव में बात भी ऐसी ही थी, इसमें कोई शक नहीं कि उसी चीठी की बदौलत हम लोगों की जान बची रही, यद्यपि तकलीफें हद दर्जे की भोगनी पड़ीं मगर जान से मारने की हिम्मत दारोगा को न हुई क्योंकि उसके दिल में विश्वास करा दिया गया था कि हम लोगों की मण्डली का एक आदमी भी मारा जायगा उसी दिन वह चीठी तमाम दुनिया में मशहूर हो जायगी, इस बात का बहुत ही उत्तम प्रबन्ध किया गया है।

इसके बाद कई दिन बीत गये मगर गिरिजाकुमार की फिर कोई चीठी न आई जिससे एक तरह का तरद्दुद हुआ और जी में आया कि खुद जमानिया चल कर उसका पता लगाना चाहिये।

दूसरे दिन अपने घर की हिफाजत का इन्तजाम करके मैं बाहर निकला और अर्जुनसिंह के घर पर पहुँचा। ये उस समय अपने बैठके में अकेले बैठे हुए एक चीठी लिख रहे थे, मुझे देखते ही उठ खड़े हुए और बोले, "वाह वाह! बहुत ही अच्छा हुआ जो आप आ गये! मैं इस समय आप ही के नाम एक चीठी लिख रहा था और अभी अपने शागिर्द के हाथ आपके पास भेजने वाला था, आइये बैठिये।"

मैं०। (बैठ कर) क्या कोई नई बात मालूम हुई है?

अर्जुन०। नहीं, बल्कि एक नई बात हो गई है।

मैं०। वह क्या?

अर्जुन०। आज रात को बिहारीसिंह हमारी कैद निकल कर भाग गया है।

मैं०। (घबड़ा कर) यह तो बहुत बुरा हुआ!

अर्जुन०। बेशक बुरा हुआ। जिस समय वह जमानिया पहुँचेगा उस समय बेचारे गिरजाकुमार पर जो बिहारीसिंह बन कर वहां बैठा हुआ है आफत आ जायगी और वह भारी मुसीबत में गिरफ्तार हो जायगा। मैं यही खबर देने के लिये आपके पास आदमी भेजने वाला था।

मैं० । आखिर ऐसा हुआ क्यों ? हिफाजत में कुछ कसर पड़ गई थी ?

अर्जुन० । अब तो ऐसा ही समझना पड़ेगा चाहे उसकी कैसी ही हिफाजत क्यों न की गई हो, मगर असल में यह मेरे एक सिपाही की बेईमानी का नतीजा है क्योंकि बीहारीसिंह के साथ ही साथ वह भी यहां से गायब हो गया है । जरूर बिहारीसिंह ने उसे लालच देकर अपना पक्षपाती बना लिया होगा ।

मैं० । खैर जो कुछ होना था वह तो हो गया । किसी तरह गिरजाकुमार को बचाना चाहिये क्योंकि असली बिहारीसिंह के जमानिया पहुँचते ही नकली बिहारीसिंह (गिरजाकुमार) का भेद खुल जायगा और वह मजबूर करके कैद-खाने में झोंक दिया जायगा ।

अर्जुन० । मैं खुद यही बात कह चुका हूँ । खैर अब इस विषय में विशेष सोच विचार न करके जहां तक जल्द हो सके जमानिया पहुँचना चाहिये ।

मैं० । मैं तो तैयार ही हूँ क्योंकि अभी कमर भी नहीं खोली ।

अर्जुन० । (आवाज में जोर देकर) जरूर !

घण्टे भर के अन्दर ही हम दोनों आदमी जमानिया जाने के लिये हर तरह से तैयार हो गये और ऐयारी का पूरा पूरा समान दुरुस्त कर लिया । दोनों आदमी असली सूरत में पैदल ही घर से बाहर निकले और कई कोस निकल जाने के बाद जङ्गल में बैठ कर अपनी अपनी सूरत बदली, इसके बाद कुछ देर आराम करके फिर आगे की तरफ रवाना हुए और इरादा कर लिया कि आज की रात किसी जंगल में पेड़ के ऊपर बैठ कर बिता देंगे ।

आखिर ऐसा ही हुआ । सन्ध्या होने पर हम दोनों दोस्त एक जंगल में रमणीक स्थान देख कर अटक गये जहां पानी का सुन्दर चश्मा बह रहा था तथा सलई का एक बहुत बड़ा और घना पेड़ भी था जिस पर बैठने के लिये ऐसी अच्छी जगह थी कि उस पर बैठे बैठे घण्टे दो घण्टे नींद भी ले सकते थे ।

यद्यपि हम लोग किसी सवारीपर बहुत जल्द जमानिया पहुँच सकते थे और वहां अपने लिये टिकने का भी इन्तजाम कर सकते थे मगर उन दिनों जमानिया की ऐसी बुरी अवस्था थी कि ऐसा करने की हिम्मत न पड़ी और जंगल में टिक रहना ही उचित जान पड़ा । दोनों आदमी एक दिल थे इसलिये कुछ तरद्दुद या किसी तरह के खुटके का भी खयाल न था ।

अन्धकार छा जाने के साथ ही हम दोनों आदमी पेड़ के ऊपर जा बैठे और धीरे धीरे बातें करने लगे, थोड़ी ही देर बाद कई आदमियों के आने की आहट मालूम हुई, हम दोनों चुप हो गये और इन्तजार करने लगे कि देखें कौन आता है। थोड़ी ही देर में दो आदमी उस पेड़ के नीचे आ पहुँचे। रात हो जाने के सबब हम उनकी सूरत शक्ल अच्छी तरह देख नहीं सकते थे, घने पेड़ों में से छनी हुई कुछ कुछ और कहीं कहीं चन्द्रमा की रोशनी जमीन पर पड़ रही थी, उसी से अन्दाजा कर लिया कि ये दोनों सिपाही हैं, मगर ताज्जुब होता था कि रास्ता छोड़ भेदियों और ऐयारों की तरह जंगल में क्यों आ टिके हैं?

दोनों आदमी अपनी छोटी गठड़ी जमीन पर रख कर पेड़ के नीचे बैठ गये और इस तरह बातें करने लगे :—

एक०। भाई हमें तो इस जंगल में रात काटना कठिन मालूम होता है।

दूसरा०। सो क्यों

पहला०। डर मालूम होता है कि किसी जानवर का शिकार न बन जायँ।

दूसरा०। बात तो ऐसी ही है। मुझे भी यहाँ टिकना बुरा मालूम होता है, मगर क्या किया जाय, बाबाजी का हुक्म ही ऐसा है।

पहिला०। बाबाजी तो अपने काम के आगे दूसरे की जान का कुछ भी खयाल नहीं करते। जब से हमारे राजा साहब का देहान्त हुआ है तब से इनका दिमाग और भी बिगड़ गया है।

दूसरा०। इनकी हुकूमत के आगे तो हमारा जी ऊब गया, नौकरी करने की इच्छा नहीं होती।

पहिला०। मगर इस्तीफा देते भी तो डर मालूम होता है, झट यही कह बैठेंगे कि तू हमारे दुश्मनों से मिल गया है। अगर इस तरह की बात उनके दिल में बैठ जाय तो जान बचनी भी मुश्किल होगी।

दूसरा०। इनकी नौकरी में यही तो मुश्किल है, रुपैया खूब मिलता है इसमें कोई सन्देह नहीं मगर जान का डर हर दम बना रहता है। कम्बख्त मनोरमा की हुकूमत के मारे तो और भी नाकों दम रहता है। जब से राजा साहब मरे हैं इसने महल में डेरा ही जमा लिया है, पहिले डर के मारे दिखाई भी नहीं देती थी। एक बाजारू औरत का इस तरह रेयासत में घुसे रहना कोई अच्छी बात है!

पहिला० । अजी जब हमारी रानी साहबा ही ऐसी हैं तो दूसरे को क्या कहैं ? मनोरमा तो बाबाजी जी की जान ही ठहरीं ।

दूसरा० । बीच में यह बेगम कम्बख्त नई निकल पड़ी है जहाँ घड़ी घड़ी दौड़ के जाना पड़ता है ।

पहिला० । (हँस कर) जानते नहीं हो ? यह जयपालसिंह की नानी (रण्डी) है । पहिले भूतनाथ के पास रही, अब इनके गले पड़ी है । इसे भी तुम आफत की पुड़िया ही समझो, चार दफे मैं उनके पास जा चुका हूँ, आज पाँचवीं दफे जा रहा हूँ, इस बीच में मैं उसे अच्छी तरह पहिचान गया ।

दूसरा० । मैं समझता हूँ कि बिहारीसिंह से और उससे भी कुछ सम्बन्ध है ।

पहिला० । नहीं ऐसा तो नहीं है, अगर बिहारीसिंह से बेगम का कुछ लगाव होता तो जयपाल और बिहारीसिंह में जरूर खटक जाती तिसमें इधर तो बिहारीसिंह बहुत दिनों तक अर्जुनसिंह के यहाँ कैद ही रहे आज किसी तरह छूट कर अपने घर पहुँचे हैं, अब देखो गिरजाकुमार पर क्या मुसीबत आती है ।

दूसरा० । गिरजाकुमार कौन है ?

पहिला० । वही जो बिहारीसिंह बना हुआ था ।

दूसरा० । वह तो अपना नाम शिवशङ्कर बताता है ।

पहिला० । बताता है मगर मैं तो उसे खूब पहिचानता हूँ ।

दूसरा० । तो फिर तुमने बाबाजी से कहा क्यों नहीं ?

पहिला० । मुझे क्या गरज पड़ी है जो उसके लिये दलीपशाह से दुश्मनी पैदा करूँ ? वह दलीपशाह को बहुत प्यारा शागिर्द है, और खबरदार तुम भी इस बात का जिक्र किसी से न करना मैंने तुम्हें अपना दोस्त समझ कर कह दिया ।

दूसरा० । नहीं जी मैं क्यों किसी से कहने लगा ! (चौंक कर) देखो यह किसी भयानक जानवर के बोलने की आवाज है !

पहिला० । तो डर के मारे तुम्हारा दम क्यों निकला जाता है ? ऐसा ही है तो थोड़ी सी लकड़ी बटोर कर आग सुलगा दो या पेड़ के ऊपर चढ़ कर बैठो ।

दूसरा० । इससे तो यही बेहतर होगा कि यहाँ से चले चलो सफर ही में रात काट देंगे, बाबाजी कुछ देखने थोड़े ही आते हैं !

पहिला० । जैसा कहो ।

दूसरा० । हमारी तो यही राय है ।

पहिला० । अच्छा चलो, जिसमें तुम खुश रहो वही ठीक ।

"उन दोनों की बात सुन कर हम लोगों को बहुत सी बातों का पता लग गया । गिरजाकुमार की बात सुन कर मुझे बड़ा ही दुःख हुआ, साथ ही इस बात के जानने की उत्कण्ठा भी हुई कि ये दोनों बेगम के यहाँ क्यों जा रहे हैं । दिल दो तरफ के खिंचाव में पड़ गया, एक तो इच्छा हुई कि इन दोनों को कब्जे में कर के मालूम कर लें कि बेगम के पास किस मजमून की चीठी ले जा रहे हैं और अगर उचित मालूम हो तो इनकी सूरत बन कर खुद बेगम के पास चलें, सम्भव है कि बहुत से भेदों का पता लग जाय, दूसरे इस बात की भी जल्दी पड़ गई कि किसी तरह शीघ्र जमानियां पहुँच कर गिरजाकुमार की मदद करनी चाहिये । जब यह मालूम हुआ कि अब ये दोनों यहाँ से जाया चाहते हैं तब हम लोग भी झट पेड़ के नीचे उतर आए और उन दोनों के सामने खड़े हो कर मैंने कहा, "नहीं जानवरों के डर से मत भागो, हम लोग भी तुम्हारे साथ हैं ।"

हम दोनों को यकायक इस तरह पेड़ से उतर कर सामने खड़े होते देख वे दोनों डर गये मगर कुछ देर बाद एक ने जी कड़ा कर के कहा, "भाई तुम लोग कौन हो ? भूत हो प्रेत हो या जिन्न हो ?"

मैं० । डरो मत, हमलोग भूत प्रेत नहीं हैं आदमी हैं और ऐयार हैं, तुम लोगों में जो कुछ बातें हुई हैं हम लोग पेड़ पर बैठे बैठे सुन रहे थे, जब देखा कि अब तुम लोग जाया चाहते हो तो हम दोनों भी उतर आये ।

एक सिपाही० । (घबड़ानी आवाज से) आप कहां के रहनेवाले और कौन हैं ?

मैं० । हम दोनों आदमी दलीपशाह के नौकर हैं ।

दूसरा० । अगर आप दलीपशाह के नौकर हैं तो हम लोगों को विशेष न डरना चाहिये क्योंकि आप लोग न तो हमारे मालिकों से मिलेंगे और न इस बात का जिक्र करेंगे कि हमलोग क्या क्या बातें करते थे, हां अगर कोई हमारे दर्बार का आदमी होता तो जरूर हम लोग बर्बाद हो जाते ।

मैं० । बेशक ऐसा ही है और तुम लोगों की बातों से यह जान कर हम दोनों बहुत प्रसन्न हुए कि तुम लोग ईमानदार और इन्साफ पसन्द आदमी

हो और हमें यह भी उम्मीद है कि जो कुछ हम पूछेंगे उसका ठीक ठीक जवाब दोगे।

दूसरा०। हमारी बातों से आप जान ही चुके हैं कि हम लोग कैसे खूँखार आदमी के नौकर हैं और आप लोगों से बातें करने का कैसा बुरा नतीजा निकल सकता है।

मैं०। ठीक है मगर तुम्हारे दारोगा साहब को इन बातों की खबर कुछ भी न लगेगी।

पहिला०। इस समय हम आपके काबू में हैं क्योंकि सिपाही होने पर भी ऐयारों का मुकाबला नहीं कर सकते तिस पर ऐसी अवस्था में कि दोनों तरफ की गिनती बराबर हो इसलिये इस समय आप जो कुछ चाहें हमलोगों पर जबरदस्ती कर सकते हैं।

मैं०। नहीं नहीं हमलोग जबरदस्ती नहीं किया चाहते बल्कि तुम्हारी खुशी और हिफाजत का खयाल रख कर हम लोग अपना काम निकाला चाहते हैं।

पहिला०। इसके अतिरिक्त हमलोगों को इस बात का भी निश्चय हो जाना चाहिये कि आप लोग वास्तव में दलीपशाह के ऐयार हैं और हम लोगों की हिफाजत के लिये आपने कोई अच्छी तरकीब सोच ली है अगर हम लोग आपकी किसी बात का जवाब दें।

सिपाही की आखिरी बात से हमें निश्चय हो गया कि ये लोग हमारे कब्जे में आ जायँगे और हमारी बात मान लेंगे और अगर ऐसा न करते तो वे लोग कर ही क्या सकते थे? आखिर हर तरह का ऊँच नीच दिखा कर हमने उन्हें राजी कर लिया और अपना सच्चा परिचय देकर उन्हें विश्वास करा दिया कि जो कुछ हमने कहा है सब सच है। इसके बाद हमने जो कुछ पूछा उन्होंने साफ साफ बता दिया और जो कुछ देखना चाहा (बेगम के नाम का पत्र इत्यादि) दिखा दिया। गिरजाकुमार के बारे में तो जो कुछ पहिले मालूम कर चुके थे उससे ज्यादे हाल कुछ मालूम न हुआ क्योंकि उसके विषय में उन्हें कुछ विशेष खबर ही न थी केवल इतना ही जानते थे कि असली बिहारीसिंह के पहुँचने पर नकली बिहारीसिंह (गिरजाकुमार) गिरफ्तार कर लिया गया, हां दूसरी बात मालूम हो गई कि वे दोनों आदमी दारोगा और

जयपाल की चीठी लेकर बेगम के पास जा रहे हैं, कल सन्ध्या तक बेगम के पास पहुँच जायँगे और परसों सन्ध्या को बेगम को साथ लिये हुए किश्ती की सवारी से गङ्गाजी की तरफ से रातो रात जमानिया लौटेंगे। अस्तु हम लोगों ने उन दोनों सिपाहियों को जिस तरह बन पड़ा इस बात पर राजी कर लिया कि जब तुम लोग बेगम को लिये हुए रातो रात गंगा जी की राह लौटो तो अमुक समय में अमुक स्थान पर कुछ देर के लिये किसी बहाने से किश्ती किनारे लगा के रोक लेना, उस समय हम लोग डाकुओं की तरह पहुँच कर बेगम को गिरफ्तार कर लेंगे और जो कुछ चीजें हमारे मतलब की उसके पास होंगी उन्हें ले लेंगे मगर तुम लोगों को छोड़ देंगे, इस तरह पर हमारा काम भी निकल जायगा और तुम लोगो पर कोई किसी तरह का शक भी न कर सकेगा।

"रुपये पाने के साथ ही साथ अपना किसी तरह का हर्ज न देख कर दोनों सिपाहियों ने इस बात को भी मञ्जूर कर लिया। इसके बाद हम लोगों में मेल मुहब्बत की बातचीत होने लगी और तमाम रात हम लोगो ने उसी पेड़ पर काट दी। सवेरा होने पर दोनों सिपाही हमसे बिदा हो कर चले गये तब हम लोग आपुस में विचार करने लगे कि अब क्या करना चाहिये। अन्त में यह निश्चय करके कि अर्जुनसिंह तो गिरजाकुमार को छुड़ाने के लिये जमानिया जायँ और मैं बेगम के फँसाने का बन्दोबस्त करूँ, हम दोनों भी एक दूसरे से विदा हुए।

"इस जगह मैं किस्से की तौर पर थोड़ा सा हाल गिरजाकुमार का बयान करूँगा जो कुछ दिन बाद मुझे उसी की जुबानी मालूम हुआ था।

"अर्जुनसिंह की कैद से छुटकारा पाकर बिहारीसिंह सीधे जमानिया दारोगा के पास चला गया मगर ऐसे ढंग से गया कि किसी को कुछ मालूम न हुआ और न गिरजाकुमार ही को इस बात का पता लगा। रात पहर भर से कुछ ज्यादे जा चुकी थी जब दारोगा ने नकली बिहारीसिंह अर्थात् गिरजाकुमार को अपने घर बुलाया। बेचारे गिरजाकुमार को क्या खबर थी कि आज मैं मुसीबत में डाला जाऊँगा। वह बेधड़क मामूली ढंग पर बाबाजी (दारोगा) के मकान पर चला गया और देखा कि दारोगा अकेले ऊँची गद्दी पर बैठा हुआ है और उसके सामने सात आठ सिपाही तलवार लगाये खड़े हैं। दारोगा

का इशारा पाकर गिरजाकुमार उसके सामने बैठ गया। बैठने के साथ ही उन सब सिपाहियों ने एक साथ गिरजाकुमार को धर दबाया और बात की बात में हाथ पैर बांध के छोड़ दिया। बेचारा गिरजाकुमार अकेला कुछ भी न कर सका और जो कुछ हुआ उसने चुपचाप बर्दाश्त कर लिया। इसके बाद दारोगा ने ताली बजाई, उसी समय असली बिहारीसिंह कोठड़ी में से निकल कर बाहर चला आया और गिरजाकुमार की तरफ देख के बोला, "अब तो तुम समझ गये होओगे कि तुम्हारा भण्डा फूट गया और मैं तुम्हारी कैद से छूट कर निकल आया। मगर शाबाश! तुमने बड़ी खूबी के साथ मुझे धोखा देकर गिरफ्तार किया था। अब मेरी पारी है, देखो मैं किस तरह तुमसे बदला लेता हूँ।"

गिरजा०। यह तो ऐयारों का काम ही है कि एक दूसरे को धोखा दिया करता है, इसमें अनर्थ क्या हो गया? मेरा दांव लगा मैंने तुम्हें गिरफ्तार करके कैदखाने में डाल दिया, अब तुम्हारा दांव लगा है तो तुम मुझे कैदखाने में डाल दो, जिस तरह तुम अपनी चालाकी से छूट आये हो उसी तरह छूटने के लिये मैं भी उद्योग करूँगा।

बिहारी०। सो तो ठीक है, मगर इतना समझ रक्खो कि हम लोग तुम्हारे साथ मामूली बर्ताव न करेंगे बल्कि हद दर्जे की तकलीफ देंगे।

गिरजा०। यह तो ऐयारी के कायदे के बाहर है!

बिहारी०। जो भी हो।

गिरजा०। खैर कोई हर्ज नहीं, जो कुछ होगा झेलेंगे।

बिहारी०। अगर तुम तकलीफ से बचा चाहो तो मेरी बातों का साफ साफ और सच सच जवाब दो।

गिरजा०। वादा तो नहीं करते मगर जो कुछ पूछना हो पूछो।

बिहारी०। तुम्हारा नाम क्या है?

गिरजा०। शिवशंकर।

बिहारी०। किसके नौकर हो?

गिरजा०। किसी के भी नहीं।

बिहारी०। फिर यहां आये थे किस काम के लिये?

गिरजा०। गुरूजी के।

बिहारी०। तुम्हारा गुरू कौन है?

गिरजा०। वही जिसे तुम जान चुके हो और जिसके यहां इतने दिनों तक तुम कैद थे।

बिहारी०। अर्जुनसिंह?

गिरजा०। हां।

बिहारी०। उन्हें हम लोगो से क्या दुश्मनी थी?

गिरजा०। कुछ भी नहीं।

बिहारी०। फिर यहां उत्पात मचाने के लिये तुम्हें भेजा क्यों?

गिरजा०। मुझे सिर्फ भूतनाथ का पता लगाने के लिए भेजा था क्योंकि उन्हें भूतनाथ से बहुत ही रंज है। यद्यपि भूतनाथ ने अपना मरना मशहूर किया है। मगर उन्हें विश्वास है कि वह मरा नहीं और दारोगा साहब के साथ मिलजुल कर काम कर रहा है और उनकी (अर्जुनसिंह की) बर्बादी का बन्दोबस्त करता है। इसी से उन्होंने मुझे आज्ञा दी थी कि दारोगा साहब के यहां घुस पैठ कर और कुछ दिन तक उन लोगों के साथ रह कर ठीक ठीक पता लगाओ और बन पड़े तो उसे गिरफ्तार भी कर लो, बस।

बिहारी०। भूतनाथ और अर्जुनसिंह से लड़ाई क्यों हो गई?

गिरजा०। लड़ाई तो बहुत पुरानी है मगर इधर जब से गुरुजी ने उसका ऐयारी का बटुआ ले लिया है तब से रंज ज्यादे हो गया है।

बिहारी। (ताज्जुब से) क्या भूतनाथ का बटुआ अर्जुनसिंह ने ले लिया?

गिरजा०। हां।

बिहारी०। उसमें से क्या चीज निकली?

गिरजा०। सो तो नहीं मालूम मगर इतना गुरुजी कहते थे कि उस बटुए से हमारा काम नहीं चला इसलिए उसे गिरफ्तार ही करना पड़ेगा।

बिहारी०। मगर भूतनाथ के खयाल से तुम्हारे गुरुजी ने हमें क्यों तकलीफ दी?

गिरजा०। तुम्हें उन्होंने किसी तरह की तकलीफ नहीं दी बल्कि बड़े आराम के साथ कैद में रक्खा था क्योंकि तुम लोगों से उन्हें किसी तरह की दुश्मनी नहीं है। उनका खयाल तो यही था कि बिहारीसिंह को तीन चार दिन

से ज्यादे कैद में रखने की जरूरत न पड़ेगी और इसके बीच ही में भूतनाथ का पता लग जायगा, उन्हें इस बात की भी खबर लगी थी कि भूतनाथ जमानिया में बिहारीसिंह के पास आया करता है, मगर यहां आने से उसका कुछ भी पता न लगा, अस्तु मैं एक दो दिन में खुद ही लौट जाने वाला था, तुम अपनी बुद्धिमानी से अगर न भी छूटते तो एक दो दिन में जरूर छोड़ दिए जाते।

"गिरजाकुमार ने ऐसे ढंग से सूरत बना कर बातें कीं कि दारोगा और बिहारीसिंह को उसकी सचाई पर विश्वास हो गया। मैं पहिले ही बयान कर चुका हूँ कि गिरजाकुमार बातचीत के समय सूरत बनाना बहुत ही अच्छा जानता था अस्तु गिरजाकुमार और बिहारीसिंह की बातें सुन दारोगा ने कहा—"शिव-शङ्कर! मालूम तो यही होता है कि तुम जो कुछ कहते हो वह सच ही है परन्तु ऐयारों की बातों पर विश्वास करना जरा मुश्किल है, फिर भी तुम अच्छे और साफ दिल के मालूम होते हो।"

गिरजा०। जो आप चाहे खयाल करें मगर मैं तो यही समझता हूँ कि आप लोगों से मुझे झूठ बोलने की जरूरत ही क्या है? न गुरुजी को आप लोगों से दुश्मनी है न मुझी को हाँ अगर यह मालूम हो जायगा कि हमारे मुकाबिले में आप लोग भूतनाथ की सहायता करते हैं तो बेशक दुश्मनी हो जायगी, यह मैं खुले दिल से कह देता हूँ चाहे आप मुझे बेवकूफ समझें चाहे नालायक।

दारोगा०। नहीं नहीं, शिवशङ्कर! हम लोग भूतनाथ की मदद किसी तरह नहीं कर सकते, हम तो उसे खुद ढूँढ़ रहे हैं मगर उस कम्बख्त का कहीं पता ही नहीं लगता, ताज्जुब नहीं कि वास्तव में मर ही गया हो।

गिरजा०। (सिर हिला कर) कदापि नहीं, अभी महीने भर से ज्यादा न हुआ होगा कि मैंने खुद अपनी आंखों से उसे देखा था मगर उस समय मैं ऐसी अण्डस में था कि कुछ कर न सका। खैर कम्बख्त जाता कहां है, मुझे उसके दो चार ठिकाने ऐसे मालूम हैं कि जिसके सबब से एक न एक दिन उसे जरूर गिरफ्तार कर लूँगा।

दारोगा०। (ताज्जुब और खुशी से) क्या तुमने उसे खुद अपनी आंखों से देखा था और उसके दो चार ठिकाने तुम्हें मालूम हैं?

गिरजा०। बेशक!

दारोगा० । क्या उन ठिकानों का पता मुझे बता सकते हो ?

गिरजा० । नहीं ।

दारोगा० । सो क्यों ?

गिरजा० । गुरुजी मुझे जो कुछ ऐयारी सिखाना था सिखा चुके । मैं गुरुजी से वादा कर चुका हूँ कि अब आपकी इच्छानुसार गुरुदक्षिणा में भूतनाथ को गिरफ्तार करके आपके हवाले करूँगा और जब तक ऐसा न करूँगा अपने घर कदापि न जाऊँगा । ऐसी अवस्था में अगर मैं भूतनाथ का कुछ पता आपको बता दूँ तो मानों अपने पैर में आपही कुल्हाड़ी मारूँ, क्योंकि आप अमीर और शक्तिसम्पन्न हैं, बनिस्बत मुझ गरीब के आप उसे बहुत जल्द गिरफ्तार कर सकते हैं, अस्तु अगर ऐसा हुआ और वह आपके हाथमें पड़ गया तो मैं सूखा ही रह जाऊँगा और गुरुदक्षिणा न दे सकने के कारण अपने घर भी न जा सकूँगा ।

दारोगा० । (हँस कर) मगर शिवशंकर ! तुम बड़े ही सीधे आदमी हो और बहुत ही साफ कह देते हो, ऐयारों को ऐसा न करना चाहिये ।

गिरजा० । नहीं साहब आपसे साफ साफ कह देने में कोई हर्ज नहीं है क्योंकि आप हमारे दुश्मन नहीं हैं, दूसरे यह कि अभी तक मुझे ऐयारी की पदवी नहीं मिली, जब दक्षिणा देकर ऐयारी की पदवी पा जाऊँगा तो ऐयारों की सी चाल चलूँगा, अभी तो मैं एक गरीब छोकरा हूँ ।

दारोगा० । नहीं, तुम बहुत अच्छे आदमी हो । हम तुमसे खुश हैं । (बिहारीसिंह की तरफ देख के) इस बेचारे के हाथ पैर खोल दो ! (गिरजाकुमार से) मगर तुम भूतनाथ का जो कुछ पता ठिकाना जानते हो हमें बता दो, हम तुमसे वादा करते हैं कि भूतनाथ को गिरफ्तार कर के अपना काम भी निकाल लेंगे और तुम्हारे सिर से गुरुदक्षिणा का बोझ भी उतार देंगे ।

गिरजा० । (मुँह बिचका कर और सिर हिला कर) जी नहीं, हां अगर इसके साथ आप और भी दो तीन बातों का वादा करें तो मैं बेशक आपकी मदद कर सकता हूँ ।

बिहारी० । (गिरजाकुमार के हाथ पैर खोल कर) तुम जो कुछ चाहोगे बाबाजी देंगे मगर इनकी बातों से इन्कार न करो ।

गिरजा० । (अच्छी तरह बैठ कर) ठीक है मगर मैं विशेष धन दौलत

नहीं चाहता और न मुझे इसकी जरूरत ही है क्योंकि ईश्वर ने मुझे बिल्कुल ही अकेला कर दिया है, न बाप न माँ, न भाई न भौजाई, ऐसी अवस्था में मैं धन दौलत लेकर क्या करूँगा, मगर दो तीन बातों का एकरार लिए बिना मैं दारोगा साहब को कुछ भी न बताऊँगा चाहे मार ही डाला जाऊँ।

दारोगा०। (मुस्कुरा कर) अच्छा अच्छा बताओ तुम क्या चाहते हो?

गिरजा०। एक तो यह कि उसकी खोज में मैं अगुआ रक्खा जाऊँ।

दारोगा०। मञ्जूर है, अच्छा और बताओ।

गिरजा०। बिहारीसिंह मेरी मदद के लिए दिए जायँ क्योंकि मैं इन्हें पसन्द करता हूँ।

दारोगा०। यह भी कबूल है, और बोलो!

गिरजा०। जहां तक जल्द हो सके मैं गुरुदक्षिणा के बोझ से हलका किया जाऊँ क्योंकि इसके लिए मैं जोश में आकर बहुत बुरी कसम खा चुका हूँ, यद्यपि गुरुजी मना करते थे कि तुम कसम न खाओ तुम्हारे ऐसे जिद्दी आदमी का कसम खाना अच्छा नहीं है।

दारोगा०। बेशक ऐसा ही किया जायगा, तुम जो चाहते हो वही होगा, और कहो?

गिरजा०। गुरुदक्षिणा से छुट्टी पा कर जब मैं ऐयारी की पदवी पा जाऊँ तो मुझे यहाँ किसी तरह की नौकरी मिल जाय जिसमें मेरा गुजारा चले, और मेरी शादी करा दी जाय। यह मैं इसलिए कहता हूँ कि मुझे शादी करने का शौक है और मैं अपनी बिरादरी में ऐसा गरीब हूँ कि कोई मुझे लड़की देना कबूल न करेगा।

दारोगा०। यह सब कुछ हो जायगा, तुम कुछ चिन्ता न करो, और फिर तुम गरीब भी न रहोगे। अच्छा बताओ और भी कुछ चाहते हो?

गिरजा०। एक बात और है।

दारोगा०। वह भी कह डालो।

गिरजा०। (बिहारीसिंह की तरफ इशारा करके) ये हमारे गुरुजी से किसी तरह की दुश्मनी न रक्खें और मेरे साथ वहाँ चलने में कोई परहेज न करें, देखिए मैं अपने दिल का हाल बहुत साफ साफ कह रहा हूँ।

बिहारी०। ठीक है ठीक है, जो कुछ तुम कहते हो मुझे मञ्जूर है।

गिरजा०। (दारोगा की तरफ देख कर) तो बस मैं भी आपका हुक्म बजा लाने के लिये दिलोजान से तैयार हूँ।

दारोगा०। अच्छा तो अब उसके दो तीन ठिकाने जो तुम्हें मालूम हैं, उनका पता बताओ।

गिरजा०। पता क्या, अब तो मैं खुद इनको (बिहारीसिंह को) अपने साथ ले चल कर सब कुछ दिखाऊँगा और पता लगाऊँगा। मैं उस कम्बख्त को बिना ढूँढ़े छोड़ने वाला नहीं, मुझे आप चाणक्य की तरह जिद्दी समझिये!

दारोगा०। अच्छा यह तो बताओ कि तुमने भूतनाथ को कहाँ देखा था जिसका जिक्र अभी तुमने किया है।

गिरजा०। बेगम के मकान से बाहर निकलते हुए।

बिहारी०। (ताज्जुब से) कौन बेगम?

गिरजा०। वही जिसे जयपाल अपनी समझते हैं। ताज्जुब क्या करते हैं, उसे आप साधारण औरत न समझिये, मैं साबित कर दूँगा कि उसका मकान भी भूतनाथ का एक अड्डा है मगर वहां इत्तिफाक ही से वह कभी जाता है, हाँ बेगम उससे मिलने के लिये कभी कभी कहीं जाती है परन्तु उसका ठीक हाल मुझे अभी मालूम नहीं हुआ। मैं तो अब तक उसका भी पता लगा लिये होता मगर क्या कहूँ गुरूजी ने कहा कि तुम जमानियाँ ही जाओ वहाँ भूतनाथ जल्दी मिल जायगा, नहीं तो मैं बेगम का ही पीछा करने वाला था।

दारोगा०। मुझे तुम्हारी इन बातों पर ताज्जुब मालूम पड़ता है!

गिरजा०। अभी क्या आगे चल कर और भी ताज्जुब मालूम होगा जब खुद बिहारीसिंह वहाँ की कैफियत आपसे बयान करेंगे।

दारोगा०। खैर अगर तुम्हारी राय हो तो मैं बेगम को यहाँ बुलाऊँ?

गिरजा०। बुलवाइये मगर मेरी समझ में उसे होशियार कर देना मुनासिब न होगा बल्कि मैं तो कहता हूँ कि इसका जिक्र अभी आप जयपालसिंह से भी न कीजिये, कुछ सबूत इकट्ठा कर लेने दीजिये।

दारोगा०। खैर जैसा तुम चाहते हो वैसा ही होगा, मैं बेगम को यहाँ बुलवा कर भूतनाथ का जिक्र न करूँगा बल्कि उसकी तबीयत और नीयत का

अन्दाजा करूँगा।

गिरजा०। हाँ तो बुलवाइये।

दारोगा०। तब तक तुम क्या करोगे?

गिरजा०। कुछ भी नहीं, अभी तो दो तीन दिन तक मैं यहाँ से न जाऊँगा, बल्कि मैं चाहता हूँ कि दो रोज मुझे आप इन्हीं (बिहारीसिंह) की सूरत में रहने दीजिये और बिहारीसिंह को कहिये अपनी सूरत बदल लें जब बेगम आ कर यहाँ से चली जायगी तब हम दोनों आदमी भूतनाथ की खोज में जायँगे।

दारोगा०। इससे क्या फायदा? असली सूरत में अगर तुम यहीं रहो तो क्या कोई हर्ज है?

गिरजा०। हाँ जरूर हर्ज है, यहाँ मैं कई ऐसे आदमियों से मिल जुल रहा हूँ जिनसे भूतनाथ की बहुत सी बातें मालूम होने की आशा है, उन्हें अगर मेरा असल भेद मालूम हो जायगा तो बेशक हर्ज होगा। इसके अतिरिक्त जब बेगम यहाँ आ जाय तो मैं बिहारीसिंह बना हुआ आपके सामने ऐसे ढंग पर बातें करूँगा कि ताज्जुब नहीं आपको भी इस बात का पता लग जाय कि भूतनाथ से और इससे कुछ सम्बन्ध है।

दारोगा०। अगर ऐसी बात है तो तुम्हारा बिहारीसिंह ही बने रहना ठीक है।

गिरजा०। इसी से तो मैं कहता हूँ।

दारोगा०। खैर ऐसा ही होगा और मैं आज ही बेगम को लाने के लिये आदमी भेजता हूँ। (बिहारीसिंह की तरफ देख कर) तुम अपनी सूरत बदलने का बन्दोबस्त करो।

बिहारी०। बहुत अच्छा।

यहाँ तक बयान कर के दलीपशाह चुप हो गया और कुछ दम लेकर फिर इस तरह बयान करने लगा :—

"इस समय मेरी बातें सुन सुन कर दारोगा और जयपाल वगैरह के कलेजे पर साँप लोट रहा होगा और उस समय की बातें याद करके वे बेचैन हो रहे होंगे क्योंकि वास्तव में गिरजाकुमार ने उन्हें ऐसा उल्लू बनाया कि उस बात को ये कभी भूल ही नहीं सकते। खैर, उस समय जब हम दोनों आदमी जङ्गल में दारोगा के सिपाहियों से जुदा हुए हमें गिरजाकुमार के मामले की कुछ खबर

न थी, अगर खबर होती तो बेगम को न लूटते और न अर्जुनसिंह ही गिरजाकुमार की खोज में जमानियाँ जाते। खैर फिर भी जो कुछ हुआ अच्छा ही हुआ और अब मैं आगे का हाल बयान करता हूँ।"

दूसरा बयान

दर्लीपशाह ने फिर इस तरह अपना किस्सा शुरू किया :—

"गिरजाकुमार ने अपनी बातचीत में दारोगा और बिहारीसिंह को ऐसा उल्लू बनाया कि उन दोनों को गिरजाकुमार पर पूरा पूरा भरोसा हो गया और वह खुशी के साथ जमानिया में रह कर बेगम का इन्तजार करने लगा बल्कि दारोगा के साथ जा कर उसने खास बाग का रास्ता और मायारानी को भी देख लिया। इधर अर्जुनसिंह गिरजाकुमार की खोज में जमानिया गये और मैं बेगम को गिरफ्तार करने की फिक्र में पड़ा।

"पहिले तो मैं अपने घर गया और वहाँ से कई आदमियों का इन्तजाम करके लौटा और ठीक समय पर गंगा किनारे उस ठिकाने पहुँच गया जहाँ बेगम की किश्ती किनारे लगा कर लूट लेने की बातचीत कही बदी थी।"

"मैं इस घटना का हाल बहुत बढ़ा कर न कहूँगा कि बेगम की किश्ती क्यों कर आई और क्या क्या हुआ तथा मैंने उसको किस तरह गिरफ्तार किया—संक्षेप में केवल इतना ही कहूँगा कि बेगम पर मैंने कब्जा कर लिया और जो चीजें उसके पास थीं सब ले ली गईं। उन्हीं चीजों में ये सब कागज और वह हीरे की अंगूठी भी थी जो भूतनाथ बेगम के यहाँ से ले आया है और जो इस समय दर्बार में मौजूद है। आगे चल कर मैं इन चीजों का हाल बयान करूँगा और यह भी कहूँगा कि ये सब चीजें मेरे कब्जे में आ कर फिर क्योंकर निकल गईं इस समय मैं पुनः गिरजाकुमार का हाल बयान करूंगा जो उसी की जुबानी मुझे मालूम हुआ था।

"गिरजाकुमार जमानिया में बैठा हुआ दारोगा के साथ बेगम का इन्तजार कर रहा था। जब बेगम को लुटवा कर दोनों सिपाही जिनके साथ बेगम के भी दो आदमी थे और जिन्हें मैंने जान बूझ कर छोड़ दिया था, रोते कलपते जमानिया पहुँचे तो सीधे दारोगा के पास चले गये। उस समय वहाँ सूरत

बदले हुए असली बिहारीसिंह और गिरजाकुमार भी बिहारीसिंह की सूरत बना हुआ बैठा था। दारोगा के सिपाहियों और बेगम के आदमियों ने अपनी बरबादी और बेगम के लुट जाने का हाल बयान किया जिसे सुनते ही दारोगा को ताज्जुब और रञ्ज हुआ और उसने गिरजाकुमार की तरफ देख कर कहा, "यह कार्रवाई किसने की होगी ?"

गिरजा०। खुद बेगम ने या फिर भूतनाथ ने ! (बेगम के आदमियों की तरफ देख के) क्यों जी ! मैं समझता हूँ कि शायद महीने भर के लगभग हुआ होगा जब एक दिन भूतनाथ मेरे साथ बेगम के यहाँ गया था। उस समय तुम भी तो वहाँ थे, क्या तुमने मुझे पहिचाना था ?

बेगम का आ०। जी नहीं मैंने आपको नहीं पहिचाना था।

गिरजा०। (दारोगा की तरफ देख के) आप ही के कहे मुताबिक मैं दो तीन दफे भूतनाथ के साथ बेगम के यहाँ गया था, मगर वास्तव में भूतनाथ अच्छा आदमी है और ये लोग भी बड़ी मुस्तैदी के साथ वहाँ रहते हैं। (बेगम के आदमियों की तरफ देख के) क्यों जी है न यही बात।

बेगम के आ०। (हाथ जोड़ के) जी हां सर्कार !

बेगम के आदमियों की जुबान से गिरजाकुमार ने बड़ी खूबी के साथ 'जी हाँ सर्कार' कहलवा लिया। इसमें कोई शक नहीं कि भूतनाथ बेगम के यहां जाया करता था और गिरजाकुमार को यह हाल मालूम था मगर ऐसे मौके पर उसके आदमियों की जुबान से 'हां' कहवा लेना मामूली बात न थी। उन खुशामदी आदमियों ने यह सोच कर कि जब खुद बिहारीसिंह भूतनाथ के साथ अपना जाना कबूल करते हैं तो हाँ कहना ही अच्छा है—"जी हां सर्कार' कह दिया और 'गिरजाकुमार' दारोगा और बिहारी की निगाह में सच्चा बन बैठा। साथ ही इसके गिरजाकुमार दारोगा से पहिले ही कह चुका था कि बेगम आवेगी तो मैं बात ही बात में किसी तरह साबित कर दूँगा कि भूतनाथ उसके यहां आता जाता है, वह बात भी दारोगा को खूब याद थी, अस्तु दारोगा को गिरजाकुमार पर और भी विश्वास हो गया। उसने गिरजाकुमार का इशारा पा कर बेगम के दोनों आदमियों को बिना कुछ कहे थोड़ी देर के लिये बिदा किया और फिर आपुस में इस तरह बातचीत करने लगा :—

दारोगा० । कुछ समझ में नहीं आता कि क्या मामला है !

गिरजा० । अजी यह सब उसी कम्बख्त भूतनाथ की बदमाशी और दोनों की मिली जुली गठन है! बेगम जान बूझ कर यहाँ नहीं आई । अगर वह आती तो उसके आदमियों की तरह खास उसकी जुबान से भी मैं इस बात को साबित करा देता कि उससे और भूतनाथ से ताल्लुक है और इसीलिए मैं अभी बिहारी-सिंह बना हुआ ही था, मगर खैर कोई चिन्ता नहीं, मैं बहुत जल्द इन सब भेदों का पूरा पूरा पता लगा लूंगा और भूतनाथ को भी गिरफ्तार कर लूँगा ।

दारोगा० । तो अब देर क्यों करते हो ?

गिरजा० । कुछ नहीं, कल मेरे साथ चलने के लिये बिहारीसिंह तैयार हो जावें ।

बिहारी० । अच्छी बात है, यह बताओ कि किस सूरत शक्ल में सफर किया जायगा ?

गिरजा० । मैं तो एक ज्योतिषी की सूरत बनूँगा, और आप.....

बिहारी० । मैं वैद्य बनूँगा ।

गिरजा० । बस बस बस, यही ठीक है, मगर एक बात मैं अभी से कहे देता हूँ कि दो घण्टे के लिए मैं गुरुजी से मिलने जरूर जाऊँगा ।

बिहारी० । क्या हर्ज है, अगर कहोगे तो मैं भी तुम्हारे साथ चला चलूँगा या कहीं अटक जाऊँगा ।

"मुख्तसर यह कि दूसरे दिन दोनों ऐयार ज्योतिषी और वैद्य बने हुए जमानिया के बाहर निकले ।

"मजा तो यह है कि गिरजाकुमार ने चालाकी से उस समय तक किसी को अपनी असली सूरत देखने नहीं दी । जब तक वहाँ रहा बिहारीसिंह ही बना रहा, जब बाहर निकला तो ज्योतिषी बन कर निकला । खैर दारोगा का तो कहना ही क्या है, खुद बिहारीसिंह भी ऐयार हो कर उल्लू बन गया । मैं तो यही कहूँगा कि बिहारीसिंह और हरनामसिंह व्यर्थ ही ऐयार कहलाये, असल में कोई अच्छा काम इन दोनों के हाथ से होते देखा सुना नहीं गया ।

"अब हम थोड़ा सा हाल अर्जुनसिंह का बयान करते हैं जो गिरजाकुमार का पता लगाने के लिये हमसे जुदा होकर जमानिया गये थे । जमानिया में रामसरन नामी एक महाजन अर्जुनसिंह का दोस्त था, अस्तु ये सूरत बदले

हुए सीधे उसी के मकान पर चले गये और मौका पाकर उससे मुलाकात करने बाद सब हाल बयान किया और उससे मदद चाही। पहले तो वह दारोगा और मायारानी के खिलाफ कार्रवाई करने के नाम से बहुत डरा मगर अर्जुनसिंह ने उसे बहुत भरोसा दिलाया और कहा कि जो कुछ हम करेंगे वह ऐसे ढंग से करेंगे कि तुम पर किसी को किसी तरह का शक न होगा, इसके अतिरिक्त हम तुमसे और किसी तरह की मदद नहीं चाहते केवल एक गुप्त कोठड़ी ऐसे ढग की चाहते हैं जिसमें अगर हम किसी को गिरफ्तार करके लावें तो दो चार दिन के लिये कैद कर रक्खें, और यह काम भी ऐसी खूबी के साथ किया जायगा कि कैदी को इस बात का गुमान भी न होगा कि वह कहाँ और किसके मकान में कैद किया गया था।

"खैर, रामसरन ने किसी तरह अर्जुनसिंह की बात मंजूर कर ली और तब अर्जुनसिंह उसके मकान से बाहर निकल कर हरनामसिंह को फँसाने की फिक्र करने लगे, क्योंकि इन्होंने निश्चय कर लिया था कि बिना किसी को फँसाये हुए गिरजाकुमार का पता लगाना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव है।

"मुख्तसर यह है कि दो दिन की कोशिश में अर्जुनसिंह ने भुलावा देकर हरनामसिंह को गिरफ्तार कर लिया, उसे रामसरन के मकान की एक अन्धेरी कोठड़ी म ले जा कर कैद किया और खाने पीने का भी प्रबन्ध कर दिया। हरनामसिंह को यह मालूम न हुआ कि उसे किसने कैद किया और किस स्थान पर वह रक्खा गया है, तथा उसे खाने पीने को कौन देता है। इस काम से छुट्टी पाकर हरनामसिंह की सूरत बन अर्जुनसिंह दारोगा के दर्बार में जा घुसे और इस तरकीब से बहुत जल्द गिरजाकुमार को पहिचान लिया और उसका पता लगा लिया। गिरजाकुमार ने जिस चालाकी से अपने को बचा लिया था उसे जान कर उसकी बुद्धिमानी पर अर्जुनसिंह को आश्चर्य हुआ मगर भण्डा फूटने के डर से अपने को बहुत ही बचाये हुए थे और दारोगा तथा असली बिहारीसिंह से सिर दर्द का बहाना करके बातचीत कम करते थे।

"जब बिहारीसिंह को साथ लेकर गिरजाकुमार शहर के बाहर निकला तो अर्जुनसिंह ने भी सूरत बदल कर उसका पीछा किया। जब दोनों मुसाफिर एक मंजिल रास्ता तै कर चुके तो दूसरे दिन के सफर में एक जगह मौका पाकर

और कुछ देर के लिये गिरजाकुमार को अकेला देख कर अर्जुनसिंह उसके पास चले गये और उन्होंने अपने को उस पर प्रगट कर दिया। जल्द जल्द बातचीत करके इन्होंने उसे यह बता दिया कि उसके जमानिया चले जाने के बाद क्या हुआ तथा अब उसे क्या क्या और किस ढंग पर कार्रवाई करनी चाहिये और हमसे तुमसे कहां कहां किस किस मौके पर या कैसी कैसी सूरत में मुलाकात होगी।

"अर्जुनसिंह ने गिरजाकुमार को जो कुछ समझाया उसका हाल आगे चल कर मालूम होगा। इस जगह केवल इतना ही कहना काफी है कि गिरजाकुमार को समझा कर अर्जुनसिंह फिर जमानिया चले गये और रात के समय हरनामसिंह को बेहोश करके कैदखाने से निकाल और शहर के बाहर बहुत दूर मैदान में ले जाकर छोड़ दिया और अपना रास्ता पकड़ा जिसमें होश में आकर वह अपने घर चला जाय और उसे मालूम न हो कि उसके साथ किसने क्या सलूक किया बल्कि यह बात उसे स्वप्न की तरह याद रहे।

"इसके बाद अर्जुनसिंह बहुत जल्द मेरे पास पहुँचे और जो कुछ हो चुका था उसे बयान किया। गिरजा कुमार का हाल सुन कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और मैंने बेगम के साथ जो कुछ सलूक किया था उसका हाल अर्जुनसिंह से बयान किया और जो कुछ चीज उसकी मेरे हाथ लगी थी दिखा कर यह भी कहा कि बेगम अभी तक मेरे यहां कैद है अस्तु सोचना चाहिये कि अब उसके साथ क्या कार्रवाई की जाय?

"उन दिनों असल में मुझे तीन बातों की फिक्र लगी हुई थी। एक तो यह कि यद्यपि भूतनाथ से और मुझसे रंज चला आता था और भूतनाथ ने अपना मरना अशहूर कर दिया था, मगर भूतनाथ की स्त्री मेरे यहां आई हुई थी और उसकी अवस्था पर मुझे दुःख होता था, इसलिये मैं चाहता था किसी तरह भूतनाथ से मुलाकात हो और मैं उसे समझा बुझा कर ठीक रास्ते पर लाऊँ दूसरे यह कि राजा गोपालसिंह के मरने का असली सबब दरियाफ्त करूँ, और तीसरे बलभद्रसिंह तथा लक्ष्मीदेवी को दारोगा की कैद से छुड़ाऊँ जिसका कुछ कुछ हाल मुझे मालूम हो चुका था। बस इन्हीं कामों के लिये हम लोगों ने इतनी मेहनत अपने सर पर उठाई हुई थी नहीं तो जमानिया के बारे में हम लोगों के लिये अब किसी तरह की दिलचस्पी नहीं रह गई थी।

"बेगम की जो चीजें मेरे हाथ लगी थीं उनमें से कई कागज और एक हीरे की अँगूठी ऐसी थी जिस पर ध्यान देने से हम लोगों को मालूम हो गया कि बेगम भी कोई साधारण औरत नहीं है। उन कागजों में से कई चीठीयाँ ऐसी थीं जो भूतनाथ के विषय में जयपाल ने बेगम को लिखी थीं और कई चीठियां ऐसी थीं जिनके पढ़ने से मालूम होता था कि मायारानी के बाप को भी इसी जयपाल ने मायारानी और दारोगा की इच्छानुसार मार कर जहन्नुम में पहुँचवा दिया है और बलभद्रसिंह अभी तक जीता है, मगर साथ ही इसके उन चीठियों से यह भी जाहिर होता था कि असली लक्ष्मीदेवी निकल कर भाग गई जिसका पता लगाने के लिये दारोगा बहुत उद्योग कर रहा है मगर पता नहीं लगता। वह जो हीरे की अँगूठी थी वह वास्तव में हेलासिंह (मायारानी के बाप) की थी जो उसके मरने बाद जयपाल के हाथ लगी थी। उस अँगूठी के साथ एक कागज का पुर्जा बँधा हुआ था जिस पर बलभद्रसिंह को कैद में रखने और हेलासिंह को मार डालने की आज्ञा थी और उस पर मायारानी तथा दारोगा दोनों के हस्ताक्षर थे।

"वे कागज पुर्जे और अँगूठी इस समय महाराज के दर्बार में मौजूद हैं जो भूतनाथ बेगम के यहां से उस समय ले आया था जब वह असली बलभद्रसिंह को छुड़ाने के लिये गया था। आप लोगों को इस बात पर आश्चर्य होगा कि जब ये सब चीजें बेगम को गिरफ्तार करने पर मेरे कब्जे में आ ही चुकी थीं तो पुनः बेगम के कब्जे में कैसे चली गईं ? इसके जवाब में केवल इतना ही कह देना काफी है कि जब बेगम मेरे कब्जे से निकल गई तो वे चीजें भी उसी के साथ जाती रहीं और फिर मैं भी बेगम तथा दारोगा के कब्जे में चला गया और इन सब बातों का कर्ता-धर्ता भूतनाथ ही है जिसने उस समय बहुत बड़ा धोखा खाया और जिसके सबब से कुछ दिन बाद उसे ही तकलीफ उठानी पड़ी। मैंने भी सुना था कि अपनी इस भूल से शर्मिन्दा होकर भूतनाथ ने बेगम और जयपाल को बड़ी बड़ी तकलीफें दीं मगर उसका नतीजा उस समय कुछ भी न निकला, खैर अब मैं पुनः अपने किस्से की तरफ झुकता हूँ।

दलीपशाह की इस बात को सुन कर महाराज ने पुनः उस हीरे की अँगूठी और उन चीठियों के देखने की इच्छा प्रगट की जो भूतनाथ बेगम के यहां से

उठा लाया था। तेजसिंह ने पहिले महाराज को और फिर और लोगों को भी वे चीजें दिखाईं और इसके बाद फिर दलीपशाह ने इस तरह अपना हाल बयान करना शुरू किया :—

अर्जुनसिंह ज्यादे देर तक मेरे पास नहीं ठहरे, उस समय जो कुछ हम लोगों को करना चाहिये था बहुत जल्द निश्चय कर लिया गया और इसके बाद अर्जुनसिंह के साथ मैं भी घर से बाहर निकला और हम दोनों मित्र गिरजाकुमार की तरफ रवाना हुए।

"अब गिरजाकुमार का हाल सुनिये कि अर्जुनसिंह से मिलने के बाद फिर क्या हुआ।

"बिहारीसिंह और गिरजाकुमार दोनों आदमी सफर करते हुए एक ऐसे स्थान में पहुँचे जहां से बेगम का मकान केवल पांच कोस की दूरी पर था। यहां पर एक छोटा गांव था जहां मुसाफिरों के लिये खाने पीने की मामूली चीजें मिल सकती थीं और जिसमें हलवाई की एक छोटी सी दूकान भी थी। गांव के बाहरी प्रान्त में जिमींदारों के कई देहाती ढङ्ग के बगीचे थे और पास ही में पलास का छोटा सा जंगल भी था। सन्ध्या होने में घण्टे भर की देर थी और बिहारीसिंह चाहता था कि हम लोग बराबर चले जायं, दो तीन घण्टे रात जाते बेगम के मकान तक पहुँच ही जायँगे, मगर गिरजाकुमार को यह बात मंजूर न थी उसने कहा कि मैं बहुत थक गया हूँ और अब एक कोस भी आगे नहीं चल सकता इस लिये यही अच्छा होगा कि आज की रात इसी गांव के बाहर किसी बगीचे अथवा जंगल में बिता दी जाय।

"यद्यपि दोनों की राय दो तरह की थी, मगर बिहारीसिंह को लाचार हो गिरजाकुमार की बात माननी पड़ी और यह निश्चय करना ही पड़ा कि आज रात अमुक बगीचे में बिताई जायगी, अस्तु अन्धेरा हो जाने पर दोनों आदमी गांव में हलवाई की दूकान पर गये और वहां पूरी तरकारी बनवा कर पुनः गांव के बाहर चले गये।

"चांदनी निकली हुई थी और चारो तरफ सन्नाटा छाया हुआ था बिहारीसिंह और गिरजाकुमार एक पेड़ के नीचे बैठे हुए धीरे धीरे भोजन और निम्नलिखित बातें करते जाते थे—

गिरजा० । आज की भूख में ये पूरियाँ बड़ा ही मजा दे रही हैं ।

बिहारी० । यह भूख ही का कारण नहीं है बल्कि बनी भी अच्छी हैं, इसके अतिरिक्त तुमने आज बूटी (भांग) भी गहरी पिला दी है ।

गिरजा० । अजी इसी बूटी की बदौलत तो सफर की हरारत मिटेगी ।

बिहारी० । मगर नशा तो तेज हो रहा है और अभी तक बढ़ता ही जाता है !

गिरजा० । तो अपने लोगों को करना ही क्या है ?

बिहारी० । और कुछ नहीं तो अपने कपड़े लत्ते और बटुए का खयाल तो है ही ।

गिरजा० । (हँस कर) मजा तो तब हो जो इस समय भूतनाथ से सामना हो जाय ।

बिहारी० । हर्ज ही क्या है ? मैं इस समय भी लड़ने को तैयार हूँ मगर वह बड़ा ही तेज ताकतवर और काइयाँ ऐयार है ।

गिरजा० । उसकी कदर तो राजा गोपालसिंह जानते थे ।

बिहारी० । मेरे खयाल से तो यह बात नहीं है ।

गिरजा० । तुम्हें खबर ही नहीं है, अगर मौका मिला तो मैं इस बात को साबित कर दूँगा ।

बिहारी० । किसी ढङ्ग से साबित करोगे ?

गिरजा० । खुद राजा गोपालसिंह की जुबान से ।

बिहारी० । (हँस कर) क्या भंग के नशे में पागल हो गए हो ? राजा गोपालसिंह अब कहा हैं ।

गिरजा० । असल बात तो यह है कि मुझे राजा गोपालसिंह के मरने का विश्वास ही नहीं है ।

बिहारी० । (चौकन्ना हो कर) सो क्या ? तुम्हारे पास उनके जीते रहने का क्या सबूत है ?

गिरजा० । बहुत कुछ सबूत है मगर इस विषय पर मैं हुज्जत या बहस करना पसन्द नहीं करता, जो कुछ असल बात है तुम स्वयम् जानते हो, अपने दिल से पूछ लो ।

बिहारी० । मैं तो यही जानता हूँ कि राजा साहब मर गये ।

गिरजा०। खैर यह तो मैं कही चुका हूँ कि इस विषय पर बहस न करूँगा।

बिहारी०। मगर बताओ तो सही कि तुमने क्या समझके ऐसा कहा?

गिरजा०। मैं कुछ भी न बताऊँगा।

बिहारी०। फिर हमारी तुम्हारी दोस्ती ही क्या ठहरी जो एक जरा सी बात छिपा रहे हो और पूछने पर भी नहीं बताते।

गिरजा०। (हँस कर) तुम्हें ऐसा कहने का हक नहीं है जब तुम खुद दोस्ती का खयाल न करके ये बातें छिपा रहे हो तो मैं क्यों बताऊँ?

बिहारी०। (संकोच के साथ) मैं तो कुछ भी नहीं छिपाता।

गिरजा०। अच्छा मेरे सर पर हाथ रख के कह तो दो कि वास्तव में राजा साहब मर गए। मैं अभी साबित कर देता हूँ कि तुम छिपाते हो या नहीं। अगर तुम सच कह दोगे तो मैं भी बता दूँगा कि इसमें कौन कौन सी नई बात पैदा हो गई है और क्या क्या रंग खिला चाहता है?

बिहारी०। (कुछ सोच कर) पहिले तुम बताओ फिर मैं भी बताऊँगा।

गिरजा०। ऐसा नहीं हो सकता।

"इस समय बिहारीसिंह नशे में मस्त था, एक तो गिरजाकुमार ने उसे भंग पिला दी थी, दूसरे उसने जो पूरियाँ खाई थीं उसमें भी एक प्रकार का बेढब नशा मिला हुआ था क्योंकि वास्तव में उस हलवाई के यहाँ मैंने और अर्जुनसिंह ने पहिले ही से प्रबन्ध कर लिया था और ये बातें गिरजाकुमार से कही बदी थीं जैसा कि ऊपर के बयान से आपको मालूम हो चुका है, अस्तु गिरजाकुमार ने पहिले ही से एक दवा खा ली थी जिससे उन पूरियों का असर उस पर कुछ भी न हुआ, मगर बिहारीसिंह धीरे धीरे अलमस्त हो गया और थोड़ी ही देर में बेहोश होने वाला था। वह ऐसा मस्त और दिल खुश करने वाला नशा था जिसके बस में हो कर बिहारीसिंह ने अपने दिल का भेद खोल दिया, मगर अफसोस भूतनाथ ने हमारी कुल मेहनत पर मट्टी डाल दिया और हम लोगों को बरबाद कर दिया। उस भेद का पता लग जाने पर भी हम लोग कुछ न कर सके उसका सबब आगे चल कर आपको मालूम होगा। जब गिरजाकुमार और बिहारीसिंह में बातें हो रही थीं उस समय हम दोनों मित्र भी वहाँ से थोड़ी ही दूर पर छिपे हुए खड़े थे और इन्तजार कर रहे थे कि बिहारीसिंह बेहोश हो

जाय और गिरजाकुमार बुलाये तो हम दोनों भी वहाँ जा पहुँचें।

गिरजाकुमार ने पुनः जोर देकर कहा, "ऐसा नहीं हो सकता, पहिले तुम्हीं को अपने दिल का परदा खोल के और सच्चा सच्चा हाल कह के दोस्ती का परिचय देना चाहिये और यह बात मुझसे छिपी नहीं रह सकती कि तुमने सच कहा या झूठ, क्योंकि जो कुछ भेद है उसे मैं खूब जानता हूँ।

बिहारी०। मुझे भी ऐसा ही मालूम होता है, खैर अब मैं कोई बात तुमसे न छिपाऊँगा, सब भेद साफ साफ कह दूँगा। मगर इस समय केवल इतना ही कहूँगा कि वास्तव में राजा साहब मरे नहीं बल्कि अभी तक जीते हैं।

गिरजा०। इतना तो मैं खुद कह चुका हूँ, इससे कुछ ज्यादे कहो तो मुझे विश्वास हो।

"गिरजाकुमार की बात का बिहारीसिंह कुछ जवाब दिया ही चाहता था कि सामने से एक आदमी आता हुआ दिखाई पड़ा जो पास आते ही चाँदनी के सबब से बहुत जल्द पहिचान लिया गया कि भूतनाथ है। बिहारीसिंह ने जो भूतनाथ को देख कर घबड़ा गया था गिरजाकुमार से कहा, "लो सम्हल जाओ, भूतनाथ आ पहुँचा!" दोनों आदमी सम्हल कर खड़े हो गये और भूतनाथ भी वहां पहुँच कर दिलेराना ढंग पर उन दोनों के सामने अकड़ कर खड़ा हो गया और बोला, "तुम दोनों को मैं खूब पहिचानता हूँ और यकीन है कि तुम लोगों ने भी मुझे पहिचान लिया होगा कि यह भूतनाथ है।"

बिहारी०। बेशक मैंने तुमको पहिचान लिया मगर तुमको हमलोगों के बारे में धोखा हुआ है।

भूत०। (हँस कर) मैं तो कभी धोखा खाता ही नहीं! मुझे खूब मालूम है कि तुम दोनों बिहारीसिंह और गिरजाकुमार हो और साथ ही इसके मुझे यह भी मालूम है कि तुम लोग मुझे गिरफ्तार करने के लिए जमानिया से बाहर निकले हो। मुझे तुम अपने ऐसा बेवकूफ न समझो! (गिरजाकुमार की तरफ बता कर) जिसे तुम लोगों ने आज तक नहीं पहिचाना और जिसे तुम अभी तक शिवशंकर समझे हुए हो उसे मैं खूब जानता हूँ कि यह दलीपशाह का शागिर्द गिरजाकुमार है। जरा सोचो तो सही कि तुम्हारे ऐसा बेवकूफ आदमी मुझे क्या गिरफ्तार करेगा जिसे एक लौंडे ने धोखे में डाल कर उल्लू बना

दिया और जो इतने दिनों तक साथ रहने पर भी गिरिजाकुमार को पहिचान न सका ! खैर इसे जाने दो, पहिले अपनी हिम्मत और बहादुरी ही का अन्दाजा कर लो, देखो मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूँ, मुझे गिरफ्तार करो तो सही !!

"भूतनाथ की बातें सुन कर बिहारीसिंह हैरान बल्कि बदहवास हो गया, क्योंकि वह भूतनाथ के जीवट और उसकी ताकत को खूब जानता था और उसे विश्वास था कि इस तरह खुले मैदान भूतनाथ को गिरफ्तार करना दो चार आदमियों का काम नहीं है। साथ ही वह यह सुन कर और भी घबड़ा गया कि हमारा साथी वास्तव में शिवशंकर या हमारा मददगार नहीं है बल्कि हमें धोखे में डाल कर उल्लू बनाने वाला और भेद ले लेने वाला एक चालाक ऐयार है, इससे जो मैंने गोपालसिंह के जीते रहने का भेद बता दिया सो अच्छा नहीं किया।

"इसी घबराहट में बिहारीसिंह का नशा पूरे दर्जे पर पहुँच गया और सिर नीचा करके सोचताही सोचता वह बेहोश होकर जमीन पर लंबा हो गया। उस समय गिरजाकुमार की तरफ देखके भूतनाथ ने कहा, "तुम इस बात का ख्याल छोड़ दो कि मेरे सामने से भाग जाओगे या चिल्लाकर लोगों को इकट्ठा कर लोगे!"

गिरजा०। मगर मुझसे आपको किसी तरह की दुश्मनी न होनी चाहिए क्योंकि मैंने आपका कुछ नुकसान नहीं किया है।

भूतनाथ०। सिवाय इसके कि मुझे गिरफ्तार कराने की फिक्र में थे।

गिरजा०। कदापि नहीं, यह तो एक तरकीब थी कि जिससे मैंने अपने को कैद होने से बचा लिया, यही सबब था कि इस समय मैंने इसे (बिहारीसिंह को) धोखा देकर बेहोशी की दवा खिला दी और इसे बाँध कर अपने घर ले जाने वाला था।

भूत०। तुम्हारी बातें मान लेने के योग्य हैं मगर मैं इस बात को भी खूब जानता हूँ कि तुम बड़े बातूनी हो और बातों के जाल में बड़े बड़े चालाकों को फँसा कर उल्लू बना सकते हो।

"इतना कह कर भूतनाथ ने अपनी जेब में से कपड़े का एक टुकड़ा निकाल कर गिरजाकुमार के मुंह पर रख दिया और फिर गिरजाकुमार को दीन दुनिया को कुछ भी खबर न रही। इसके बाद क्या हुआ सो उसे मालूम नहीं और न मैं ही जानता हूँ, क्योंकि इस विषय में मैं वही बयान करूँगा जो गिरजाकुमार

ने मुझ से कहा था।

"हम दोनों मित्र जो उस समय छिपे हुए थे बैठे बैठे घबड़ा गये और जब लाचार हो कर उस बाग में गये तो न गिरजाकुमार को देखा न बिहारी-सिंह को पाया। कुछ पता न लगा कि दोनों कहां गये क्या हुए या उन पर कैसी बीती। बहुत खोजा, पता लगाया, कई दिन तक उस इलाके में घूमते रहे, मगर नतीजा कुछ न निकला। लाचार अफसोस करते हुए अपने घर की तरफ लौट आए।

"अब बहुत बिलम्ब हो गया, महाराज भी घबड़ा गये होंगे। (जीतसिंह की तरफ देख कर) यदि आज्ञा हो तो मैं अपनी रामकहानी यहाँ पर रोक दूँ और जो कुछ बाकी है उसे कल के दर्बार में बयान करूँ।"

इतना कह कर दलीपशाह चुप हो गया और महाराज का इशारा पा कर जीतसिंह ने उसकी बात मंजूर कर ली। दर्बार बर्खास्त हुआ और लोग अपने अपने डेरे की तरफ रवाना हुए।

तीसरा बयान

दूसरे दिन मामूली ढंग पर दर्बार लगा और दलीपशाह ने इस तरह अपना हाल बयान करना शुरू किया :—

"कई दिन बीत गये मगर मुझे गिरजाकुमार का कुछ पता न लगा और न इस बात का ही ख्याल हुआ कि वह भूतनाथ के कब्जे में चला गया होगा। हां जब मैं गिरजाकुमार की खोज में सूरत बदल कर घूम रहा था तब इस बात का पता जरूर लग गया कि भूतनाथ मेरे पीछे पड़ा हुआ है और दारोगा से मिल कर मुझे गिरफ्तार करा देने का बन्दोबस्त कर रहा।

"उस मामले के कई सप्ताह बाद एक दिन आधी रात के समय भूतनाथ पागलों की सी हालत में मेरे घर आया और उसने मेरा लड़का समझ कर अपने हाथ से खुद अपने लड़के का खून किया जिसका रंज इस जिन्दगी में उसके दिल से नहीं निकल सकता और जिसका खुलासा हाल वह स्वयं अपनी जीवनी में बयान करेगा। इसी के थोड़े दिन बाद भूतनाथ की बदौलत मैं दारोगा के कब्जे में जा फँसा।

"जब तक मैं स्वतन्त्र रहा मुझे गिरजाकुमार का हाल कुछ भी मालूम न हुआ, जब मैं पराधीन हो कर कैदखाने में गया और वहां गिरजाकुमार से जिसे भूतनाथ ने दारोगा के सुपुर्द कर दिया था मुलाकात हुई तब गिरजाकुमार की जुबानी सब हाल मालूम हुआ।

"भूतनाथ के कब्जे में पड़ जाने के बाद जब गिरजाकुमार होश में आया तो उसने अपने को एक पत्थर के खम्भे के साथ बँधा हुआ पाया जो किसी सुन्दर सजे हुए कमरे के बाहरी दालान में था। वह चौकन्ना होकर चारो तरफ देखने और गौर करने लगा मगर इस बात का निश्चय न कर सका कि यह मकान किसका है, हां शक होता था कि यह दारोगा का मकान होगा क्योंकि अपने सामने भूतनाथ के साथ ही साथ बिहारीसिंह और दारोगा साहब को भी बैठे हुए देखा।

"गिरजाकुमार दारोगा बिहारीसिंह और भूतनाथ में देर तक तरह तरह की बातें होती रहीं और गिरजाकुमार ने भी अपनी बातों की उलझन में उन्हें ऐसा फँसाया कि किसी तरह असल भेद का वे लोग पता न लगा सके, मगर फिर भी गिरजाकुमार को उनके हाथों से छुट्टी न मिली और वह तिलिस्म के अन्दर वाले कैदखाने में ठूँस दिया गया, हां उसे इस बात का विश्वास जरूर हो गया कि वास्तव में राजा गोपालसिंह मरे नहीं बल्कि कैद कर लिये गये हैं।

"राजा गोपालसिंह के जीते रहने का हाल यद्यपि गिरजाकुमार को मालूम हो गया मगर इसका नतीजा कुछ भी न निकला, क्योंकि इस बात का पता लगने के साथ ही वह गिरफ्तार हो गया और यह हाल किसी से भी बयान न कर सका। अगर हम लोगों में से किसी को भी मालूम हो जाता कि वास्तव में राजा गोपालसिंह जीते हैं और कैद हैं, तो हम लोग उन्हें किसी न किसी तरह जरूर छुड़ा ही लेते, मगर अफसोस !!

"बहुत दिनों तक खोजने और पता लगाने पर भी जब गिरजाकुमार का कुछ हाल मालूम न हुआ तब लाचार होकर मैं इन्द्रदेव के पास गया और सब हाल बयान करने बाद मैंने इनसे सलाह पूछी कि अब क्या करना चाहिये। बहुत गौर करने के बाद इन्द्रदेव ने कहा कि मेरा दिल यही कहता है कि गिरजाकुमार गिरफ्तार हो गया और इस समय दारोगा के कब्जे में है। इसका पता इस तरह

लग सकता है कि तुम किसी तरह दारोगा को गिरफ्तार कर के ले आओ और उसकी सूरत बन कर दस पाँच दिन उसके मकान में रहो, इस बीच में उसके नौकरों की जुबानी कुछ न कुछ हाल गिरजाकुमार का जरूर मालूम हो जायगा, मगर इसमें कुछ शक नहीं कि दारोगा को गिरफ्तार करना जरा मुश्किल है।

"इन्द्रदेव की राय मुझे बहुत पसन्द आई और मैं दारोगा को गिरफ्तार करने की फिक्र में पड़ा। इन्द्रदेव से बिदा हो कर मैं अर्जुनसिंह के घर गया और जो कुछ सलाह हुई थी बयान किया। इन्होंने भी यह राय पसन्द की और इस काम के लिए मेरे साथ जमानिया चलने को तैयार हो गये, अस्तु हम दोनों आदमी भेष बदल कर घर से निकले और जमानिया की तरफ रवाना हुए।

"सन्ध्या हुआ ही चाहती थी जब हम दोनों आदमी जमानिया शहर के पास पहुँचे, उस समय सामने से दारोगा का एक सिपाही आता हुआ दिखाई पड़ा। हम लोग बहुत खुश हुए और अर्जुनसिंह ने कहा, लो भाई सगुन तो बहुत अच्छा मिला कि शिकार सामने आ पहुँचा और चारो तरफ सन्नाटा भी छाया हुआ है, इस समय इसे जरूर गिरफ्तार करना चाहिये, इसके बाद इसी की सूरत बन कर दारोगा के पास पहुँचना और उसे धोखा देना चाहिये।"

"हम दो आदमी थे और सिपाही अकेला था, ऐसी अवस्था में किसी तरह की चालबाजी की जरूरत न थी केवल तकरार कर लेना ही काफी था। हुज्जत और तकरार करने के लिये किसी मसाले की जरूरत नहीं पड़ती, जरा सा छेड़ देना ही काफी होता है। पास आने पर अर्जुनसिंह ने जान बूझ कर उसे धक्का दे दिया और वह भी दारोगा के घमण्ड पर फूला हुआ हम लोगों से उलझ पड़ा। आखिर हम लोगों ने उसे गिरफ्तर कर लिया और बेहोश कर के वहाँ से दूर एक सन्नाटे जंगल में ले जाकर उसकी तलाशी लेने लगे। उसके पास से भूतनाथ के नाम की एक चीठी निकली जो खास दारोगा के हाथ की लिखी हुई थी और उसमें यह लिखा हुआ था—

"प्यारे भूतनाथ,

कई दिन से हम तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। ठीक ठीक बताओ कि कब मुलाकात होगी और कब तक काम हो जाने की उम्मीद है।"

इस चीठी को पढ़ कर हम दोनों ने सलाह की कि इस आदमी को छोड़

देना चाहिये और इसके पीछे पीछे चल कर देखना चाहिये कि भूतनाथ कहाँ रहता है। इसका पता लग जाने से भी बहुत काम निकलेगा।

हम लोगों ने वह चीठी फिर उस आदमी के जेब में रख दी और उसे उठा कर पुनः उस सड़क पर लाके डाल दिया जहाँ उसे गिरफ्तार किया था। इसके बाद लखलखा सुंघा कर हम दोनों दूर हट कर आड़ में खड़े हो गये और देखने लगे कि यह होश में आ कर क्या करता है। उस समय रात आधी से ज्यादे जा चुकी थी।

होश में आने के बाद वह आदमी ताज्जुब और तरद्दुद में थोड़ी देर तक इधर उधर घूमता रहा और इसके बाद आगे की तरफ चल पड़ा। हम लोग भी आड़ देते हुए उसके पीछे पीछे चल पड़े।

आसमान पर सुबह की सुफेदी फैला ही चाहती थी जब हम लोग एक घने और सुहावने जंगल में पहुँचे। थोड़ी देर तक चल कर आदमी एक पत्थर की चट्टान पर बैठ गया। मालूम होता था कि थक गया है और कुछ देर तक सुस्ताना चाहता है, मगर ऐसा न था। लाचार हम दोनों भी उसके पास ही आड़ दे कर बैठ गये और उसी समय पेड़ों की आड़ में से कई आदमियों ने निकल कर हम दोनों को घेर लिया। उन सभों के हाथ में नंगी तलवारें और चेहरे पर नकाबें पड़ी हुई थीं।

बिना लड़े भिड़े यों ही गिरफ्तार होकर दुःख भोगना हम लोगों को मंजूर न था, अस्तु फुर्ती से तलवार खींच कर उन लोगों के मुकाबले में खड़े हो गये। उस समय एक ने अपने चेहरे पर से नकाब उलट दी और मेरे पास आ कर खड़ा हो गया। असल में वह भूतनाथ था जिसका चेहरा सुबह की सुफेदी में बहुत साफ दिखाई दे रहा था और मालूम होता था कि वह हम दोनों को देख कर मुस्कुरा रहा है।

भूतनाथ की सूरत देखते ही हम दोनों चौंक पड़े और मेरे मुँह से निकल पड़ा जिसके पीछे पीछे हम लोग वहाँ तक पहुँचे थे। देखा कि दो आदमी खड़े खड़े उससे बातें कर रहे हैं और हाथ के इशारे से मेरी तरफ कुछ बता रहे हैं।

मेरे मुँह से निकली हुई आवाज सुन कर भूतनाथ हँसा और बोला, "जी हाँ, वास्तव में मैं भूतनाथ हूँ, और आप लोग ?"

मैं० । हम दोनों गरीब मुसाफिर हैं ।

भूत० । (हँस कर) यद्यपि आप लोगों की तरह भूतनाथ अपनी सूरत नहीं बदला करता मगर आप लोगों को पहिचानने में किसी तरह की भूल भी नहीं कर सकता ।

मैं० । अगर ऐसा है तो आप ही बताइये हम लोग कौन हैं ?

भूत० । आप लोग दलीपशाह और अर्जुनसिंह हैं, जिन्हें मैं कई दिनों से खोज रहा हूँ ।

मैं० । (ताज्जुब के साथ) ठीक है, जब आपने पहिचान ही लिया तो मैं अपने को क्यों छिपाऊँ मगर यह तो बताइये कि आप मुझे क्यों खोज रहे थे ?

भूत० । इसीलिये कि मैं आपसे अपने कसूरों की माफी मांगूँ, आरजू मिन्नत और खुशामद के साथ अपने को आपके पैरों पर डाल दूँ, और कहूँ कि अगर जी में आवे तो अपने हाथ से मेरा सर काट लीजिये मगर एक दफे कह दीजिये कि मैंने तेरा कसूर माफ़ किया !

मैं० । बड़े ताज्जुब की बात है कि तुम्हारे दिल में यह बात पैदा हुई क्या तुम्हारी आँखें खुल गईं और मालूम हो गया कि तुम बहुत बुरे रास्ते पर चल रहे हो ?

भूत० । जी हाँ, मुझे मालूम हो गया और मैं समझ गया कि मैं अपने पैर में आप कुल्हाड़ी मार रहा हूँ ।

मैं० । बड़ी खुशी की बात है अगर यह तुम सच्चे दिल से कह रहे हो ।

भूत० । बेशक मैं सच्चे दिल से कह रहा हूँ और अपने किये पर मुझे बड़ा अफसोस है ।

मैं० । भला कह तो जाओ कि तुम्हें किन किन बातों का अफसोस है ?

भूत० । सो न पूछिये, सिर से पैर तक मैं कसूरवार हो रहा हूँ, एक दो हों तो कहा जाय, कहां तक गिनाऊँ ?

मैं० । खैर न सही, अच्छा यह बताओ कि मुझसे किस किस कसूर की माफी चाहते हो ? मेरा तो तुमने कुछ भी नहीं बिगाड़ा ।

भूत० । यह आपका बड़प्पन है जो आप ऐसा कहते हैं, मगर वास्तव में मैंने आपका बहुत बड़ा कसूर किया है । और बातों के अतिरिक्त मैंने आपके

सामने आपके लड़के को मार डाला है यह कहां का.....

मैं० । (बात काट कर) नहीं नहीं भूतनाथ ! तुम भूलते हो, अथवा तुम्हें मालूम नहीं है कि तुमने मेरे लड़के का खून नहीं किया बल्कि अपने लड़के का खून किया है ।

भूत० । (चौंक कर बेचैनी के साथ) यह आप क्या कह रहे हैं ?

मैं० । बेशक मैं सच कह रहा हूँ । इस कौम में तुमने धोखा खाया और अपने लड़के को अपने हाथ से मार डाला । उन दिनों तुम्हारी स्त्री बीमार होकर मेरे यहां आई हुई थी और अपनी आँखों से तुम्हारी इस कार्रवाई को देख रही थी ।

भूत० । घबराहट के साथ) तो क्या अब भी मेरी स्त्री आप ही के मकान में है !!

मैं० । नहीं, वह मर गई क्योंकि बीमारी में वह इस दुःख को बर्दाश्त न कर सकी ।

भूत० । (कुछ देर तक चुप रहने और सोचने के बाद,) नहीं नहीं, यह बात नहीं है । मालूम होता है कि तुमने खुद मेरे लड़के को मार कर अपने लड़के का बदला चुकाया !!

अर्जुन० । नहीं नहीं भूतनाथ ! वास्तव में तुमने खुद अपने लड़के को मारा है और इस बात को मैं खूब जानता हूँ ।

भूत० । (भारी आवाज से) खैर अगर मैंने अपने लड़के का खून किया है तब भी दलीपशाह का कसूरवार हूँ । इसके अतिरिक्त और भी कई कसूर मुझ से हुए हैं, अच्छा हुआ कि मेरी स्त्री मर गई नहीं तो उसके सामने.....

मैं० । मगर हरनामसिंह और कमला को ईश्वर कुशल पूर्वक रक्खें ।

भूत० । (लम्बी सांस लेकर) बेशक भूतनाथ बड़ा ही बदनसीब है !!

मैं० । अब भी सम्हल जाओ तो कोई चिन्ता नहीं ।

भूत० । बेशक मैं अपने को सम्हालूँगा और जो कुछ आप कहेंगे, वही करूँगा । अच्छा मुझे थोड़ी देर के लिये आज्ञा दीजिये तो मैं उस आदमी से दो दो बातें कर आऊँ जिसके पीछे पीछे आप यहां तक आये हैं ।

"इतना कह कर भूतनाथ उस आदमी के पास चला गया मगर उसके

साथी लोग हमें घेरे खड़े ही रहे। इस समय मेरे दिल का विचित्र हाल था। मैं निश्चय नहीं कर सकता था कि भूतनाथ की बातें किस ढंग पर जा रही हैं और इसका नतीजा क्या होगा, तथापि मैं इस बात के लिये तैयार था कि जिस तरह हो सकेगा मेहनत कर के भूतनाथ को अच्छे ढर्रे पर ले आऊँगा। मगर वास्तव में मैं ठगा गया और जो कुछ मैं सोचता था वह मेरी नादानी थी।

"उस आदमी से बातचीत करने में भूतनाथ ने बहुत देर नहीं लगाई और उसे झटपट बिदा कर के वह पुनः मेरे पास आकर बोला, "कम्बख्त दारोगा मुझसे चालबाजी करता है और मेरे ही हाथों से मेरे दोस्तों को गिरफ्तार कराना चाहता है।"

मैं०। दारोगा बड़ा ही शैतान है और उसके फेर में पड़ कर तुम बर्बाद हो जाओगे। अच्छा अब हमलोग भी बिदा होना चाहते हैं, यह बताओ कि तुमसे किस तरह की उम्मीद अपने साथ लेते जायँ?

भूत०। मुझसे आप हर तरह की उम्मीद कर सकते हैं, जो कुछ आप कहेंगे मैं वही करूँगा बल्कि आपके साथ ही साथ आपके घर चलूँगा।

मैं०। अगर ऐसा करो तो मेरी खुशी का कोई ठिकाना न रहे।

भूत०। बेशक मैं ऐसा ही करूँगा मगर पहिले आप यह बात दें कि आपने मेरा कसूर माफ किया।

मैं०। हां मैंने माफ किया।

भूत०। अच्छा तो अब आप मेरे डेरे पर चलिये।

मैं०। तुम्हारा डेरा कहां पर है?

भूत०। यहां से थोड़ी ही दूर पर।

मैं०। खैर चलो मैं तैयार हूँ, मगर इस बात का वादा कर लो कि लौटती समय तुम मेरे साथ चलोगे।

भूत०। जरूर चलूँगा।

"इतना कह कर भूतनाथ चल पड़ा और हम दोनों भी उसके पीछे पीछे रवाना हुए।

"आप लोग ख़याल करते होंगे कि भूतनाथ ने हम दोनों को उसी जगह क्यों नहीं गिरफ्तार कर लिया मगर यह बात भूतनाथ के किये नहीं हो सकती

थी। यद्यपि उसके साथ कई सिपाही या नौकर भी मौजूद थे मगर फिर भी वह इस बात को खूब समझता था कि इस खुले मैदान में दलीपशाह और अर्जुनसिंह को एक साथ गिरफ्तार कर लेना उसकी सामर्थ से बाहर है। साथ ही इसके यह भी कह देना जरूरी है कि उस समय तक भूतनाथ को इस बात की खबर न थी कि उसके बटुए को चुरा लेने वाला यही अर्जुनसिंह है। उस समय तक क्या बल्कि अब तक भूतनाथ को इस बात की खबर न थी। उस दिन जब स्वयम् अर्जुनसिंह ने अपनी जुबान से कहा तब मालूम हुआ।

"कोस भर से ज्यादे हम लोग भूतनाथ के पीछे पीछे चले गये और इसके बाद एक भयानक सुनसान और उजाड़ घाटी में पहुँचे जो दो पहाड़ियों के बीच में थी। वहां से कुछ दूर तक घूमघूमौवे रास्ते पर चल कर भूतनाथ के डेरे पर पहुँचे। वह एक ऐसा स्थान था जिस खोह में भूतनाथ का डेरा था वह बहुत बड़ी और बीस पचीस आदमियों के रहने लायक थी और वास्तव में इतने ही आदमियों के साथ वह वहां रहता भी था।

"वहां भूतनाथ ने हम दोनों की बड़ी खातिर की और बार बार आजिजी करता और माफी माँगता रहा। खाने पीने का सब सामान वहां मौजूद था अस्तु इशारा पा कर भूतनाथ के आदमियों ने तरह तरह का खाना बनाना आरम्भ कर दिया और कई आदमी नहाने धोने का सामान दुरुस्त करने लगे।

"हम दोनों बहुत प्रसन्न थे और समझते थे कि अब भूतनाथ ठीक रास्ते पर आ जायगा, अस्तु हम लोग जब तक स्नान सन्ध्या पूजन से निश्चिन्त हुए तब तक भोजन भी तैयार हुआ और बेफिक्री के साथ हम तीनों आदमियों ने एक साथ भोजन किया। इसके बाद निश्चिन्तो से बैठ कर बातचीत करने लगे।

भूत०। दलीपशाह! मुझे इस बात का बड़ा ही दुःख है कि मेरी स्त्री का देहान्त हो गया और मेरे हाथ से एक बहुत ही बुरा काम हो गया।

मैं०। बेशक अफसोस की जगह है, मगर खैर जो कुछ होना था हो गया, अब तुम घर पर चलो और नेकनीयती के साथ दुनिया में काम करो।

भूत०। ठीक है, मगर मैं यह सोचता हूँ कि अब घर जाने से फायदा ही क्या है? मेरी स्त्री मर गई और अब दूसरी शादी मैं कर ही नहीं सकता, फिर किस सुख के लिए चल कर बसूँ?

मैं० । हरनामसिंह और कमला का भी तो कुछ खयाल करना चाहिये इसके अतिरिक्त क्या रण्डे लोग शहर में रह कर नेकनीयती के साथ रोजगार नहीं करते ?

भूत० । कमला और हरनामसिंह होशियार हैं और एक अच्छे रईस के यहां परवरिश पा रहे हैं, इसके अतिरिक्त किशोरी उन दोनों की सहायक है, अतएव उनके लिए मुझे किसी तरह की चिन्ता नहीं है। बाकी रही आपकी दूसरी बात, उसका जवाब यह हो सकता है कि शहर में नेकनीयती के साथ अब मैं कर ही क्या सकता हूँ क्योंकि मैं तो किसी को मुँह दिखलाने लायक ही नहीं रहा। एक दयाराम वाली वारदात ने मुझे बेकाम कर दिया था, दूसरे इस लड़के के खून ने मुझे और भी बर्बाद कर दिया, अब मैं कौन सा मुँह लेकर भले आदमियों में बैठूँगा ?

मैं० । ठीक है, मगर इन दोनों मामलों की खबर हम लोग दो तीन खास खास आदमियों के सिवाय और किसी को नहीं है और हम लोग तुम्हारे साथ कदापि बुराई नहीं कर सकते।

भूत० । तुम्हारी इन बातों पर मुझे विश्वास नहीं हो सकता क्योंकि मैं इस बात को खूब जानता हूँ कि आज कल तुम मेरे साथ दुश्मनी का बर्ताव कर रहे हो और मुझे दारोगा के हाथ में फँसाया चाहते हो, ऐसी अवस्था में तुमने मेरा भेद जरूर कई आदमियों को कह दिया होगा।

मैं० । नहीं भूतनाथ ! यह तुम्हारी भूल है कि तुम ऐसा सोच रहे हो ! मैंने तुम्हारा भेद किसी को नहीं कहा और न मैं तुम्हें दारोगा के हवाले किया चाहता हूँ। बेशक दारोगा ने मुझे इस काम के लिए लिखा था मगर मैंने इस बारे में धोखा दिया। दारोगा के हाथ की लिखी चीठियां मेरे पास मौजूद हैं, घर चल कर मैं तुम्हें दिखाऊँगा और उनसे तुम्हें मेरी बातों का पूरा पूरा सबूत मिल जायगा।

इस समय बात करते करते मुझे कुछ नशा सा मालूम हुआ और मेरे दिल में एक प्रकार का खुटका हो गया। मैंने घूम कर अर्जुनसिंह की तरफ देखा तो उसकी भी आँखें लाल अँगारे की तरह दिखाई पड़ीं। उसी समय भूतनाथ मेरे पास से उठ कर दूर जा बैठा और बोला :—

भूत० । जब मैं तुम्हारे घर जाऊँगा तब मुझे इस बात का सबूत मिलेगा

मगर मैं इसी समय तुम्हें इस बात का सबूत दे सकता हूँ कि तुम मेरे साथ दुश्मनी कर रहे हो।

"इतना कह के भूतनाथ ने अपने जेब से निकाल कर मेरे हाथ की लिखी वे चीठियां मेरे सामने फेंक दीं जो मैंने दारोगा को लिखी थीं और जिसमें भूतनाथ के गिरफ्तार करा देने का वादा किया था।

"मैं सरकार में बयान कर चुका हूँ कि उस समय दारोगा से इस ढंग का पत्र व्यवहार करने से मेरा मतलब क्या था और मैंने भूतनाथ को दिखाने के लिये दारोगा के हाथ चीठियाँ बटोर कर किस तरह दारोगा से साफ इन्कार कर दिया था, मगर उस मौके पर मेरे पास वे चीठियाँ मौजूद न थीं कि मैं भूतनाथ को दिखाता और भूतनाथ के पास चीठियां मौजूद थीं जो दारोगा ने उसे दी थीं और जिनके सबब से दारोगा का मन्त्र चल गया था। अस्तु उन चीठियों को देख कर मैंने भूतनाथ से कहा :—

मैं०। हाँ हाँ, इन चीठियों को मैं जानता हूँ, बेशक ये मेरे हाथ की लिखी हुई हैं, मगर मेरे इस लिखने का मतलब क्या था और इन चीठियों से मैंने क्या काम निकाला सो तुम्हें नहीं मालूम हो सकता जब तक कि दारोगा के हाथ की लिखी चीठियाँ न पढ़ लो जो मेरे घर पर मौजूद हैं।

भूत०। (मुस्कुरा कर) बस बस! ये सब धोखेबाजी के ढर्रे रहने दीजिये!! भूतनाथ से यह चालाकी न चलेगी, सच तो यों है कि मैं खुद कई दिनों से तुम्हारी खोज में हूँ। इत्तिफाक से तुम स्वयम् मेरे पंजे में आकर फँस गये और अब किसी तरह नहीं निकल सकते। उस जंगल में मैं तुम दोनों को काबू में नहीं कर सकता था इस लिए सब्ज बाग दिखलाता हुआ यहाँ ले आया और भोजन में बेहोशी की दवा खिला कर बेकाम कर दिया। अब तुम लोग मेरा कुछ भी नहीं कर सकते, समझ लो कि अब तुम दोनों जहन्नुम में भेजे जाओगे जहाँ से लौट कर आना मुश्किल है।

"भूतनाथ की ऐसी बातें सुन कर हम दोनों को क्रोध चढ़ आया मगर उठने की कोशिश करने पर भी कुछ कर न सके क्योंकि नशे का पूरा पूरा असर हो गया था और तमाम बदन में कमजोरी आ गई थी।

"थोड़ी देर के बाद हम लोग बेहोश हो गये और फिर तनोबदन की सुध

न रही। जब आँखें खुलीं तो अपने को दारोगा के मकान में कैद पाया और सामने दारोगा जैपाल हरनामसिंह और बिहारीसिंह को बैठे हुए देखा। रात का समय था और मेरे हाथ पैर एक खम्भे के साथ बंधे हुए थे। अर्जुनसिंह न मालूम कहां थे और उन पर क्या बीत रही थी।

दारोगा ने मुझसे कहा, "कहो दलीपशाह! तुमने तो मुझ पर बड़ा जाल फैलाया था मगर नतीजा कुछ नहीं निकला!"

मैं०। मैंने क्या जाल फैलाया था?

दारोगा०। क्या इसके कहने की भी जरूरत है? नहीं बस इस समय हम इतना ही कहेंगे कि तुम्हारा शागिर्द हमारी कैद में है और तुमने मेरे लिये जो कुछ किया है उसका हाल हम उसकी जुबानी सुन चुके हैं। अब अगर वह चीठी मुझे दे दो जो गोपालसिंह के बारे में मनोरमा का नाम ले कर जबरदस्ती मुझसे लिखवाई गई थी तो मैं तुम्हारा सब कसूर माफ कर दूँ।

मैं०। मेरी समझ में नहीं आता कि आप किस चीठी के बारे में मुझसे कह रहे हैं?

दारोगा०। (चिढ़ कर) ठीक है, यह तो मैं पहिले ही समझे हुए था कि तुम बिना लात खाये नाक पर मक्खी नहीं बैठने दोगे, खैर देखो मैं तुम्हारी क्या दुर्दशा करता हूँ!!

"इतना कह कर दारोगा ने मुझे सताना शुरू किया। मैं नहीं कह सकता कि इसने मुझे किस किस तरह की तकलीफें दीं और सो भी एक दो दिन तक नहीं बल्कि महीने भर तक, इसके बाद बेहोश करके मुझे तिलिस्म के अन्दर पहुँचा दिया। जब मैं होश में आया तो अपने सामने अर्जुनसिंह और गिरजाकुमार को बैठे हुए पाया बस यही तो मेरा किस्सा है और यही मेरा बयान!"

दलीपशाह का हाल सुन कर सभों को बड़ा ही दुःख हुआ और सभी कोई लाल लाल आंखें करके दारोगा तथा जयपाल वगैरह की तरफ देखने लगे। दर्बार बरखास्त करने का इशारा करके महाराज उठ खड़े हुए। कैदी जेलखाने भेज दिये गये और बाकी सब लोग अपने अपने डेरों की तरफ रवाना हुए।

रात आधी से कुछ ज्यादे जा चुकी है। महाराज सुरेन्द्रसिंह के कमरे में राजा बीरेन्द्रसिंह, राजा गोपालसिंह, कुंअर इन्द्रजीतसिंह, आनन्दसिंह, तेजसिंह,

देवीसिंह, तारासिंह, भैरोसिंह, भूतनाथ और इन्द्रदेव बैठे आपुस में धीरे धीरे बातें कर रहे हैं। वृद्ध महाराज सुरेन्द्रसिंह मसहरी पर लेटे हुए हैं।

सुरेन्द्र०। दलीपशाह की जीवनी ने दारोगा की शैतानी और भी अच्छी तरह झलका दी।

जीत०। बेशक ऐसी ही है, सच तो यों है कि ईश्वर ही ने इन पांचों कैदियों की रक्षा की, नहीं तो दारोगा ने कोई बात उठा नहीं रक्खी थी।

भूत०। साथ ही इसके यह भी है कि सब से ज्यादे दलीपशाह के किस्से ने दर्बार में मुझे शरमिन्दा किया, मगर क्या करूँ लाचार था कि चालबाज दारोगा ने दलीपशाह की चीठियों का मुझे ऐसा मतलब समझाया कि मैं अपने आपे से बाहर हो गया, बल्कि यों कहना चाहिये कि अन्धा हो गया।

तेज०। वह जमाना ही चालबाजियों का था और चारो तरफ ऐसी ही बातें हो रही थीं। भूतनाथ, तुम अब उन बातों को एक दम से भूल जाओ और जिस नेक रास्ते पर चल रहे हो उसी का ध्यान रक्खो।

जीत०। अच्छा तो अब कैदियों के बारे में जो कुछ हो फैसला कर ही देना चाहिये जिसमें अगले दर्बार में उन्हें हुक्म सुना दिया जाय।

सुरेन्द्र०। (गोपालसिंह से) कहो साहब तुम्हारी क्या राय है किस किस कैदी को क्या क्या सजा देनी चाहिये?

गोपाल०। जो दादाजी (महाराज) की इच्छा हो हुक्म दें, मेरी प्रार्थना केवल इतनी ही है कि कम्बख्त दारोगा मेरे हवाले किया जाय और मुझे हुक्म हो कि जो मैं चाहूँ उसे सजा दूँ।

सुरेन्द्र०। केवल दारोगा ही नहीं बल्कि तुम्हारे और कैदी भी तुम्हारे हवाले किये जायँगे।

गोपाल०। और दलीपशाह, अर्जुनसिंह, भरतसिंह, हरदीन और गिरजाकुमार भी मुझे दे दिये जायँ क्योंकि ये लोग मेरे सहायक हैं और इनके साथ रह कर मेरा दिन बड़ी खुशी के साथ बीतेगा।

सुरेन्द्र०। (जीतसिंह से) ऐसा ही किया जाय।

जीत०। बहुत अच्छा, मैं नम्बरदार कैदियों के बारे में जो कुछ हुक्म होता है लिखता जाता हूँ।

इतना कह कर जीतसिंह ने कलम दावात और कागज ले लिया और महाराज की आज्ञानुसार इस तरह लिखने लगे :—

(१) कम्बख्त दारोगा सजा पाने के लिये राजा गोपालसिंह के हवाले किया जाय, राजा साहब जो मुनासिब समझें उसे सजा दें।

(२) शिखण्डी (दारोगा का चचेरा भाई), गयाप्रसाद, जैपाल, हरनामसिंह, बिहारीसिंह, हरनामसिंह की लड़की, लीला, मनोरमा, नागर, बेगम, नौरतन और जमालो वगैरह भी जिन्हें जमानिया से घना सम्बन्ध है राजा गोपालसिंह के हवाले कर दिये जायँ।

(३) बेगम के घर से निकली हुई दौलत जो काशीराज ने यहाँ भेजवा दी है, बलभद्रसिंह को दे दी जाय।

(४) गौहर और गिल्लन शेरअलीखाँ के पास भेज दी जायँ।

(५) किशोरी से पूछ कर भीमसेन छोड़ दिया जाय और उसे पुनः शिवदत्तगढ़ की गद्दी पर बैठाया जाय।

(६) कुबेरसिंह, बाकरअली, अजायबसिंह, खुदाबक्श, यारअली, धरमसिंह, गोविन्दसिंह, भगवनियाँ, ललिता और धन्नूसिंह तथा वे कैदी जो कमलिनी के तालाब वाले मकान से आये थे सब जन्म भर के लिए कैदखाने में भेज दिये जायँ। इनके अतिरिक्त और भी जो कोई कैदी हो, (नानक इत्यादि) कैदखाने में भेज दिये जायँ।

(७) दलीपशाह, अर्जुनसिंह, हरदीन, भरथसिंह और गिरजाकुमार को राजा गोपालसिंह ले जायँ और इन सभों को बड़ी खातिर और आराम के साथ रक्खें।

कैदियों के विषय में इस तरह का हुक्म दे कर महाराज चुप हो गये और फिर आपुस में दूसरे ढंग की बातें होने लगीं थोड़ी देर बाद दरबार बरखास्त हुआ और सब कोई अपने अपने ठिकाने चले गये।

पाँचवाँ बयान

कुँअर इन्द्रजीतसिंह इस छोटे से दर्बार से उठ कर महल में गये और किशोरी के कमरे में पहुँचे। इस समय कमलिनी भी उसी कमरे में मौजूद

किशोरी से हँसी खुशी की बातें कर रही थी। कुमार को देख कर दोनों उठ खड़ी हुईं और जब हँसते हुए कुमार बैठ गये तो किशोरी भी उनके सामने बैठ गई मगर कमलिनी कमरे के बाहर की तरफ चल पड़ी। उस समय कुमार ने उसे रोका और कहा, "तुम कहां चलीं? बैठो बैठो, इतनी जल्दी क्या पड़ी है?"

कम०। (बैठती हुई) बहुत अच्छा बैठती हूँ, मगर क्या आज रात को सोना नहीं है?

कुमार०। क्या यह बात मेरे आने के पहिले नहीं सूझी थी?

किशोरी०। आपको देख के सोना याद आ गया।

किशोरी की बात ने दोनों को हँसा दिया और फिर कमलिनी ने कहा:—

कमलिनी०। दलीपशाह के किस्से ने मेरे दिल पर ऐसा असर किया है कि मैं कह नहीं सकती। देखा चाहिये दुष्टों को महाराज क्या सजा देते हैं। सच तो यों है कि उनके लिए कोई सजा है ही नहीं।

कुमार०। तुम ठीक कहती हो, इस समय मैं महाराज के पास ही से चला आता हूँ, वहां एक छोटा सा निज का दर्बार लगा हुआ था और कैदियों ही के विषय में बातचीत हो रही थी, बल्कि यों कहना चाहिये कि उन बदमाशों का फैसला लिखा जा रहा था।

कमलिनी०। (उत्कण्ठा से) हां! अच्छा बताइये तो सही दारोगा और जयपाल के लिये क्या सजा तजवीज की गई?

कुमार०। उन्हें क्या सजा दी जायगी इसका निश्चय गोपालभाई करेंगे क्योंकि महाराज ने इस समय यही हुक्म लिखाया है कि दारोगा, जयपाल, शिखण्डी, हरनाम, बिहारी, मनोरमा और नागर वगैरह जितने जमानिया और गोपाल भाई से सम्बन्ध रखने वाले कैदी हैं सब उनके हवाले किये जायँ और वे जो कुछ मुनासिब समझें उन्हें सजा दें।

कमलिनी०। चलिये यह भी अच्छा ही हुआ क्योंकि मुझे इस बात का बहुत बड़ा खयाल बना हुआ था कि हमारे रहमदिल महाराज इन कैदियों के लिये कोई अच्छी सजा नहीं तजबीज कर सकेंगे, अगर वे लोग जीजाजी के सुपुर्द किये गये हैं तो उन्हें सजा भी वाजिब ही मिल जायगी।

कुमार० । (हँस कर) अच्छा तुम ही बताओ कि अगर सजा देने के लिये सब कैदी तुम्हारे सुपुर्द किये जाते तो तुम उन्हें क्या सजा देतीं ?

कमलिनी० । मैं ? (कुछ सोच कर) मैं पहिले तो इन सभों के हाथ पैर कटवा डालती, फिर इनके जख्म आराम करवा कर बड़े बड़े लोहे के पिंजड़ों में इन्हें बन्द कराती और सदर चौमुहानी पर लटकवा कर हुक्म देती कि जितने आदमी इस राह से आवें जावें वे सब इनके मुँह पर थूक कर तब आगे बढ़ें ।

कुमार० । (मुस्कुरा कर) सजा तो बहुत अच्छी सोची है, तो बस अपने जीजा साहब को समझा देना कि उन्हें ऐसी ही सजा दें ।

कमलिनी० । कहूँगी बल्कि इस बात पर जोर दूँगी, यह बताइये कि नानक के लिये क्या हुक्म हुआ है ?

कुमार० । केवल इतना ही कि जन्म भर के लिये कैदखाने में भेज दिया जाये । बाकी के और कैदियों के लिये भी यही हुक्म हुआ है !

किशोरी० । भीमसेन के लिये भी यही हुक्म हुआ होगा ?

कुमार० । नहीं उसके लिये दूसरा ही हुक्म हुआ है ।

किशोरी० । वह क्या ?

कुमार० । वह तुम्हारा भाई है इसलिये हुक्म हुआ है कि तुमसे पूछ कर वह एक दम छोड़ दिया जाय बल्कि शिवदत्तगढ़ की गद्दी पर बैठा दिया जाय ।

किशोरी० । जब छोड़ देने ही का हुक्म हुआ है तो मुझसे पूछना कैसा ?

कुमार० । यही कि शायद तुम उसे छोड़ना न चाहो तो कैद ही में रक्खा जाय ।

किशोरी० । भला मैं इस बात को कब पसन्द करूँगी कि मेरा भाई जन्म भर के लिये कैद रहे ? मगर हां इतना खयाल जरूर है कि कहीं वह छूटने के बाद पुनः आप से दुश्मनी न करे ।

कुमार० । खैर अगर पुनः बदमाशी करेगा तो देखा जायगा ।

कमलिनी० । (मुस्कुराती हुई) उसके विषय में तो चपला चाची से पूछना चाहिये क्योंकि वह असल में उन्हीं का कैदी है । जब सूअर के शिकार में उन्होंने उसे गिरफ्तार किया था* तो तरह तरह की कसमें खिला कर छोड़ा

* हिस्सा पहिला बयान आठवाँ देखिये ।

था कि भविष्य में पुनः दुश्मनी पर कमर न बांधे।

कुमार०। बात तो ऐसी ही थी मगर नहीं अब वह दुश्मनी का बर्ताव न करेगा। (किशोरी से) और कहो तो तुम्हारे पास उसे बुलवाऊँ? जो कुछ तुम्हें कहना सुनना हो कह सुन लो।

किशोरी०। नहीं नहीं नहीं, मैं बाज आई, मैं स्वप्न में भी उससे मिलना नहीं चाहती, जो कुछ उसकी किस्मत में बदा होगा भोगेगा।

कुमार०। आखिर उसे छोड़ने के विषय में तुमसे पूछा जायगा तो क्या जवाब दोगी?

किशोरी०। (कमलिनी की तरफ देख कर और मुस्कुरा कर) बस कह दूँगी कि मेरे बदले में चपला चाचा से पूछ लिया जाय क्योंकि वह उन्हीं का कैदी है।

कुमार०। खैर इन बातों को जाने दो। (कमलिनी से) जमानिया तिलिस्म के अन्दर मायारानी और माधवी के मरने का सबब मुझे अभी तक मालूम न हुआ। इसका पता न लगा कि वे दोनों खुद मर गईं या गोपाल भाई ने उन्हें मार डाला! और अगर भाई साहब ही ने उन्हें मार डाला तो क्यों ऐसा किया?

कमलिनी०। इसका असल हाल तो मुझे भी मालूम नहीं है, मैंने दो दफे जीजाजी से इस विषय में पूछा था मगर वह बात टाल कर बतोला दे गये।

कुमार०। मैंने भी एक दफे उनसे पूछा था तो यह कह कर रह गये कि फिर कभी बता देंगे।

किशोरी०। बहिन लक्ष्मीदेवी को इसका हाल जरूर मालूम होगा।

कमलिनी०। हां उन्हें बेशक मालूम, उन्होंने भुलावा देकर जरूर पूछ लिया होगा। इस समय तो वे अपने रङ्गमहल में होंगी नहीं तो मैं जरूर बुला लाती।

कुमार०। नहीं आज तो अकेली ही अपने कमरे में बैठी होंगी क्योंकि इस समय गोपाल भाई इन्द्रदेव को साथ लेकर कहीं बाहर गये हैं, मुझसे कह गये हैं कि कल पहर दिन चढ़ते तक आवेंगे।

कमलिनी०। तब तो कहिये मैं जाकर बुला लाऊँ?

कुमार०। अच्छा जाओ।

कमलिनी उठ कर चली गई और थोड़ी ही देर में लक्ष्मीदेवी को साथ लिये हुए आ पहुँची।

लक्ष्मी०। (मुस्कुराती हुई) कहिये क्या है जो इतनी रात गये मेरी याद हुई है ?

कुमार०। मैंने सोचा कि आज आप अकेली उदास बैठी होंगी अतएव मैं ही बुला कर आपका दिल खुश करूँ।

लक्ष्मी०। (हँस कर) क्या बात है ! बेशक आपकी मेहरबानी मुझ पर बहुत ज्यादे रहती है ! (बैठ कर) यह बताइये कि आप लोगों में किसी तरह की हुज्जत तकरार तो नहीं हुई है जो मुझे फैसला करने के लिये बुलाये हो।

कुमार०। ईश्वर न करे ऐसा हो, हां इतना जरूर है कि माधवी और मायारानी की मौत के विषय में तरह तरह की बातें हो रही हैं क्योंकि उन दोनों के मरने का असल हाल तो किसी को मालूम नहीं है और न भाई साहब ने पूछने पर किसी को बताया ही है इसलिये आपको तकलीफ दी है क्योंकि मुझे पूरा विश्वास है कि आपने किसी न किसी तरह यह हाल उनसे जरूर ही पूछ लिया होगा।

लक्ष्मी०। (मुस्कुरा कर) बेशक बात तो ऐसी ही है मैंने जिद्द करके किसी न किसी तरह उनसे पूछ तो लिया मगर सुनने से घृणा हो गई। इसी लिये वे भी यह हाल किसी से खुल कर नहीं कहते और समझते हैं कि जो कोई सुनेगा उसी को घृणा होगी। इसी ख्याल से आपको भी उन्होंने टाल दिया।

कुमार०। आखिर उसमें बात क्या है, कुछ भी बताओ !

लक्ष्मी०। माधवी को तो उन्होंने नहीं मारा मगर मायारानी को जरूर मारा और इस बेइज्जती और तकलीफ से मारा कि सुनने से रोंगटे खड़े होते हैं। यद्यपि माधवी को उन्होंने कुछ भी नहीं कहा मगर मायारानी के मौत की कार्रवाई वह देख न सकी जो उसके सामने की जाती थी और उसी डर से वह बेहोश हो कर मर गई। इसमें कोई ऐसी अनूठी बात नहीं है जो सुनने लायक हो। मुझे वह हाल बयान करते लज्जा और घृणा मालूम होती है अस्तु.....

कुमार०। बस बस, मैं समझ गया, इससे ज्यादे सुनने की मुझे कोई जरूरत नहीं है, केवल इतना ही जानना था कि उनकी मौत के विषय में कोई अनूठी बात तो नहीं हुई है।

लक्ष्मी०। जी नहीं। अच्छा यह तो बताइये कि कल कैदी लोगों के विषय में क्या किया जायगा ? दलीपशाह का किस्सा तो समाप्त हो गया और अब

कोई ऐसी बात मालूम करने लायक भी नहीं रह गई है।

कुमार०। कैदियों का मामला तो कब का साफ हो गया, इस समय तो महाराज ने उनके विषय में हुक्म भी लिखा दिया है जो कल या परसों के दरबार में सभों को सुना दिया जायगा।

लक्ष्मी०। किस किस के लिये क्या क्या हुक्म हुआ है?

इसके जवाब में कुमार ने फैसले का सब हाल बयान किया जो थोड़ी देर पहिले किशोरी और कमलिनी को सुना चुके थे।

लक्ष्मी०। बहुत अच्छा फैसला हुआ है।

किशोरी०। (हँस कर) क्यों न कहोगी! तुम्हारे दुश्मन तुम्हारे कब्जे में दे दिये गये, अब तो दिल खोल कर बदला लोगी!!

लक्ष्मी०। बेशक! (कुमार से) हां यह तो बताइये कि भूतनाथ ने अपनी जीवनी लिख कर दे दी या नहीं?

कुमार०। नहीं, आज देने वाला है।

लक्ष्मी०। और हम लोगों को उस तिलिस्मी मकान का तमाशा कब दिखाया जायगा जिसमें लोग हँसते हँसते कूद पड़ते हैं?

कुमार०। परसों या कल उसका भेद भी सभों पर खुल जायगा।

लक्ष्मी०। अच्छा यह तो बताइये कि आपके भाई साहब कहां गये हैं?

किशोरी०। (हँस कर, ताने के ढंग पर) आखिर रहा न गया! पूछे बिना जी न माना!

इतने ही में बाहर की तरफ से आवाज आई, "इसमें भी क्या किसी का इजारा है? ये अपनी चीज की खबरदारी करती हैं किसी दूसरे की जमा नहीं छीनतीं! बहुत दिनों के बाद जो खोई हुई चीज मिलती है उसके लिए अकारण भी पुनः खो जाने का खटका बना ही रहता है, इसलिए अगर इन्होंने पूछा तो बुरा ही क्या किया!"

इस आवाज के साथ ही साथ कमला पर सभों की निगाह पड़ी जो मुस्कुराती हुई कमरे के अन्दर आ रही थी।

किशोरी०। (हँसती हुई) यह आई लक्ष्मी बहिन की तरफदार बीबी नक्को, तुमको यहाँ किसने बुलाया था?

कमला० । (मुस्कुराती हुई) बुलावेगा कौन ? क्या मेरा रास्ता देखा हुआ नहीं है ? यह तो बताओ कि तुम लोग इस आधी रात के समय इतना गुल-शोर क्यों मचा रही हो !

किशोरी० । (मसखरेपन के साथ हाथ जोड़ कर) जी हम लोगों को इस बात की खबर न थी कि इस शोर गुल से आपकी नींद उचट जायगी और फिर सादी चारपाई पर पड़े रहना मुश्किल होगा ।

कुमार० । यह क्यों नहीं कहतीं कि अकेले जी नहीं लगता, लोगों को खोजती फिरती हूँ ।

कमला० । जी हां, आप ही को तो खोज रही थी !

कुमार० । अच्छा तो फिर आओ बैठ जाओ और समझ लो कि मैं मिल गया ।

कमला० । (बैठ कर किशोरी से) आज तुम्हें कोई आराम न करने देगा ! (कुमार से) कहिये दलीपशाह का किस्सा तो खतम हो गया, अब कैदियों को कब सजा दी जायगी ?

कुमार० । कैदियों का फैसला हो गया, उसमें किसी को ऐसी सजा नहीं दी गई जो तुम्हारे पसन्द हो ।

इतना कह कर कुमार ने पुनः सब हाल बयान किया ।

कमला० । तो मैं बहिन लक्ष्मीदेवी के साथ जरूर जमानिया जाऊँगी और दारोगा वगैरह की दुर्दशा अपनी आंखों से देखूँगी ।

थोड़ी देर तक इसी तरह की हँसी दिल्लगी होती रही, इसके बाद लक्ष्मी-देवी, कमलिनी और कमला अपने अपने ठिकाने चली गईं ।

छठवाँ बयान

सुबह की सुफेदी आसमान पर फैला ही चाहती है और इस समय की दक्षिणी हवा जंगली पेड़ों और पौधों लताओं और पत्तों से हाथा पाई करती हुई मैदान की तरफ दौड़ी जाती है । भूतनाथ और देवीसिंह हाथ में हाथ दिये जंगल के किनारे किनारे मैदान में टहल रहे हैं और धीरे धीरे हँसी दिल्लगी की बातें करते जाते हैं ।

देवीसिंह० । भूतनाथ ! लो इस समय एक नई और मजेदार बातें सुनाते हैं !

भूत०। वह क्या ?

देवी०। फायदे की बात है, अगर तुम कोशिश करोगे तो लाख दो लाख रुपया मिल जायगा।

भूत०। ऐसा कौन सा उद्योग है जिसके करने से सहज ही इतनी बड़ी रकम हाथ लग जायगी ? और अगर इस बात को तुम जानते ही हो तो खुद क्यों नहीं उद्योग करते ?

देवी०। मैं भी उद्योग करूंगा मगर यह कोई जरूरी बात नहीं है कि जिसका जी चाहे उद्योग करके लाख दो लाख पा जाय, हां जिसका जेहन लड़ जायगा और जिसकी अक्ल काम कर जायगी वह बेशक अमीर हो जायगा। मैं जानता हूँ कि हम लोगों से तुम्हारी तबीयत बड़ी तेज है और तुम्हें बहुत दूर की सूझा करती है इसलिये कहता हूँ कि अगर तुम उद्योग करोगे तो लाख दो लाख रुपया पा जाओगे। यद्यपि हम लोग सदा ही अमीर बने रहते हैं और रुपये पैसे की कुछ परवाह नहीं करते, मगर फिर भी यह रकम थोड़ी नहीं है और तिस पर बाजी के ढङ्ग पर जीतना ठहरा, इसलिये ऐसी रकम के पाने से खुशी होती है।

भूत०। आखिर वह बात क्या है कुछ कहो तो सही ?

देवी०। बात यही है कि वह तिलिस्मी मकान बनाया गया है जिसके अन्दर हम लोग हँसते हँसते कूद पड़ते हैं, उसके विषय में महाराज ने रात को हुक्म दिया है कि तिलिस्मी मकान के ऊपर सर्वसाधारण लोग तो चढ़ चुके और किसी को कामयाबी नहीं हुई, अब कल हमारे ऐयार लोग उस पर चढ़ कर अपनी अक्ल का नमूना दिखावें और इनके लिए इनाम भी दूना कर दिया जाय। मगर इस काम में चार आदमी शरीक न किये जायँ, एक जीतसिंहजी, दूसरे तेजसिंह, तीसरे भैरो, चौथे तारा।

भूत०। बात तो बहुत अच्छी हुई, कई दिनों से मेरे दिल में गुदगुदी हो रही थी कि किसी तरह इस मकान के ऊपर चढ़ना चाहिये मगर महाराज की आज्ञा बिना ऐसा कब कर सकता था। मगर यह तो कहो कि उन चारों के लिए मनाही क्यों कर दी गई ?

देवी०। इसलिए कि उन्हें इसका भेद मालूम है।

भूत० । यों तो तुमको भी कुछ न कुछ भेद मालूम ही होगा क्योंकि एक दफे तुम भी ऐसे ही मकान के अन्दर जा चुके हो जब शेरसिंह भी तुम्हारे साथ थे ।

देवी० । ठीक है मगर इससे क्या असल भेद का पता लग सकता है ? अगर ऐसा ही हो तो इस जलसे में हजारों आदमी उस मकान के अन्दर गये होंगे, किसी को दोहरा के जाने की मनाही तो थी नहीं, कोई पुनः जाकर जरूर बाजी जीत ही लेता ।

भूत० । आखिर उसमें है क्या ?

देवी० । सो मुझे नहीं मालूम, हां दो दिन के बाद वह भी मालूम हो जायगा ।

भूत० । पहिली दफे जब तुम ऐसे ही मकान के अन्दर कूदे थे तो उसमें क्या देखा था और हँसने की क्या जरूरत पड़ी थी ?

देवी० । अच्छा उस समय जो कुछ हुआ था सो मैं तुमसे बयान करता हूँ क्योंकि अब उसका हाल कहने में कोई हर्ज नहीं है । जब मै कमन्द लगा कर दीवार के ऊपर चढ़ गया तो ऊपर से दीवार बहुत चौड़ी मालूम हुई और इस सबब से बिना दीवार पर गये भीतर की कोई चीज दिखाई नहीं देती थी, अस्तु मैं लाचार हो कर दीवार पर चढ़ गया और अन्दर झांकने लगा । अन्दर की जमीन पांच या चार हाथ नीची थी जो कि मकान की छत मालूम होती थी, मगर इस समय मै अन्दाज से कह सकता हूँ कि वह वास्तव में छत न थी बल्कि कपड़े का चन्दवा तना हुआ था या किसी शामियाने की छत थी, मगर उसमें से एक प्रकार की ऐसी भाफ (वाष्प) निकल रही थी कि जिससे दिमाग में नशे की सी हालत पैदा होती थी और खूब हँसने का जी चाहता था मगर पैरों में कमजोरी मालूम होती थी और वह बढ़ती ही जाती थी.....

भूत० । (बात काट कर) अच्छा यह तो बताओ कि अन्दर झांकने से पहिले ही कुछ नशा सा चढ़ आया था या नहीं ?

देवी० । कब ? दीवार पर चढ़ने के बाद ?

भूत० । हां दीवार पर चढ़ने के बाद और अन्दर झांकने के पहिले ।

देवी० । (कुछ सोच कर) नशा तो नहीं मगर कुछ शिथिलता जरूर मालूम हुई थी ।

भूत० । खैर, अच्छा तब ?

देवी०। अन्दर की तरफ जो छत थी उस पर मैंने देखा कि किशोरी हाथ में एक चाबुक लिए खड़ी है और उसके सामने की तरफ कुछ दूर हट कर कई मोटे ताजे आदमी खड़े हैं जो किशोरी को पकड़ कर बाँधना चाहते हैं मगर वह किसी के काबू में नहीं आती। ताल ठोंक ठोंक कर लोग उसकी तरफ बढ़ते हैं मगर वह कोड़े मार मार कर हटा देती है। ऐसी अवस्था में उन आदमियों की मुद्रा (जो किशोरी को पकड़ना चाहते थे) ऐसी खराब होती थी कि हँसी रोके नहीं रुकती थी तथा उस भाफ की बदौलत आया हुआ नशा हँसी को और भी बढ़ा देता था। पैर में पीछे हटने की ताकत न थी मगर भीतर की तरफ कूद पड़ने में किसी तरह का हर्ज भी नहीं मालूम पड़ता था क्योंकि जमीन ज्यादे नीची न थी और इसके अतिरिक्त किशोरी को बचाना भी बहुत ही जरूरी था, अस्तु मैं अन्दर की तरफ कूद पड़ा बल्कि यों कहो कि ढुलक पड़ा और इसके बाद तनोबदन की सुध न रही। मैं नहीं जानता था कि उसके बाद क्या हुआ और क्योंकर हुआ, हां जब मैं होश में आया तो अपने को कैदखाने में पाया।

भूत०। अच्छा तो इससे तुमने क्या नतीजा निकाला ?

देवी०। कुछ भी नहीं, मैंने केवल इतना ही ख्याल किया कि किसी दवा के नशे से दिमाग खराब हो जाता है।

भूत०। केवल इतना ही नहीं है, मैंने इससे कुछ ज्यादे खयाल किया है, खैर कोई चिन्ता नहीं कल देखा जायगा, सौ में नब्बे दर्जे तो मैं जरूर बाहरी रास्ते ही से लौट आऊँगा। यहाँ उस तिलिस्मी मकान के अन्दर लोगों ने जो कुछ देखा है वह भी करीब करीब वैसा ही है जैसा तुमने देखा था, तुमने किशोरी को देखा और इन लोगों ने किसी दूसरी औरत को देखा, बात एक ही है।

इसी तरह की बातें करते हुए दोनों ऐयार कुछ देर तक सुबह की हवा खाते रहे और इसके बाद मकान की तरफ लौटे। जब महाराज के पास गये तो पुनः सुनने में आया कि ऐयारों को तिलिस्मी मकान पर चढ़ने की आज्ञा हुई है।

सातवाँ बयान

दिन अनुमान दो घंटे के चढ़ चुका है। महाराज सुरेन्द्रसिंह, राजा बीरेन्द्रसिंह, गोपालसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह खिड़कियों में बैठे उस

तिलिस्मी मकान की तरफ देख रहे हैं जिसके अन्दर लोग हँसते हँसते कूद पड़ते हैं। उस मकान के नीचे बहुत सी कुर्सियाँ रक्खी हुई हैं जिन पर हमारे ऐयार तथा और भी कई प्रतिष्ठित आदमी बैठे हुए हैं और सब लोग इस बात का इन्तजार कर रहे हैं कि इस मकान पर बारी बारी से ऐयार लोग चढ़ें और अपनी अक्ल का नमूना दिखावें।

और ऐयारों की पोशाक तो मामूली ढंग की है मगर भूतनाथ इस समय कुछ अजब ढंग की पोशाक पहिरे हुए है। सिवाय चेहरे के उसका कोई अंग खुला हुआ नहीं है। ढीला ढाला मोटा पायजामा और गँवारू रूईदार चपकन के अतिरिक्त बहुत बड़ा काला मुड़ासा बांधे हुए है जिसका पिछला सिरा पीठ पर से होता हुआ जमीन तक लटक रहा है। हाथ दोनों बल्कि नाखून तक चपकन की आस्तीन में घुसा हुआ है और पैर के जूते की भी विचित्र सूरत हो रही है। भूतनाथ का मतलब चाहे कुछ भी क्यों न हो मगर लोग इसे केवल मसखरापन ही समझ रहे हैं।

सब के पहिले पन्नालाल उस मकान की दीवार पर चढ़ गये और अन्दर की तरफ झाँक कर देखने लगे, मगर पाँच सात पल से ज्यादे अपने को न बचा सके और हँसते हुए अन्दर की तरफ कूद पड़े।

इसके बाद पण्डित बद्रीनाथ, रामनारायण और चुन्नीलाल ने कोशिश की मगर ये तीनों भी लौट कर न आ सके और पन्नालाल की तरह हँसते हुए अन्दर कूद पड़े।

इसके बाद और ऐयारों ने भी उद्योग किया मगर कोई सफलमनोरथ न हुआ। यहां तक कि जीतसिंह, तेजसिंह, भैरोसिंह और तारासिंह को छोड़ कर सभी ऐयार बारी बारी से जा कर मकान के अन्दर कूद पड़े केवल भूतनाथ रह गया जिसने सब के आखीर में चढ़ने का इरादा कर लिया था।

भूतनाथ मस्तानी चाल से चलता हुआ सीढ़ी के पास गया और धीरे धीरे ऊपर चढ़ने लगा। देखते ही देखते वह दीवार के ऊपर जा पहुँचा। उस पर खड़ा होकर उसने एक दफे चारो और मैदान की तरफ देखा और इसके बाद मकान के अन्दर की तरफ झांका। यहां जो कुछ था उसे देखने बाद उसने अपना चेहरा उस तरफ किया जिधर खिड़कियों में बैठे हुए महाराज और राजा

बीरेन्द्रसिंह वगैरह बड़े शौक से उसकी कैफियत देख रहे थे। भूतनाथ ने हाथ उठा कर तीन दफे महाराज को सलाम किया और जोर से पुकार कर कहा, "मैं इसके अन्दर झाँक कर देख चुका और बड़ी देर तक दीवार पर खड़ा भी रहा, अब हुक्म हो तो नीचे उतर आऊँ!"

महाराज ने नीचे उतर आने का इशारा किया और भूतनाथ मुस्कुराता हुआ मकान के नीचे उतर आया, इस बीच में और ऐयार लोग भी जो भूतनाथ के पहिले मकान के अन्दर कूद चुके थे घूमते हुए बड़े तिलिस्मी मकान के अन्दर से आ पहुँचे और भूतनाथ की कैफियत देख सुन कर ताज्जुब करने लगे।

भूतनाथ के उतर आने बाद सब ऐयार मिल जुल कर महाराज के पास गये और महाराज ने प्रसन्न हो कर भूतनाथ को दो लाख रुपये इनाम देने का हुक्म दिया। सभी ऐयारों को इस बात का ताज्जुब था कि उस तिलिस्म का असर भूतनाथ पर क्यों नहीं हुआ और वह कैसे सभों को बेवकूफ बना कर आप बुद्धिमान बन बैठा और दो लाख का इनाम भी पा गया।

जीतसिंह०। भूतनाथ! यह तुमने क्या किया? कौन सी तर्कीब निकाली जिससे इस तिलिस्मी हवा का तुम पर कुछ भी असर न हुआ?

भूत०। बात मामूली है, जब तक मैं नहीं कहता तभी तक आश्चर्य मालूम पड़ता है।

तेज०। आखिर कुछ कहो भी तो सही।

भूत०। मेरे दिल को इस बात का निश्चय हो गया था कि इस मकान के अन्दर से किसी तरह की हवा भाफ या धूआँ ऊपर की तरफ जरूर उठता है जो झांक कर देखने वाले के दिमाग में साँस के रास्ते से चढ़ कर उसे बदहोश या पागल बना देता है और दीवार के ऊपरी हिस्से पर भी कुछ न कुछ बिजली का असर जरूर है जो उस पर पैर रखने वाले के शरीर को शिथिल कर देता है या और भी किसी तरह का असर कर जाता है। मैं इस बात को खूब जानता हूँ कि लकड़ी पर बिजली का असर कुछ भी नहीं होता अर्थात् जिस तरह धातु मिट्टी जल चमड़ा और शरीर में बिजली घुस कर पार निकल जाती है उस तरह लकड़ी को छेद कर बिजली पार नहीं हो सकती अतएव मैंने अपने पैर में लकड़ी के बुरादे का थैला चढ़ा लिया बल्कि जूते के अन्दर भी लकड़ी की तख्ती रख दी

जिसमें दीवार से पैदा होने वाली बिजली का मुझ पर असर न हो, इसके बाद बेहोशी का असर न होने के लिए दवा भी खा ली, इतना करने पर भी जब तक मैं मकान के अन्दर झाँकता रहा तब तक अपनी साँस को रोके रहा। मैंने अन्दर की तरफ चलने फिरने और नाच्य कर के हँसाने वाली पुतलियों को देखा और उस पीतल की चादर पर भी ध्यान दिया जो दीवार के ऊपर जड़ी हुई थी और जिसके साथ कई तारें भी लगी हुई थीं। यद्यपि उसका असल भेद मुझे मालूम न हुआ मगर मैने अपने बचाव की सूरत निकाल ली।

इतना कह कर भूतनाथ ने खञ्जर की नोक से अपने पायजामे में एक छेद कर दिया और उसमें से लकड़ी का बुरादा निकाल कर सभों को दिखाया। भूतनाथ की बातें सुन कर महाराज बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने भूतनाथ तथा और ऐयारों की तरफ देख कर कहा, "वास्तव में भूतनाथ ने बहुत ठीक तर्कीब सोची। उस तिलिस्म के अन्दर जो कुछ भेद है हम बता देते हैं, इसके बाद तुम लोग उसके अन्दर जाकर देख लेना। जमानिया तिलिस्म के अन्दर से इन्द्रजीतसिंह एक कुत्ता लाये हैं जो देखने में बहुत छोटा और संगमर्मर का बना हुआ मालूम होता है और बहुत सी पीतल की बारीक तारें उस पर लिपटी हुई हैं। असल में वह कुत्ता कई तरह के मसालों और दवाइयों से बना हुआ है। वह कुत्ता जब पानी छोड़ दिया जाता है तो उसमें से मस्त और बदहोश कर देने वाली भाफ निकलती है और उसके साथ जो तारें लिपटी हुई हैं उनमें बिजली पैदा हो जाती है। दीवार के ऊपर जो पीतल की चादर बिछाई गई है उसी के साथ वे तारें लगा दी गई हैं और उससे कुछ नीचे हट कर एक अच्छे तनाव का शामियाना तान दिया है जिसमें कूदने वाले को चोट न लगे। इसके अतिरिक्त (भूतनाथ से) जिन्हें तुम पुतलियाँ कहते हो वे वास्तव में पुतलियाँ नहीं हैं बल्कि जीते जागते आदमी हैं जो भेष बदल कर काम करते हैं और एक खास किस्म की पोशाक पहिरने और दवा सूँघने के सबब उन सब पर उस बिजली और बेहोशी का असर नहीं होता। इस खेल के दिखाने की तरकीब भी ताम्रपत्र पर लिखी हुई है जो उसी कुत्ते के साथ पाई गई थी। इन्द्रजीत का बयान है कि जमानिया तिलिस्म में इस तरह के और भी कुत्ते मौजूद हैं।"

महाराज की बातें सुन कर सभों को बड़ा ताज्जुब हुआ इसी तरह हमारे

पाठक महाशय भी ताज्जुब करते और सोचते होंगे कि यह तमाशा सम्भव है या असम्भव मगर उन्हें समझ रखना चाहिए कि दुनिया में कोई बात असम्भव नहीं है जो अब असम्भव है वह पहिले जमाने में सम्भव थी और जो पहिले जमाने में असम्भव थी वह आज सम्भव हो रही है। 'दीवार कहकहा' वाली बात आप लोगों ने जरूर सुनी होगी। उसके विषय में भी यही कहा जाता है कि उस दीवार पर चढ़ कर दूसरी तरफ झांकने वाला हँसता हँसता दूसरी तरफ कूद पड़ता है और फिर उस आदमी का पता नहीं लगता कि क्या हुआ और कहाँ गया। इस मशहूर और ऐतिहासिक बात को कई आदमी झूठ समझते हैं मगर वास्तव में ऐसा नहीं है। इसके विषय में हम नीचे एक लेख की नकल करते हैं जो तारीख १४ मार्च सन् १९०५ ई० के अवध अखबार में छपा था—

"अगले जमाने में फिलासफर (वैज्ञानिक) लोग अपनी बुद्धि से जो जो चीजें बना गए हैं अब तक यादगार हैं। उनकी छोटी सी तारीफ यह है कि इस समय के लोग उनके कामों का समझ भी नहीं सकते। उनके ऊँचे हौसले और ऊँचे खयाल की निशानी चीन के हाते की दीवार है और हिन्दुस्तान में भी ऐसी बहुत सी चीजें हैं जिनका आगे चल कर मैं लिखूँगा, इस समय 'दीवार कहकहा' पर लिखना चाहता हूँ।

"मैंने सन् १८९९ ई० में 'अखबार आलम' मेरठ में कुछ लिखा था जिसकी मालिक अखबार ने बड़ी प्रशंसा की थी, अब उसके और विशेष सबब खयाल में आये हैं जो बयान करना चाहता हूँ।

"मुसलमानों के प्रथम राज्य में उस समय के हाकिम ने इस दीवार की अवस्था जानने के लिए एक कमीशन भेजा था जिसके सफर का हाल दुनिया के अखबारों से प्रगट हुआ है।

"संक्षेप में यह कि कई आदमी मरे परन्तु ठीक तौर पर नहीं मालूम हो सका कि उस दीवार के उस तरफ क्या हाल चाल है।

"उसकी तारीफ इस तरह पर है कि उस दीवार की ऊँचाई पर कोई आदमी जा नहीं सकता और जो जाता है वह हँसते हँसते दूसरी तरफ गिर जाता है, यदि गिरने से किसी तरह रोक लिया जाय तो जोर से हँसते हँसते मर जाता है।

यह एक तिलिस्म कहा जाता है या कोई और बात है, पर यदि सोचा

जाय तो यही कहा जायगा कि अवश्य किसी बुद्धिमान आदमी ने हकीमी कायदे से इस विचित्र दीवार को बनाया है।

यह दीवार अवश्य कीमियाई विद्या से मदद ले कर बनाई गई होगी। यह बात तो प्रसिद्ध है कि दीवार के उस तरफ जिन्न और परी रहते हैं जिनको देख कर मनुष्य पागल हो जाता है और उसी तरफ को दिल दे देता है, यह बात ठीक हो सकती है परन्तु हँसता क्यों है यह सोचने की बात है।

काश्मीर में केशर के खेत की भी यही तारीफ है। तो क्या उसकी सुगन्ध वहाँ जाकर एकत्र होती है, या वहाँ भी केशर के खेत हैं जिससे हँसी आती है? परन्तु ऐसा नहीं है क्योंकि ऐसा होता तो यह भी मशहूर होता कि केशर की महक आती है। नहीं नहीं, कुछ और ही हिकमत है जैसा कि हिन्दुस्तान में किसी शहर के मसजिद की मीनारों में यह तारीफ थी कि ऊपर खड़े हो कर पानी का भरा गिलास हाथ में लो तो वह आप ही आप छलकने लगता था। इसकी जाँच के लिये एक इञ्जीनियर साहेब ने उसे गिरवा दिया और फिर उसी तरह पर बनवाया परन्तु वह बात न रही। या आगरा में ताजबीबी के रौजे के फौवारों के नल जो मिट्टी के खरनैचे की तरह थे जैसे खपरैल या बर्गीचे के नल होते हैं। संयोग से फौवारों का एक नल टूट गया, उसकी मरम्मत की गई, दूसरी जगह से फट गया यहाँ तक कि तीस चालीस वर्ष से बड़े बड़े कारीगरों ने अपनी अपनी कारीगरी दिखाई परन्तु सब व्यर्थ हुआ। अब तक तलाश है कि कोई उसे बनाकर अपना नाम करे, मतलब यह कि 'दीवार कहकहा' भी ऐसी ही कारीगरी से बनी है जिसकी कीमियाई बनावट मेरी समझ से यों आती है कि सतह—जहाँ जमीन से आसमान तक कई हिस्सों में अलग की है, लम्बाई का हिस्सा कई हवाओं से मिला है जैसे आक्सिजन, नाइट्राजन, हाईड्राजन, कार्बोनिकऐसिड ग्यास, क्लोराइन इत्यादि। फिर इन हवाओं में से और भी कई चीजें बनती हैं जैसा कि नाइट्रोजिन का एक मोरक्कब पर्ट ओक्साइड आफ नाइट्रोजिन है (जिसको लाफिंग ग्यास भी कहते हैं)। बस दुनिया के उस फतह पर जहाँ लाफिंग ग्यास जिसको हिन्दी में हँसाने वाली हवा कहते हैं पाई गई है उस जगह पर यह दीवार सतह जमीन से इस ऊँचाई तक बनाई गई है। इस जगह पर बड़ी दलील यह होगी कि फिर वह बनाने वाले आदमी कैसे इस

जगह अपने होश में रहेंगे, वह क्यों न हँसते हँसते मर गये ? और यही हल करना पहिले मुझसे रह गया था जिसे अब उस नजीर से जो अमेरिका में कायम हुई है हल करता हूँ, याने जिस तरह एक मकान कल के सहारे एक जगह से उठा कर दूसरी जगह रख दिया जाता है उसी तरह यह दीवार भी किसी नीची जगह में इतनी ऊँची बना कर कल से उठा कर इस जगह रख दी गई है जहाँ अब है। लाफिंग ग्यास में यह असर है कि मनुष्य उसके सूँघने से हँसते हँसते दम घुट कर मर जाता है।

अब यह बात रही कि आदमी उस तरफ क्यो गिर पड़ता है ? इस खिचाव को भी हम समझे हुए हैं परन्तु उसकी केमिस्ट्री (कीमियाई) अभी हम न बतावेंगे, इसको फिर किसी समय पर कहेंगे।

दृष्टान्त यह नजीर लिखते हैं कि ग्वालियर के जमीन की यह तासीर है कि जो मनुष्य जाता है वहीं का हो जाता है, जैसे यह कहावत है कि एक काँवर वाला जिसके काँवर में उसके माता पिता थे वहाँ पहुँचा और काँवर उतार के बोला कि तुम्हारा जहाँ जी चाहे जाओ, मुझसे तुमसे कुछ वास्ता नहीं। उस तपस्वी के माता पिता बुद्धिमान थे, उन्होंने अपने प्यारे लड़के की आरजू मिन्नत कर के कहा कि हमको चम्बल दरिया के पार उतार दो फिर हम चले जायँगे। लाचार हो कर बड़ी हुज्जत से लड़का उनको दरिया के पार ले गया, ज्योंही उस पार हुआ त्योंही चाहा कि अपनी नादानी से लज्जित हो कर माता पिता के चरण पर गिर माफी चाहे परन्तु उसके माता पिता ने कहा कि ऐ बेटा, तेरा कुछ कसूर नहीं, यह तारीफ उस जमीन की थी।

दीवार कहकहा के उस तरफ भी ऐसा ही खिचाव है, जिसको हम ग्वालियर की हिस्टरी तैयार हो जाने पर यदि जीते रहे तो किसी समय परमेश्वर की कृपा से आप लोगों पर जाहिर करेंगे, अभी तो हमको यह विश्वास है कि इतिहास ग्वालियर के बनाने वाले ग्रेटर साहब ही इस खिचाव के बारे में कुछ बयान करेंगे। इतिहास लेखक महाशय को चाहिये कि ग्वालियर की तारीफ में इस किस्से की हकीकत जरूर बयान करें कि काँवर वाले ने काँवर क्यों रख दी थी और इसकी तारीख लिखेंगे या इस किस्से को झूठ सबित करेंगे। क्योंकि जो बात मशहूर होती है ग्रन्थकर्ता को उसके झूठ सच के बारे में जरूर कुछ

लिखना चाहिये। तौ भी हम इतिहास ग्वालियर तैयार हो जाने पर उस खिंचाव के बारे में जो दीवार के उस तरफ है पूरा पूरा हाल लिखेंगे।

ग्वालियर की जमीन में तरह तरह की खासियत है जिसको हम उस हिस्टरी समालोचना में (यदि वह बातें हिस्टरी से बच रहीं) जाहिर करेंगे। दीवार कहकहा के सम्बन्ध में जहाँ तक अपना खयाल था आप लोगों पर प्रकट किया याने दुनिया के उस हिस्से की सतह पर दीवार नहीं बनाई गई है जहाँ आक्साइड आफ नाइट्रोजिन है बल्कि पहिले दूसरी जगह बना कर फिर कल के जरिये से वहाँ उठा कर रख दी गई है। यदि यह कहा जाय कि ग्यास सिर्फ उसी जगह थी और जगह क्यों नहीं है तो उसका सहज जवाब यह है कि जमीन से आसमान तक तलाश करो किसी न किसी ऊँचाई पर तुमको मिल ही जायगी। दूसरे यह कि कोई हवा सिर्फ खास जगह पर मिलती है जैसा कि बन्द जगह की तलाक करने वाली बन्द हवा, जैसा कि अकसर कुएँ में आदमी उतरते हैं और घबड़ा कर मर जाते हैं। यदि यह कहा जाय कि वहां हवा नहीं है तो यह नहीं हो सकता।

पिछले जमाने के आदमी अपनी कारीगरी का अच्छा अच्छा नमूना छोड़ गये हैं जैसा कि मिस्र की मीनार, या नौशेरवानी बाग, या जवाहिरात के पेड़ों पर चिड़ियों का गाना या आगरे का ताज जिसकी तारीफ में तुराब के बुद्धिमान लेखक ने किसी लेखक का एक फिकरा लिखा है जिसका संक्षेप यह है कि इसमें कुछ बुराई नहीं, यदि है तो यही है कि कोई बुराई नहीं! देखिये आगरा में बहुत सी बादशाही समय की टूटी फूटी इमारतें हैं जिनमें पानी दौड़ने के नल (पाइप) वैसे ही मिट्टी के हैं जैसे कि आज कल मिट्टी के गोल परनाले होते हैं, उन्हीं नलों से दूर दूर से पानी आता और फिर नीचे से ऊपर कई मरातिब तक जाता था। इसी तरह के ताजगञ्ज के फौवारों के नल भी थे और भी इसी तरह के हैं जिनमें से एक के टूटने पर लोहे के नल लगाये गये, जब उनसे काम न चला तो बड़े बड़े भारी पत्थरों में छेद करके लगाये, परन्तु बेफायदा हुआ।

उन फौवारों की यह तारीफ है कि जो जितना ऊँचा जा रहा है उतने ही ऊँचाई पर से यहां से वहां तक बराबर धारें गिरती हैं। अब जो कहीं बनते हैं तो धार बराबर करने को ऊँची नीची सतह पर फौव्वारे लगाने पड़ते हैं।

इसी तरह का एक तिलिस्म के विषय का भी लेख ता० ३० मार्च सन् १९०५ के अवध अखबार में छपा था उसका अनुवाद भी हम नीचे लिखते हैं—

"गुजरे हुए जमाने के काबिल कदर यादगारो! तुमको याद कर करके हम कहाँ तक रोयें और कहां तक विलाप करें? जमाने के नाकदर हाथों की बदौलत तुम सब मिट गये और मिटते चले जाते हो, जमीन तुमको खा गई और उनको भी खा गई जो तुम्हारे जानने वाले थे, यहां तक कि तुम्हारा निशान तो निशान तुम्हारा नाम तक भी तो मिट गया!

"खलीफा बनी उम्मीयां के जमाने में जिन दिनों अब्दुल मलिक बिनमर्दा की तरफ से उसका भाई अब्दुलअजीज बिनमर्दा मिश्र देश का गवर्नर था, एक दिन उसके सामने दफीना (जमीन के नीचे छिपा हुआ खजाना) का हाल बतलाने वाला कोई शख्स हाजिर हुआ। अब्दुलअजीज ने बात ही बात में उससे कहा, "किसी दफीना का हाल तो बतलाइये!" जिसके जवाब में उसने एक टीले का नाम लेकर कहा कि उसमें खजाना है और इसकी परख इस तौर से हो सकती है कि वहां की थोड़ी जमीन खोदने पर संगमर्मर और स्याह पत्थर का फर्श मिलेगा जिसके नीचे फिर खोदते खोदते एक खाली दर्वाजा दिखाई देगा, उस दर्वाजे के उखेड़ने के बाद सोने का एक खम्भा नजर आवेगा जिसके ऊपरी हिस्से पर एक मुर्ग बैठा होगा, उसकी आंखों में जो सुर्ख मानिक जड़े हैं वह इस कदर कीमती हैं कि सारी दुनिया उसके बदले और दाम में कार्फा हो तो हो, उसके दोनों बाजू मानिक और पन्ने से सजे हुए हैं और सोने वाले खंभे से सोने के पत्तरो का कुछ हिस्सा निकल कर उस मुर्ग के सिर पर छाया किये हुए है।

"यह ताज्जुब की बातें सुन कर उस गवर्नर का कुछ ऐसा शौक बढ़ा कि आम तौर पर हुक्म दे दिया कि वह जगह खोदी जाय और जो लोग उसको खोदेंगे और उसमें काम करेंगे उनको हजारों रुपये दिये जायेंगे। यह जगह एक ऊँचे टीले पर थी, इस वजह से बहुत घेरा देकर खुदाई का काम शुरू हुआ। पता देने वाले ने जो संगमर्मर और स्याह पत्थर के फर्श वगैरह बताये थे वे मिलते जाते थे और बताने वाले के कौल की तसदीक होती जाती थी और इसी वजह से अब्दुलअजीज का शौक बढ़ता जाता था कि यकायक मुर्ग का सर जाहिर हुआ। सर के जाहिर होते ही एक बारगी आंखों को चकाचौंध करने वाली

तेज रोशनी उस खोदी हुई जगह से निकल कर फैल गई, मालूम हुआ कि बिजली तड़प गई।

यह गैर मामूली रोशनी उस मुर्ग की आँखों से निकल रही थी। उसकी दोनों आँखों में बड़े बड़े मानिक जड़े हुए थे जिनकी यह बिजली थी। ज्यादे खोदे जाने पर उसके दोनों जड़ाऊ बाजू भी नजर आये और फिर उसके पाँव भी दिखाई दिये।

"उस मुर्ग वाले सोने के खम्भे के अलावा एक और खम्भा भी नजर आया जो एक इमारत की तरह पर था। यह इमारती खंभा रंग बिरंगे पत्थरों से बना हुआ था जिसमें कई कमरे थे और उनकी छतें बिलकुल छज्जेदार थीं। उसके दर्वाजों पर बड़े और खूबसूरत आलों (ताकों) की एक कतार थी जिनमें तरह तरह की रक्खी हुई मूरतें और बनी हुई सूरतें बड़ी खूबी के साथ अपनी शोभा दिखा रही थीं, सोने और जवाहिरात के जगह जगह पर ढेर थे जो छिपे हुए थे, ऊपर से चाँदी के पत्तर लगे थे और पत्तरों पर सोने की कीलें जड़ी थीं। अब्दुल-अजीज बिनमर्दा यह खबर पाते ही बड़े चाह से उस मौके पर पहुँचा, और जो आश्चर्यजनक तिलिस्म वहाँ जाहिर था उसको बहुत दिलचस्पी के साथ देर तक देखता रहा और तमाम खिलकत की भीड़ भाड़ थी और तमाशबीन अपने बढ़े हुए शौक से एक दूसरे पर गिरे पड़ते थे। एक जगह ढले हुए ताँबे की सीढ़ी ऊपर तक लगी हुई थी, उसको देख कर एक शख्स ऊपर जल्दी जल्दी चढ़ने लगा, हर एक तमाशबीन ताज्जुब के साथ वहाँ की हर चीजों को देख रहा था।

उस जीने की चौथी सीढ़ी पर जब चढ़ने वाले ने कदम रक्खा तो जीना के दाहिनी और बाईं तरफ से दो नंगी तलवारें, अपना काट और तड़प दिखाती हुई निकलीं। यद्यपि इस चढ़ने वाले ने बचने के लिए हर तरह की कोशिश की मगर दोनों निकलने वाली तलवारें प्राणघातक शत्रु थी जिन्होंने देखते ही देखते इस चढ़ने वाले आदमी का काम तमाम कर दिया और फिर यह देखा गया कि इस शख्स के टुकड़े नीचे कट कट कर गिरे। उनके गिरते ही वह खम्भा झोंके ले ले कर आप से आप हिलने लगा और उस पर से वह बैठा हुआ मुर्ग कुछ अजब शान से उड़ा कि देखने वाले अचम्भे में हो कर देखते ही रह गये।

जिस वक्त उसने उड़ने के लिए अपने बाजू (डैने) फटफटाये तो अद्भुत सुरीली और दिल लुभाने वाली आवाजें उससे निकलीं कि लोग सुन कर दंग रह गये और यह आवाजें हवा में गूँज कर दूर दूर तक फैल गईं।

उस मुर्ग के उड़ते ही एक किस्म की गर्म हवा चली जिसकी वजह से जिस कदर तमाशबीन आस पास में खड़े थे सब के सब उसी तिलिस्मी गार (खोह) में गिर पड़े। उस गड्ढे के अन्दर उस वक्त खोदनेवाले, बेलदार, मिट्टी को बाहर फेंकने वाले, मजदूर और मेट वगैरह जिनकी तायदाद १००० कही जाती है मौजूद थे जो सब के सब बेचारे फौरन मर गये। अब्दुलअजीज ने यह हाल देख कर एक चीख मारी और कहा, "यह भी अजीब दुखदाई बात हुई! इससे क्या उम्मीद रखनी चाहिये!"

"इसके बाद और मजदूर उसमें लगा दिये गये, जिस कदर मिट्टी वगैरह निकली थी वह सब की सब अन्दर डाल दी गई, वह मर जाने वाले तमाशबीन सब भी उसी के अन्दर तोप दिये गये और आखिर में वह तिलिस्म की जगह अच्छा खासा एक 'कब्रिस्तान' बन गया। गये थे दफीना निकालने के लिए और इतनी जानें दफन कर आये, और खर्च घाटे में रहा!"

आठवां बयान

तीसरे दिन पुनः दर्बार हुआ और कैदी लोग लाकर हाजिर किए गये। महाराज सुरेन्द्रसिंह का लिखाया हुआ फैसला सभों के सामने तेजसिंह ने पढ़ कर सुनाया। सुनते ही कम्बख्त दारोगा, जयपाल और हरनामसिंह वगैरह रोने कलपने चिल्लाने और महाराज से कहने लगे कि इसी जगह हम लोगों का सर काट लिया जाय या जो चाहें महाराज सजा दें मगर हम लोगों को गोपालसिंह के हवाले न करें!

कैदियों ने बहुत सर पीटा मगर उनकी कुछ न सुनी गई, जो कुछ महाराज ने फैसला लिखाया था उसी मुताबिक कार्रवाई की गई, और इस फैसले को सभों ने पसन्द किया।

इन सब कामों से छुट्टी पाने बाद एक बहुत बड़ा जलसा किया गया और कई दिनों तक खुशी मनाने के बाद सब कोई बिदा कर दिये गए। राजा गोपाल-

सिंह कैदियों को साथ लेकर जमानिया चले गये, लक्ष्मीदेवी उनके साथ गईं, और तेजसिंह तथा और भी बहुत से आदमी महाराज की तरफ से उनके साथ पहुँचाने के लिये गए। जब वे लौट आये तब औरतों को साथ लेकर राजा बीरेन्द्रसिंह, इन्द्रजीतसिंह और आनन्दसिंह वगैरह पुनः तिलिस्म में गए और उन्हें तिलिस्म की खूब सैर कराई। कुछ दिन बाद रोहतासगढ़ के तहखाने की भी उन लोगों को सैर कराई और फिर सब कोई हँसी खुशी से दिन बिताने।

* * *

प्रेमी पाठक महाशय! अब इस उपन्यास में मुझे सिवाय इसके और कुछ कहना नहीं है कि भूतनाथ ने प्रतिज्ञानुसार अपनी जीवनी लिख कर दर्बार में पेश की और महाराज ने पढ़ सुन कर उसे खजाने में रखवा दिया। इस उपन्यास का भूतनाथ की खास जीवनी से कोई सम्बन्ध न था इस लिये इसमें वह जीवनी नत्थी न की गई, हाँ खास खास भेद जो भूतनाथ से सम्बन्ध रखते थे खोल दिये गए, तथापि भूतनाथ की जीवनी जिसे चन्द्रकान्ता सन्तति का उपसंहार भाग भी कह सकेंगे स्वतन्त्र रूप से लिख कर अपने प्रेमी पाठकों की नजर करूँगा, मगर इसके बदले में आपने प्रेमी पाठकों से इतना जरूर कहूँगा कि इस उपन्यास में जो कुछ भूल चूक रह गई हो और जो भेद रह गए हों वह मुझे अवश्य बतावें जिसमें 'भूतनाथ की जीवनी' लिखती समय उन पर ध्यान रहे क्योंकि इतने बड़े उपन्यास में मेरे ऐसे अनजान आदमी से किसी तरह की त्रुटि का रह जाना कोई आश्चर्य नहीं है।

प्रिय पाठक महाशय! अब चन्द्रकान्ता सन्तति की लेख प्रणाली के विषय में भी कुछ कहने की इच्छा होती है।

जिस समय मैंने चन्द्रकान्ता लिखनी आरम्भ की थी उस समय कविवर प्रतापनारायण मिश्र और पण्डितवर अम्बिकादत्त व्यास जैसे धुरंधर किन्तु अनुद्भृत सुकवि और सुलेखक विद्यमान थे तथा राजा शिवप्रसाद, राजा लक्ष्मणसिंह जैसे सुप्रतिष्ठित पुरुष हिन्दी की सेवा करने में अपना गौरव समझते थे, परन्तु न अब वैसे मार्मिक कवि हैं और न वैसे सुलेखक। उस समय हिन्दी के लेखक थे परन्तु ग्राहक न थे, इस समय ग्राहक हैं पर वैसे लेखक नहीं हैं। मेरे इस कथन का यह मतलब नहीं है कि बर्तमान समय के साहित्य-सेवी प्रतिष्ठा के योग्य नहीं हैं,

बल्कि यह मतलब है कि जो स्वर्गीय सज्जन अपनी लेखनी से हिन्दी के आदि युग में हमें ज्ञान दे गये हैं वे हमारी अपेक्षा बहुत चढ़ बढ़ कर थे। उनकी लेख-प्रणाली में चाहे भेद रहा हो परन्तु उन सब का लक्ष्य यही था कि इस भारत भूमि में किसी तरह मातृ-भाषा का एकाधिपत्य हो, लेकिन यह कोई नियम नहीं है कि वैसे लोगों से कुछ भूल हो ही नहीं। उनसे भूल हुई तो यही कि प्रचलित शब्दों पर उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया। राजा शिवप्रसादजी के राजनीति के विचार चाहे कैसे ही रहे हों पर सामाजिक विचार उनके बहुत ही प्राञ्जल थे और वे समयानुकूल काम करना खूब जानते थे, विशेषतः जिस ढङ्ग की हिन्दी वे लिख गये है उसी से वर्तमान समय में हिन्दी का रास्ता कुछ साफ हुआ है।

चाहे कोई हिन्दू हो या जैन, वा बौद्ध हो और चाहे आर्य्यसमाजी, वा धर्म-समाजी ही क्यों न हो, परन्तु जिन सज्जनों के माननीय अवतारों और पूर्वजनों ने इस पुण्यभूमि का अपने आविर्भाव से गौरव बढ़ाया है उनमें ऐसा अभागा कौन होगा जो पुण्यता और मधुरता युक्त संस्कृत भाषा के शब्दों का प्रचुर प्रचार न चाहेगा? मेरे विचार में किसी विवेकी भारत सन्तान के विषय में केवल यह देख कर कि वह विदेशी भाषा के शब्दों का प्रचार कर रहा है यह गढन्त कर लेना कि वह देववाणी के पवित्र शब्दों का विरोधी है भ्रम ही नहीं किन्तु अन्याय भी है। देखना यह चाहिये कि ऐसा करने से उसका मतलब क्या है। भारतवर्ष में आठ सौ वर्ष तक विदेशी यवनों का राज्य रहा है इसलिये फारसी और अरबी के शब्द हिन्दू समाज में 'न पठेत् यावनी भाषा' की दीवार लांघ कर उसी प्रकार आ घुसे जिस प्रकार हिमालय के उन्नत मस्तक को लांघ कर वे स्वयम् यहां आ गये थे, यहाँ तक कि महात्मा तुलसीदासजी जैसे भगवद्भक्त कवियों को भी 'गरीबनिवाज' आदि शब्दों का बर्ताव दिल खोल के करना पड़ा।

आठ सौ वर्षों के कुसंस्कार को जो गिनती के दिनों में दूर करना चाहते हैं उनके उत्साह और साहस की प्रशंसा करने पर भी हम यह कहने के लिये मजबूर हैं कि वे अपने बहुमूल्य समय का सदुपयोग नहीं करते बल्कि जो कुछ वे कर सकते थे उससे भी दूर हटते हैं। यदि ईश्वरचन्द्र विद्यासागर सीधे सादे शब्दों

से बँगला में काम न लेते तो उत्तर काल के लेखकों को संस्कृत शब्दों के बाहुल्य प्रचार का अवसर न मिलता और यदि 'राजा शिवप्रसादी हिन्दी' प्रगट न होती तो सरकारी पाठशालाओं में हिन्दी के चन्द्रमा की चाँदनी मुश्किल से पहुँचती। मेरे बहुत से मित्र हिन्दुओं की अकृतज्ञता का यों वर्णन करते हैं कि उन्होंने हरिश्चन्द्रजी जैसे देश-हितैषी पुरुष की उत्तम उत्तम पुस्तकें नहीं खरीदीं, पर मैं कहता हूँ कि यदि बाबू हरिश्चन्द्र अपनी भाषा को थोड़ा सरल करते तो हमारे भाइयों को अपने समाज पर कलंक लगाने की आवश्यकता न पड़ती और स्वाभाविक शब्दों के मेल से हिन्दी की पैसिंजर भी मेल बन जाती। प्रवाह के विरुद्ध चल कर यदि कोई कृतकार्य हो तो निःसन्देह उसकी बहादुरी है परन्तु बड़े बड़े दार्शनिक पण्डितों ने इसको ही असम्भव ठहराया है। सारसुधानिधि और कविवचन-सुधा की भाषा यद्यपि भावुक जनों के लिये आदर की वस्तु थी परन्तु समय के उपयोगी न थी। हमारे 'सुदर्शन' की लेख प्रणाली को हिन्दी के धुरन्धर लेखकों और विद्वानों ने प्रशंसा के योग्य ठहराया है परन्तु साधारण जन उससे कितना लाभ उठा सकते हैं यह सोचने की बात है। यदि महाकवि भवभूति के समान किसी भविष्य पुरुष की आज्ञा ही पर ग्रन्थकारों और लेखकों को यत्न करना चाहिये तब तो मैं सुदर्शन सम्पादक पण्डित माधोप्रसाद मिश्र को भी भविष्य की आशा पर बधाई देता हूँ पर यदि ग्रन्थकारों का भविष्य की अपेक्षा वर्तमान से अधिक सम्बन्ध है तो निःसन्देह इस विषय में मुझे आपत्ति है।

किसी दार्शनिक ग्रन्थ वा पत्र की भाषा के लिये यदि किसी बड़े कोष को टटोलना पड़े तो कुछ परवाह नहीं परन्तु साधारण विषयों की भाषा के लिये भी कोष की खोज करनी पड़े तो निःसन्देह दोष की बात है। मेरी हिन्दी किसी श्रेणी की हिन्दी है, इसका निर्द्धारण मैं नहीं करता परन्तु मैं यह जानता हूँ कि इसके पढ़ने के लिए कोष की तलाश करनी नहीं पड़ती। चन्द्रकान्ता के आरम्भ के समय मुझे यह विश्वास न था कि उसका इतना अधिक प्रचार होगा, यह मनोविनोद के लिये लिखी गई थी पर पीछे लोगों का अनुराग देख कर मेरा भी अनुराग हो गया और मैंने अपने उन विचारों को जिनको मैं अभी तक प्रकाश नहीं कर सका था फैलाने के लिये इस पुस्तक को द्वार बनाया और सरल भाषा में उन्हीं मामूली बातों को लिखा जिसमें मैं उस होनहार मण्डली का

प्रियपात्र बन जाऊँ जिसके हाथ में भारत का भविष्य सौंप कर हमें इस असार संसार से बिदा होना है। मुझे इस बात से बड़ा हर्ष है कि मैं इस विषय में सफल हुआ और मुझे ग्राहकों की अच्छी श्रेणी मिल गई। यह बात बहुत से सज्जनों पर प्रगट है कि चन्द्रकान्ता पढ़ने के लिये बहुत पुरुष नागरी की वर्णमाला सीखते हैं और जिनको कभी हिन्दी सीखना न था उन लोगों ने भी इसके लिये हिन्दी सीखी।

हिन्दी के हितैषियों में दो प्रकार के सज्जन हैं। एक तो वे जिनका विचार यह है कि चाहे अक्षर फारसी क्यों न हों पर भाषा विशुद्ध संस्कृत मिश्रित होनी चाहिये, और दूसरे वे जो यह चाहते है कि चाहे भाषा में फारसी के शब्द ही मिले हों पर अक्षर नागरी होने चाहिये। पहिले पक्ष में मैं पञ्जाब के आर्य्यसमाजियों और धर्मसभा वालों को मान लेता हूँ जिनके लेखों में वर्णमाला के सिवाय फारसी अरबी का कुछ भी सहारा नहीं है सब कुछ संस्कृत का है और दूसरे पक्ष में मैं अपने को ठहरा लेता हूँ जो इसके विपरीत है। मैं इस बात को भी स्वीकार करता हूँ कि जिस प्रकार फारसी वर्णमाला उर्दू का शरीर और अरबी फारसी के उपयुक्त शब्द उसके जीवन हैं ठीक उसी प्रकार नागरी वर्णमाला हिन्दी का शरीर और संस्कृत के उपयुक्त शब्द उसके प्राण कहे जा सकते हैं। यदि यह देश यवनों के अधिकार में न हुआ होता, और यदि कायस्थादि हिन्दू जातियों का उर्दू भाषा का प्रेम अस्थिमज्जागत न हो गया होता तो हिन्दी का शरीर और जीवन पृथक पृथक दिखलाई न देता, उसी प्रकार हमारे ग्रन्थों की सजीव उत्पत्ति होती जिस प्रकार द्विज बालकों की होती है। शरीर में यदि आत्मा न हो तो वह बेकार है और यदि आत्मा को उपयुक्त शरीर न मिल कर पशु पक्षी आदि शरीर मिल जायँ तो भी वह निष्फल ही है, इसलिये शरीर बना कर फिर उसमें आत्मदेव की स्थापना करना ही न्याययुक्त और फलप्रद है। "चन्द्रकान्ता और सन्तति" में यद्यपि इस बात का पता नहीं लगेगा कि कब और कहां भाषा का परिवर्तन हो गया परन्तु उसके आरम्भ और अन्त में आप ठीक वैसा ही परिवर्तन पावेंगे जैसा बालक और वृद्ध में। एक दम से बहुत से शब्दों का प्रचार करते तो कभी सम्भव न था कि उतने संस्कृत शब्द हम उन कुपढ़ ग्रामीण लोगों को याद करा देते जिनके निकट काला अक्षर भैंस के बराबर था।

मेरे इस कर्तव्य का आश्चर्यमय फल देख कर वे लोग भी बोधगम्य उर्दू के शब्दों को अपनी विशुद्ध हिन्दी में लाने लगे हैं जो आरम्भ में इसीलिये मुझ पर कटाक्ष-पात करते थे। इस प्रकार प्राकृतिक प्रभाव के साथ साथ साहित्य-सेवियों की सरस्वती का प्रभाव बदलता देख कर समय के बदलने का अनुमान करना कुछ अनुचित नहीं है। जो हो भाषा के विषय में हमारा वक्तव्य यही है कि वह सरल हो और नागरी वर्णों में हो, क्योंकि जिस भाषा के अक्षर होते हैं, उनका खिंचाव उन्हीं मूल भाषाओं की ओर होता है जिससे उनकी उत्पत्ति हुई है।

भाषा के सिवाय दूसरी बात मुझे भाव के विषय में कहनी है। मेरे कई मित्र आक्षेप करते हैं कि मुझे देश-हित-पूर्ण और धर्मभावमय कोई ग्रन्थ लिखना उचित था, जिससे मेरी प्रसरणशील पुस्तकों के कारण समाज का बहुत कुछ उपकार व सुधार हो जाता। बात बहुत ठीक है परन्तु एक अप्रसिद्ध ग्रन्थकार की पुस्तक को कौन पढ़ता? यदि मैं चन्द्रकान्ता और सन्तति को न लिख कर अपने मित्रों से भी दो चार बातें हिन्दी के विषय में कहना चाहता तो कदाचित् वे भी सुनना पसन्द नहीं करते। गम्भीर विषय के लिए जैसे एक विशेष भाषा का प्रयोजन होता है वैसे ही विशेष पुरुष का भी। भारतवर्ष में विशेषता की अधिकता न देख कर मैंने साधारण भाषा में साधारण बातें लिखनी ही आवश्यक समझीं! संसार में ऐसे भी लोग हुए होंगे जिन्होंने सरल और भावमयी एक ही पुस्तक लिख कर लोगों का चित्त अपनी ओर खैंच लिया हो पर वैसा कठिन काम मेरे ऐसों के करने योग्य न था। तथापि पात्रों की चालचलन दिखलाने में जहां तक हो सका ध्यान रक्खा गया है। सब पात्र यथासमय सन्ध्या तर्पण करते हैं और अवसर पड़ने पर पूजा प्रकार भी "बीरेन्द्रसिंह" आदि के वर्णन में जगह जगह दिखलाई देता है।

कुछ दिनों की बात है कि मेरे कई मित्रों ने संवाद-पत्रों में इस विषय का आन्दोलन उठाया था कि इसका कथानक सम्भव है कि असम्भव। मैं नहीं समझता था कि यह बात क्यों उठाई और बढ़ाई गई? जिस प्रकार पञ्चतन्त्र हितोपदेश आदि ग्रन्थ बालकों की शिक्षा के लिये लिखे गये उसी प्रकार यह लोगों के मनोविनोद के लिए, पर यह सम्भव है कि असम्भव, इस विषय में कोई यह समझे कि "चन्द्रकान्ता और बीरेन्द्रसिंह" इत्यादि पात्र और उनके विचित्र

स्थानादि सब ऐतिहासिक हैं तो बड़ी भारी भूल है। कल्पना का मैदान बहुत विस्तृत है और उसका यह एक छोटा सा नमूना है। अब रही सम्भव असम्भव की बात अर्थात् कौन सी बात हो सकती है और कौन नहीं हो सकती? इसका विचार प्रत्येक मनुष्य की योग्यता और देश काल पात्र से सम्बन्ध रखता है। कभी ऐसा समय था कि यहां के आकाश में विमान उड़ाते थे, एक एक वीर पुरुषों के तीरों में यह सामर्थ्य थी कि क्षणमात्र में सहस्रों पुरुषों का संहार हो जाता था, पर अब वह बातें खाली पौराणिक कथा समझी जाती हैं। पर दो सौ वर्ष पहिले जो बातें असम्भव थीं आज कल विज्ञान के सहारे वे सब सम्भव हो रही हैं। रेल, तार, बिजली आदि के कार्यों को पहिले कौन मान सकता था? और फिर यह भी है कि साधारण लोगों की दृष्टि में जो असम्भव है कवियों की दृष्टि में भी वह असम्भव ही रहे यह कोई नियम की बात नहीं है। संस्कृत साहित्य के सर्वोत्तम उपन्यास कादम्बरी की नायिका युवती की युवती ही रही पर उसके नायक के तीन जन्म हो गये, तथापि कोई बुद्धिमान पुरुष इसको दोषावह न समझ कर गुणाधायक ही समझेगा। चन्द्रकान्ता में जो अद्भुत बातें लिखी गई हैं वे इसलिये नहीं कि लोग उसकी सचाई झुठाई की परीक्षा करें प्रत्युत इसलिये कि उसका पाठ कौतूहल वर्द्धक हो।

एक समय था कि लोग सिंहासनबत्तीसी बैतालपचीसी आदि कहानियों को विश्राम काल में रुचि से पढ़ते थे, फिर चहारदरवेश और अलिफलैला के किस्सों का समय आया, अब इस ढङ्ग के उपन्यासों का समय है। अब भी वह समय दूर है जब लोग बिना किसी प्रकार की न्यूनाधिकता के ऐतिहासिक पुस्तकों को रुचि से पढ़ेंगे। जब वह समय आवेगा उस समय कथा सरित्सागर के समान 'चन्द्रकान्ता' बतलावेगी कि एक वह भी समय था जब इसी प्रकार के ग्रन्थों से ही वीरप्रसू भारत भूमि की संतान का मनोविनोद होता था। भगवान उस समय को शीघ्र लावें।

* चौबीसवाँ हिस्सा समाप्तः *